नमस्ते जी

ऋषि दयानंद द्वारा प्रचारित वैदिक विचारधारा ने सैकड़ो हृदय को क्रन्तिकारी विचारो से भर दिया | जो वेद उस काल में विचारो से भी भुला दिए गए थे | ऋषि दयानंद ने उन हृदयों को वेदों के विचारो से ओतप्रोत कर दिया और देश में वेद गंगा बहने लगी | ऋषि के अपने अल्प कार्य काल में समाज की आध्यात्मिक, सामाजिक, और व्यक्तिगत विचार धारा को बदल के रख दिया | ऋषि के बाद भी कही वर्षो तक यह परिपाटी चली पर यह वैचारिक परिवर्तन पुनः उसी विकृति की और लौट रहा है | और इसी विकृति को रोकने के लिए वैदिक विद्वान प्रो० राजेंद्र जी जिज्ञासु के सानिध्य में "पंडित लेखराम वैदिक मिशन" संस्था का जन्म हुआ है | इस संस्था का मुख्य उद्देश्य वेदों को समाज रूपी शरीर के रक्त धमनियों में रक्त के समान स्थापित करना है | यह कार्य ऋषि के जीवन का मुख्य उद्देश्य था और यही इस संस्था का भी मुख्य उद्देश्य है | संस्था के अन्य उद्देश्यों में सम्लित है साहित्य का सृजन करना | जो दुर्लभ आर्य साहित्य नष्ट होने की और अग्रसर है उस साहित्य को नष्ट होने से बचाना और उस साहित्य को क्रम बद्ध तरीके से हमारे भाई और बहनों के समक्ष प्रस्तुत करना जिससे उनकी स्वाध्याय में रूचि बढ़े और वे तुलनात्मक अध्यन कर सकें जिससे उनकी स्वधर्म में रूचि बढ़े और अन्य मत मतान्तरो की जानकारी उन्हें प्राप्त हो और वे विधर्मियो द्वारा लगाये जा रहे विभिन्न आक्षेपों का उत्तर दे सकें विधर्मियो से स्वयं भी बचें और अन्यो की भी सहयता करें | संस्था का उद्देश्य है समाज के समक्ष हमारे गौरव शाली इतिहास को प्रस्तुत करना जिससे हमारा रक्त जो ठंडा हो गया है वह पुनः गर्म हो सके और हम हमारे इतिहास पुरुषो का मान सम्मान करें और उनके बताये गये नीतिगत मार्ग पर चलें | संस्था का अन्य उद्देश्य गौ पालन और गौ सेवा को बढ़ावा देना जिससे पशुओ के प्रति प्रेम, दया का भाव बढ़े और इन पशुओ की हत्या बंद हो, समाज में हो रहे परमात्मा के नाम पर पाखण्ड, अन्धविश्वास, अत्याचार को जड़ से नष्ट करना और परमात्मा के शुद्ध वैदिक स्वरुप को समाज के समक्ष रखना, हमारे युवा शक्ति को अनेक भोग, विबिन्न व्यसनों, छल, कपट इत्यादि से बचाना |

इन कार्यो को हम अकेले पूरा करने का सामर्थ्य नहीं रखते पर, यह सारे कार्य है तो बड़े विशाल और व्यापक पर अगर संस्था को आप का साथ मिला तो बड़ी सरलता से पूर्ण किये जा सकते है | हमारा समाजिक ढाचा ऐसा है की हम प्रत्येक कार्य की लिए एक दुसरे पर निर्भर है | आशा करते है की इस कार्य में आप हमारी तन, मन से साहयता करेंगे | संस्था द्वारा चलाई जा रही वेबसाइट www.aryamantavya.in और www.vedickranti.in पर आप संस्था द्वारा स्थापित संकल्पों सम्बन्धी लेख पड़ सकते है और भिन्न-भिन्न वैदिक साहित्य को निशुल्क डाउनलोड कर सकते है | कृपया स्वयं भी जाये और अन्यो को भी सूचित करे यही आप की हवी होंगी इस यज्ञ में जो आप अवश्य करेंगे यही परमात्मा से प्रार्थना करते है |

जिन सज्जनों के पास दुर्लभ आर्य साहित्य है एवं वे उसे संरक्षित करने में संस्था की सहायता करना चाहते हैं वो कृपया निम्न पते पर सूचित करें

ptlekhram@gmail.com

धन्यवाद् !

पंडित लेखराम वैदिक मिशन

आर्य मंतव्य टीम

॥ओ३म्॥

ऋग्वेद-भाष्यम्॥

अथ द्वितीयं मण्डलम्॥

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद्भद्रं तन्न आ सुव॥ ऋ०५.८२.५॥

त्वमग्न इत्यादिमस्य षोडशर्चस्य आङ्गिरसः शौनहोत्रो भार्गवो गृत्समद ऋषिः। अग्निर्देवता। १ पङ्क्तिः। ९ भुरिक् पङ्क्तिः। १३ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, १५ विराड् जगती। १६ निचृज्जगती छन्दः। निषादः स्वरः। ३, ५, ८, १० निचृत्त्रिष्टुप्। ४, ६, ११, १२, १४ भुरिक् त्रिष्टुप्। ७ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथाग्निदृष्टान्तेन विद्वद्विद्यार्थिकृत्यमाह॥

अब दूसरे मण्डल का और उसमें प्रथम सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में अग्नि के दृष्टान्त से विद्वान् और विद्यार्थियों के कृत्य को कहते हैं॥

त्वमग्ने द्युभिस्त्वमाशुशुक्षणिस्त्वमद्भ्यस्त्वमश्मनस्परि।
त्वं वनेभ्यस्त्वमोषधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिः॥ १॥

त्वम्। अग्ने। द्युऽभिः। त्वम्। आशुशुक्षणिः। त्वम्। अत्ऽभ्यः। त्वम्। अश्मनः। परि। त्वम्। वनेभ्यः। त्वम्। ओषधीभ्यः। त्वम्। नृणाम्। नृऽपते। जायसे। शुचिः॥ १॥

पदार्थः-(त्वम्) (अग्ने) अग्निरिव राजमान विद्वन् **(द्युभिः)** प्रकाशैः **(त्वम्) (आशुशुक्षणिः)** शीघ्रकारी **(त्वम्) (अद्भ्यः)** जलेभ्यः **(त्वम्) (अश्मनः)** पाषाणात् **(परि)** सर्वतः **(त्वम्) (वनेभ्यः)** जङ्गलेभ्यः **(त्वम्) (ओषधीभ्यः) (त्वम्) (नृणाम्)** मनुष्याणाम् **(नृपते)** नृणां पालक **(जायसे) (शुचिः)**॥ १॥

अन्वयः-हे अग्ने! नृपते! यस्त्वं द्युभिरग्निरिव त्वमाशुशुक्षणिस्त्वमद्भ्यः पालको मेघ इव त्वमश्मनस्परि रत्नमिव त्वं वनेभ्यश्चन्द्र इव त्वमोषधीभ्यो वैद्य इव त्वं च नृणां मध्ये शुचिर्जायसे सोऽस्माभिः सत्कर्त्तव्योऽसि॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। हे राजन्! यथा विद्युत्स्वप्रकाशेन शीघ्रं गन्त्री जलपाषाणवनौषधिपवित्रकारकत्वेन सर्वेषां पालिकाऽस्ति तथा विद्वान् समग्रसामग्र्या पवित्राचारः सन् विद्यादिप्रकाशेन सर्वेषामुन्नतिकरो भवति। अयं (मन्त्रः) निरुक्ते व्याख्यातः। (निरु०६.१)॥१॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के समान **(नृपते)** मनुष्यों की पालना करनेवाले! जो **(त्वम्)** आप **(द्युभिः)** विद्यादि प्रकाशों से विराजमान **(त्वम्)** आप **(आशुशुक्षणिः)** शीघ्रकारी **(त्वम्)** आप **(अद्भ्यः)** जलों से पालना करनेवाले मेघ के समान **(त्वम्)** आप **(अश्मनः, परि)** पाषाण के सब ओर से निकले रत्न के समान **(त्वम्)** आप **(वनेभ्यः)** जङ्गलों में चन्द्रमा के तुल्य **(त्वम्)** आप **(ओषधीभ्यः)** ओषधियों से वैद्य के समान और **(त्वम्)** आप **(नृणाम्)** मनुष्यों के बीच **(शुचिः)** पवित्र शुद्ध **(जायसे)** होते हैं, सो आप लोग हम लोगों से सत्कार करने योग्य हैं॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे राजन्! जैसे बिजुली अपने प्रकाश से शीघ्र जानेवाली जल, पाषाण, वन और ओषधियों के पवित्र करने से सबकी पालना करनेवाली है, वैसे विद्वान् जन समग्र सामग्री से पवित्र आचरणवाला होता हुआ विद्यादि के प्रकाश से सबकी उन्नति करनेवाला होता है। इस मन्त्र का निरुक्त में भी व्याख्यान है॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तवा॑ग्ने हो॒त्रं तव॑ पो॒त्रमृ॒त्विय॒ं तव॑ ने॒ष्ट्रं त्वम॒ग्निदृ॑ताय॒तः।
तव॑ प्रशा॒स्त्रं त्वम॑ध्वरीयसि ब्र॒ह्मा चासि॑ गृ॒हप॑तिश्च नो॒ दमे॑॥२॥

तव॑। अ॒ग्ने॒। हो॒त्रम्। तव॑। पो॒त्रम्। ऋ॒त्विय॑म्। तव॑। ने॒ष्ट्रम्। त्वम्। अ॒ग्नित्। ऋ॒त॒ऽय॒त। तव॑। प्र॒ऽशा॒स्त्रम्। त्वम्। अ॒ध्व॒रि॒ऽय॒सि॒। ब्र॒ह्मा। च॒। असि॑। गृ॒हऽप॑तिः। च॒। नः॒। दमे॑॥२॥

पदार्थः-**(तव)** विद्याधर्मविनयैः राजमानस्य **(अग्ने)** पावकवद्बलिष्ठ **(होत्रम्)** हूयते दीयते यस्मिँस्तत् **(तव)** **(पोत्रम्)** पवित्रम् **(ऋत्वियम्)** ऋत्विगर्हम् **(तव)** **(नेष्ट्रम्)** नयनम् **(त्वम्)** **(अग्नित्)** पावकप्रदीप्तकरः **(ऋतायतः)** आत्मन ऋतं सत्यमिच्छतः **(तव)** **(प्रशास्त्रम्)** प्रशासनम् **(त्वम्)** **(अध्वरीयसि)** आत्मनोऽध्वरमहिंसामिच्छसि **(ब्रह्मा)** चतुर्वेदवित् **(च)** **(असि)** **(गृहपतिः)** गृहकृत्यस्य पालकः **(च)** **(नः)** अस्माकम् **(दमे)** दाम्यन्ति जना यस्मिन् गृहे तस्मिन् गृहे। अयं मन्त्रः निरुक्ते व्याख्यातः। (निरु०१.८)॥२॥

अन्वयः-हे अग्ने! अग्निरिव वर्त्तमान तव होत्रं तव पोत्रं तव नेष्ट्रमृत्वियं त्वमग्निदृतायतस्तव प्रशास्त्रं चाऽस्ति यस्त्वमध्वरीयसि त्वं ब्रह्मा चाऽसि नो दमे गृहपतिश्चाऽसि॥२॥

भावार्थः-यस्य पुरुषस्याग्निहोत्रवदुपकार ऋत्विक्कर्मवत् पवित्रा क्रियाऽऽप्तवन्न्यायोऽग्निविद्या-विज्ञातृवदुद्यमो न्यायाधीशवन्न्यायव्यवस्था यजमानवदहिंसा वेदपारगवद्विद्या गृहपतिवदैश्वर्यसंग्रहश्च स्यात्, स एव प्रशंसां प्राप्तुमर्हति॥२॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के समान बलवान् वर्त्तमान विद्वान्! **(तव)** विद्या, धर्म और नम्रता से प्रकाशमान जो आप उनका **(होत्रम्)** जिसमें पदार्थ होमा जाता वह होता का काम **(तव)** आपका **(पोत्रम्)** पवित्र काम **(तव)** आपका **(नेष्ट्रम्)** पहुँचाने का काम वह है **(ऋत्वियम्)** कि जो ऋत्विजों के योग्य है **(त्वम्)** आप **(अग्नित्)** अग्नि को प्रदीप्त करनेवाले और **(ऋतायतः)** अपने को सत्य की इच्छा करनेवाले **(तव)** आपका **(प्रशास्त्रम्)** उत्तम शिक्षा करना काम है **(त्वम्)** आप **(अध्वरीयसि)** अपने को अहिंसा कर्म की इच्छा करते **(त्वम्)** आप **(ब्रह्मा)** चारों वेदों के जाननेवाले **(च)** **(असि)** हैं और **(नः)** हम लोगों के **(दमे)** जिसमें जन इन्द्रियों का दमन करते हैं, इस घर में **(गृहपतिः)** घर के कामों की रक्षा करनेहारे **(च)** भी हैं॥२॥

भावार्थः-जिस पुरुष का अग्निहोत्र के तुल्य उपकार, ऋत्विजों के कर्म के समान पवित्र क्रिया, आप्त विद्वानों के समान न्याय, अग्निविद्या को जाननेवाले के समान उद्यम, न्यायाधीश के समान न्यायव्यवस्था, यज्ञ करनेवाले के समान अहिंसा, वेदपारङ्गत के समान विद्या और गृहपति के समान ऐश्वर्य्य का संग्रह हो, वही प्रशंसा को प्राप्त होने योग्य होता है॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वम॑ग्न॒ इन्द्रो॑ वृष॒भः स॒ताम॑सि॒ त्वं विष्णु॑रुरुगा॒यो न॑म॒स्यः॑।

त्वं ब्र॒ह्मा र॑यि॒विद् ब्र॑ह्मणस्पते॒ त्वं वि॑धर्तः सचसे॒ पुर॑न्ध्या॥३॥

त्वम्। अ॒ग्ने॒। इन्द्रः॑। वृ॒ष॒भः। स॒ताम्। अ॒सि॒। त्वम्। विष्णुः॑। उ॒रु॒ऽगा॒यः। न॒म॒स्यः॑। त्वम्। ब्र॒ह्मा। र॒यि॒ऽवित्। ब्र॒ह्म॒ण॒स्प॒ते॒। त्वम्। वि॒ध॒र्त॒रिति॑ वि॒ऽध॒र्तः॒। स॒च॒से॒। पुर॑म्ऽध्या॥३॥

पदार्थः-**(त्वम्)** **(अग्ने)** सूर्य्यवद्वर्त्तमान **(इन्द्रः)** ऐश्वर्यवान् **(वृषभः)** दुष्टसामर्थ्यहन्ता **(सताम्)** सत्पुरुषाणां मध्ये **(असि)** **(त्वम्)** **(विष्णुः)** जगदीश्वरवत् **(उरुगायः)** बहुभिः स्तुतः **(नमस्यः)** सत्कर्तुमर्हः **(त्वम्)** **(ब्रह्मा)** अखिलवेदाऽध्येता **(रयिवित्)** पदार्थविद्यायुक्तः **(ब्रह्मणस्पते)** वेदविद्याप्रचारक **(त्वम्)** **(विधर्त्तः)** यो विविधान् शुभान् गुणान् धरति तत्सम्बुद्धौ **(सचसे)** सहवर्त्तसे **(पुरन्ध्या)** पुरं पूर्णां विद्यां ध्यायति या तया सह॥३॥

अन्वयः:-हे अग्ने! इन्द्रो वृषभस्त्वं सतां नमस्योऽसि विष्णुस्त्वं सतामुरुगायोऽसि, हे ब्रह्मणस्पते! यस्त्वं रयिविद् ब्रह्माऽसि। हे विधर्त्तस्त्वं पुरन्ध्या सचसे॥३॥

भावार्थः:-यो मनुष्यो ब्रह्मचर्येणाऽप्तानां विदुषां सकाशात् प्राप्तविद्याशिक्ष ईश्वरवत्सर्वोपकारतया प्राप्तप्रशंसासत्कारः प्रत्यहं प्रज्ञया सर्वान् शुभगुणकर्मस्वभावान् धरति सोऽलं विद्यो भवति॥३॥

पदार्थः–हे **(अग्ने)** सूर्य के समान वर्त्तमान! **(इन्द्रः)** ऐश्वर्यवान् **(वृषभः)** दुष्टों के सामर्थ्य को विनाशनेवाले **(त्वम्)** आप **(सताम्)** सत्पुरुषों के बीच **(नमस्यः)** सत्कार करने योग्य **(असि)** हैं, **(विष्णुः)** जगदीश्वर के समान **(त्वम्)** आप सज्जनों में **(उरुगायः)** बहुतों से कीर्त्तन किये हुए हैं। हे **(ब्रह्मणस्पते)** वेदविद्या का प्रचार करनेवाले! जो **(त्वम्)** आप **(रयिवित्)** पदार्थविद्या के जानने **(ब्रह्मा)** समस्त वेद के पढ़नेवाले हैं। हे **(विधर्त्तः)** जो नाना प्रकार के शुभ गुणों को धारण करनेवाले! **(त्वम्)** आप **(पुरन्ध्या)** पूर्ण विद्या के धारण करनेवाली स्त्री उसके साथ **(सचसे)** सम्बन्ध करते हैं॥३॥

भावार्थः:-जो मनुष्य ब्रह्मचर्य से आप्त विद्वानों के समीप से विद्या शिक्षा को प्राप्त हुआ ईश्वर के समान उपकार-दृष्टि से प्रशंसा और सत्कार को प्राप्त हुआ प्रतिदिन उत्तम बुद्धि से समस्त शुभ गुण, कर्म और स्वभावों को धारण करता है, वह सम्पूर्ण विद्यावान् होता है॥३॥

अथ प्रकृतविषये राजशिष्यकृत्यमाह॥

अब चलते हुए विषय में राजशिष्य के कृत्य का वर्णन करते हैं॥

त्वम॑ग्ने॒ राजा॒ वरु॑णो धृ॒तव्र॑त॒स्त्वं मि॒त्रो भ॑वसि द॒स्म ईड्यः॑।

त्वम॑र्य॒मा सत्प॑ति॒र्यस्य॑ सं॒भुजं॒ त्वमंशो॑ वि॒दथे॑ देव भाज॒युः॥४॥

त्वम्। अ॒ग्ने॒। राजा॑। वरु॑णः। धृ॒तऽव्र॑तः। त्वम्। मि॒त्रः। भ॒व॒सि॒। द॒स्मः। ईड्यः॑। त्वम्। अ॒र्य॒मा। सत्ऽप॑तिः। यस्य॑। स॒म्ऽभुज॑म्। त्वम्। अंशः॑। वि॒दथे॑। दे॒व॒। भा॒ज॒युः॥४॥

पदार्थः-**(त्वम्)** **(अग्ने)** सूर्यवत्सर्वार्थप्रकाशक **(राजा)** शरीरात्ममनोभिस्तेजस्वी **(वरुणः)** वरः श्रेष्ठः **(धृतव्रतः)** स्वीकृतसत्यः **(त्वम्)** **(मित्रः)** प्राणवत् सुहृत् **(भवसि)** **(दस्मः)** दुःखानां दुष्टानामुपक्षेता **(ईड्यः)** स्तोतुमर्हः **(त्वम्)** **(अर्य्यमा)** न्यायकारी **(सत्पतिः)** सतां पुरुषाणामाचरणानां च पालकः **(यस्य)** **(सम्भुजम्)** संभोक्तुम् **(त्वम्)** **(अंशः)** प्रेरकः **(विदथे)** संग्रामे **(देव)** कमनीयतम **(भाजयुः)** अर्थिप्रत्यर्थिनां न्यायव्यवस्थया विभाजयिता॥४॥

अन्वयः:-हे देवाग्ने! यस्त्वं धृतव्रतो वरुणइव राजा भवसि दस्म ईड्यो मित्रो भवसि यस्य राज्यस्य संभुजन्त्वमर्य्यमा सत्पतिर्भवस्यंशस्त्वं विदथे भाजयुर्भवसि तस्मादस्माकं राजाऽसि॥४॥

भावार्थ:-येन सत्यं धृत्वाऽसत्यं त्यज्यते मित्रवत्सर्वस्मै सुखं दीयते स सत्यसन्धिर्दुष्टाचारात् पृथक्भूत: सत्याऽसत्ययोर्यथावद्विवेचनकारक: सर्वेषां मान्य: स्यात्॥४॥

पदार्थ:-हे **(देव)** अतीव मनोहर **(अग्ने)** सूर्य के समान समस्त अर्थों का प्रकाश करनेवाले! जो **(त्वम्)** आप **(धृतव्रत:)** सत्य को धारण किये स्वीकार किये हुए **(वरुण:)** श्रेष्ठ के समान **(राजा)** शरीर, आत्मा और मन से प्रतापवान् **(भवसि)** होते हैं, **(दस्म:)** दु:ख और दुष्टों के विनाश करनेवाले **(ईड्य:)** प्रशंसा के योग्य **(मित्र:)** प्राण के मित्र होते हैं, **(यस्य)** जिस राज्य के **(सम्भुजम्)** सम्भोग करने को **(त्वम्)** आप **(अर्यमा)** न्यायकारी **(सत्पति:)** सज्जन और सदाचारों के पालनेवाले होते हैं, **(अंश:)** प्रेरणा करनेवाले **(त्वम्)** आप **(विदथे)** संग्राम में **(भाजयु:)** अर्थी-प्रत्यर्थियों की व्यवस्था से पृथक्-पृथक् करनेवाले होते हैं, इससे हम लोगों के राजा हैं॥४॥

भावार्थ:-जिससे सत्य को धारण कर असत्य का त्याग किया जाता और मित्र के समान सबके लिये सुख दिया जाता है, वह सत्यसन्धि दुष्टाचार से अलग हुआ सत्य और असत्य का यथावद्विवेचन करनेवाला सबको मान करने योग्य होता है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वमग्ने त्वष्टा विधते सुवीर्यं तव ग्नावो मित्रमहः सजात्यम्।
त्वमाशुहेमा ररिषे स्वश्व्यं त्वं नरां शर्धो असि पुरूवसुः॥५॥१७॥

त्वम्। अग्ने। त्वष्टा। विधते। सुऽवीर्यम्। तव। ग्नावः। मित्रऽमहः। सऽजात्यम्। त्वम्। आशुऽहेमा। ररिषे। सुऽअश्व्यम्। त्वम्। नराम्। शर्धः। असि। पुरुऽवसुः॥५॥

पदार्थ:-**(त्वम्)** **(अग्ने)** वह्निरिव वर्त्तमान **(त्वष्टा)** छेत्ता **(विधते)** सेवमानाय नराय **(सुवीर्यम्)** सुष्ठु पराक्रमम् **(तव)** **(ग्नाव:)** ग्ना प्रशंसिता वाणी विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ **(मित्रमह:)** यो मित्राणि महति सत्करोति तत्सम्बुद्धौ **(सजात्यम्)** समानासु जातिषु भवम् **(त्वम्)** **(आशुहेमा)** आशून् शीघ्रकारिणो जनान् हिनोति वर्द्धयति स: **(ररिषे)** प्रयच्छसि **(स्वश्व्यम्)** शोभनेष्वश्वेष्वग्न्यादिषु भवम् **(त्वम्)** **(नराम्)** मनुष्याणाम् **(शर्ध:)** बलम् **(असि)** **(पुरूवसु:)** पुरूणां बहूनां वासयिता॥५॥

अन्वय:-हे अग्ने! त्वष्टा त्वं विधते सुवीर्य्यं ददासि। हे मित्रमहो ग्नाव:! तव सजात्यं प्रेमाऽस्ति। आशुहेमा त्वं स्वश्व्यं ररिषे स त्वं पुरूवसुर्नरां शर्धो वर्द्धकोऽसि॥५॥

भावार्थः-यस्य पुरुषस्य सत्या वाक् परार्थः पराक्रमोऽस्ति, स राजसु प्रशंसितो भवति॥५॥

पदार्थः–हे **(अग्ने)** अग्नि के समान वर्त्तमान विद्वान् **(त्वष्टा)** अज्ञान का विनाश करनेवाले! **(त्वम्)** आप **(विधते)** सेवा करते हुए मनुष्य के लिये **(सुवीर्यम्)** उत्तम पराक्रम को देते हैं। हे **(मित्रमहः)** मित्रों का सत्कार करनेवाले **(ग्नावः)** प्रशंसित वाणी से युक्त जन! **(तव)** आपका **(सजात्यम्)** समान जातियों में प्रसिद्ध हुआ प्रेम है, **(आशुहेमा)** शीघ्रकारी जनों को वृद्धि देनेवाले **(त्वम्)** आप **(स्वश्व्यम्)** सुन्दर अग्न्यादि पदार्थों में प्रसिद्ध हुए बल को **(रिरिषे)** देते हैं सो **(त्वम्)** आप **(पुरूवसुः)** बहुतों को निवास देनेवाले **(नराम्)** मनुष्यों के **(शर्धः)** बल के बढ़ानेवाले **(असि)** हैं॥५॥

भावार्थः-जिस पुरुष की सत्यवाणी और परार्थ पराक्रम है, वह राजजनों में प्रशंसायुक्त होता है॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वमग्ने रुद्रो असुरो महो दिवस्त्वं शर्धो मारुतं पृक्ष ईशिषे।
त्वं वातैररुणैर्यासि शंगयस्त्वं पूषा विधतः पासि नु त्मना॥६॥

त्वम्। अग्ने। रुद्रः। असुरः। महः। दिवः। त्वम्। शर्धः। मारुतम्। पृक्षः। ईशिषे। त्वम्। वातैः। अरुणैः। यासि। शम्ऽगयः। त्वम्। पूषा। विधतः। पासि। नु। त्मना॥६॥

पदार्थः-**(त्वम्)** **(अग्ने)** अग्निरिव दाहकृत **(रुद्रः)** दुष्टानां रोदयिता **(असुरः)** मेघ इव **(महः)** महान् **(दिवः)** प्रकाशमानस्य **(त्वम्)** **(शर्द्धः)** बलम् **(मारुतम्)** महद्विषयम् **(पृक्षः)** संपृक्तम् **(ईशिषे)** **(त्वम्)** **(वातैः)** वायुभिः **(अरुणैः)** अग्न्यादिभिः **(यासि)** प्राप्नोषि **(शङ्गयः)** शं सुखं गमयति सः **(त्वम्)** **(पूषा)** पोषकः **(विधतः)** सेवकान् **(पासि)** पालयसि **(नु)** सद्यः **(त्मना)** आत्मना॥६॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं रुद्रोऽसुरो मेघ इव महो महांस्त्वं मारुतं पृक्षो दिवः शर्ध ईशिषे त्वं वातैररुणैः सह यासि पूषा शङ्गयस्त्वं त्मना विधतो नु पासि तस्मात् कस्य सत्कर्त्तव्यो न भवसि?॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये जना बलमिच्छन्ति दुष्टान् सन्ताड्य धर्माचारिणः सुखयन्ति सदैव सर्वस्योन्नतिमिच्छन्ति तेऽसंख्यैश्वर्य्यं प्राप्नुवन्ति॥६॥

पदार्थः–हे **(अग्ने)** अग्नि के समान दाह करनेवाले! **(त्वम्)** आप **(रुद्रः)** दुष्टों को रुलानेवाले **(असुरः)** मेघ के समान **(महः)** बड़े **(त्वम्)** आप **(मारुतम्)** मरुत् विषयक **(पृक्षः)**

सम्बन्ध और **(दिवः)** प्रकाशमान पदार्थ के **(शर्द्धः)** बल के **(ईशिषे)** ईश्वर हैं, उसके व्यवहार प्रकाश करने में समर्थ हैं **(त्वम्)** आप **(वातैः)** पवनों से और **(अरुणैः)** अग्नि आदि पदार्थों के साथ **(यासि)** प्राप्त होते हैं **(पूषा)** पुष्टि करने और **(शङ्गयः)** सुख प्राप्ति करानेवाले **(त्वम्)** आप **(त्मना)** अपने से **(विधतः)** सेवकों की **(नु)** शीघ्र **(पासि)** पालना करते हैं, इससे किसको सत्कार करने योग्य नहीं होते?॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो जन बल की इच्छा करते, दुष्टाचारियों को अच्छे प्रकार ताड़ना देकर धर्माचारियों को सुखी करते और सदैव सबकी उन्नति को चाहते हैं, वे अतुल ऐश्वर्य को प्राप्त होते हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वमग्ने द्रविणोदा अरंकृते त्वं देवः सविता रत्नधा असि।
त्वं भगो नृपते वस्व ईशिषे त्वं पायुर्दमे यस्तेऽविधत्॥७॥

त्वम्। अग्ने। द्रविणःऽदाः। अरम्ऽकृते। त्वम्। देवः। सविता। रत्नऽधाः। असि। त्वम्। भगः। नृऽपते। वस्वः। ईशिषे। त्वम्। पायुः। दमे। यः। ते। अविधत्॥७॥

पदार्थः-**(त्वम्)** **(अग्ने)** सूर्यवत् सुखप्रदातः **(द्रविणोदाः)** धनप्रदः **(अरङ्कृते)** पूर्णपुरुषार्थिने **(त्वम्)** **(देवः)** कमनीयः **(सविता)** ऐश्वर्यं प्रति प्रेरकः **(रत्नधाः)** यो रत्नानि दधाति सः **(असि)** **(त्वम्)** **(भगः)** ऐश्वर्यवान् **(नृपते)** नृणां पालक **(वस्वः)** वसूनि **(ईशिषे)** **(त्वम्)** **(पायुः)** पालकः **(दमे)** निजगृहे **(यः)** **(ते)** तव **(अविधत्)** विदधाति॥७॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वमरङ्कृते द्रविणोदाः त्वं रत्नधाः सविता देवोऽसि। हे नृपते भगवँस्त्वं वस्व ईशिषे यो दमे तेऽविधत् त्वत्सेवां विदधाति तस्य त्वं पायुरसि॥७॥

भावार्थः-ये पुरुषार्थिनां मनुष्याणां सत्कर्त्तारोऽलसानां तिरस्कर्त्तारः परिचारकेभ्यः सुखस्य दातार ऐश्वर्यवन्तो भवेयुस्त इह नृपतयो भवितुमर्हेयुः॥७॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** सूर्य के समान सुख देनेवाले! **(त्वम्)** आप **(अरङ्कृते)** पूरे पुरुषार्थ करनेवाले के लिये **(द्रविणोदाः)** धन देनेवाले **(त्वम्)** आप **(रत्नधाः)** रत्नों को धारण और **(सविता)** ऐश्वर्य के प्रति प्रेरणा करनेवाले **(देवः)** मनोहर देव **(असि)** हैं। हे **(नृपते)** मनुष्यों की पालना करनेवाले और **(भगः)** ऐश्वर्यवान्! **(त्वम्)** आप **(वस्वः)** धनों की **(ईशिषे)** ईश्वरता रखते

हैं **(यः)** जो **(ते)** आपके **(दमे)** निज घर में **(अविधत्)** विधान करता है, उसके **(त्वम्)** आप **(पायुः)** पालनेवाले हैं॥७॥

भावार्थः-जो पुरुषार्थी मनुष्यों का सत्कार तथा आलस्य करनेवालों का तिरस्कार करनेवाले और सेवकों के लिये सुख देनेवाले ऐश्वर्यवान् हों वे इस संसार में सबके राजा होने को योग्य होवें॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वाम॑ग्ने दम॒ आ वि॒श्पतिं॒ विश॒स्त्वां राजा॑नं सुवि॒दत्र॑मृञ्जते।
त्वं विश्वा॑नि स्वनीक पत्यसे॒ त्वं स॒हस्रा॑णि श॒ता दश॒ प्रति॑॥८॥

त्वाम्। अ॒ग्ने॒। दमे॑। आ। वि॒श्पति॑म्। विशः॑। त्वाम्। राजा॑नम्। सु॒ऽवि॒दत्र॑म्। ऋ॒ञ्ज॒ते। त्वम्। विश्वा॑नि। सु॒ऽअ॒नी॒क॒। प॒त्य॒से॒। त्वम्। स॒हस्रा॑णि। श॒ता। दश॑। प्रति॑॥८॥

पदार्थः-**(त्वाम्)** **(अग्ने)** अग्निरिव **(दमे)** निजगृहे **(आ)** समन्तात् **(विश्पतिम्)** प्रजापालकम् **(विशः)** प्रजाः **(त्वाम्)** **(राजानम्)** स्वस्वामिनम् **(सुविदत्रम्)** सुष्ठुदातारम् **(ऋञ्जते)** प्रसाध्नुवन्ति। अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदमेकवचनञ्च। **ऋञ्जतिः प्रसाधनकर्मासु पठितम्।** (निरु०६.२१)। **(त्वम्)** **(विश्वानि)** सर्वाणि **(स्वनीक)** शोभनमनीकं सेना यस्य तत्सम्बुद्धौ **(पत्यसे)** पतिभावमाचरसि **(त्वम्)** **(सहस्राणि)** **(शता)** शतानि **(दश)** **(प्रति)**॥८॥

अन्वयः-हे अग्ने! विश्पतिं त्वां विशो दम आ ऋञ्जते सुविदत्रं त्वां राजानमृञ्जते। हे स्वनीक! त्वं विश्वानि पत्यसे त्वं सहस्राणि शता दश प्रति पत्यसे॥८॥

भावार्थः-स एव राजा भवितुमर्हति यं सर्वाः प्रजाः स्वीकुर्य्युः। स एव सेनापत्यमर्हति यो दशभिः शतैः सहस्रैश्च वीरैः सह योद्धुं शक्नोति॥८॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के समान प्रतापवान् **(विश्पतिम्)** प्रजा की पालना करनेवाले! **(त्वाम्)** आपको **(विशः)** प्रजाजन **(दमे)** निज घर में **(आ, ऋञ्जते)** सब ओर से प्रसिद्ध करते हैं अर्थात् प्रजापति मानते हैं और **(सुविदत्रम्)** सुन्दर देनेवाले **(त्वाम्)** आपको **(राजानम्)** अपना स्वामी प्रसिद्ध करते हैं। हे **(स्वनीक)** सुन्दर सेना रखनेवाले! **(त्वम्)** आप **(विश्वानि)** समस्त पदार्थों को **(पत्यसे)** पतिभाव को प्राप्त होते हैं और **(त्वम्)** आप **(सहस्राणि)** सहस्रों **(शता)** सैकड़ों और **(दश)** दहाइयों के **(प्रति)** प्रति पतिभाव को प्राप्त होते हैं॥८॥

भावार्थः-वही राजा होने योग्य है जिसको समस्त प्रजाजन स्वीकार करें। वही सेनापति होने को योग्य है जो दश वा सौ वा सहस्र वीरों के साथ युद्ध कर सकता है॥८॥

पुना राजशिष्यविषयमाह॥

फिर राजशिष्य विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वामग्ने पितरमिष्टिभिर्नरस्त्वां भ्रात्राय शम्या तनूरुचम्।
त्वं पुत्रो भवसि यस्तेऽविधत् त्वं सखा सुशेवः पास्याधृषः॥९॥

त्वाम्। अग्ने। पितरम्। इष्टिऽभिः। नरः। त्वाम्। भ्रात्राय। शम्या। तनूऽरुचम्। त्वम्। पुत्रः। भवसि। यः। ते। अविधत्। त्वम्। सखा। सुऽशेवः। पासि। आऽधृषः॥९॥

पदार्थः-(**त्वाम्**) (**अग्ने**) अग्निरिव वर्त्तमान राजन् (**पितरम्**) पालकम् (**इष्टिभिः**) होमैरिव सत्कारैः (**नरः**) मनुष्याः (**त्वाम्**) (**भ्रात्राय**) बन्धुभावाय (**शम्या**) कर्मणा (**तनूरुचम्**) तन्वो रोचन्ते यस्मै तम् (**त्वम्**) (**पुत्रः**) पुरु दुःखाद् रक्षकः (**भवसि**) (**यः**) (**ते**) तव (**अविधत्**) विधत्ते (**त्वम्**) (**सखा**) (**सुशेवः**) सुष्ठु सुखप्रदः (**पासि**) (**आधृषः**) समन्ताद्धर्षणं कुर्वतः॥९॥

अन्वयः-हे अग्ने! यस्त्वं पुत्रो भवसि यस्ते सुखमविधत् यः सुशेवः सखा त्वमाधृषः पासि तं त्वां तनूरुचं तं त्वा पितरमिष्टिभिरग्निरिव वर्त्तमानं भ्रात्राय शम्या नरः पान्तु॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा होमादिना सुसेवितोऽग्नी रक्षको भवति तथा भ्रातरः सखायः पुत्रा भ्रातॄन्मित्राणि पितॄँश्च सेवन्ताम्॥९॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के समान वर्त्तमान राजन्! (**यः**) जो (**त्वम्**) आप (**पुत्रः**) बहुत दुःख से रक्षा करनेवाले (**भवसि**) होते हैं जो (**ते**) आपके सुख का (**अविधत्**) विधान करता है जो (**सुशेवः**) सुन्दर सुख देनेवाले (**सखा**) मित्र (**त्वम्**) आप (**आधृषः**) सब ओर से धृष्टता करनेवाले जनों को (**पासि**) पालते हो उन (**त्वाम्**) आप (**तनूरुचम्**) तनूरुच् अर्थात् जिनके लिये शरीर प्रकाशित होते वा उन (**त्वाम्**) आप (**पितरम्**) पालनेवाले वा (**इष्टिभिः**) हवनों के समान सत्कारों से अग्नि के तुल्य वर्त्तमान को (**भ्रात्राय**) भाईपने के लिये (**शम्या**) कर्म के साथ (**नरः**) मनुष्य पालें॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे होम आदि से अच्छा सेवन किया हुआ अग्नि रक्षा करनेवाला होता है, वैसे भ्राता, मित्र, पुत्रजन अपने भ्राता, मित्र और पितरों को सेवें॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वमग्न ऋभुराके नमस्य१स्त्वं वाजस्य क्षुमतो राय ईशिषे।

त्वं वि भास्यनु दक्षि दावने त्वं विशिक्षुरसि यज्ञमातनिः॥१०॥१८॥

त्वम्। अग्ने। ऋभुः। आके। नमस्यः। त्वम्। वाजस्य। क्षुऽमतः। रायः। ईशिषे। त्वम्। वि। भासि। अनु। धक्षि। दावने। त्वम्। विऽशिक्षुः। असि। यज्ञम्। आऽतनिः॥१०॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**अग्ने**) सर्वशास्त्रपारङ्गत प्रतापवन् राजन् (**ऋभुः**) मेधावी (**आके**) समीपे (**नमस्यः**) सत्कर्त्तुं योग्यः (**त्वम्**) (**वाजस्य**) विज्ञाननिमित्तस्य (**क्षुमतः**) बह्वन्नादि विद्यते यस्य तस्य (**रायः**) धनस्य (**ईशिषे**) ईश्वरो भवसि (**त्वम्**) (**वि**) (**भासि**) प्रकाशयसि (**अनु**) (**दक्षि**) दहसि। अत्र **बहुलं छन्दसी**ति शपो लुक्। (**दावने**) दानशीलाय (**त्वम्**) (**विशिक्षुः**) सुशिक्षकः (**असि**) (**यज्ञम्**) (**आतनिः**) विस्तारकः॥१०॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वमृभुरसि त्वमाके नमस्योऽसि त्वं वाजस्य क्षुमतो राय ईशिषे त्वं विभास्यग्निरिवाऽनुदक्षि दावने विशिक्षुस्त्वं यज्ञमातनिरसि॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। येऽग्निवत् प्रजापीडकान् दहन्ति पुरुषार्थेनैश्वर्यमुन्नयन्ति विद्याविनयसुशीलादि प्रकाशयन्ति ते सर्वैर्माननीया भवन्ति॥१०॥

पदार्थः–हे (**अग्ने**) सर्वशास्त्र पारङ्गत प्रतापवान् राजन्! (**त्वम्**) आप (**ऋभुः**) बुद्धिमान् हैं और (**आके**) समीप में (**नमस्यः**) नमस्कार सत्कार करने योग्य हैं (**त्वम्**) आप (**वाजस्य**) विज्ञान निमित्तक (**क्षुमतः**) बहुत अन्नादि पदार्थ समूह जिसके सम्बन्ध में विद्यमान उस (**रायः**) धन के (**ईशिषे**) ईश्वर होते हैं (**त्वम्**) आप (**विभासि**) विशेषता से सब पदार्थों का प्रकाश करते हैं और अग्नि के समान (**अनुदक्षि**) अनुकूलता से अज्ञानजन्य दुःख को दहन करते हो (**दावने**) दानशील (**विशिक्षुः**) उत्तम शिक्षा करनेवाले (**त्वम्**) आप (**यज्ञम्**) यज्ञ का (**आतनिः**) विस्तार करनेवाले (**असि**) हैं॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो अग्नि के समान प्रजाओं के पीड़ा देनेवालों को जलाते हैं, पुरुषार्थ से ऐश्वर्य की उन्नति करते हैं, विद्या, विनय और उत्तम शीलादि का प्रकाश करते हैं, वे सबको माननीय होते हैं॥१०॥

पुनरध्यापकविषयमाह॥

फिर अध्यापक विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वमग्ने अदितिर्देव दाशुषे त्वं होत्रा भारती वर्धसे गिरा।
त्वमिळा शतहिमासि दक्षसे त्वं वृत्रहा वसुपते सरस्वती॥११॥

त्वम्। अग्ने। अदितिः। देव। दाशुषे। त्वम्। होत्रा। भारती। वर्धसे। गिरा। त्वम्। इळा। शतऽहिमा। असि। दक्षसे। त्वम्। वृत्रऽहा। वसुऽपते। सरस्वती॥११॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**अग्ने**) विद्याप्रद विद्वन् (**अदितिः**) द्यौरिव विद्यागुणप्रकाशकः (**देव**) प्रकाशमान (**दाशुषे**) दात्रे (**त्वम्**) (**होत्रा**) आदातुमर्हे (**भारती**) या विद्याधर्त्रीव (**वर्द्धसे**) (**गिरा**) सुशिक्षाविद्यायुक्तया वाचा (**त्वम्**) (**इळा**) स्तोतुमर्हा (**शतहिमा**) शतं हिमानि यस्या आयुषि सा (**असि**) (**दक्षसे**) बलाय विद्याबलदानाय (**त्वम्**) (**वृत्रहा**) मेघहन्ता सूर्यइव (**वसुपते**) धनस्य पालक (**सरस्वती**) प्रशस्तविज्ञानयुक्तेव॥११॥

अन्वयः-हे देवाऽग्ने! त्वं दाशुषेऽदितिरसि त्वं होत्रा भारती सन् गिरा वर्द्धसे त्वं दक्षसे शतहिमा इडाऽसि। हे वसुपते! त्वं वृत्रहा तथा सरस्वत्यसि॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। सद्विद्याऽध्यापकः शास्त्रपारङ्गतो विद्वान् मातृवत् पालयति सर्वतः सद्गुणान् ददाति ततः शिष्याः शीघ्रं विद्याबलयुक्ता भवन्ति॥११॥

पदार्थः-हे (**देव**) प्रकाशमान (**अग्ने**) विद्या देनेवाले विद्वान्! (**त्वम्**) आप (**दाशुषे**) दानशील शिष्य के लिये (**अदितिः**) अन्तरिक्ष प्रकाश के समान विद्या गुणों का प्रकाश करनेवाले हैं (**त्वम्**) आप (**होत्रा**) ग्रहण करने योग्य (**भारती**) विद्या धारण करनेवाली बालिका के समान होते हुए (**गिरा**) सुन्दर शिक्षा और विद्यायुक्त वाणी से (**वर्द्धसे**) वृद्धि को प्राप्त होते हैं (**त्वम्**) आप (**दक्षसे**) विद्या बल के देने के लिए (**शतहिमा**) सौ वर्ष जिसकी आयु वह (**इडा**) स्तुति के योग्य अध्यापिका के समान (**असि**) हैं, हे (**वसुपते**) धन के पालनेहारे! (**त्वम्**) आप (**वृत्रहा**) मेघहन्ता सूर्य के समान तथा (**सरस्वती**) प्रज्ञान विज्ञानयुक्त वाणी के समान हैं॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। अच्छी विद्या का पढ़ानेहारा, शास्त्र का पारगन्ता विद्वान् जन माता के समान पालना करता है और सब विषयों से उत्तम गुणों को देता है, उससे शिष्यजन शीघ्र विद्याबलयुक्त होते हैं॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वम॑ग्ने सु॒भृत॑ उत्त॒मं वय॒स्तव॑ स्पा॒र्हे वर्ण॒ आ सं॒दृशि॒ श्रियः॑।
त्वं वाजः॑ प्र॒तर॑णो बृ॒हन्न॑सि॒ त्वं र॒यिर्ब॑हु॒लो वि॒श्वत॒स्पृथुः॑॥१२॥

त्वम्। अग्ने। सुऽभृतः। उत्ऽतमम्। वयः। तव। स्पार्हे। वर्णे। आ। सम्ऽदृशि। श्रियः। त्वम्। वाजः। प्रऽतरणः। बृहन्। असि। त्वम्। रयिः। बहुलः। विश्वतः। पृथुः॥१२॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**अग्ने**) विद्युदिव बलिष्ठ (**सुभृतः**) शोभनं कर्म भृतं येन सः (**उत्तमम्**) श्रेष्ठम् (**वयः**) कमनीयं जीवनम् (**तव**) (**स्पार्हे**) अभीप्सनीये (**वर्णे**) शुक्लादिगुणे (**आ**) (**संदृशि**) सम्यग्द्रष्टव्ये (**श्रियः**) लक्ष्मीः (**त्वम्**) (**वाजः**) ज्ञानवान् (**प्रतरणः**) यः प्रकृष्टतया दुःखानि तरति (**बृहन्**) वर्द्धमानः (**असि**) (**त्वम्**) (**रयिः**) द्रव्यरूपः (**बहुलः**) बहूनि सुखानि लाति (**विश्वतः**) सर्वतः (**पृथुः**) विस्तीर्णः॥१२॥

अन्वयः-हे अग्ने! यस्त्वं रयिर्बहुलो विश्वतस्पृथुः सुभृतः प्रतरणो बृहन्नसि यस्त्वं वाजोऽसि यस्य तव स्पार्हे संदृशि वर्ण उत्तमं वय आ श्रियश्च वर्त्तन्ते, स त्वमध्यापको भव॥१२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा विद्वांसो गुणकर्मस्वभावतो विद्युतं विदित्वा कार्येषु संप्रयुज्य श्रीमन्तो भवन्ति ब्रह्मचर्येण दीर्घायुषश्च जायन्ते तथा सर्वैर्विद्यायुक्तैर्मनुष्यैर्भवितव्यम्॥१२॥

पदार्थः–हे (**अग्ने**) बिजुली के समान बलीजन जो (**त्वम्**) आप (**रयिः**) द्रव्यरूप (**बहुलः**) बहुत सुखों के ग्रहण करनेहारे (**विश्वतः**) सबसे (**पृथुः**) विस्तार को प्राप्त (**सुभृतः**) उत्तम कर्म जिन्होंने धारण किया (**प्रतरणः**) कठिनता से दुःखों को पार होते और (**बृहन्**) बढ़ते हुए (**असि**) हैं जो (**त्वम्**) आप (**वाजः**) ज्ञानवान् हैं जिन (**तव**) आपके (**स्पार्हे**) इच्छा करने और (**संदृशि**) अच्छे प्रकार देखने योग्य (**वर्णे**) वर्ण में (**उत्तमम्**) उत्तम (**वयः**) मनोहर जीवन (**आ, श्रियः**) और सब ओर से लक्ष्मी वर्त्तमान है सो (**त्वम्**) आप अध्यापक हूजिये॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे विद्वान् जन गुण, कर्म, स्वभाव से बिजुली को जान और कार्य्यों में उसका अच्छे प्रकार प्रयोग कर श्रीमान् होते हैं और ब्रह्मचर्य से दीर्घायु होते हैं, वैसे सब विद्यायुक्त मनुष्यों को होना चाहिये॥१२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वाम॑ग्न आदि॒त्यास॑ आ॒स्यं॑१ त्वां जि॒ह्वां शुच॑यश्चक्रिरे कवे।
त्वां रा॑ति॒षाचो॑ अध्व॒रेषु॑ सश्चिरे॒ त्वे दे॒वा ह॒विर॑द॒न्त्याहु॑तम्॥१३॥

त्वाम्। अ॒ग्ने॒। आ॒दि॒त्यासः॑। आ॒स्य॑म्। त्वाम्। जि॒ह्वाम्। शुच॑यः। च॒क्रि॒रे॒। क॒वे॒। त्वाम्। रा॒ति॒ऽसाचः॑। अ॒ध्व॒रेषु॑। स॒श्चि॒रे॒। त्वे इति॑। दे॒वाः। ह॒विः। अ॒द॒न्ति॒। आऽहु॑तम्॥१३॥

पदार्थः-(**त्वाम्**) (**अग्ने**) अग्निवद्वर्त्तमान आप्त विद्वन् (**आदित्यासः**) द्वादश मासा इव विद्यार्थिनः (**आस्यम्**) मुखमिव प्रमुखम् (**त्वाम्**) (**जिह्वाम्**) वाणीम् (**शुचयः**) पवित्राः (**चक्रिरे**) कुर्वन्ति (**कवे**) सकलसाङ्गोपाङ्गवेदवित् (**त्वाम्**) (**रातिषाचः**) दानं सेवमानाः (**अध्वरेषु**)

अहिंसनीयेषु व्यवहारेषु **(सश्चिरे)** समवयन्ति **(त्वे)** त्वयि **(देवाः)** विद्वांसः **(हविः)** अत्तुमर्हम् **(अदन्ति)** आहुतम् समन्ताद् गृहीतम्॥१३॥

अन्वयः-हे कवेऽग्ने! सूर्यमादित्यास इव यं त्वामास्यं शुचयस्त्वां जिह्वामिव चक्रिरेऽध्वरेषु रातिषाचस्त्वां सश्चिरे यस्मिन् त्वे वर्त्तमाना देवा आहुतं हविरदन्ति स त्वमस्माकमध्यापको भव॥१३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा संवत्सरमाश्रित्य मासा मुखमाश्रित्य देहपुष्टिर्जिह्वां समाश्रित्य रसविज्ञानं यज्ञं प्राप्य विद्वत्सत्कार उत्तममन्नं प्राप्य रुचिश्च जायते तथाप्ताऽध्यापकानाश्रित्य मनुष्याः शुभगुणलक्षणा जायन्ते॥१३॥

पदार्थः-हे **(कवे)** समस्त साङ्गोपाङ्ग वेद के जाननेवाले **(अग्ने)** अग्नि के समान वर्त्तमान विद्वान्! **(आदित्यासः)** बारह महीना जैसे सूर्य्य को, वैसे विद्यार्थी जन जिन **(त्वाम्)** आपको **(आस्यम्)** मुख के समान अग्रगन्ता और **(शुचयः)** पवित्र शुद्धात्मा जन **(त्वाम्)** आपको **(जिह्वाम्)** वाणीरूप **(चक्रिरे)** कर रहे मान रहे हैं तथा **(अध्वरेषु)** न नष्ट करने योग्य व्यवहारों में **(रातिषाचः)** दान के सेवनेवाले जन **(त्वाम्)** आपको **(सश्चिरे)** सम्यक् प्रकार से मिलते हैं **(त्वे)** तुम्हारे होते **(देवाः)** विद्वान् जन **(आहुतम्)** सब ओर से ग्रहण किये हुए **(हविः)** भक्षण करने योग्य पदार्थ को **(अदन्ति)** खाते हैं, सो आप हमारे अध्यापक हूजिये॥१३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे [संवत्सर का] आश्रय लेकर महीने, मुख का आश्रय लेकर शरीर की पुष्टि, जिह्वा के आश्रय से रस का विज्ञान, यज्ञ को प्राप्त हो विद्वानों के सत्कार और उत्तम अन्न को पाकर रुचि होती है, वैसे आप्त शास्त्रज्ञ धर्मात्मा विद्वानों को प्राप्त होकर मनुष्य शुभ गुण लक्षणयुक्त होते हैं॥१३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वे अ॑ग्ने॒ विश्वे॑ अ॒मृता॑सो अ॒द्रुह॑ आ॒सा दे॒वा ह॒विर॑द॒न्त्याहु॑तम्।
त्वया॒ मर्ता॑सः स्वदन्त आसु॒तिं त्वं गर्भो॑ वी॒रुधां॑ जज्ञिषे॒ शुचि॑ः॥१४॥

त्वे इति॑। अ॒ग्ने॒। विश्वे॑। अ॒मृता॑सः। अ॒द्रुह॑ः। आ॒सा। दे॒वाः। ह॒विः। अ॒द॒न्ति॒। आऽहु॑तम। त्वया॑। मर्ता॑सः। स्व॒द॒न्ते॒। आ॒ऽसु॒तिम्। त्वम्। गर्भ॑ः। वी॒रुधा॑म्। ज॒ज्ञि॒षे॒। शुचि॑ः॥१४॥

पदार्थः-**(त्वे)** त्वयि **(अग्ने)** अग्निवत् स्वप्रकाशक **(विश्वे)** सर्वे **(अमृतासः)** स्वस्वरूपेण जन्ममरणरहिता जीवात्मानः **(अद्रुहः)** त्यक्तद्रोहाः **(आसा)** मुखेन। अत्र **छान्दसो वर्णलोप** इति मलोपः। **(देवाः)** विद्वांसः **(हविः)** **(अदन्ति)** **(आहुतम्)** **(त्वया)** **(मर्त्तासः)**

शरीरयोगेनजन्ममरणसहिताः **(स्वदन्ते)** सुष्ठु भुञ्जानाः **(आसुतिम्)** समन्ताज्जन्मभावम् **(त्वम्)** **(गर्भः)** कुक्षिस्थः **(वीरुधाम्)** लतावृक्षादीनां मध्ये **(जज्ञिषे)** जायसे **(शुचि)** पवित्रः॥१४॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वे सत्यद्रुहो विश्वेऽमृतासो देवा आहुतमासा हविरदन्ति येन त्वयासा स्वदन्तो मर्त्तास आसुतिं भजन्ते यस्त्वं वीरुधां गर्भोऽग्निवद्गर्भो भूत्वा शुचिस्सन् जज्ञिषे तं त्वां विद्याप्राप्तय आश्रयन्ति॥१४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सर्वे जीवा विद्यमानेऽग्नौ सति जीवितुं भोक्तुं चार्हन्ति तथाऽऽप्तेष्वध्यापकेषु सत्सु पवित्रा रागद्वेषरहिता भूत्वा ऐहिकं पारमार्थिकं सुखं प्राप्य मुक्तावानन्दिता जन्मान्तरसंस्कारे पवित्रा जायन्ते॥१४॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के समान प्रकाशमान! आप **(त्वे)** तुम्हारे होते **(अद्रुहः)** द्रोह छोड़े हुए **(विश्वे)** सब **(अमृतासः)** अपने-अपने रूप से जन्म-मरण रहित जीवात्मा जिनके वे **(देवाः)** विद्वान् जन **(आहुतम्)** प्राप्त होने योग्य पदार्थ को **(आसा)** मुख से **(हविः)** जो कि विद्वानों के खाने योग्य है **(अदन्ति)** खाते हैं तथा जिन **(त्वया)** आपकी प्रेरणा से **(स्वदन्ते)** सुन्दरता से भोजन करते हुए **(मर्त्तासः)** शरीर के योग से जन्म-मरण सहित मनुष्य **(आसुतिम्)** जन्मयोग अर्थात् विद्याजन्म का संयोग सेवते हैं, जो **(त्वम्)** आप **(वीरुधाम्)** लता वृक्षादिकों के बीच **(गर्भः)** गर्भरूप अग्नि जैसे वैसे होकर **(शुचिः)** पवित्र होते हुए **(जज्ञिषे)** प्रसिद्ध होते हैं, उन आपका विद्या की प्राप्ति के लिये लोग आश्रय करते हैं॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सब जीव विद्यमान अग्नि के होते जीने और भोजन करने को योग्य होते हैं, वैसे शास्त्रज्ञ धर्मात्मा पढ़ानेवालों के होते पवित्र रागद्वेषरहित सांसारिक और पारमार्थिक सुख को प्राप्त हुए मुक्ति के बीच आनन्द करते हुए जन्मान्तर संस्कार में पवित्र होते हैं॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वं तान्त्सं च प्रति चासि मज्मनाग्ने सुजात प्र च देव रिच्यसे।

पृक्षो यदत्र महिना वि ते भुवदनु द्यावापृथिवी रोदसी उभे॥ १५॥

त्वम्। तान्। सम्। च। प्रति। च। असि। मज्मना। अग्ने। सुऽजात। प्र। च। देव। रिच्यसे। पृक्षः। यत्। अत्र। महिना। वि। ते। भुवत्। अनु। द्यावापृथिवी इति। रोदसी इति। उभे इति॥ १५॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**तान्**) निःश्रेयसाभ्युदयसाधकान् नॄन् (**सम्**) सङ्गाते (**च**) (**प्रति**) प्रतिनिधौ (**च**) (**असि**) (**मज्मना**) बलेन (**अग्ने**) विद्युद्वद्व्यतिरिक्त (**सुजात**) सुष्ठुप्रसिद्धे (**प्र**) (**च**) (**देव**) विद्यादातः (**रिच्यसे**) पृथग्भवसि (**पृक्षः**) विद्यासंपर्चनम् (**यत्**) (**अत्र**) अस्मिन् संसारे (**महिना**) महिम्ना (**वि**) (**ते**) तव (**भुवत्**) भवति (**अनु**) (**द्यावापृथिवी**) (**रोदसी**) रोदननिमित्ते (**उभे**) द्वे॥१५॥

अन्वयः-हे सुजात देवाग्ने! यस्त्वं मज्मना ताँश्च प्रति च संचासि प्ररिच्यसे च उभे रोदसी द्यावापृथिवी इव महिना यदत्र पृक्षः प्राप्तोऽसि यस्य ते तव विद्याऽनु विभुवत् स च त्वमस्माकमध्यापक उपदेशकश्च भव॥१५॥

भावार्थः-यथा पावकेऽनेके गुणाः सन्ति तथा विद्वत्सेविषु धर्म्ये प्रवर्त्तमानेष्वधर्मान्निवृत्तेष्विह बहवः शुभगुणा जायन्ते॥१५॥

पदार्थः-हे (**सुजात**) सुन्दर प्रसिद्धिवान् (**देव**) विद्या देनेवाले (**अग्ने**) बिजुली के समान सबसे अलग विद्वान्! जो (**त्वम्**) आप (**मज्मना**) बल से वा पुरुषार्थ से (**तान्**) उन मनुष्यों को कि जो मोक्ष सुख और सांसारिक सुख साधनेवाले हैं (**प्रति, च**) प्रतिनिधि और (**सम्, च**) मिले हुए भी (**असि**) हैं। (**च**) और (**प्र, रिच्यसे**) अलग होते हो और (**उभे**) दोनों (**रोदसी**) सांसारिक तुच्छ सुख के कारण रोने के निमित्त जो (**द्यावापृथिवी**) द्यावापृथिवी के समान (**महिना**) अपने महिमा से (**यत्**) जो (**अत्र**) यहाँ (**पृक्षः**) विद्या सम्बन्ध को भी प्राप्त हो जिन (**ते**) आपकी विद्या (**वि, अनु, भुवत्**) अनुकूल विशेषता से होती है, सो आप हमारे अध्यापक और उपदेशक हूजिये॥१५॥

भावार्थः-जैसे अग्नि में अनेक गुण हैं, वैसे विद्वानों की सेवा करने और धर्म में प्रवर्त्तमान होने [वाले तथा] अधर्म से निवृत्त जनों में इस संसार में बहुत शुभ गुण उत्पन्न होते हैं॥१५॥

पुना राजशिष्यविषयमाह॥

फिर राजशिष्य विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ये स्तोतृभ्यो गोअग्रामश्वपेशसमग्ने रातिमुपसृजन्ति सूरयः।
अस्माञ्च ताँश्च प्र हि नेषि वस्य आ बृहद्वदेम विदथे सुवीराः॥१६॥१९॥

ये। स्तोतृऽभ्यः। गोऽअग्राम्। अश्वऽपेशसम्। अग्ने। रातिम्। उपऽसृजन्ति। सूरयः। अस्मान्। च। तान्। च। प्र। हि। नेषि। वस्यः। आ। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीराः॥१६॥

पदार्थः-(ये) धार्मिका विद्यार्थिनः **(स्तोतृभ्यः)** सकलविद्याध्यापकेभ्यो विद्वद्भ्यः **(गोअग्राम्)** गाव इन्द्रियाण्यग्रसराणि यस्यां ताम् **(अश्वपेशसम्)** शीघ्रगन्तृ पेशो रूपमिव रूपं यस्यां ताम् **(अग्ने)** विद्वन् **(रातिम्)** विद्यादानक्रियाम् **(उपसृजन्ति)** ददते **(सूरयः)** विद्याजिज्ञासवो मनुष्याः **(अस्मान्) (च) (तान्) (प्र) (हि)** खलु **(नेषि)** नयसि **(वस्यः)** अत्युत्तमं वासः स्थानम् **(आ) (बृहत्)** महत् **(वदेम) (विदथे)** विद्यासंग्रामे **(सुवीराः)** उत्तमैः शौर्यादिगुणैरुपेताः॥१६॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं ये सूरयः स्तोतृभ्यो गोअग्रामश्वपेशसं रातिमुपसृजन्ति तांश्चास्मांश्च वस्य आप्रणेषि हि सुवीरा वयं विदथे बृहद्वदेम॥१६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा विद्वांसः सर्वोत्तम विद्यादानं दत्वाऽस्माननन्याँश्च विदुषः कुर्वन्ति तथाऽस्माभिरपि ते सदा प्रसादनीयाः॥१६॥

अत्राग्निदृष्टान्तेन विद्वद्विद्यार्थिकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेदितव्यम्॥

इति द्वितीयमण्डले प्रथमं सूक्तमेकोनविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः–हे **(अग्ने)** विद्वान्! आप **(ये)** जो **(सूरयः)** विद्या ज्ञान चाहते हुए जन **(स्तोतृभ्यः)** समस्त विद्या के अध्यापक विद्वानों के लिए **(गोअग्राम्)** जिसमें इन्द्रिय अग्रगन्ता हों **(अश्वपेशसम्)** उस शीघ्रगामी प्राणी के समान रूपवाली **(रातिम्)** विद्यादान क्रिया को **(उप, सृजन्ति)** देते हैं **(तान्, च)** उनको और **(अस्मान्, च)** हम लोगों को भी **(वस्यः)** अत्युत्तम निवासस्थान **(आ, प्र, नेषि, हि)** अच्छे प्रकार उत्तमता से प्राप्त करते हो इसी से **(सुवीराः)** उत्तम शूरतादि गुणों से युक्त हम लोग **(विदथे)** विवाद संग्राम में **(बृहत्)** बहुत **(वदेम)** कहें॥१६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे विद्वान् सर्वोत्तम विद्यादान देके हमको तथा औरों को विद्वान् करते हैं, वैसे हमको भी चाहिये कि उनको सदा प्रसन्न करें॥१६॥

इस सूक्त में अग्नि के दृष्टान्त से विद्वान् और विद्यार्थियों के कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्तार्थ के साथ सङ्गति समझनी चाहिये॥

यह दूसरे मण्डल में प्रथम सूक्त और उन्नीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

यज्ञेनेति त्रयोदशर्च्चस्य द्वितीयस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। अग्निर्देवता। १, २, ७, १२ विराट् जगती। ४ जगती। ५, ६, ९, १३ निचृज्जगती छन्दः। निषादः स्वरः। ३, ८, १०, ११ भुरिक् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

पुनरग्निविषयतो विद्वद्गुणानाह॥

अब द्वितीय सूक्त का आरम्भ है। उसमें फिर अग्नि के दृष्टान्त से विद्वानों के गुणों को कहते हैं॥

यज्ञेन॑ वर्धत जा॒तवे॑दसम॒ग्निं य॑जध्वं ह॒विषा॒ तना॑ गि॒रा।
स॒मि॒धा॒नं सु॑प्र॒यसं॒ स्व॑र्णरं द्यु॒क्षं होता॑रं वृ॒जने॑षु धू॒र्षद॑म्॥ १॥

य॒ज्ञेन॑। व॒र्द्धत॒। जा॒तऽवे॑दसम्। अ॒ग्निम्। य॒ज॒ध्व॒म्। ह॒विषा॑। तना॑। गि॒रा। स॒म्ऽइ॒धा॒नम्। सु॒ऽप्र॒यस॑म्। स्वः॑ऽनरम्। द्यु॒क्षम्। होता॑रम्। वृ॒जने॑षु। धूः॒ऽसद॑म्॥ १॥

पदार्थः-(यज्ञेन) सङ्गतिकरणेन **(वर्द्धत)** **(जातवेदसम्)** जातवित्तम् **(अग्निम्)** **(यजध्वम्)** सङ्गच्छध्वम् **(हविषा)** दानेन **(तना)** विस्तृतया **(गिरा)** वाण्या **(समिधानम्)** सम्यक् प्रदीप्तम् **(सुप्रयसम्)** सुष्ठु कमनीयम् **(स्वर्णरम्)** सुखस्य नेतारम् **(द्युक्षम्)** प्रकाशमानम् **(होतारम्)** आदातारम् **(वृजनेषु)** व्रजन्ति जना येषु मार्गेषु **(धूर्षदम्)** यानानां धुरं गमयितारम्॥ १॥

अन्वयः-हे विद्वांसो जना! यूयं तना गिरा वृजनेषु धूर्षदं होतारं समिधानं सुप्रयसं द्युक्षं स्वर्णरं जातवेदसमग्निं हविषा यजध्वमनेन यज्ञेन वर्द्धत॥ १॥

भावार्थः-ये मनुष्या शिल्पक्रियया विद्युदादिस्वरूपं यानादिषु कार्येषु संप्रयुञ्जीरंस्त ऐश्वर्यं लभेरन्॥ १॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! तुम **(तना)** विस्तृत **(गिरा)** वाणी से **(वृजनेषु)** जिन मार्गों में जन जाते हैं, उनमें **(धूर्षदम्)** विमानादिकों की धुरियों को ले जाने तथा **(होतारम्)** पदार्थों को ग्रहण करनेवाले **(समिधानम्)** प्रचण्ड दीप्तियुक्त **(सुप्रयसम्)** सुन्दर मनोहर **(द्युक्षम्)** प्रकाशमान **(स्वर्णरम्)** सुख की प्राप्ति करानेहारे **(जातवेदसम्)** उत्तम होता है धन जिससे उस **(अग्निम्)** अग्नि को **(हविषा)** दान से **(यजध्वम्)** प्राप्त होओ और उस **(यज्ञेन)** यज्ञ से **(वर्द्धत)** बढ़ो॥ १॥

भावार्थः-जो मनुष्य शिल्पक्रिया से बिजुली आदि के रूप को यान-विमान आदि के कार्य्य में अच्छे प्रकार युक्त करें, वे ऐश्वर्य को प्राप्त हों॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अभि त्वा नक्तीरुषसो ववाशिरेऽग्ने वत्सं न स्वसरेषु धेनवः।
दिवइवेदरतिर्मानुषा युगा क्षपो भासि पुरुवार संयतः॥२॥

अभि। त्वा। नक्तीः। उषसः। ववाशिरे। अग्ने। वत्सम्। न। स्वसरेषु। धेनवः। दिवःऽइव। इत्। अरतिः। मानुषा। युगा। आ। क्षपः। भासि। पुरुऽवार। सम्ऽयतः॥२॥

पदार्थः-(**अभि**) अभितः (**त्वा**) त्वाम् (**नक्तीः**) रात्रीः (**उषसः**) दिनानि (**ववाशिरे**) शब्दायन्ते (**अग्ने**) अग्निरिव प्रदीप्त विद्वन् (**वत्सम्**) (**न**) इव (**स्वसरेषु**) गोष्ठेषु (**धेनवः**) गावः (**दिवइव**) सूर्यप्रकाशादिव (**इत्**) एव (**अरतिः**) प्रापकः (**मानुषाः**) मनुष्याणामिमानि (**युगा**) युगानि वर्षाणि (**क्षयः**)[१] निवासहेतवः (**भासि**) (**पुरुवार**) बहुभिर्वरणीय (**संयतः**) सम्यङ् नियमितः॥२॥

अन्वयः-हे अग्ने! स्वसरेषु वत्सं धेनवो न नक्तीरुषसस्त्वाभि ववाशिरे। हे पुरुवार! त्वं दिवइवेदरतिर्मानुषा युगा क्षयश्च संयत आ भासि॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा गावः स्ववत्सान् प्राप्नुवन्ति तथा कालविभागा विद्वांसं परिश्रमिणं प्राप्नुवन्ति। यतस्तस्य सर्वाणि कार्याणि नियतकालेन संपद्यन्ते। अलसानां कार्याणि कदाचिदपि यथासमयं न भवन्ति। परिश्रमिणो विद्वांसो रात्रिसमयानपि कार्य्यकालमाश्रित्य यथेष्टसमयं कार्य्यं कुर्वन्ति। तथा मानुषसम्बन्धि पूर्णायुर्लभन्ते न तु परिश्रमेणायुषो हानिमाप्नुवन्ति॥२॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के तुल्य प्रदीप्त विद्वान् जन! (**स्वसरेषु**) गोष्ठों में (**वत्सम्**) बछड़े को (**धेनवः**) गौयें (**न**) जैसे रंभाती हैं, वैसे (**नक्तीः**) रात्रि और (**उषसः**) दिन (**त्वा**) आपको (**अभि, ववाशिरे**) सब ओर से शब्दायमान करते हैं अर्थात् प्रत्येक काम के नियत समय में आप अपने शब्दादि व्यवहार को प्राप्त होते हो। हे (**पुरुवार**) बहुतों को स्वीकार करने योग्य! आप (**दिवइव**) सूर्यप्रकाश के समान अपने प्रकाश से (**इत्**) ही (**अरतिः**) सर्व व्यवहारों की प्राप्ति करानेवाले (**मानुषा**) मनुष्यसम्बन्धी (**युगा**) युग वर्षों को और (**क्षयः**) निवास हेतु रात्रि समयों को (**संयतः**) संयम किये हुए (**आ, भासि**) अच्छे प्रकार प्रकाशमान होते हैं॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे गौएँ अपने बछड़ों को प्राप्त होतीं, वैसे काल-विभाग परिश्रमी विद्वान् जन को प्राप्त होते हैं। जिस कारण उसके सब कार्य नियमयुक्त काल से सिद्ध

---

१. अत्र '**क्षपो**' इति पाठः संहितायां दृश्यते॥ सं.

होते हैं। आलसी जनों के काम कभी भी नियत समय पर नहीं होते। परिश्रमी विद्वान् जन रात्रि के समय को भी अपने कार्य का समय मानकर जैसा चाहते, वैसे समय पर कार्य किया करते हैं और मनुष्य सम्बन्धी पूर्णायु को प्राप्त होते हैं, किन्तु परिश्रम से आयु की हानि को नहीं प्राप्त होते॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तं देवा बुध्ने रजसः सुदंससं दिवस्पृथिव्योररतिं न्येरिरे।
रथमिव वेद्यं शुक्रशोचिषमग्निं मित्रं न क्षितिषु प्रशंस्यम्॥३॥

तम्। देवाः। बुध्ने। रजसः। सुऽदंससम्। दिवः पृथिव्योः। अरतिम्। नि। एरिरे। रथम्ऽइव। वेद्यम्। शुक्रऽशोचिषम्। अग्निम्। मित्रम्। न। क्षितिषु। प्रऽशंस्यम्॥३॥

पदार्थः-(तम्) पूर्वोक्तम् **(देवाः)** विद्वांसः **(बुध्ने)** अन्तरिक्षे **(रजसः)** लोकस्य मध्ये **(सुदंससम्)** शोभनानि दंसांसि कर्माणि यस्मात्तम् **(दिवस्पृथिव्योः)** सूर्यभूम्योर्मध्ये **(अरतिम्)** प्राप्तम् **(नि)** नितराम् **(एरिरे)** कम्पयन्ति गमयन्ति **(रथमिव)** **(वेद्यम्)** वेदितुं योग्यम् **(शुक्रशोचिषम्)** शुक्रमाशुकरं शोचिस्तेजो यस्मिंस्तम् **(अग्निम्)** विद्युदादिस्वरूपम् **(मित्रम्)** सखायम् **(न)** इव **(क्षितिषु)** पृथिवीषु **(प्रशंस्यम्)** प्रशंसितुमर्हम्॥३॥

अन्वयः-ये देवा बुध्ने रजसो दिवस्पृथिव्योर्मध्येऽरतिं सुदंससं शुक्रशोचिषं वेद्यं तमग्निं क्षितिषु प्रशंस्यं मित्रन्न रथमिव न्येरिरे ते महत्सुखं कथं न लभेरन्॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यद्यन्तरिक्षे स्थितेषु पदार्थेषु वर्त्तमानं वह्निं विदित्वा रथवत्कार्येषु चालयेयुस्तर्हि स मित्रवत् कार्याणि साधयेत्॥३॥

पदार्थः-जो **(देवाः)** विद्वान् **(बुध्ने)** अन्तरिक्ष में वा **(रजसः)** लोक के बीच में वा **(दिवस्पृथिव्योः)** सूर्य पृथिवी के बीच **(अरतिम्)** प्राप्त **(सुदंससम्)** जिससे सुन्दर काम बनते हैं **(शुक्रशोचिषम्)** और शीघ्रता करनेवाला तेज जिसमें विद्यमान **(वेद्यम्)** जानने योग्य **(तम्)** उस **(अग्निम्)** अग्नि को **(क्षितिषु)** पृथिवियों में **(प्रशंस्यम्)** प्रशंसनीय **(मित्रम्)** मित्र के **(न)** समान वा **(रथमिव)** रथ के समान **(न्येरिरे)** निरन्तर कँपाते चलाते हैं, वे अत्यन्त सुख को क्यों न प्राप्त होवें॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! यदि अन्तरिक्ष में स्थित पदार्थों में वर्त्तमान अग्नि को जानकर रथ के समान कार्यों में चलावे तो वह मित्र के समान कार्यों को सिद्ध करे॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तमुक्षमाणं रजसि स्व आ दमे चन्द्रमिव सुरुचं ह्वार आ दधुः।
पृश्न्याः पतरं चितयन्तमक्षभिः पाथो न पायुं जनसी उभे अनु॥४॥

तम्। उक्षमाणम्। रजसि। स्वे। आ। दमे। चन्द्रम्ऽइव। सुऽरुचम्। ह्वारे। आ। दधुः। पृश्न्याः। पतरम्। चितयन्तम्। अक्षऽभिः। पाथः। न। पायुम्। जनसी इति। उभे इति। अनु॥४॥

पदार्थः-**(तम्)** **(उक्षमाणम्)** सिञ्चन्तम् **(रजसि)** ऐश्वर्य्ये **(स्वे)** स्वकीये **(आ)** समन्तात् **(दमे)** गृहे **(चन्द्रमिव)** हिरण्यमिव। **चन्द्रमिति हिरण्यनामसु पठितम्।** (निघं०१.२)। **(सुरुचम्)** सुष्ठु प्रकाशमानम् **(ह्वारे)** ह्वरन्ति कुटिलां गतिं गच्छन्ति पदार्था यस्मिँस्तस्मिन् **(आ)** **(दधुः)** दधति **(पृश्न्याः)** अन्तरिक्षस्य मध्ये **(पतरम्)** पतन्तम् **(चितयन्तम्)** **(अक्षभिः)** इन्द्रियैः **(पाथः)** उदकम् **(न)** इव **(पायुम्)** यः पिबति तम् **(जनसी)** जनयित्र्यौ द्यावापृथिव्यौ **(उभे)** **(अनु)**॥४॥

अन्वयः-ये विद्वांसो जनसी उभे पाथः पायुन्न वर्त्तमाने रजस्युक्षमाणं स्वे दमे चन्द्रमिव सुरुचं पृश्न्या ह्वारे पतरं चितयन्तं तमग्निमक्षभिरन्वादधुस्ते पदार्थविदो जायन्ते॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथोदकं पिपासितं तर्पयति तथा कार्येषु संप्रयोजितोऽग्निरैश्वर्येण सह जनान् योजयति॥४॥

पदार्थः-जो विद्वान् जन **(जनसी)** सब पदार्थों को उत्पन्न करनेवाली द्यावापृथिवी अर्थात् सूर्य पृथिवी के सम्बन्ध से मानुषी सृष्टि के अन्नादि पदार्थ उत्पन्न होते हैं **(उभे)** दोनों वा **(पाथः)** जल **(पायुम्)** उसके पीनेवाले को **(न)** वैसे वर्त्तमान तथा **(रजसि)** ऐश्वर्य के निमित्त **(उक्षमाणम्)** सींचा हुआ **(स्वे)** अपने **(दमे)** कला घर में **(चन्द्रमिव)** सुवर्ण के समान **(आ, सुरुचम्)** अच्छे प्रकार प्रकाशमान **(पृश्न्याः)** वा अन्तरिक्ष के बीच **(ह्वारे)** जिस व्यवहार में कुटिल गति को पदार्थ प्राप्त होते हैं, उसमें **(पतरम्)** गमन को प्राप्त होता **(चितयन्तम्)** और पदार्थों को इकट्ठा कराता **(तम्)** उस अग्नि को **(अक्षभिः)** इन्द्रियों के साथ **(अन्वादधुः)** अनुकूलता से स्थापन करते हैं, वे पदार्थवेत्ता होते हैं॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे जल प्यासे को तृप्त करता है, वैसे कार्यों में संप्रयुक्त किया हुआ अग्नि ऐश्वर्य के साथ जनों को युक्त करता है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स होता विश्वं परि भूत्वध्वरं तमु हव्यैर्मनुष ऋञ्जते गिरा।
हिरिशिप्रो वृधसानासु जर्भुरद् द्यौर्न स्तृभिश्चितयद्रोदसी अनु॥५॥२०॥

सः। होता। विश्वम्। परि। भूतु। अध्वरम्। तम्। ऊम् इति। हव्यैः। मनुषः। ऋञ्जते। गिरा। हिरिऽशिप्रः। वृधसानासु। जर्भुरत्। द्यौः। न। स्तृऽभिः। चितयत्। रोदसी इति। अनु॥५॥

पदार्थः-(सः) (होता) आदाता **(विश्वम्)** सर्वम् **(परि) (भूतु) (अध्वरम्)** अहिंसनीयं शिल्पसाध्यं व्यवहारम् **(तम्) (उ)** वितर्के **(हव्यैः)** होतुं ग्रहीतुं योग्यैः पदार्थैः **(मनुषः)** मनुष्याः **(ऋञ्जते)** प्रसाधयन्ति **(गिरा)** वाण्या **(हिरिशिप्रः)** हरणशीलहनुः **(वृधसानासु)** वर्द्धमानासु प्रजासु **(जर्भुरत्)** भृशं धरेत् **(द्यौः)** सूर्यः **(न)** इव **(स्तृभिः)** नक्षत्रैः **(चितयत्) (रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(अनु)**॥५॥

अन्वयः-यो हिरिशिप्रो होता तं विश्वमध्वरं परि भूतु तमु हव्यैर्गिरा मनुष ऋञ्जते योऽग्नि-र्वृधसानासु रोदसी अनु द्यौः स्तृभिर्न चितयज्जर्भुरत् सः सर्वैः कार्येषु संप्रयोक्तव्यः॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा सूर्यो नक्षत्राणि प्रकाशयति तथायमग्निः सर्वं विश्वं विभावयति। ये पठनश्रवणाभ्यामग्निविद्यां गृह्णन्ति ते सुभूषिता जायन्ते॥५॥

पदार्थः-जो **(हिरिशिप्रः)** ऐसा है कि जिसके मुख्यावयव पदार्थ को हरने और **(होता)** ग्रहण करनेवाले हैं **(तम्)** उस **(विश्वम्)** समस्त **(अध्वरम्)** न नष्ट करने योग्य शिल्पसाध्य व्यवहार को **(परि, भूतु)** विचारे और उसको **(उ)** तर्क-वितर्क के साथ **(हव्यैः)** ग्रहण करने योग्य पदार्थों और **(गिरा)** वाणी से **(मनुषः)** मनुष्य **(ऋञ्जते)** प्रसिद्ध करते हैं। जो अग्नि **(वृधसानासु)** बढ़ी हुई प्रजाओं में **(रोदसी)** द्यावापृथिवी के **(अनु)** अनुकूल **(द्यौः)** सूर्य **(स्तृभिः)** नक्षत्र अर्थात् तारागणों के साथ **(न)** जैसे वैसे पदार्थों से **(चितयत्)** चेतन करे वा **(जर्भुरत्)** निरन्तर पदार्थों को धारण करे **(सः)** वह सबको कार्यों में अच्छे प्रकार युक्त कराने योग्य है॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे सूर्य नक्षत्रों को प्रकाशित करता है, वैसे यह अग्नि समस्त विश्व को प्रकाशित करता है। जो पढ़ने और सुनने से अग्निविद्या का ग्रहण करते हैं, वे सुभूषित होते हैं॥५॥

पुनर्विद्वद्विषयमाह॥

फिर विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स नो रेवत्समिधानः स्वस्तये संददस्वान् रयिमस्मासु दीदिहि।

आ नः कृणुष्व सुवितायु रोदसी अग्ने हुव्या मनुषो देव वीतये॥६॥

सः। नः। रेवत्। सम्ऽइधानः। स्वस्तये। सम्ऽददस्वान्। रयिम्। अस्मासु। दीदिहि। आ। नः। कृणुष्व। सुवितायं। रोदसी इति। अग्ने। हव्या मनुषः। देव। वीतये॥६॥

पदार्थः-(**सः**) (**नः**) अस्माकम् (**रेवत्**) बहुधनयुक्तं व्यवहारम् (**समिधानः**) सम्यक् प्रकाशमानः (**स्वस्तये**) सुखाय (**संददस्वान्**) सम्यग्दाता (**रयिम्**) श्रियम् (**अस्मासु**) (**दीदिहि**) प्रकाशय (**आ**) (**नः**) अस्मान् (**कृणुष्व**) कुरु (**सुविताय**) ऐश्वर्याय (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**अग्ने**) विद्वन् (**हव्या**) होतुमादातुमर्हाणि (**मनुषः**) मनुष्यान् (**देव**) व्यवहारविद्याविचक्षण (**वीतये**) प्राप्तये॥६॥

अन्वयः-हे देवाऽग्ने विद्वन्! यथा स समिधानः संददस्वानग्निर्नः स्वस्तये रेवद्दधाति तथा त्वमस्मासु रयिमा दीदिहि नः सुविताय कृणुष्व च यथा वा रोदसी हव्या मनुषः प्रापयन्त्यौ वीतये स्यातां तथा त्वं भव॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा संसाधितोऽग्निर्धनप्राप्तिनिमित्तो जायते तथा सुसङ्गता विद्वांसो मनुष्याणां विद्याप्राप्तिहेतवो भवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे (**देव**) व्यवहारविद्याकुशल (**अग्ने**) विद्वान्! जैसे (**सः**) वह (**समिधानः**) सम्यक् प्रकाशमान (**संददस्वान्**) अच्छे [**प्रकार देनेवाला**] अग्नि (**नः**) हम लोगों के (**स्वस्तये**) सुख के लिये (**रेवत्**) बहुत धनयुक्त व्यवहार को धारण करता है, वैसे आप (**अस्मासु**) हम लोगों में (**रयिम्**) धन को (**आ, दीदिहि**) प्रकाश कीजिये और (**नः**) हम लोगों को (**सुविताय**) ऐश्वर्य के लिए (**कृणुष्व**) संनद्ध कीजिये वा जैसे (**रोदसी**) द्यावापृथिवी (**हव्या**) ग्रहण करने योग्य पदार्थ (**मनुषः**) मनुष्यों को प्राप्त कराती हुई (**वीतये**) सुख प्राप्ति के लिये होती हैं, वैसे आप हूजिये॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे संसिद्ध किया हुआ अग्नि धन प्राप्ति का निमित्त होता है, वैसे अच्छे प्रकार प्राप्त हुए विद्वान् जन मनुष्यों को विद्या प्राप्ति के हेतु होते हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

दा नो अग्ने बृहतो दाः सहस्त्रिणो दुरो न वाजं श्रुत्या अपा वृधि।
प्राची द्यावापृथिवी ब्रह्मणा कृधि स्व१र्ण शुक्रमुषसो वि दिद्युतः॥७॥

दाः। नः। अग्ने। बृहतः। दाः। सहस्रिणः। दुरः। न। वाजम्। श्रुत्यै। अप। वृधि। प्राची इति। द्यावापृथिवी इति। ब्रह्मणा। कृधि। स्वः। न। शुक्रम्। उषसः। वि। दिद्युतः॥७॥

पदार्थः-(**दाः**) देहि (**नः**) अस्मभ्यम् (**अग्ने**) अग्निरिव वर्त्तमान (**बृहतः**) महतो भोगान् (**दाः**) ददाति (**सहस्रिणः**) असंख्यातसुखाङ्गयुक्तान् (**दुरः**) द्वाराणि (**न**) इव (**वाजम्**) ज्ञानम् (**श्रुत्यै**) श्रवणेन। अत्र सुब् व्यत्ययेन तृतीयार्थे चतुर्थी। (**अप**) अत्र **निपातस्य** चेति दीर्घः। (**वृधि**) वृणु (**प्राची**) प्राग्वर्त्तमाने (**द्यावापृथिवी**) (**ब्रह्मणा**) धनेन सह (**कृधि**) कुरु (**स्वः**) (**न**) इव (**शुक्रम्**) आशुकरम् (**उषसः**) दिवसान् (**वि**) (**दिद्युतः**) द्योतमानान्॥७॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं नो बृहतः पदार्थान् दाः वाजन्दुरो न श्रुत्यै सहस्रिणो दाः अपा वृधि च प्राची द्यावापृथिवी ब्रह्मणा कृधि उषसः शुक्रं स्वर्ण वि दिद्युतः कृधि॥७॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। येऽग्निवदसङ्ख्यानि सुखानि द्वारवद्विद्यामार्गं यथासमयं कार्य्यदिवसान् संयुजन्ति ते सूर्यपृथिवीवदन्नादियोगेन सुखिनो भवन्ति॥७॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के समान वर्त्तमान विद्वान्! आप (**नः**) हम लोगों के लिये (**बृहतः**) बहुत भोग करने के पदार्थों को (**दाः**) दीजिये (**वाजम्**) ज्ञान (**दुरः**) द्वारों के (**न**) समान (**श्रुत्यै**) श्रवण से (**सहस्रिणः**) असंख्यात सुखरूपी अङ्गयुक्त पदार्थों को (**दाः**) दीजिये और (**अपा, वृधि**) उनको प्रकट कीजिये तथा (**प्राची**) जो पहिले से वर्त्तमान (**द्यावापृथिवी**) द्यावापृथिवी को (**ब्रह्मणा**) धन से युक्त (**कृधि**) कीजिये (**उषसः**) दिनों को (**शुक्रम्**) शीघ्रकारी (**स्वः**) सुख के (**न**) समान (**वि, दिद्युतः**) विशेष प्रकाशित कीजिये॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो अग्नि के तुल्य असंख्य सुख, द्वारों के समान विद्यामार्ग और यथा समय कार्यों से दिवसों को संयुक्त करते हैं, वे सूर्य और पृथिवी के समान अन्नादि के संयोग से सुखी होते हैं॥७॥

अथ विद्वद्विषयान्तर्गतराजवर्णनमाह॥

अब विद्वानों के विषय के अन्तर्गत राजविषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स इधान उषसो राम्या अनु स्व१र्ण दीदेदरुषेण भानुना।
होत्राभिरग्निर्मनुषः स्वध्वरो राजा विशामतिथिश्चारुरायवे॥८॥

सः। इधानः। उषसः। राम्याः। अनु। स्वः। न। दीदेत्। अरुषेण। भानुना। होत्राभिः। अग्निः। मनुषः। सुऽअध्वरः। राजा। विशाम्। अतिथिः। चारुः। आयवे॥८॥

पदार्थः-(सः) **(इधानः)** प्रकाशमानः **(उषसः)** **(राम्याः)** रात्रीः **(अनु)** **(स्वः)** सुखम् **(न)** इव **(दीदेत्)** प्रकाशयति **(अरुषेण)** सुरूपेण **(भानुना)** प्रकाशेन **(होत्राभिः)** आदत्ताभिः क्रियाभिः **(अग्निः)** पावकः **(मनुषः)** मनुष्यान् **(स्वध्वरः)** हिंसितुमनर्हः **(राजा)** प्रकाशमानः **(विशाम्)** प्रजानाम् **(अतिथिः)** पूजनीयोऽविद्यमानतिथिः **(चारुः)** सुन्दरः **(आयवे)** गमनाय॥८॥

अन्वयः-यथा इधानः सोऽग्निररुषेण भानुना होत्राभिरुषसो राम्या मनुषः स्वर्णानुदीदेत् तथा चारुरतिथिः स्वध्वरो राजाऽऽयवे विशां मध्ये वर्त्तते॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यथाऽहोरात्रविभागकृत् सूर्यः स्वतेजसा सर्वमनुभाति तथा राजा सत्याऽनृतकारिणः विभागेन प्रजाः पालयेत्॥८॥

पदार्थः–जैसे **(इधानः)** प्रकाशमान **(सः)** वह **(अग्निः)** अग्नि **(अरुषेण)** उत्तम रूपयुक्त **(भानुना)** प्रकाश से **(होत्राभिः)** ग्रहण की हुईं क्रियाओं से **(उषसः)** प्रतिदिन **(राम्याः)** रात्रियों में **(मनुषः)** मनुष्यों को **(स्वः)** सुख के **(न)** समान **(अनु, दीदेत्)** अनुकूलता से प्रकाशित कराता, वैसे **(चारुः)** सुन्दर **(अतिथिः)** सत्कार करने के योग्य जिसके ठहरने की अविद्यमान तिथि वह **(स्वध्वरः)** न विनाशने योग्य **(राजा)** प्रकाशमान सभापति **(आयवे)** राजकार्य्य में चलने अर्थात् प्रवृत्त होने के लिये **(विशाम्)** प्रजाजनों के बीच वर्त्ते॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जैसे अहोरात्रों का काटनेवाला सूर्य अपने तेज से सबके अनुकूल प्रकाशित होता है, वैसे राजा सत्य और झूठ कार्य्य करनेवालों के विभाग से प्रजाजनों की पालना करे॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

एवा नो अग्ने अमृतेषु पूर्व्य धीष्पीपाय बृहद्दिवेषु मानुषा।
दुहाना धेनुर्वृजनेषु कारवे त्मना शतिनं पुरुरूपमिषणि॥९॥

एव। नः। अग्ने। अमृतेषु। पूर्व्य। धीः। पीपाय। बृहत्ऽदिवेषु। मानुषा। दुहाना। धेनुः। वृजनेषु। कारवे। त्मना। शतिनम्। पुरुऽरूपम्। इषणि॥९॥

पदार्थः-(एव) अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(नः)** अस्मभ्यम् **(अग्ने)** विद्वन् **(अमृतेषु)** नाशोत्पत्तिरहितेषु जीवेषु **(पूर्व्य)** पूर्वैर्विद्वद्भिः कृतो विद्वान् तत्सम्बुद्धौ **(धीः)** प्रज्ञाः कर्माणि वा **(पीपाय)** वर्द्धय **(बृहद्दिवेषु)** बृहती द्यौः प्रकाशो येषु तेषु **(मानुषा)** मनुष्यसम्बन्धीनि सुखानि

(दुहाना) प्रपूरयन्ती **(धेनुः)** वागेव **(वृजनेषु)** बलयुक्तेषु **(कारवे)** कर्त्रे **(त्मना)** आत्मना **(शतिनम्)** अपरिमितसङ्ख्यम् **(पुरुरूपम्)** बहूनि रूपाणि यस्य तम् **(इषणि)** एषणायाम्॥९॥

अन्वयः-हे पूर्व्याऽग्ने! त्वं त्मना या बृहद्दिवेषु वृजनेष्वमृतेषु मानुषेषणि शतिनं पुरुरूपं च दुहाना धेनुरस्ति तान् प्रापयन्नेव नोऽस्मभ्यं कारवे च धीः पीपाय॥९॥

भावार्थः-जिज्ञासुभिराप्तप्राप्तां प्रज्ञां लब्ध्वा बहुविधपदार्थविज्ञानेन मनुष्यजन्मनो धर्मार्थकाममोक्षरूपाणि फलानि प्राप्तव्यानि॥९॥

पदार्थः-हे **(पूर्व्य)** पूर्वज विद्वानों ने विद्या पढ़ाकर किये **(अग्ने)** विद्वान्! आप **(त्मना)** अपने से जो **(बृहद्दिवेषु)** बहुत प्रकाश जिनमें विद्यमान उन **(वृजनेषु)** बलयुक्त **(अमृतेषु)** विनाश और उत्पत्तिरहित जीवों में **(मानुषा)** मनुष्यसम्बन्धी सुख और **(इषणि)** इच्छा के निमित्त **(शतिनम्)** अपरिमित असंख्य **(पुरुरूपम्)** जिसमें बहुत रूप विद्यमान उस व्यवहार को **(दुहाना)** दोहती पूरा करती हुई **(धेनुः)** वाणी ही है, उन सबकी प्राप्ति कराते हुए **(एव)** ही **(नः)** हम लोगों के लिये और **(कारवे)** करने के लिये **(धीः)** बुद्धि और कर्मों को **(पीपाय)** वृद्धि कीजिये॥९॥

भावार्थः-विज्ञान चाहनेवाले जनों को शिष्ट महात्मा जनों से पाई हुई बुद्धि को प्राप्त होकर बहुत प्रकार के पदार्थविज्ञान से मनुष्य जन्म के धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूपी फलों को प्राप्त होना चाहिये॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वयमग्ने अर्वता वा सुवीर्यं ब्रह्मणा वा चितयेमा जनाँ अति।
अस्माकं द्युम्नमधि पञ्च कृष्टिषूच्चा स्वर्ण शुशुचीत दुष्टरम्॥१०॥

वयम्। अग्ने। अर्वता। वा। सुऽवीर्यम्। ब्रह्मणा। वा। चितयेम। जनान्। अति। अस्माकम्। द्युम्नम्। अधि। पञ्च। कृष्टिषु। उच्चा। स्वः। न। शुशुचीत। दुस्तरम्॥१०॥

पदार्थः-**(वयम्)** **(अग्ने)** पावकवद्वर्त्तमान विद्वन् **(अर्वता)** अश्वादियुक्तेन सैन्येन **(वा)** **(सुवीर्यम्)** सुष्ठु पराक्रमम् **(ब्रह्मणा)** धनेन **(वा)** **(चितयेम)** ज्ञापयेम। अत्र**ान्येषामपी**ति दीर्घः। **(जनान्)** विदुषः **(अति)** अत्यन्तम् **(अस्माकम्)** **(द्युम्नम्)** यशः **(अधि)** उपरि **(पञ्च)** **(कृष्टिषु)** मनुष्येषु **(उच्चा)** उच्चानि उत्कृष्टानि **(स्वः)** आदित्यः **(न)** इव **(शुशुचीत)** शुन्धत **(दुष्टरम्)** दुःखेन तरितुमुल्लंघितुं योग्यम्॥१०॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथा त्वमर्वता ब्रह्मणा वा दुष्टरं सुवीर्यमन्यान् जनान् ज्ञापयेस्तथा वयमति चितयेम। हे मनुष्या! यथाऽस्माकं विदुषो वा स्वर्ण द्युम्नं कृष्टिषु प्रकाशयेत्तथैतद्यूयं शुशुचीत यथाऽस्माकं पञ्चोच्चाऽधिवर्त्तन्ते तथा युष्माकमपि सन्तु॥१०॥

भावार्थः-विद्वत्सङ्गिभिर्जिज्ञासुभिराप्तेभ्यो यादृशं विज्ञानं प्राप्येत तादृशमेवाऽन्येभ्यो देयम्। यथाऽस्माकं ब्रह्मचर्यविद्याबलशीलपुरुषार्था वर्द्धन्ते, तथा सर्वेषां वर्द्धेरन्निति वयमिच्छेम॥१०॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के समान वर्त्तमान विद्वान्! आप **(अर्वता)** अश्वादि युक्त सेना समूह **(वा)** अथवा **(ब्रह्मणा)** धन से **(दुष्टरम्)** दुःख के साथ उल्लंघन करने योग्य **(सुवीर्यम्)** उत्तम पराक्रम और **(जनान्)** जनों को जतलाते हो, वैसे **(वयम्)** हम लोग **(अति, चितयेम)** अत्यन्त चिन्ता से स्मरण कराते हैं। हे मनुष्यो! जैसे **(अस्माकम्)** हम लोगों के **(वा)** अथवा विद्वानों के **(स्वः)** सुख के **(नः)** समान **(द्युम्नम्)** यश को **(कृष्टिषु)** मनुष्यों में विद्वान् प्रकाशित करे, वैसे इसको तुम लोग **(शुशुचीत)** शुद्ध करो। जैसे हमारे **(पञ्च)** पांच **(उच्चा)** उत्तम **(अधि)** अधिकार ऊपर वर्त्तमान हैं, वैसे तुम्हारे भी हों॥१०॥

भावार्थः-विद्वानों के सङ्गी ज्ञान चाहनेवाले पुरुषों को चाहिये कि आप्त शिष्ट जनों से जैसा विज्ञान प्राप्त हो, वैसा ही औरों को देवें। जैसे हम लोगों के ब्रह्मचर्य, विद्या, बल, शील, पुरुषार्थ बढ़ते हैं, वैसे सबके बढ़ें, ऐसी हम लोग इच्छा करें॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स नो॑ बोधि सहस्य प्रशंस्यो॒ यस्मि॑न्त्सुजा॒ता इ॒षय॑न्त सू॒रयः॑।
यम॑ग्ने य॒ज्ञमु॑प॒यन्ति॑ वा॒जिनो॒ नित्ये॑ तो॒के दी॑दि॒वांसं॒ स्वे दमे॑॥११॥

सः। नः॒। बो॒धि॒। स॒ह॒स्य॒। प्र॒ऽशंस्यः॑। यस्मि॑न्। सु॒ऽजा॒ताः। इ॒षय॑न्त। सू॒रयः॑। यम्। अ॒ग्ने॒। य॒ज्ञम्। उ॒प॒ऽयन्ति॑। वा॒जिनः॑। नित्ये॑। तो॒के। दी॒दि॒ऽवांस॑म्। स्वे। दमे॑॥११॥

पदार्थः-**(सः)** **(नः)** अस्मान् **(बोधि)** **(सहस्य)** सहसि बले साधो **(प्रशंस्यः)** प्रशंसितुमर्हः **(यस्मिन्)** विद्वद्व्यवहारे **(सुजाताः)** सुष्ठु पुरुषार्थेन प्रसिद्धाः **(इषयन्त)** प्राप्नुयुः **(सूरयः)** विद्वांसः **(यम्)** **(अग्ने)** अग्निरिव वर्त्तमान **(यज्ञम्)** विद्याप्राप्तिव्यवहारम् **(उपयन्ति)** प्राप्नुवन्ति **(वाजिनः)** प्रकृष्टविज्ञानवन्तः **(नित्ये)** **(तोके)** अल्पे **(दीदिवांसम्)** प्रकाशयन्तम् **(स्वे)** स्वकीये **(दमे)** गृहे॥११॥

अन्वय:-हे सहस्याऽग्ने वाजिनो! नित्ये तोके स्वे दमे च दीदिवांसं यं यज्ञमुपयन्ति यस्मिन् सुजाता: सूरय आनन्दमिषयन्त स प्रशंस्यो यज्ञ: नोऽस्मान् त्वं बोधि॥११॥

भावार्थ:-ये विद्वन्मार्गेण सुशीलतया च नित्यानां पदार्थानां विज्ञानं प्राप्नुयुस्तेऽन्यानपि प्रापयेयु:॥११॥

पदार्थ:-हे **(सहस्य)** बल के विषय में उत्तम **(अग्ने)** अग्नि के समान वर्त्तमान विद्वान् **(वाजिन:)** उत्तम विज्ञानवान् पुरुष! **(नित्ये)** नित्य **(तोके)** छोटे व्यवहार में और **(स्वे)** अपने **(दमे)** घर में **(दीदिवांसम्)** प्रकाशित करते हुए **(यम्)** जिस **(यज्ञम्)** विद्याप्राप्ति के व्यवहार को **(उपयन्ति)** प्राप्त होते हैं **(यस्मिन्)** जिसमें **(सुजाता:)** उत्तम पुरुषार्थ से प्रसिद्ध **(सूरय:)** विद्वान् जन आनन्द को **(इषयन्त)** प्राप्त होवें **(स:)** वह **(प्रशंस्य:)** प्रशंसा करने योग्य यज्ञ **(न:)** हम लोगों को आप **(बोधि)** बतलाइये॥११॥

भावार्थ:-जो विद्वानों के मार्ग से और सुशीलता से नित्य पदार्थों को प्राप्त हों, वे औरों को भी प्राप्त करावें॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उभयासो जातवेद: स्याम ते स्तोतारो अग्ने सूरयश्च शर्मणि।

वस्वो राय: पुरुश्चन्द्रस्य भूयस: प्रजावत: स्वपत्यस्य शग्धि न:॥१२॥

उभयास:। जातऽवेद:। स्याम। ते। स्तोतार:। अग्ने। सूरय:। च। शर्मणि। वस्व:। राय:। पुरुऽचन्द्रस्य। भूयस:। प्रजाऽवत:। सुऽअपत्यस्य। शग्धि। न:॥१२॥

पदार्थ:-**(उभयास:)** उभये **(जातवेद:)** जातविज्ञान **(स्याम)** **(ते)** तव **(स्तोतार:)** **(अग्ने)** परमविद्वन्नुपदेशक **(सूरय:)** विद्वांस: **(शर्मणि)** गृहे **(वस्व:)** वासहेतो: **(राय:)** धनस्य **(पुरुश्चन्द्रस्य)** पुष्कलसुवर्णादियुक्तस्य **(भूयस:)** **(प्रजावत:)** उत्तमप्रजायुक्तस्य **(स्वपत्यस्य)** शोभनापत्यसहितस्य **(शग्धि)** दातुं शक्नुहि। अत्र **वाच्छन्दसी**ति विकरणलुक्। **(न:)** अस्माकम्॥१२॥

अन्वय:-हे जातवेदोऽग्ने! यतस्त्वं नोऽस्माकं स्वपत्यस्य प्रजावतो भूयसो वस्व: पुरुश्चन्द्रस्य रायो दानं कर्त्तुं शग्धि तस्मात्ते तव शर्मणि स्तोतार: सूरयश्चोभयासो वयमुन्नता: स्याम॥१२॥

भावार्थ:-ये धर्मेण धनादीन् पदार्थान् सँश्चिन्वन्ति तेषामतुलं धनमुत्तमा: प्रजा: सुशीलान्यपत्यानि च भवन्ति, ये पाण्डित्यं प्रगल्भतां च प्राप्याऽध्यापका उपदेशकाश्च जायन्ते ते दु:खं न पश्यन्ति॥१२॥

पदार्थः-हे **(जातवेदः)** विज्ञान को प्राप्त हुए **(अग्ने)** परम विद्वान् और उपदेशक जन! जिस कारण आप **(नः)** हमारे **(स्वपत्यस्य)** सुन्दर सन्तानयुक्त **(प्रजावतः)** प्रजावान् **(भूयसः)** बहुत **(वस्वः)** निवास का हेतु **(पुरुश्चन्द्रस्य)** बहुत सुवर्णादि धनयुक्त **(रायः)** धन के दान करने को **(शग्धि)** समर्थ हो इससे **(ते)** आपके **(शर्मणि)** घर में **(स्तोतारः)** प्रशंसक **(सूरयः)** और विद्वान् जन **(उभयासः)** दोनों प्रकार के हम लोग उन्नति को प्राप्त **(स्याम)** होवें॥१२॥

भावार्थः-जो धर्म से धनादि पदार्थों का सञ्चय करते हैं, उनका अतुल धन, उत्तम प्रजा और सुशील अपत्य होते हैं। जो पाण्डित्य और प्रगल्भता को प्राप्त होकर अध्यापक और उपदेशक होते हैं, वे दुःख को नहीं देखते हैं॥१२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ये स्तोतृभ्यो गोअंग्रामश्वपेशसमग्ने रातिमुपसृजन्ति सूरयः।

अस्माञ्च ताँश्च प्र हि नेषि वस्य आ बृहद्वदेम विदथे सुवीराः॥१३॥२१॥

ये। स्तोतृऽभ्यः। गोऽअंग्राम्। अश्वऽपेशसम्। अग्ने। रातिम्। उपऽसृजन्ति। सूरयः। अस्मान्। च। तान्। च। प्र। हि। नेषि। वस्यः। आ। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीराः॥१३॥

पदार्थः-**(ये)** **(स्तोतृभ्यः)** सर्वविद्याप्रशंसितृभ्यो विद्वद्भ्यः **(गोअग्राम्)** गौः पृथिवी धेनुर्वाऽग्रा मुख्या यस्यास्ताम् **(अश्वपेशसम्)** अश्वादीनां पेशो रूपं यस्यास्ताम् **(अग्ने)** विद्वन् **(रातिम्)** दानम् **(उपसृजन्ति)** प्रयच्छन्ति **(सूरयः)** विद्वांसः **(अस्मान्)** **(च)** **(तान्)** **(च)** **(प्र)** **(हि)** यतः **(नेषि)** प्रापयसि **(वस्यः)** वसीयोऽतिशयेन वासयितृ **(आ)** **(बृहत्)** महद्वस्तु ब्रह्म **(वदेम)** उपदिशेम **(विदथे)** विज्ञातव्ये व्यवहारे **(सुवीराः)** सुष्ठु सकलविद्याव्यापिनः॥१३॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं ये सूरयः स्तोतृभ्यो गोअग्रामश्वपेशसं रातिमुपसृजन्ति तानन्याँश्च तत्सदृशानस्मानस्मत्सम्बन्धिनश्च हि त्वं प्रणेषि तस्माद्विदथे सुवीरा वयं वस्यो बृहदावदेम॥१३॥

भावार्थः-ये विद्वत्तमा अध्यापकेभ्यो विद्वद्भ्योऽधिकामधिकां विद्यां प्रदाय श्रीमतः कुर्वन्ति तेऽस्माकं प्रणेतारो भवन्तु॥१३॥

अत्राऽग्निविषयेण विद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेदितव्यम्॥

इति द्वितीयमण्डले द्वितीयं सूक्तमेकविंशतितमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वान्! आप **(ये)** जो **(सूरयः)** विद्वान् जन **(स्तोतृभ्यः)** सर्व विद्याओं की प्रशंसा करनेवाले विद्वानों की **(गोअग्राम्)** जिसमें पृथिवी वा धेनु मुख्य हैं और **(अश्वपेशसम्)**

अश्वादिकों के रूप विद्यमान उस **(रातिम्)** दान को **(उप, सृजन्ति)** देते हैं **(तान्)** उनको **(च)** और अन्यों को तथा उनके समान **(अस्मान्)** हम लोगों को **(च)** और हमारे सम्बन्धियों को **(हि)** ही आप **(प्रणेषि)** सब विषय प्राप्त करते हैं, इससे **(विदथे)** विशेष कर जानने योग्य व्यवहार में **(सुवीरः)** सुन्दर समस्त विद्याओं में व्याप्त हम लोग **(वस्यः)** अतिशय कर सब में बसने और अपने में औरों का निवास करानेवाले **(बृहत्)** सबसे बड़े ब्रह्म को **(आ, वदेम)** अच्छे प्रकार कहें, उसका उपदेश करें॥१३॥

भावार्थः-जो उत्तम विद्वान् जन पढ़ानेवाले विद्वानों के लिए अधिकतर विद्या को अच्छे प्रकार देकर उनको श्रीमान् करते हैं, वे हमारे प्रणेता अर्थात् सर्व विषयों को प्राप्त करानेवाले हों॥१३॥

इस सूक्त में अग्नि के विषय से विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह समझना चाहिये॥

यह दूसरे मण्डल में दूसरा सूक्त और इक्कीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

समिद्ध इत्येकादशर्चस्य तृतीयसूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। अग्निर्देवता। १, २ विराट्त्रिष्टुप्। ३, ५, ६ भुरिक् त्रिष्टुप्। ४, ९, ११ निचृत् त्रिष्टुप्। ८, १० त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ७ जगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथाऽग्निवर्णनमाह॥

अब ग्यारह ऋचावाले तीसरे सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में अग्नि का वर्णन किया है॥

समिद्धो अग्निर्निहितः पृथिव्यां प्रत्यङ् विश्वानि भुवनान्यस्थात्।
होता पावकः प्रदिवः सुमेधा देवो देवान्यजत्वग्निरर्हन्॥१॥

सम्ऽइद्धः। अग्निः। निऽहितः। पृथिव्याम्। प्रत्यङ्। विश्वानि। भुवनानि। अस्थात। होता। पावकः। प्रऽदिवः। सुऽमेधाः। देवः। देवान्। यजतु। अग्निः। अर्हन्॥१॥

पदार्थः-(**समिद्धः**) सम्यक् प्रदीप्तः (**अग्निः**) पावकः (**निहितः**) धृतः (**पृथिव्याम्**) भूमौ (**प्रत्यङ्**) प्रत्यञ्चतीति (**विश्वानि**) सर्वाणि (**भुवनानि**) भूगोलानि (**अस्थात्**) तिष्ठति (**होता**) आदाता (**पावकः**) पवित्रकरः (**प्रदिवः**) प्रकृष्टा द्यौः प्रकाशिता विद्या (**सुमेधा**) शोभना मेधा प्रज्ञा यस्य सः (**देवः**) दिव्यः (**देवान्**) विदुषः (**जयतु**) सङ्गच्छतु (**अग्निः**) वह्निः (**अर्हन्**) सत्कुर्वन्॥१॥

अन्वयः-यथा सुमेधा देवो विद्वान् देवान् यजतु तथा होता पावकोऽर्हन्नग्निरस्ति। यथा पृथिव्यां निहितः समिद्धः प्रत्यङ्ङग्निर्विश्वानि भुवनान्यस्थात् तथा प्रदिवो विद्वान् भवेत्॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यद्यत्रेश्वरोऽग्निं न रचयेत्तर्हि कोऽपि प्राणी सुखमाप्तुं न शक्नुयात् तथा विद्वान् विदुषः सत्कुर्यात्तथाऽन्येऽपि सत्कुर्युः॥१॥

पदार्थः–जैसे (**सुमेधाः**) शोभना मेधा बुद्धि जिसकी वह (**देवः**) दिव्य विद्वान् (**देवान्**) विद्वानों को (**यजतु**) प्राप्त हो, वैसे (**होता**) सर्व पदार्थों का ग्रहण करनेवाला (**पावकः**) पवित्र करनेवाला (**अर्हन्**) योग्यता को प्राप्त हुआ (**अग्निः**) अग्नि भी है, जैसे (**पृथिव्याम्**) पृथिवी में (**निहितः**) रक्खा हुआ (**समिद्धः**) अच्छे प्रकार प्रदीप्त (**प्रत्यङ्**) प्रत्येक पदार्थों को प्राप्त होनेवाला (**अग्निः**) अग्नि (**विश्वानि**) सब (**भुवनानि**) भूगोलों को (**अस्थात्**) निरन्तर स्थिर होता है, वैसा (**प्रदिवः**) जिसकी उत्तम विद्या प्रकाशित है, वह विद्वान् हो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। यदि इस संसार में ईश्वर अग्नि को न रचे तो कोई प्राणी सुख को न प्राप्त हो सके। जैसे विद्वान् विद्वानों का सत्कार करें, वैसे अन्य लोग भी विद्वानों का सत्कार करें॥१॥

अथाग्निदृष्टान्तेन विद्वद्विषयमाह॥

अब अग्नि के दृष्टान्त से विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

नराशंसः प्रति धामान्यञ्जन् तिस्रो दिवः प्रति मह्ना स्वर्चिः।

घृतप्रुषा मनसा हव्यमुन्दन् मूर्धन्यज्ञस्य समनक्तु देवान्॥ २॥

नराशंसः। प्रति। धामानि। अञ्जन्। तिस्रः। दिवः। प्रति। मह्ना। सुऽअर्चिः। घृतऽप्रुषा। मनसा। हव्यम्। उन्दन्। मूर्धन्। यज्ञस्य। सम्। अनक्तु। देवान्॥ २॥

पदार्थः-(नराशंसः) नरैराशंसनीयः **(प्रति) (धामानि)** स्थानानि **(अञ्जन्)** प्रकटीकुर्वन् **(तिस्रः)** गार्हपत्याहवनीयदाक्षिणात्यरूपास्त्रिविधाः **(दिवः)** दीप्तीः **(प्रति) (मह्ना)** महत्त्वेन **(स्वर्चिः)** प्रशंसितदीप्तिः **(घृतप्रुषा)** घृतेन तेजसा प्रुट्पूर्णस्तेन **(मनसा)** विज्ञानेन **(हव्यम्)** अत्तुमर्हम् **(उन्दन्)** आर्द्रीकुर्वन् **(मूर्द्धन्)** उत्तमाङ्गे **(यज्ञस्य)** सङ्गतस्य जगतो मध्ये **(सम्) (अनक्तु) (देवान्)** दिव्यान् गुणान् विदुषो वा॥ २॥

अन्वयः-हे विद्वन्! भवान् यथा नराशंसो धामानि प्रत्यञ्जन् स्वर्चिरग्निर्मह्ना तिस्रो दिवो हव्यं प्रत्युन्दन् यज्ञस्य मूर्द्धन् घृतप्रुषा मनसा देवान् समनक्ति तथा समनक्तु॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽग्निर्विद्युत्प्रसिद्धसूर्यरूपत्रयेण सर्वान् व्यवहारान् पिपूर्ति तथा विद्वांसः विद्याधर्मसुशीलादिप्रापणेन सर्वा आशा जनानां प्रपूरयन्तु॥ २॥

पदार्थः-हे विद्वान्! आप जैसे **(नराशंसः)** मनुष्यों को प्रशंसा करने योग्य **(धामानि)** स्थानों को **(प्रत्यञ्जन्)** प्रकट करता हुआ **(स्वर्चिः)** प्रशंसित दीप्तिवाला अग्नि **(मह्ना)** अपने बड़प्पन से **(तिस्रः)** गार्हपत्य, आहवनीय, दाक्षिणात्य से तीन **(दिवः)** दीप्तियों को तथा **(हव्यम्)** भक्षण करने योग्य पदार्थ **(प्रत्युन्दन्)** आर्द्रपन से प्रतिकूल करता हुआ **(यज्ञस्य)** यज्ञ के **(मूर्द्धन्)** उत्तम अङ्ग में **(घृतप्रुषा)** तेज से परिपूर्ण प्रचण्ड वा **(मनसा)** अपने गुणों का जो विज्ञान उससे **(देवान्)** दिव्य गुण वा विद्वानों को अच्छे प्रकार प्रकट है, वैसे **(समनक्तु)** प्रकट कीजिये॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अग्नि बिजुली प्रसिद्ध और सूर्य रूप से सब व्यवहारों को पूर्ण करता है, वैसे विद्वान् जन विद्या, धर्म और सुन्दर शील आदि की प्राप्ति से समस्त आशा जो मनुष्यों की उनको पूर्ण करें॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ई॒ळि॒तो अ॑ग्ने॒ मन॑सा नो॒ अर्ह॑न् दे॒वान्य॑क्षि॒ मानु॑षा॒त्पूर्वो॑ अ॒द्य।
स आ व॑ह म॒रुतां॒ शर्धो॒ अच्यु॑त॒मिन्द्रं॑ नरो ब॒र्हि॒षदं॑ यजध्वम्॥३॥

ई॒ळि॒तः। अ॒ग्ने॒। मन॑सा। नः॒। अर्ह॑न्। दे॒वान्। य॒क्षि॒। मानु॑षात्। पूर्वः॑। अ॒द्य। सः। आ। व॒ह। म॒रुता॑म्। शर्धः॑। अच्यु॑तम्। इन्द्र॑म्। न॒रः॒। ब॒र्हि॒ऽसद॑म्। य॒ज॒ध्व॒म्॥३॥

पदार्थः-**(ईळितः)** स्तुतः **(अग्ने)** विद्युदिव विद्वन् **(मनसा)** विज्ञानेन **(नः)** अस्मान् **(अर्हन्)** सत्कुर्वन् **(देवान्)** दिव्यगुणानिव विदुषः **(यक्षि)** यजसि **(मानुषात्)** मानवात् **(पूर्वः)** प्रथमः **(अद्य)** **(सः)** **(आ)** **(वह)** प्रापय **(मरुताम्)** वायूनाम् **(शर्द्धः)** बलम् **(अच्युतम्)** **(इन्द्रम्)** विद्युदाख्यम् **(नरः)** नायकाः **(बर्हिषदम्)** बृहत्सु पदार्थेषु सीदन्तम् **(यजध्वम्)** सङ्गच्छध्वम्॥३॥

अन्वयः-हे अग्ने! मानुषात्पूर्वो नोऽस्मानर्हन्नीळितो मनसा देवान् यक्षि स त्वं मरुतामच्युतमिन्द्रं बर्हिषदं शर्द्धोऽद्या वह। हे नरः! तं यूयं यजध्वम्॥३॥

भावार्थः-ये विदुषः सत्कृत्य विद्यां ग्राहयन्तीं वायुस्थां विद्युतं ग्रहीतुं शक्नुवन्ति। तेऽक्षयबला भूत्वा सर्वत्र सत्कृता भवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** बिजुली के समान प्रचण्ड प्रतापवाले विद्वान् जन्! **(मानुषात्)** और मनुष्य से **(पूर्वः)** प्रथम **(नः)** हम लोगों का **(अर्हन्)** सत्कार करते हुए **(ईळितः)** स्तुति को प्राप्त **(मनसा)** विज्ञान से **(देवान्)** दिव्य गुणों के समान विद्वानों का **(यक्षि)** सत्कार करते हैं **(सः)** सो आप **(मरुताम्)** पवनों के **(अच्युतम्)** न नष्ट होनेवाले **(इन्द्रम्)** बिजुलीरूप **(बर्हिषदम्)** बड़े-बड़े पदार्थों में स्थिर होने वाले **(शर्द्धः)** बल को **(अद्य)** आज **(आ, वह)** प्राप्त कीजिये। हे **(नरः)** अग्रगामी नायक जनो! उसको आप लोग **(यजध्वम्)** प्राप्त हूजिये॥३॥

भावार्थः-जो विद्वानों को सत्कार कर विद्या को ग्रहण कराती हुई पवनों में स्थिर होनेवाली बिजुली को ग्रहण कर सकते हैं, वे अक्षयबली होकर सर्वत्र सत्कार को प्राप्त होते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

देव॑ ब॒र्हि॒र्वर्ध॑मानं सु॒वीरं॑ स्ती॒र्णं रा॒ये सु॒भरं॒ वेद्य॑स्याम्।
घृ॒तेना॒क्तं व॑सवः सीदते॒दं विश्वे॑ देवा आदित्या य॒ज्ञिया॑सः॥४॥

देव॑। ब॒र्हिः॒। वर्ध॑मानम्। सु॒ऽवीर॑म्। स्ती॒र्णम्। रा॒ये। सु॒ऽभर॑म्। वेदी॒ इति॑। अ॒स्याम्। घृ॒तेन॑। अ॒क्तम्। व॒स॒वः॒। सी॒द॒त॒। इ॒दम्। विश्वे॑। दे॒वाः॒। आ॒दि॒त्याः॒। य॒ज्ञिया॑सः॥४॥

पदार्थ:-(देव) अग्निरिव द्योतमान **(बर्हि:)** उदकम्। **बर्हिरित्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२)। **(वर्द्धमानम्) (सुवीरम्)** शोभना वीरा यस्मात् **(स्तीर्णम्)** आच्छादितम् **(राये)** धनाय **(सुभरम्)** भर्त्तुं योग्यम् **(वेदी)** वेद्याम्। अत्र **सुपां सुलुगिति** ङे र्लोप:। **(अस्याम्) (घृतेन)** आज्येन **(अक्तम्)** युक्तम् **(वसव:)** पृथिव्यादय: **(सीदत)** प्राप्नुत **(इदम्) (विश्वे)** सर्वे **(देवा:)** दिव्यगुणयुक्ता: **(आदित्या:)** मासा: **(यज्ञियास:)** यज्ञमर्हा:॥४॥

अन्वय:-हे देव! त्वं राये स्तीर्णं सुवीरं वर्द्धमानं सुभरं बर्हिरस्यां वेदी घृतेनाक्तं कुरु। हे वसव इवादित्याश्चेव! यूयं यथा यज्ञियासो विश्वे देवा इदमासीदन्ति तथा सीदत॥४॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। मनुष्यैरवश्यमन्तरिक्षस्थं जलं सुगन्ध्यादिपदार्थयुक्तं कर्त्तव्यं यत: सर्वे प्राणिनोऽरोगा: स्यु:॥४॥

पदार्थ:-हे **(देव)** अग्नि के समान प्रकाशमान! आप **(राये)** धन के लिये **(स्तीर्णम्)** जो ढपा हुआ **(सुवीरम्)** अच्छे-अच्छे वीर होते हैं, उस **(वर्द्धमानम्)** बढ़ते हुए **(सुभरम्)** सुख के धारण करने योग्य **(बर्हि:)** जल को **(अस्याम्)** इस **(वेदी)** वेदी में **(घृतेन)** घी से **(अक्तम्)** युक्त करो। हे **(वसव:)** पृथिव्यादिकों वा **(आदित्या:)** महीनों के समान विद्वानो! तुम जैसे **(यज्ञियास:)** यज्ञ करने में समर्थ **(विश्वे)** समस्त **(देवा:)** दिव्य गुणयुक्त विद्वान् जन **(इदम्)** इस धन को प्राप्त होते हैं, वैसे उसको **(सीदत)** प्राप्त होओ॥४॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि अवश्य अन्तरिक्षस्थ जल सुगन्ध्यादि पदार्थ युक्त करें, जिससे समस्त प्राणी आरोग्य **[**को प्राप्त**]** हों॥४॥

अथ स्त्रीपुरुषाचरणमाह॥

अब स्त्री-पुरुषों के आचरण को कहते हैं॥

वि श्रंयन्तामुर्विया हूयमाना द्वारो देवी: सुप्रायणा नमोभि:।
व्यचस्वतीर्वि प्रथन्तामजुर्या वर्णं पुनाना यशसं सुवीरम्॥५॥२२॥

वि। श्रयन्ताम्। उर्विया। हूयमाना:। द्वार:। देवी:। सुप्रऽअयना:। नम:ऽभि:। व्यचस्वती:। वि। प्रथन्ताम्। अजुर्या:। वर्णम्। पुनाना:। यशसम्। सुऽवीरम्॥५॥

पदार्थ:-(वि) (श्रयन्ताम्) सेवन्ताम् **(उर्विया)** पृथिव्या सह **(हूयमाना:)** जुह्वाना: **(द्वार:)** द्वार इव सुशोभमाना: **(देवी:)** देदीप्यमाना: **(सुप्रायणा:)** सुष्ठु प्रायणं गमनं यासां ता: **(नमोभि:)**

अन्नादिभिः **(व्यचस्वतीः)** व्याप्तिमतीः **(वि) (प्रथन्ताम्)** प्रख्यान्तु **(अजुर्याः)** ज्वररहितेषु साध्वीः **(वर्णम्)** स्वरूपम् **(पुनानाः)** पवित्रकारिकाः **(यशसम्)** कीर्त्तिम् **(सुवीरम्)** उत्तमवीरयुक्तम्॥५॥

अन्वयः-हे पुरुषा! भवन्तो नमोभिरुर्विया सह वर्त्तमाना द्वार इव सुशोभमाना हूयमानाः सुप्रायणा अजुर्या सुवीरं यशसं वर्णं पुनाना व्यचस्वतीर्देवीस्स्त्रियो विश्रयन्तां ताभिः सह शास्त्राणि सुखानि वा विप्रथन्ताम्॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सुशिल्पिभिर्निर्मितेषु गृहेषु निर्मितानि सुशोभायुक्तानि द्वाराणि भवेयुस्तथा विदुष्यो धार्मिक्यः पतिव्रताः स्त्रियः कीर्त्तिमत्यः सुसन्तानोत्पादिका भवन्ति॥५॥

पदार्थः-हे पुरुषो! आप **(नमोभिः)** अन्नादिकों वा **(उर्विया)** पृथिवी के साथ वर्त्तमान **(द्वारः)** द्वारों के समान शोभावती हुई और **(हूयमानाः)** ग्रहण की हुई **(सुप्रायणाः)** जिनकी सुन्दर चाल **(अजुर्याः)** ज्वररहित मनुष्यों में उत्तमता को प्राप्त **(सुवीरम्)** उत्तम वीरों से युक्त **(यशसम्)** यश और **(वर्णम्)** अपने रूप को **(पुनानाः)** पवित्र करती हुईं **(व्यचस्वतीः)** समस्त गुणों में व्याप्ति रखनेवाली **(देवीः)** देदीप्यमान अर्थात् चमकती-दमकती हुई स्त्रियों को **(वि, श्रयन्ताम्)** विशेषता से आश्रय करो और उनके साथ शास्त्र व सुखों को **(वि, प्रथन्ताम्)** विशेषता से कहो-सुनो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे कारुकों के बनाये हुए घरों में सुन्दर शोभा युक्त बनाये हुए द्वार होवें, वैसे विदुषी धर्म्मपरायणा पतिव्रता स्त्रियाँ कीर्तिमती और उत्तम सन्तानों की उत्पन्न करनेवाली होती हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

साध्वपांसि सनता न उक्षिते उषासानक्ता वय्येव रण्विते।
तन्तुं ततं संवयन्ती समीची यज्ञस्य पेशः सुदुघे पयस्वती॥६॥

साधु। अपांसि। सनता। नः। उक्षिते इति। उषासानक्ता। वय्यांऽइव। रण्विते इति। तन्तुम्। ततम्। संवयन्ती इति सम्ऽवयन्ती। समीची इति सम्ऽईची। यज्ञस्य। पेशः। सुदुघे इति सुऽदुघे। पयस्वती इति॥६॥

पदार्थः-**(साधु)** साधूनि **(अपांसि)** कर्माणि **(सनता)** नतेन सह वर्त्तमानानि **(नः)** अस्मभ्यम् **(उक्षिते)** सिञ्चिते **(उषासानक्ता)** रात्रिदिने **(वय्येव)** परसाधिका नलिकेव **(रण्विते)**

शब्दायमाने **(तन्तुम्)** सूत्रम् **(ततम्)** विस्तृतम् **(संवयन्ती)** निर्मिमाना **(समीची)** सम्यगञ्चती **(यज्ञस्य)** यष्टुं सङ्गन्तुमर्हस्य **(पेशः)** रूपम् **(सुदुघे)** सुष्ठु प्रपूरिके **(पयस्वती)** प्रशस्तजलयुक्ते॥६॥

अन्वयः-हे स्त्रीपुरुषौ! तन्तुं वय्येव रण्विते यज्ञस्य ततं पेशः संवयन्ती समीची पयस्वती सुदुघ उक्षित उषासानक्तेव युवां नोऽस्मभ्यं सनता साध्वपांसि कारयतम्॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। सन्ताना भृत्याश्च दम्पती प्रति एवं प्रार्थयेयुर्युवा-मस्माभिर्धर्म्याणि कर्माणि कारयतम्॥६॥

पदार्थः-हे स्त्रीपुरुषो! **(तन्तुम्)** सूत को **(वय्येव)** जैसे वस्त्र बनवानेवाली नली वा **(रण्विते)** शब्दायमान **(यज्ञस्य)** सराहने योग्य यज्ञकर्म के **(ततम्)** विस्तृत **(पेशः)** रूप को **(संवयन्ती)** उत्पन्न कराते और **(समीची)** अच्छे प्रकार अपनी-अपनी कक्षा में चलते हुए **(पयस्वती)** प्रशंसित जलयुक्त **(सुदुघे)** सुन्दरता से सब कामों को पूरा करनेहारे **(उक्षिते)** सींचे हुए **(उषासानक्ता)** रात्रि-दिन के समान तुम दोनों **(नः)** हम लोगों के लिये **(सनता)** नम्रभाव के साथ वर्त्तमान **(साधु)** उत्तम **(अपांसि)** कर्मों को कराओ॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। सन्तान और भृत्यजन अपने पालनेवाले स्त्रीपुरुषों के प्रति ऐसी प्रार्थना करें कि तुम हमसे धर्मयुक्त कार्य कराओ॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

दैव्या होतारा प्रथमा विदुष्टर ऋजु यक्षतः समृचा वपुष्टरा।
देवान् यजन्तावृतुथा समञ्जतो नाभा पृथिव्या अधि सानुषु त्रिषु॥७॥

दैव्या। होतारा। प्रथमा। विदुःऽतरा। ऋजु। यक्षतः। सम्। ऋचा। वपुःऽतरा। देवान्। यजन्तौ। ऋतुऽथा। सम्। अञ्जतः। नाभा। पृथिव्याः। अधि। सानुषु। त्रिषु॥७॥

पदार्थः-**(दैव्या)** देवेषु विद्वत्सु कुशलौ **(होतारा)** आदातारौ दातारौ वा **(प्रथमा)** प्रख्यातौ **(विदुष्टरा)** अतिशयेन विद्वांसौ **(ऋजु)** सरलं यथा स्यात्तथा **(यक्षतः)** सङ्गच्छतः **(सम्)** सम्यक् **(ऋचा)** प्रशंसितौ **(वपुष्टरा)** अतिशयेन रूपलावण्ययुक्तौ **(देवान्)** पृथिव्यादीनिव विदुषः **(यजन्तौ)** सत्कुर्वन्तौ **(ऋतुथा)** ऋतावृतौ **(सम्)** सम्यक् **(अञ्जतः)** कामयेथाम् **(नाभा)** नाभौ मध्ये **(पृथिव्याः)** **(अधि)** उपरि **(सानुषु)** शिखरेषु **(त्रिषु)** निकृष्टमध्यमोत्तमेषु॥७॥

अन्वयः:-हे मनुष्या! यथा दैव्या होतारा प्रथमा विदुष्टरा वपुष्टरा ऋचा ऋतुथा देवान् यजन्तौ स्त्रीपुरुषौ पृथिव्या नाभा ऋजु संयक्षतस्त्रिषु सानुष्वधिसमञ्जतस्तथा यूयमपि प्रयतध्वम्॥७॥

भावार्थः:-यथा ब्रह्मचर्येण पूर्णविद्याशिक्षौ सौन्दर्ययुक्तौ स्वयंवरविवाहेन गृहीतपाणी विद्वत्सङ्गिनावाप्तावध्यापकौ स्त्रीपुरुषौ सत्कर्मसु वर्त्तेते तथा सर्वैः प्रयतितव्यम्॥७॥

पदार्थः:–हे मनुष्यो! जैसे (**दैव्या**) विद्वानों में कुशल (**होतारा**) लेने-देनेवाले (**प्रथमा**) प्रख्यात (**विदुष्टरा**) अतीव विद्वान् (**वपुष्टरा**) अतीव रूपलावण्ययुक्त (**ऋचा**) प्रशंसित (**ऋतुथा**) ऋतु–ऋतु में (**देवान्**) पृथिवी आदि लोकों के समान (**यजन्तौ**) सत्कार करते हुए स्त्रीपुरुष (**पृथिव्याः**) पृथिवी के (**नाभा**) बीच (**ऋजु**) सरलता जैसे हो, वैसे (**संयक्षतः**) सब व्यवहारों की सङ्गति करें वा (**त्रिषु**) तीन (**सानुषु**) शिखरों के (**अधि**) ऊपर (**समञ्जतः**) अच्छे प्रकार काम करें, वैसे तुम प्रयत्न करो॥७॥

भावार्थः:-जैसे ब्रह्मचर्य से पूर्ण विद्या और शिक्षा को प्राप्त, सुन्दरता से युक्त, स्वयंवर विवाह विधि से पाणिग्रहण किये हुए, विद्वानों के सङ्गी, आप्त शास्त्रज्ञ धर्मात्मा विद्वान् अध्यापक स्त्रीपुरुष सत्कर्मों में वर्त्तते हैं, वैसे सबको प्रयत्न करना चाहिये॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सरस्वती साधयन्ती धियं न इळा देवी भारती विश्वतूर्तिः।
तिस्रो देवीः स्वधया बर्हिरेदमच्छिद्रं पान्तु शरणं निषद्य॥८॥

सरस्वती। साधयन्ती। धियम्। नः। इळा। देवी। भारती। विश्वऽतूर्तिः। तिस्रः। देवीः। स्वधया। बर्हिः। आ। इदम्। अच्छिद्रम्। पान्तु। शरणम्। निऽसद्य॥८॥

पदार्थः:-(**सरस्वती**) प्रशस्तविज्ञानकारिका वागिव स्त्री (**साधयन्ती**) विद्याशिक्षाभ्यामन्यान् विदुषः कारयन्ती (**धियम्**) प्रज्ञां कर्म वा (**नः**) अस्माकम् (**इळा**) स्तोतुमर्हा (**देवी**) देदीप्यमाना (**भारती**) शुभान् गुणान् धरन्ती (**विश्वतूर्त्तिः**) या विश्वं सर्वं जगत् त्वरति (**तिस्रः**) (**देवीः**) कमनीयाः देव्यः (**स्वधया**) अन्नेन (**बर्हिः**) अन्तरिक्षम् (**आ**) समन्तात् (**इदम्**) (**अच्छिद्रम्**) छिद्रवर्जितम् (**पान्तु**) (**शरणम्**) आश्रयम् (**निषद्य**) नितरां प्राप्य॥८॥

अन्वयः:-याः साधयन्ती सरस्वती देवीळा विश्वतूर्त्तिर्भारती च तिस्रो देवीरिदमच्छिद्रं बर्हिर्निषद्य स्वधया नो धियमापान्तु तासां शरणमस्माभिर्विधेयम्॥८॥

भावार्थ:-एका जननी द्वितीया अध्यापिका तृतीयोपदेशिका स्त्री कन्याभि: सदोपसेवनीया यतो धीविद्ये नित्यं वर्द्धेताम्॥८॥

पदार्थ:-जो **(साधयन्ती)** विद्या और उत्तम शिक्षा से औरों को विद्वान् कराती **(सरस्वती)** प्रशस्त विज्ञान करानेवाली वाणी सदृश स्त्री **(देवी)** देदीप्यमान **(इळा)** स्तुति करने योग्य **(विश्वतूर्त्ति:)** समस्त संसार को शीघ्रता करानेवाली **(भारती)** और शुभ गुणों को धारण करनेवाली **(तिस्र:)** तीन **(देवी:)** मनोहर देवी **(इदम्)** इस **(अच्छिद्रम्)** छिद्ररहित **(बर्हि:)** अन्तरिक्ष को **(निषद्य)** निरन्तर प्राप्त हो के **(स्वधया)** अन्न से **(न:)** हमारी **(धियम्)** बुद्धि वा कर्म को **(आ, पान्तु)** अच्छे प्रकार पालें, उनका **(शरणम्)** आश्रय हम लोगों को करना चाहिये॥८॥

भावार्थ:-एक माता, दूसरी पढ़ानेवाली और तीसरी उपदेश करनेवाली स्त्री कन्याओं को सदा समीप में सेवनी चाहिये, जिससे बुद्धि और विद्या नित्य बढ़ें॥८॥

अथ पुरुषविषयमाह॥

अब पुरुष विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

पिशङ्गरूप: सुभरो वयोधा: श्रुष्टी वीरो जायते देवकाम:।
प्रजां त्वष्टा वि ष्यतु नाभिमस्मे अथा देवानामप्येतु पाथ:॥९॥

पिशङ्गऽरूप:। सुऽभर:। वय:ऽधा:। श्रुष्टी। वीर:। जायते। देवऽकाम:। प्रऽजाम्। त्वष्टा। वि। स्यतु। नाभिम्। अस्मे इति। अथ। देवानाम्। अपि। एतु। पाथ:॥९॥

पदार्थ:-**(पिशङ्गरूप:)** पिशङ्गस्य सुवर्णस्येव स्वरूपं यस्य स: **(सुभर:)** य: शोभनं भरति स: **(वयोधा:)** यो वय: प्रजननं दधाति **(श्रुष्टी)** शीघ्रम् **(वीर:)** अजति सकला विद्या: प्राप्नोति स: **(जायते)** प्रसिद्धो भवति **(देवकाम:)** यो देवान् कामयते स: **(प्रजाम्)** **(त्वष्टा)** विविधरूपस्य निर्माता **(वि)** **(स्यतु)** **(नाभिम्)** **(अस्मे)** अस्माकम् **(अथ)** पुन:। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घ:। **(देवानाम्)** विदुषाम् **(अपि)** निश्चये **(एतु)** प्राप्नोतु **(पाथ:)** रक्षकमन्नम्॥९॥

अन्वय:-यथा पिशङ्गरूप: सुभरो वयोधा देवकाम: श्रुष्टी वीरो मनुष्यो जायते। यथा त्वष्टाऽस्मे प्रजां विष्यत्वथाऽस्मे देवानां नाभिं पाथोऽप्येतु॥९॥

भावार्थ:-ये सुसंस्कृतं रोगहरं बुद्धिप्रदमन्नं भुक्त्वाऽपत्यं जनयन्ति, तेषां सन्ताना विद्वत्प्रिया दीर्घायुष: सुशीला जायन्ते॥९॥

पदार्थः–जैसे **(पिशङ्गरूपः)** सुवर्ण के रूप के समान जिसका रूप **(सुभरः)** भरण–पोषण करता हुआ **(वयोधाः)** गर्भ स्थापन करनेवाला **(देवकामः)** और विद्वानों की कामना करता वह **(श्रुष्टी)** शीघ्र **(वीरः)** सकल विद्याओं को प्राप्त होनेवाला पुरुष **(जायते)** उत्पन्न होता है। जैसे **(त्वष्टा)** विविध रूप रचनेवाला ईश्वर **(अस्मे)** हम लोगों को **(प्रजाम्)** सन्तान **(वि, ष्यतु)** देवे **(अथ)** इसके अनन्तर हम **(देवानाम्)** विद्वानों की **(नाभिम्)** नाभि को और **(पाथः)** रक्षा करनेहारे अन्न को **(अपि)** भी **(एतु)** प्राप्त होवें॥९॥

भावार्थः-जो अच्छा संस्कार किये रोग हरने और बुद्धि देनेवाले उत्तम अन्न का भोजन कर सन्तानोत्पत्ति करते हैं, उनके सन्तान विद्वानों के प्रिय, दीर्घ आयुवाले और सुशील होते हैं॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वनस्पतिरवसृजन्नुप स्थादग्निर्हविः सूदयाति प्र धीभिः।
त्रिधा समक्तं नयतु प्रजानन् देवेभ्यो दैव्यः शमितोप हव्यम्॥१०॥

वनस्पतिः। अवऽसृजन्। उप। स्थात्। अग्निः। हविः। सूदयाति। प्र। धीभिः। त्रिधा। सम्ऽअक्तम्। नयतु। प्रऽजानन्। देवेभ्यः। दैव्यः। शमिता। उप। हव्यम्॥१०॥

पदार्थः-**(वनस्पतिः)** वटादिः **(अवसृजन्)** अवसर्गं कुर्वन् **(उप)** **(स्थात्)** उपतिष्ठते **(अग्निः)** पावकः **(हविः)** होतव्यं द्रव्यम् **(सूदयाति)** क्षरयति प्रापयति **(प्र)** **(धीभिः)** कर्मभिः **(त्रिधा)** त्रिप्रकारकम् **(समक्तम्)** संहतम् **(नयतु)** **(प्रजानन्)** **(देवेभ्यः)** दिव्यगुणेभ्यः **(दैव्यः)** देवेषु लब्धः **(शमिता)** उपशमकः **(उप)** **(हव्यम्)** आदातुमर्हम्॥१०॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा धीभिस्सह वर्त्तमानो वनस्पतिरवसृजन्नुपस्थादग्निस्त्रिधा समक्तं हविः सूदयाति तथा शमिता दैव्यः प्रजानन् भवान् देवेभ्यः उपहव्यं प्रणयतु॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा वनस्पतयोऽग्निश्च स्वैः कर्मभिः सर्वान् प्राणिन उपकुर्वन्ति तथा विद्वांसोऽध्ययनाऽध्यापनोपदेशैः सर्वानुपकुर्वन्तु॥१०॥

पदार्थः–हे विद्वान्! जैसे **(धीभिः)** कर्मों के साथ वर्त्तमान **(वनस्पतिः)** बरगद आदि **(अवसृजन्)** फलादिकों का त्याग करता हुआ **(उप, स्थात्)** उपस्थित होता है वा **(अग्निः)** अग्नि **(त्रिधा)** तीन प्रकार के **(समक्तम्)** समूह को प्राप्त हुए **(हविः)** होमने योग्य द्रव्य को **(सूदयाति)** प्राणिमात्र के सुख के लिये कण–कण करके पहुंचाता है, वैसे **(शमिता)** शान्ति करनेवाला

(दैव्यः) विद्वानों में प्राप्त हुए **(प्रजानन्)** उत्तम ज्ञान को प्राप्त होते हुए आप **(देवेभ्यः)** दिव्य गुणों के लिये **(उप, हव्यम्)** समीप में ग्रहण करने योग्य पदार्थ को **(प्र, नयतु)** प्राप्त कीजिये॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे वनस्पति और अग्नि अपने कर्मों से समस्त प्राणियों का उपकार करते हैं, वैसे विद्वान् जन अध्ययन, अध्यापन और उपदेश से सबका उपकार करें॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

घृतं मिमिक्षे घृतमस्य योनिर्घृते श्रितो घृतम्वस्य धाम।

अनुष्वधमा वह मादयस्व स्वाहाकृतं वृषभ वक्षि हव्यम्॥११॥२३॥

घृतम्। मिमिक्षे। घृतम्। अस्य। योनिः। घृते। श्रितः। घृतम्। ऊँ इति। अस्य। धाम। अनुऽस्वधम्। आ। वह। मादयस्व। स्वाहाऽकृतम्। वृषभ। वक्षि। हव्यम्॥११॥

पदार्थः-**(घृतम्)** आज्यम् **(मिमिक्षे)** मेढुं सेक्तुमिच्छेयम् **(घृतम्)** संदीप्तं तेजः **(अस्य)** अग्नेः **(योनिः)** कारणम् **(घृते)** आज्ये **(श्रितः)** सेवितः **(घृतम्)** तेजः **(उ)** **(अस्य)** **(धाम)** अधिकरणम् **(अनुष्वधम्)** स्वधामनुगतं द्रव्यम् **(आ)** **(वह)** समन्तात् प्राप्नुहि **(मादयस्व)** आनन्दयस्व **(स्वाहाकृतम्)** सत्क्रियया निष्पादितम् **(वृषभ)** श्रेष्ठ **(वक्षि)** **(हव्यम्)** ग्रहीतुमर्हम्॥११॥

अन्वयः-हे वृषभ! यस्त्वं स्वाहाकृतं हव्यं वक्षि स त्वमनुष्वधमा वह। यथाऽहं घृतं मिमिक्षे तथा त्वं सेक्तुमिच्छ यथाऽस्याग्नेर्घृतं घृत योनिर्घृते श्रितो **[घृतमु]** अस्य धामाऽस्ति तथा तेन त्वं मादयस्व॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या यज्ञेऽग्निरिवोपकारकाः परोपकारमाश्रित्य अन्यान् सुखयन्ति तथा स्वयमपि तैरुपकृता आनन्दिताश्च भवन्ति॥११॥

अस्मिन् सूक्तेऽग्निविद्वत्स्त्रीपुरुषाचरणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेदितव्यम्॥

इति द्वितीयमण्डले तृतीयं सूक्तं त्रयोविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(वृषभ)** श्रेष्ठजन! जो आप **(स्वाहाकृतम्)** उत्तम क्रिया से उत्पन्न किये हुए **(हव्यम्)** ग्रहण करने के योग्य पदार्थ को **(वक्षि)** प्राप्त करते हो सो आप **(अनुष्वधम्)** अन्न के अनुकूल व्यञ्जन द्रव्य को **(आ, वह)** सब प्रकार से प्राप्त कीजिये, जैसे मैं **(घृतम्)** घी को

(मिमिक्षे) सींचने की इच्छा करता हूं, वैसे आप सींचने की इच्छा करो। जैसे **(अस्य)** इस अग्नि का **(घृतम्)** प्रदीप्त होने का घृत **(योनिः)** कारण है **(घृते)** घी में **(श्रितः)** सेवन किया जाता **(घृतम्)** तेज **(उ)** ही **(अस्य)** इस अग्नि का **(धाम)** आधार है, वैसे उससे आप **(मादयस्व)** आनन्दित हूजिये॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य यज्ञ में अग्नि जैसे वैसे उपकार करनेवाले, परोपकार का आश्रय किये हुए, औरों को सुखी करते हैं, वैसे आप भी उनसे उपकार को प्राप्त और आनन्दित होते हैं॥११॥

इस सूक्त में अग्नि, विद्वान् और स्त्रीपुरुषों के आचरण का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्तार्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह दूसरे मण्डल में तीसरा सूक्त और तेईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

हुव इति नवर्चस्य चतुर्थस्य सूक्तस्य सोमाहुतिर्भार्गव ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ८ स्वराट् पङ्क्तिः। २, ३, ५-७ आर्षीपङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ४ ब्राह्म्युष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः। ९ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब नव ऋचावाले चतुर्थ सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् के विषय को कहते हैं॥

हुवे वः सुद्योत्मानं सुवृक्तिं विशामग्निमतिथिं सुप्रयसम्।
मित्रइव यो दिधिषाय्यो भूद् देव आदेवे जने जातवेदाः॥ १॥

हुवे। वः। सुऽद्योत्मानम्। सुऽवृक्तिम्। विशाम्। अग्निम्। अतिथिम्। सुऽप्रयसम्। मित्रःऽइव। यः। दिधिषाय्यः। भूत्। देवः। आऽदेवे। जने। जातऽवेदाः॥ १॥

पदार्थः-(**हुवे**) प्रशंसामि (**वः**) युष्मभ्यम् (**सुद्योत्मानम्**) सुष्ठु देदीप्यमानम् (**सुवृक्तिम्**) सुष्ठु वर्जयितारम् (**विशाम्**) प्रजानाम् (**अग्निम्**) पावकम् (**अतिथिम्**) अतिथिमिव वर्तमानम् (**सुप्रयसम्**) सुष्ठु कमनीयम् (**मित्रइव**) सखेव (**यः**) (**दिधिषाय्यः**) यथावद्धर्त्ता (**भूत्**) भवति (**देवः**) व्यवहारहेतुः (**आदेवे**) सर्वतो विद्याप्रकाशयुक्ते (**जने**) विदुषि (**जातवेदाः**) जातेषु पदार्थेषु विद्यमानः॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथाऽहमादेवे जने यो मित्र इव देवो दिधिषाय्यो जातवेदा भूद्भवति तं विशां सुद्योत्मानं सुप्रयसं सुवृक्तिमतिथिमग्निं वो युष्मभ्यं हुवे तथाऽस्मभ्यं यूयमेनं प्रशंसत॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। ये मनुष्याः परस्परं विद्यां दत्वा जगतः प्रकाशकं धारकं मित्रवत्सुखप्रदं विद्वद्वेद्यं विद्युदाख्यमग्निं प्रशंसन्ति ते तद्गुणविज्ञातारो भवन्ति॥ १॥

पदार्थः–हे मनुष्यो! जैसे मैं (**आदेवे**) सब ओर से विद्या प्रकाशयुक्त (**जने**) विद्वान् मनुष्य के निमित्त (**यः**) जो (**मित्र, इव**) मित्र के समान (**देवः**) व्यवहार का हेतु (**दिधिषाय्यः**) यथावत् पदार्थों का धारण करनेवाला (**जातवेदाः**) उत्पन्न हुए पदार्थों में विद्यमान अग्नि प्रसिद्ध (**भूत्**) होता है, उसको (**विशाम्**) प्रजाजनों के बीच (**सुद्योत्मानम्**) सुन्दरता से निरन्तर प्रकाशमान (**सुप्रयसम्**) अच्छे प्रकार मनोहर (**सुवृक्तिम्**) सुन्दर त्याग करनेवाले (**अतिथिम्**) अतिथि के समान वर्त्तमान (**अग्निम्**) अग्नि की (**वः**) तुम लोगों के लिये (**हुवे**) प्रशंसा करता हूं, वैसे हम लोगों के लिये तुम अग्नि की प्रशंसा करो॥ १॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो मनुष्य परस्पर विद्या देके जगत् के प्रकाश को धारण कर वा मित्र के समान सुख देनेवाले विद्वानों को जानने योग्य बिजुलीरूप अग्नि की प्रशंसा करते हैं, वे उसके गुणों को जाननेवाले होते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इमं विधन्तो अपां सधस्थे द्वितादधुर्भृगवो विक्ष्वा३योः।
एष विश्वान्यभ्यस्तु भूमा देवानामग्निरतिर्जीराश्वः॥ २॥

इमम्। विधन्तः। अपाम्। सधऽस्थे। द्विता। अदधुः। भृगवः। विक्षु। आयोः। एषः। विश्वानि। अभि। अस्तु। भूम। देवानाम्। अग्निः। अरतिः। जीरऽअश्वः॥ २॥

पदार्थ:-**(इमम्)** **(विधन्तः)** परिचरन्तः **(अपाम्)** अन्तरिक्षस्य जलस्य प्राणानां वा **(सधस्थे)** समानस्थाने **(द्विता)** द्वयोर्भावः **(अदधुः)** धरन्ति **(भृगवः)** विद्वांसः **(विक्षु)** प्रजासु **(आयोः)** प्राप्तस्य **(एषः)** **(विश्वानि)** **(अभि)** अभितः **(अस्तु)** **(भूमा)** बहुत्वेन **(देवानाम्)** दिव्यगुणानां पृथिव्यादीनाम् **(अग्निः)** वह्निः **(अरतिः)** समर्थः **(जीराश्वः)** जीरा वेगवन्तोऽश्वा आशुगामिनो गुणा यस्य तम्॥२॥

अन्वयः-य एषोऽरतिर्जीराश्वोऽग्निर्भूमा देवानां विक्ष्वायोर्विश्वान्यभि व्याप्नुवन्नस्ति यमिमं विधन्तो भृगवोऽपां सधस्थेऽदधुस्तेन सहाऽत्र द्विता अभ्यस्तु॥२॥

भावार्थ:-योऽग्निः स्वव्याप्त्या प्रजासु प्रविष्टस्तेन सर्वाणि वेगवन्ति यन्त्रकला प्रचलितानि यानानि शीघ्रगामीनि विधेयानि॥२॥

पदार्थ:-जो **(एषः)** यह **(अरतिः)** समर्थ **(जीराश्वः)** जिनके वेगवान् शीघ्रगामी गुण विद्यमान वह **(अग्निः)** अग्नि **(भूमा)** बहुताई से **(देवानाम्)** दिव्य गुणवाले पृथिवी आदि लोक-लोकान्तरों के **(विक्षु)** प्रजागणों में **(आयोः)** प्राप्त व्यवहार को **(विश्वानि)** समस्त वस्तुओं को सब ओर से व्याप्त होता हुआ विद्यमान है, जिस **(इमम्)** इस अग्नि को **(विधन्तः)** सेवते हुए **(भृगवः)** विद्वान् जन **(अपाम्)** अन्तरिक्ष के जल वा प्राणों के **(सधस्थे)** समान स्थान में **(अदधुः)** धरते स्थापन करते हैं, उसके साथ यहाँ **(द्विता)** दोनों व्यवहारों का भाव अर्थात् शराग्निभाव और पञ्चाकलाग्निभाव [अर्थात् अस्त्राग्नि और यानाग्नि] **(अभ्यस्तु)** सब ओर से हो॥२॥

भावार्थ:-जो अग्नि अपनी व्याप्ति से प्रजाजनों में प्रविष्ट है, उससे समस्त वेगवान् यन्त्रकलाओं से प्रचलित किये हुए यान शीघ्र चलनेवाले बनाने चाहियें॥२॥

पुनरग्निकार्यैर्विद्वद्विषयमाह॥

फिर अग्नि कार्यों से विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अ॒ग्निं दे॒वासो॒ मानु॑षीषु वि॒क्षु प्रि॒यं धुः॑ क्षे॒ष्यन्तो॒ न मि॒त्रम्।
स दी॑दयदुश॒तीरूर्म्या॒ आ द॒क्षाय्यो॒ यो दास्व॑ते॒ दम॒ आ॥३॥

अ॒ग्निम्। दे॒वासः॑। मानु॑षीषु। वि॒क्षु। प्रि॒यम्। धु॒रिति॑ धुः। क्षे॒ष्यन्तः॑। न। मि॒त्रम्। सः। दी॒द॒य॒त्। उ॒श॒तीः। ऊर्म्याः॑। आ। द॒क्षाय्यः॑। यः। दास्व॑ते। दमे॑। आ॥३॥

पदार्थः-(**अग्निम्**) पावकम् (**देवासः**) विद्वांसः (**मानुषीषु**) मनुष्याणामिमासु (**विक्षु**) प्रजासु (**प्रियम्**) कमनीयम् (**धुः**) दध्युः। अत्राडभावः। (**क्षेष्यन्तः**) निवसन्तः (**न**) इव (**मित्रम्**) सखायम् (**सः**) (**दीदयत्**) दीदयति प्रज्वलति। अत्राडभावः। **दीदयतीति ज्वलतिकर्मासु पठितम्।** (निघ०१.१६)। (**उशतीः**) कमनीयाः (**ऊर्म्याः**) रात्रीः (**आ**) समन्तात् (**दक्षाय्यः**) हिंसकः (**यः**) (**दास्वते**) दात्रे (**दमे**) गृहे (**आ**) समन्तात्॥३॥

अन्वयः-यमग्निं मानुषीषु विक्षु क्षेष्यन्तो देवासः प्रियं मित्रं नाधुः। यो दक्षाय्यो दमे दास्वते उशतीरूर्म्या आदीदयत् स सर्वैः संप्रयोक्तव्यः॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। योग्निर्मित्रवत्सुखयति सर्वासु प्रजासु प्रदीपवद् द्योतयति स विद्वद्भिः कार्येष्वनुयोजनीयः॥३॥

पदार्थः-जिस (**अग्निम्**) अग्नि को (**मानुषीषु**) मनुष्यसम्बन्धी (**विक्षु**) प्रजाजनों में (**क्षेष्यन्तः**) निवास करते हुए (**देवासः**) विद्वान् जन (**प्रियम्**) प्रिय मनोहर (**मित्रम्**) मित्र के (**न**) समान (**आधुः**) अच्छे प्रकार स्थापन करें (**यः**) जो (**दक्षाय्यः**) सब पदार्थों को छिन्न-भिन्न करनेवाला अग्नि (**दमे**) कलाघर में (**दास्वते**) दानशील जन के लिये (**उशतीः**) मनोहर (**ऊर्म्याः**) रात्रियों को (**आ, दीदयत्**) प्रज्वलित करता प्रकाशित करता है (**सः**) वह सबको संप्रयुक्त करना चाहिये अर्थात् वह कलाघरों में युक्त करना चाहिये॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो अग्नि मित्र के समान सुख देता और सब प्रजाजनों में प्रदीप के समान सब वस्तुओं को प्रकाशित करता है, उसका विद्वानों को अपने कामों में अनुकूल योग करना चाहिये॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अस्य रण्वा स्वस्येव पुष्टिः संदृष्टिरस्य हियानस्य दक्षोः।
वि यो भरिभ्रदोषधीषु जिह्वामत्यो न रथ्यो दोधवीति वारान्॥४॥

अस्य। रण्वा। स्वस्यऽइव। पुष्टिः। सम्ऽदृष्टिः। अस्य। हियानस्य। धक्षोः। वि। यः। भरिभ्रत्। ओषधीषु। जिह्वाम्। अत्यः। न। रथ्यः। दोधवीति। वारान्॥४॥

पदार्थः-(**अस्य**) (**रण्वा**) प्रशंसनीया (**स्वस्येव**) (**पुष्टिः**) धातुवृद्धिः (**संदृष्टिः**) सम्यक् प्रेक्षणम् (**अस्य**) (**हियानस्य**) वर्द्धमानस्य। अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम्। (**धक्षोः**) दाहकस्य (**वि**) (**यः**) (**भरिभ्रत्**) भृशं धरन् (**ओषधीषु**) सोमलतादिषु (**जिह्वाम्**) (**अत्यः**) सुशिक्षितस्तुरङ्गः (**न**) इव (**रथ्यः**) रथेषु साधुः (**दोधवीति**) भृशं कम्पयति (**वारान्**) वालानिव वरणीयान् लोकान्॥४॥

अन्वयः-यो रथ्योऽत्यो न वारान् जिह्वाँश्च दोधवीति। ओषधीषु विभरिभ्रदस्ति तस्यास्य स्वस्येव रण्वा पुष्टिर्हियानस्यास्य धक्षोः सदृष्टिश्च कार्य्या॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः मनुष्यैर्यथा स्वपोषणार्थाऽग्निविद्या प्राप्यते तथाऽन्यार्थाऽपि कार्य्या योऽग्निरिन्धनैर्वर्द्धते दहति स रथेषु योजितः सन् सद्यो गमयति यथा वक्ता जिह्वां कम्पयति तथाऽग्निः भूगोलान् कम्पयति॥४॥

पदार्थः-(**यः**) जो (**रथ्यः**) रथों में उत्तम प्रशंसित (**अत्यः**) सुशिक्षित तुरङ्ग उसके (**न**) समान (**वारान्**) बालकों को जैसे वैसे स्वीकार करने योग्य लोकों को और (**जिह्वाम्**) अपनी जिह्वा को (**दोधवीति**) निरन्तर कम्पाता है और (**ओषधीषु**) सोमलतादि औषधियों में (**वि, भरिभ्रत्**) विशेष कर निरन्तर गुणों को धारण करता हुआ विद्यमान है, उस (**अस्य**) इसकी हुई (**स्वस्येव**) अपनी पुष्टि के समान दूसरे की (**रण्वा**) प्रशंसनीय (**पुष्टिः**) पुष्टि अर्थात् धातुवृद्धि और (**हियानस्य**) वृद्धि को प्राप्त होते हुए (**अस्य**) इस (**धक्षोः**) दाह करनेवाले अग्नि की (**संदृष्टिः**) अच्छे प्रकार दृष्टि करनी चाहिये॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्यों को जैसे अपने पोषण के लिये अग्निविद्या प्राप्त की जाती है, वैसे औरों के लिये भी करनी चाहिये। जो इन्धनों से बढ़ता है और पदार्थों को जलाता है, वह रथों में युक्त किया हुआ अग्नि शीघ्र गमन कराता है। जैसे वक्ता अपनी जिह्वा को कंपाता है, वैसे अग्नि भूगोलों को कंपाता है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ यन्मे अभ्वं वनदः पनन्तोशिग्भ्यो नामिमीत वर्णम्।

स चित्रेण चिकिते रंसु भासा जुजुर्वाँ यो मुहुरा युवा भूत्॥५॥२४॥

आ। यत्। मे। अभ्वम्। वनदः। पनन्त। उशिक्ऽभ्यः। न। अमिमीत। वर्णम्। सः। चित्रेण। चिकिते। रम्ऽसु। भासा। जुजुर्वान्। यः। मुहुः। आ। युवा। भूत्॥५॥

पदार्थः-(आ) (यत्) यः **(मे)** मम **(अभ्वम्)** उदकमिव **(वनदः)** प्रशंसितारः **(पनन्त)** स्तुवन्ति **(उशिग्भ्यः)** कामयमानेभ्यः **(न)** निषेधे **(अमिमीत)** मिमीते **(वर्णम्)** रूपम् **(सः)** **(चित्रेण)** अद्भुतेन **(चिकिते)** विज्ञापयति **(रंसु)** रमणीयम् **(भासा)** प्रकाशेन **(जुजुर्वान्)** जीर्णः **(यः)** **(मुहुः)** वारंवारम् **(आ)** **(युवा)** यौवनस्थ इव **(भूत्)** भवति॥५॥

अन्वयः-यश्चित्रेण भासा मे वर्णं चिकिते स रंस्वभ्वमा चिकिते यो जुजुर्वान् मुहुर्युवेवाभूद् यमुशिग्भ्यो वनदो विद्वांसः पनन्त स नामिमीत तं सर्वे सम्यक् संप्रयुञ्जताम्॥५॥

भावार्थः-योऽग्निः सर्वमविद्यमानं विद्यमानवत्करोति यथा जीवो जीर्णावस्थां मरणञ्च प्राप्य पुनर्जायमानो युवा भवति तथा पुनः पुनर्वृद्धिक्षयौ प्राप्नोति सोऽग्निर्व्यवहारेषु योजनीयः॥५॥

पदार्थः-(यत्) जो **(चित्रेण)** अद्भुत **(भासा)** प्रकाश से **(मे)** मेरे **(वर्णम्)** रूप का **(चिकिते)** विज्ञान कराता **(सः)** वह **(रंसु)** रमणीय पदार्थ को **(अभ्वम्)** जल के समान **(आ)** अच्छे प्रकार जतलाता है **(यः)** जो **(जुजुर्वान्)** जीर्ण हुआ भी **(मुहुः)** वार-वार **(युवा)** तरुण के समान **(आ, भूत्)** अच्छे प्रकार होता है, जिसकी **(उशिग्भ्यः)** कामना करते हुए जनों को **(वनदः)** प्रशंसा करनेवाला विद्वान् **(पनन्त)** प्रशंसारूप स्तुति करते हैं, वह **(न)** नहीं **(अमिमित)** मान करता अर्थात् अपनी तीक्ष्णता के कारण सबको जलाता, सब मनुष्य उसका अच्छे प्रकार प्रयोग करें॥५॥

भावार्थः-जो अग्नि समस्त अविद्यमान को विद्यमान के समान करता और जैसे जीव वृद्धपन और मरण को प्राप्त होकर फिर उत्पन्न हुआ जवान होता है, वैसे जो वार-वार वृद्धि और क्षय को प्राप्त होता है, वह अग्नि व्यवहारों में युक्त करने योग्य है॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ यो वना तातृषाणो न भाति वार्ण पथा रथ्येव स्वानीत्।
कृष्णाध्वा तपू रण्वश्चिकेत द्यौरिव स्मयमानो नभोभिः॥६॥

आ। यः। वना। ततृषाणः। न। भाति। वाः। न। पथा। रथ्याऽइव। स्वानीत्। कृष्णऽअध्वा। तपुः। रण्वः। चिकेत। द्यौःऽइव। स्मयमानः। नभःऽभिः॥६॥

पदार्थः-(आ) समन्तात् **(यः)** **(वना)** वनानि **(ततृषाणः)** भृशं तृड्युक्तः। अत्र **तुजादित्वाद**भ्यासदीर्घः। **(न)** इव **(भाति)** प्रकाशते **(वाः)** उदकम् **(न)** इव **(पथा)** मार्गेण **(रथ्येव)** रथाय हितेव **(स्वानीत्)** शब्दायते **(कृष्णाध्वा)** कृष्णोऽध्वा मार्गो यस्य **(तपुः)** परितापकः **(रण्वः)** रमणीयः **(चिकेत)** उद्बुध्येत **(द्यौरिव)** सूर्यप्रकाशवत् **(स्मयमानः)** किञ्चिद्धसन्निव **(नभोभिः)**[२] अन्नादिभिः पदार्थैः॥६॥

अन्वयः-यो वना ततृषाणो नाभाति पथा वार्ण रथ्येव च स्वानीद् यः कृष्णाध्वा तपू रण्वः स्मयमानो द्यौरिव नभोभिश्चिकेत स विद्वद्भिरेव विज्ञातुं योग्यः॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा कश्चिदति तृषितो वक्ता हसन् वदेत् जलं मार्गे गच्छति तथाग्निः वनस्थो महच्छब्दायते॥६॥

पदार्थः–जो **(वना)** वन और जलों के प्रति **(ततृषाणः)** निरन्तर प्यासे के **(न)** समान **(आ भाति)** अच्छे प्रकार प्रकाशित होता है और **(पथा)** मार्ग से **(वाः)** जल के **(न)** समान तथा **(रथ्येव)** रथ आदि के लिये जो हित है, उस मार्ग अर्थात् सड़क के समान **(स्वानीत्)** शब्दायमान होता है, जो **(कृष्णाध्वा)** काले वर्णयुक्त **(तपुः)** सब ओर से तपानेवाला **(रण्वः)** रमणीय **(स्मयमानः)** कुछ मुस्कातासा हुआ **(द्यौरिव)** सूर्य के प्रकाश के समान **(नभोभिः)** अन्नादि पदार्थों से **(चिकेत)** उद्बोध को प्राप्त हो अर्थात् प्रज्वलित हो, वह विद्वानों ही को जानने योग्य है॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे कोई अति तृषायुक्त कहनेवाला जन हंसता हुआ कहे कि जल मार्ग में जाता है, वैसे वनस्थ अग्नि बहुत शब्दायमान होता है॥६॥

पुनरग्निपरत्वेनैव विद्वद्विषयमाह॥

फिर अग्निपरता से ही विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स यो व्यस्थाद॒भि दक्ष॑दु॒र्वीं प॒शुर्नैति॑ स्व॒युरगो॑पाः।

अ॒ग्निः शो॒चिष्माँ॑ अत॒सान्यु॒ष्णन् कृ॒ष्णव्य॑थिरस्वदय॒न्न भूम॑॥७॥

सः। यः। वि। अस्था॑त्। अ॒भि। धक्ष॑त्। उ॒र्वीम्। प॒शुः। न। ए॒ति॒। स्व॒ऽयुः। अगो॑पाः। अ॒ग्निः। शो॒चिष्मा॑न्। अ॒त॒सानि॑। उ॒ष्णन्। कृ॒ष्णऽव्य॑थिः। अ॒स्व॒द॒य॒त्। न। भूम॑॥७॥

---

२. यहाँ दयानन्द 'नमोभिः' पाठ मान रहे प्रतीत होते हैं।

पदार्थः-(**सः**) (**यः**) (**वि**) (**अस्थात्**) वितिष्ठते (**अभि**) (**धक्षत्**) अभितो दहति (**उर्वीम्**) भूमिम् (**पशुः**) (**न**) इव (**एति**) गच्छति (**स्वयुः**) यः स्वयं याति सः (**अगोपाः**) पालकरहितः (**अग्निः**) वह्निः (**शोचिष्मान्**) बहूनि शोचींषि विद्यन्ते यस्मिन् सः (**अतसानि**) नैरन्तर्येण गन्त्रीणि त्रसरेण्वादीनि (**उष्णन्**) दहन् (**कृष्णव्यथिः**) यः कर्षकश्चासौ व्यथयिता च (**अस्वदयत्**) स्वादयति (**न**) इव (**भूम**) भूम्ना॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो भूम भूम्ना व्यस्थात्स्वयुरगोपाः पशुर्नैवैत्युर्वीमभि धक्षत्स शोचिष्मान् कृष्णव्यथिरग्निरतसान्युष्णन्नस्वदयद् वर्त्तते तं यथावद्विजानीत॥७॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यः पृथिव्यादिषु व्यवस्थितो मूर्त्तद्रव्यदाहको गोपालरहितपशुवत्स्वयं गन्ता प्रकाशमयोऽग्निः स्वतेजसा विस्तृतान् त्रसरेणूनपि परितपति सोऽग्निर्बलिष्ठोऽस्तीति वेद्यम्॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**भूम**) बहुताई के साथ (**व्यस्थात्**) विविध प्रकार से स्थित होता है (**स्वयुः**) जो आप जाता अर्थात् बिना चैतन्य पदार्थ के भी चैतन्य के समान गति देता है (**अगोपाः**) पालना करनेवाला गुणों से रहित पदार्थों को अपने प्रताप से सन्ताप देनेवाला (**पशुः**) पशु के (**न**) समान (**एति**) जाता है (**उर्वीम्**) और भूमि को (**अभि, धक्षत्**) सब ओर से जलाता है (**सः**) वह (**शोचिष्मान्**) बहुत लपटोंवाला (**कृष्णव्यथिः**) पदार्थों के अंशों को खींचने और उनको व्यथित करनेवाला (**अग्निः**) अग्नि (**अतसानि**) निरन्तर जानेवाले त्रसरेणु आदि पदार्थों को (**उष्णन्**) जलाता और (**अस्वदयत्**) स्वादिष्ठ करता हुआ (**न**) सा वर्त्तमान है, **[**उसको यथावत् जानो**]**॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो पृथिवी आदि पदार्थों में व्यवस्था को प्राप्त मूर्तिमान् पदार्थों का जलानेवाला, रक्षकरहित पशु के समान आप जानेवाला प्रकाशमय अग्नि अपने तेज से विथरे हुए त्रसरेणुओं को भी सब ओर से तपाता है, वह अग्नि बलिष्ठ है, यह जानना चाहिये॥७॥

पुनर्विद्वद्विषयमाह॥

फिर विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

नू ते पूर्वस्यावसो अधीतौ तृतीये विदथे मन्म शंसि।

अस्मे अग्ने संयद्वीरं बृहन्तं क्षुमन्तं वाजं स्वपत्यं रयिं दाः॥८॥

नु। ते। पूर्वस्य। अवसः। अधिऽइतौ। तृतीये। विदथे। मन्म। शंसि। अस्मे इति। अग्ने। संयत्ऽवीरम्। बृहन्तम्। क्षुऽमन्तम्। वाजम्। सुऽअपत्यम्। रयिम्। दाः॥८॥

पदार्थः-(**नु**) सद्यः। अत्र **ऋचि तुनुघे**ति दीर्घः। (**ते**) तव (**पूर्वस्य**) (**अवसः**) रक्षणस्य (**अधीतौ**) अध्ययने (**तृतीये**) (**विदथे**) सङ्ग्रामे (**मन्म**) विज्ञानम् (**शंसि**) स्तौषि (**अस्मे**) अस्मभ्यम् (**अग्ने**) पावकवद्वर्त्तमान (**संयद्वीरम्**) संयताः संयमयुक्ता वीरा यस्मिँस्तम् (**बृहन्तम्**) वर्द्धमानम् (**क्षुमन्तम्**) प्रशस्तान्नयुक्तम् (**वाजम्**) पदार्थबोधम् (**स्वपत्यम्**) सुष्ठ्वपत्ययुक्तम् (**रयिम्**) श्रियम् (**दाः**) देहि॥८॥

अन्वयः-हे अग्ने! यस्य ते तव पूर्वस्याऽवसोऽधीतौ तृतीये विदथे मन्म शंसि स त्वमस्मे संयद्वीरं बृहन्तं क्षुमन्तं स्वपत्यं वाजं रयिं नु दाः॥८॥

भावार्थः-हे विद्वन्! यस्याऽधीतविद्यस्य त्रातुस्सकाशात् तृतीये सवने तूर्णं पूर्णे कृतेऽग्न्यादिविद्याः प्राप्योत्तमबलधनप्रजा वयं प्राप्नुयाम तं भवान् बोधयतु॥८॥

पदार्थः–हे (**अग्ने**) के समान वर्त्तमान विद्वान् जन! जिस (**ते**) आपकी (**पूर्वस्य**) पिछले (**अवसः**) रक्षा सम्बन्ध के (**अधीतौ**) अध्ययन में (**तृतीये**) तीसरे (**विदथे**) संग्राम के निमित्त आप ही (**मन्म**) विज्ञान की (**शंसि**) स्तुति अर्थात् प्रशंसा करते हैं, वे आप (**अस्मे**) हम लोगों के लिये (**संयद्वीरम्**) जिसमें संयमयुक्त वीरजन विद्यमान (**बृहन्तम्**) जो बढ़ता हुआ है (**क्षुमन्तम्**) उस प्रशंसित अन्न और (**स्वपत्यम्**) उत्तम अपत्ययुक्त (**वाजम्**) पदार्थबोध और (**रयिम्**) धन को (**नु**) शीघ्र (**दाः**) दीजिये॥८॥

भावार्थः-हे विद्वान्! जिस विद्या पढ़े हुए रक्षा करनेवाले के समीप से तृतीय सवन अर्थात् ब्रह्मचर्य के तीसरे भाग को शीघ्र पूर्ण कर लिये पीछे अग्न्यादि विद्यायें प्राप्त होकर उत्तम धन, बल और प्रजावान् हम लोग हों, उसको आप बतलाइये॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वया यथा गृत्समदासो अग्ने गुहा वन्वन्त उपराँ अभि ष्युः।
सुवीरासो अभिमातिषाहः स्मत्सूरिभ्यो गृणते तद्वयो धाः॥९॥२५॥

त्वया। यथा। गृत्सऽमदासः। अग्ने। गुहा। वन्वन्तः। उपरान्। अभि। स्युरिति स्युः। सुऽवीरासः। अभिमातिऽसहः। स्मत्। सूरिऽभ्यः। गृणते। तत्। वयः। धाः॥९॥

पदार्थः-(**त्वया**) (**यथा**) येन प्रकारेण (**गृत्समदासः**) गृत्सानां मेधाविनां मद आनन्द इवानन्दो येषान्ते (**अग्ने**) पावक इव वर्त्तमान (**गुहा**) गुहायाम् (**वन्वन्तः**) विभजन्तः (**उपरान्**) मेघान् (**अभि**) (**स्युः**) भवेयुः (**सुवीरासः**) सुशोभमानैर्वीरैर्युक्ताः (**अभिमातिसाहः**) येऽभिमातीन्

शत्रून् सहन्ते **(स्मत्)** एव **(सूरिभ्यः)** विद्वद्भ्यः **(गृणते)** स्तुवन्ति **(तत्)** **(वयः)** कामम् **(धाः)** दधाति॥९॥

अन्वयः-हे अग्ने विद्वन्! यथा त्वया सह वर्त्तमानाः गृत्समदासो गुहा वन्वन्तः सुवीरासः सूरिभ्यो विद्याः प्राप्य उपरान् सूर्य इवाभिमातिसाहोऽभिष्युस्तथा यस्तद्वयोधास्तं ये गृणते तैस्सह स्मद्वयमपीदृशाः स्याम॥९॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथाऽऽप्तेभ्यो विद्वद्भ्यो विद्याशिक्षे गृहीत्वा आनन्दिता विजयमाना वीरपुरुषाढ्याः प्रशंसनीया जना जायन्ते तथाऽग्निविद्यया युक्ताः पुरुषा अन्धकारं सूर्यइव दुःखं विनाशयति॥९॥

अत्राग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इति द्वितीयमण्डले चतुर्थं सूक्तं पञ्चविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के समान विद्वान्! **(यथा)** जैसे **(त्वया)** आपके साथ वर्त्तमान **(गृत्समदासः)** और जिनका बुद्धिमानों के आनन्द के समान आनन्द है, वे **(गुहा)** बुद्धि में **(वन्वन्तः)** सब प्रकार के पदार्थों का विभाग करते हुए **(सुवीरासः)** उत्तम वीरों से युक्त जन **(सूरिभ्यः)** विद्वानों से विद्याओं को प्राप्त होकर **(उपरान्)** मेघों को सूर्य के समान **(अभिमातिसाहः)** अभिमान करने और शत्रु जनों को सहनेवाले **(अभिष्युः)** सब ओर से हों, वैसे जो **(तत्)** उसे **(वयः)** काम को **(धाः)** धारण करता है उसकी जो **(गृणते)** स्तुति करते हैं, उनके साथ **(स्मत्)** ही हम लोग ऐसे हों॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे आप्त विद्वानों से विद्या और शिक्षा ग्रहण कर आनन्दित, विजयमान और वीरपुरुषों से युक्त प्रशंसनीय जन होते हैं, वैसे अग्निविद्या से युक्त पुरुष अन्धकार को जैसे सूर्य, वैसे दुःख का विनाश करते हैं॥९॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह दूसरे मण्डल में चौथा सूक्त और पच्चीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

होतेत्यष्टर्चस्य पञ्चमस्य सूक्तस्य सोमाहुतिर्भार्गव ऋषि:। अग्निर्देवता। १, ३, ६ निचृदनुष्टुप्। २, ४, ५ अनुष्टुप्। ८ विराडनुष्टुप् छन्द:। गान्धार: स्वर:। ७ भुरिगुष्णिक् छन्द:। निषाद: स्वर:॥

अथ जीवगुणानाह॥

अब आठ ऋचावाले पांचवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में जीव के गुणों का वर्णन करते हैं॥

होताजनिष्ट चेतन: पिता पितृभ्य ऊतये।

प्रयक्षञ्जेन्यं वसु शकेम वाजिनो यमम्॥ १॥

होता। अजनिष्ट। चेतन:। पिता। पितृऽभ्य:। ऊतये। प्रऽयक्षन्। जेन्यम्। वसु। शकेम। वाजिन:। यमम्॥ १॥

पदार्थ:-(होता) आदाता **(अजनिष्ट)** जनयेत् **(चेतन:)** ज्ञानादिगुणयुक्त: **(पिता)** पालक: **(पितृभ्य:)** पालकेभ्य: **(ऊतये)** रक्षणाद्याय **(प्रयक्षन्)** प्रकृष्टतया सजन्ते **(जेन्यम्)** जेतुं योग्यम् **(वसु)** द्रव्यम् **(शकेम)** समर्थयेम **(वाजिन:)** विज्ञानवन्त: **(यमम्)** नियन्तारम्॥ १॥

अन्वय:-यथा होता चेतन: पितोतये पितृभ्यो जेन्यं यमं वस्वजनिष्ट विद्वांस: प्रयक्षन् तथा वाजिनो वयमेतत्प्राप्तुं शकेम॥ १॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। हे मनुष्या! यथा सच्चिदानन्दस्वरूप: परमेश्वर इह सर्वस्य रक्षणायानेकानि द्रव्याणि रचयति तथा विद्वांसोऽप्याचरन्तु॥ १॥

पदार्थ:–जैसे **(होता)** आदाता अर्थात् गुणादि वा अन्य पदार्थों का ग्रहण कर्ता **(चेतन:)** ज्ञानादि गुणयुक्त **(पिता)** और पालन करनेवाला जीव **(ऊतये)** रक्षा आदि के लिये **(पितृभ्य:)** वा पालन करनेवालों के लिये **(जेन्यम्)** जीतने योग्य **(यमम्)** नियमकर्त्ता को और **(वसु)** धन को **(अजनिष्ट)** उत्पन्न करे और विद्वान् जन **(प्रयक्षन्)** प्रकृष्टता से सङ्ग करते हैं, वैसे **(वाजिन:)** विज्ञानवान् हम लोग उक्त विषय की प्राप्ति कर **(शकेम)** सकें॥ १॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सच्चिदानन्दस्वरूप परमेश्वर इस संसार में सबकी रक्षा के लिये अनेक द्रव्यों को रचता है, वैसे विद्वान् जन भी आचरण करें॥ १॥

अथेश्वरविषयमाह॥

फिर ईश्वर के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ यस्मिन्त्सप्त रश्मयस्तता यज्ञस्य नेतरि।

मनुष्वद्दैव्यमष्टमं पोता विश्वं तदिन्वति॥ २॥

आ। यस्मिन्। सप्त। रश्मयः। तताः। यज्ञस्य। नेतरि। मनुष्वत्। दैव्यम्। अष्टमम्। पोता विश्वम्। तत्। इन्वति॥ २॥

पदार्थः-(आ) समन्तात् **(यस्मिन्) (सप्त) (रश्मयः)** किरणाः **(तताः)** विस्तृताः **(यज्ञस्य)** सङ्गन्तुमर्हस्य जगतः **(नेतरि)** नायके **(मनुष्वत्)** मनुष्येण तुल्यम् **(दैव्यम्)** देवेषु दिव्येषु रश्मिषु भवम् **(अष्टमम्)** अष्ट सङ्ख्या पूरकम् **(पोता)** शोधकः **(विश्वम्)** सर्वं जगत् **(तत्) (इन्वति)** व्याप्नोति॥ २॥

अन्वयः-यस्मिन् यज्ञस्य नेतरि सवितरि सप्त रश्मय आतताः तत्र यन्मनुष्वद्दैव्यमष्टममाततं स पोता विश्वं प्रकाशयति तच्चेन्वति॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यः सप्तविधरश्मिः सूर्यः परिमाणेन विस्तीर्णः पवित्रकर्त्ताऽस्ति तत्र यच्चेतनं ब्रह्म व्याप्तं वर्त्तते तत्सर्वं सूर्यादिकं यथावद् व्यवस्थां नयति। यथा मनुष्याः शिल्पक्रिययाऽनेकानि वस्तूनि निर्मिमीते तथा जगदीश्वरोऽखिलं संसारं विधत्ते॥ २॥

पदार्थः-(यस्मिन्) जिस **(यज्ञस्य)** सङ्गम करने के योग्य जगत् के **(नेतरि)** नायक सविता सूर्यमण्डल में **(सप्त)** सात **(रश्मयः)** किरणें **(आतताः)** विस्तृत हैं, उसमें जो **(मनुष्वत्)** मनुष्य के तुल्य **(दैव्यम्)** दिव्य रश्मियों में प्रसिद्ध **(अष्टमम्)** आठवां विस्तृत है, वह **(पोता)** शुद्ध करनेवाला **(विश्वम्)** समस्त जगत् को प्रकाशित करता है और **(तत्)** उस सूर्यमण्डल को भी **(इन्वति)** व्याप्त होता है॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो सात विध रश्मियोंवाला सूर्य परिमाण से विस्तार को प्राप्त और पवित्र करनेवाला है, उसमें जो चेतन ब्रह्म व्याप्त वर्त्तमान है, वह समस्त सूर्यादिक की व्यवस्था प्राप्त करता [=कराता] है। जैसे मनुष्य शिल्पक्रिया से अनेक वस्तुओं को बनाते हैं, वैसे जगदीश्वर अखिल संसार का विधान करता है॥ २॥

पुनरीश्वरविषयमाह॥

फिर ईश्वर के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

दधन्वे वा यदीमनु वोचद् ब्रह्माणि वेरु तत्।
परि विश्वानि काव्या नेमिश्चक्रमिवाभवत्॥ ३॥

दधन्वे। वा। यत्। ईम्। अनु। वोचत्। ब्रह्माणि। वेः। ऊम् इति। तत। परि। विश्वानि। काव्या। नेमिः। चक्रम्ऽइव। अभवत्॥ ३॥

पदार्थः-**(दधन्वे)** धरति **(वा)** **(यत्)** **(ईम्)** जलम् **(अनु)** **(वोचत्)** पुनरुपदिशेत् **(ब्रह्माणि)** बृहन्ति **(वेः)** जानाति **(उ)** **(तत्)** **(परि)** सर्वतः **(विश्वानि)** सर्वाणि **(काव्या)** कवेः क्रान्तप्रज्ञस्य कर्माणि **(नेमिः)** प्रापकः लयः **(चक्रमिव)** चक्रमिव **(अभवत्)** भवति॥३॥

अन्वयः-सूर्यो यदीं दधन्वे ब्रह्मविद्यां ब्रह्माण्यनुवोचत्तत्सर्वं यदीश्वरो वेरु जानाति विश्वानि काव्या परि वेरु ततो नेमिश्चक्रमिव विद्वानभवत्॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। सूर्यो जलं धरति विद्वांसश्च ब्रह्मविषयादीन् वदन्ति तत्सर्वं व्यापकः परमेश्वरः साङ्गोपाङ्गं जानाति॥३॥

पदार्थः–सूर्य **(यत्)** जो **(ईम्)** जल को **(दधन्वे)** धारण करता है, ब्रह्मवेत्ता **(वा)** वा **(ब्रह्माणि)** बड़े–बड़े ब्रह्मविषयों का **(अनुवोचत्)** वार–वार उपदेश करता है **(तत्)** उस सबको जिस कारण ईश्वर **(वेः, उ)** जानता ही है और **(विश्वानि)** समस्त **(काव्या)** उत्तम बुद्धिमानों के कर्मों को **(परि)** सब ओर से जानता ही है, इस कारण जैसे **(नेमिः)** धुरी **(चक्रम्)** पहिये को वर्त्तनेवाली होती, वैसे इस संसार के व्यवहारों को वर्त्तनेवाला विद्वान् **(अभवत्)** होता है॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। सूर्य जल को धारण करता है वा विद्वान् जन ब्रह्मविषयादि को कहते हैं, उस सबको व्यापक परमेश्वर साङ्गोपाङ्ग जानता है॥३॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वानों के गुणों को कहते हैं॥

साकं हि शुचिना शुचिः प्रशास्ता क्रतुनाजनि।

विद्वाँ अस्य व्रता ध्रुवा वयाइवानु रोहते॥४॥

साकम्। हि। शुचिना। शुचिः। प्रऽशास्ता। क्रतुना। अजनि। विद्वान्। अस्य। व्रता। ध्रुवा। वयाःऽइव। अनु। रोहते॥४॥

पदार्थः-**(साकम्)** सह **(हि)** खलु **(शुचिना)** पवित्रेण **(शुचिः)** पवित्रः **(प्रशास्ता)** प्रशासनकर्त्ता **(क्रतुना)** प्रज्ञया कर्मणा वा **(अजनि)** जायते **(विद्वान्)** **(अस्य)** **(व्रता)** व्रतानि सत्याचरणानि **(ध्रुवा)** ध्रुवाणि निश्चलानि **(वयाइव)** यथा विस्तीर्णाः शाखाः **(अनु)** **(रोहते)** वर्द्धते॥४॥

अन्वयः-यो विद्वान् शुचिना क्रतुना साकं शुचिः प्रशास्ताजनि स ह्यस्य जगदीश्वरप्रकाशितस्य वेदचतुष्टयस्य ध्रुवा व्रता स्वीकृत्य वया इवानुरोहते॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये पवित्रैर्विद्वद्भिः सह सङ्गत्य प्रज्ञां जनयित्वाऽज्ञानामुपदेशका भूत्वा वेदविहितानि कर्माण्याचर्य्य स्वयं वर्द्धन्ते तेऽन्येषामुन्नतिं कुर्वन्ति॥४॥

पदार्थः-जो **(विद्वान्)** विद्वान् जन **(शुचिना)** पवित्र **(क्रतुना)** बुद्धि वा कर्म के **(साकम्)** साथ **(शुचिः)** शुद्ध **(प्रशास्ता)** उत्तम शासनकर्त्ता **(अजनि)** उत्पन्न होता है **(हि)** वही **(अस्य)** इस ईश्वर-प्रकाशित चारों वेदों के **(ध्रुवा)** निश्चल अविनाशी **(व्रता)** सत्याचरणों को स्वीकार कर **(वयाइव)** विस्तार को प्राप्त शाखाओं के समान **(अनु, रोहते)** वृद्धि को प्राप्त होता है॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो पवित्र विद्वानों के साथ सङ्ग कर, उत्तम बुद्धि को उत्पन्न करके, अज्ञजनों के उपदेशक हो, वेदविहित कर्मों का आचरण कर आप बढ़ते हैं, वे औरों की उन्नति करनेवाले होते हैं॥४॥

अथ विदुषीविषयमाह॥

अब विदुषी स्त्री के विषय में कहते हैं॥

ता अस्य वर्णमायुवो नेष्टुः सचन्त धेनवः।
कुवित्तिसृभ्य आ वरं स्वसारो या इदं ययुः॥५॥

ताः। अस्य। वर्णम्। आयुवः। नेष्टुः। सचन्त। धेनवः। कुवित्। तिसृऽभ्यः। आ। वरम्। स्वसारः। याः। इदम्। ययुः॥५॥

पदार्थः-**(ताः)** **(अस्य)** वेदस्य **(वर्णम्)** स्वीकरणीयम् **(आयुवः)** प्राप्ताः **(नेष्टुः)** नायकस्य **(सचन्त)** सङ्गमयन्ति **(धेनवः)** गावः **(कुवित्)** बहुः। **कुविदिति बहुनामसु पठितम्।** (निघं०३.१)। **(तिसृभ्यः)** कर्मोपासनाज्ञानविद्याभ्यः **(आ)** समन्तात् **(वरम्)** वरणीयं बन्धुसमुदायम् **(स्वसारः)** भगिन्यः **(याः)** **(इदम्)** जलम् **(ययुः)** प्राप्नुयुः॥५॥

अन्वयः-याः स्वसारः कन्यास्तिसृभ्यः कुविद्वरमा ययुस्ता अस्य नेष्टुर्वर्णमिदमायुवो धेनव इव सर्वान् सुखैः सचन्त॥५॥

भावार्थः-याः स्वसारः कन्याः प्रियं बन्धुं विद्याविषयञ्च प्राप्नुवन्ति ताः धेनुवदुत्तमं सुखं जनयन्ति॥५॥

पदार्थः-**(याः)** जो **(स्वसारः)** बहिन कन्या जन **(तिसृभ्यः)** कर्म, उपासना और ज्ञान विद्याओं से **(कुवित्)** [बहुत] **(वरम्)** स्वीकार करने योग्य बन्धुसमुदाय को **(आ, ययुः)** प्राप्त होवें **(ताः)** वे **(अस्य)** इस **(नेष्टुः)** नायक सर्व विद्याओं में अग्रगामी वेद के **(वर्णम्)** स्वीकार

करने योग्य विषय और **(इदम्)** जल को **(आयुवः)** प्राप्त हुई **(धेनवः)** गौओं के समान सबको सुखों से **(सचन्त)** सम्बन्ध करती हैं॥५॥

भावार्थः-जो बहिन अपने प्रियबन्धु को और कन्या विद्याविषय को प्राप्त होती हैं, वे गौओं के समान उत्तम सुख को उत्पन्न करती हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यदी मातुरुप स्वसा घृतं भरन्त्यस्थित।
तासामध्वर्युरागतौ यवो वृष्टीव मोदते॥६॥

यदि। मातुः। उप। स्वसा। घृतम्। भरन्ती। अस्थित। तासाम्। अध्वर्युः। आऽगतौ। यवः। वृष्टीऽइव। मोदते॥६॥

पदार्थः-**(यदि)** अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(मातुः)** जनन्याः **(उप) (स्वसा)** भगिनी **(घृतम्)** उदकम् **(भरन्ती)** धरन्ती **(अस्थित)** तिष्ठति **(तासाम्)** कन्यानाम् **(अध्वर्युः)** यज्ञकर्त्ता **(आगतौ)** समन्तात् प्राप्तौ **(यवः) (वृष्टीव)** यथा वृष्ट्या। अत्र टा स्थाने पूर्वसवर्णादेशः। **(मोदते)** हर्षति॥६॥

अन्वयः-यदि घृतमुपभरन्ती मातुः स्वसा तासामध्यापिकावास्थित तर्हि ऋत्विगध्वर्युर्यज्ञमागता-वानन्दत इव यवो वृष्टीव वा मोदते॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यदि कन्या अध्यापिकां विदुषीं मातरं च प्राप्य विदुष्यो भवन्ति, तर्हि जलेनौषधय इव सर्वतो वर्द्धन्ते॥६॥

पदार्थः-**(यदि)** जो **(घृतम्)** जल को **(उप, भरन्ती)** समीप होकर भरनेवाली **(मातुः)** माता की **(स्वसा)** बहिन वा **(तासाम्)** उन पूर्वोक्त कन्याओं की अध्यापिका **(अस्थित)** स्थित होती है तो ऋत्विक् और **(अध्वर्युः)** यज्ञ का करनेवाला यज्ञ को **(आगतौ)** प्राप्त होकर आनन्दित होते हैं, वैसे **[**वा **(यवः) (वृष्टीव)** वृष्टि से ओषधि, वैसे**] (मोदते)** हर्ष को प्राप्त होती है॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। यदि कन्याजन अध्यापिका विदुषी और माता को प्राप्त होकर विदुषी होती हैं तो जल से ओषधियों के समान सब ओर से वृद्धि को प्राप्त होती हैं॥६॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स्वः स्वाय धायसे कृणुतामृत्विगृत्विजम्।
स्तोमं यज्ञं चादरं वनेमा ररिमा वयम्॥७॥

स्वः। स्वाय। धायसे। कृणुताम्। ऋत्विक्। ऋत्विजम्। स्तोमम्। यज्ञम्। च। आत्। अरम्। वनेम। ररिम। वयम्॥७॥

पदार्थः-(**स्वः**) स्वयम् (**स्वाय**) स्वकीयाय (**धायसे**) धर्त्रे (**कृणुताम्**) कुरुताम् (**ऋत्विक्**) ऋत्वनुकूलं सङ्गच्छन् (**ऋत्विजम्**) (**स्तोमम्**) स्तुत्यम् (**यज्ञम्**) (**च**) (**आत्**) अनन्तरम् (**अरम्**) जलम् (**वनेम**) संभजेम। अत्राऽ**न्येषामपी**ति दीर्घः। (**ररिम**) रमेमहि। अत्रा**प्यन्येषामपी**ति दीर्घः। (**वयम्**) यज्ञानुष्ठातारः॥७॥

अन्वयः-यथा स्वः स्वाय धायसे कृणुतामृत्विगृत्विजं स्तोमं यज्ञञ्च कृणुतां यथा वयं ररिमादरं वनेम॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा स्वयं स्वस्य हिताय प्रवर्त्तेत विद्वांसो विदुषो यज्ञानुष्ठातारो विविधक्रियं यज्ञं संपादयन्ति तथा वयमपि प्रवर्त्तेमहि॥७॥

पदार्थः-जैसे (**स्वः**) आप (**स्वाय**) अपने (**धायसे**) धारण करने वाले स्वभाव के लिये (**कृणुताम्**) किसी काम को करें वा (**ऋत्विक्**) ऋतुओं के अनुकूल सब व्यवहारों की प्राप्ति कराता हुआ (**ऋत्विजम्**) दूसरों को अपने अनुकूल वा (**स्तोमम्**) स्तुति प्रशंसा के योग्य व्यवहार (**यज्ञम्, च**) और यज्ञ को करे, वैसे (**वयम्**) हम लोग (**ररिम**) रमें (**आत्**) और (**अरम्**) परिपूर्ण (**वनेम**) अच्छे प्रकार सब पदार्थों का सेवन करें॥७॥

भावार्थः-जैसे आप अपने हित के लिये प्रवृत्त हों वा विद्वान् जन विद्वानों और यज्ञ करनेवाले विविध प्रकार के क्रियायज्ञ को सिद्ध करते हैं, वैसे हम लोग भी प्रवृत्त हों॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यथा विद्वाँ अरं करद्विश्वेभ्यो यजतेभ्यः।
अयमग्ने त्वे अपि यं यज्ञं चकृमा वयम्॥८॥२६॥

यथा। विद्वान्। अरम्। करत्। विश्वेभ्यः। यजतेभ्यः। अयम्। अग्ने। त्वे इति। अपि। यम्। यज्ञम्। चकृम। वयम्॥८॥

पदार्थः-(यथा) येन प्रकारेण **(विद्वान्)** आप्तो जनः **(अरम्)** अलम् **(करत्)** कुर्यात् **(विश्वेभ्यः)** अखिलेभ्यः **(यजतेभ्यः)** विद्वत्सेवकेभ्यः **(अयम्) (अग्ने)** विद्वन् **(त्वे)** त्वयि **(अपि) (यम्) (यज्ञम्)** कर्मोपासनाज्ञानाख्यम् **(चकृम)** कुर्याम। अत्रा**ऽन्येषामपी**ति दीर्घः। **(वयम्)**॥८॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथाऽयं विद्वान् विश्वेभ्यो यजतेभ्यो विद्याभिररं करद्यथा त्वे यं यज्ञं वयमरञ्चकृम तथा त्वमपि कुरु॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यथाप्ता विद्वांसो जगद्धिताय सत्यमुपदेशं कृत्वा सत्यबोधान् जनान् कुर्वन्ति तथा सर्वैराप्तैविद्वद्भिः सततमनुष्ठेयमिति॥८॥

अत्र जीवेश्वरविद्वद्विदुषीगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेदितव्यम्॥

इति द्वितीयमण्डले पञ्चमं सूक्तं षड्विंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वान्! **(यथा)** जैसे **(अयम्)** यह **(विद्वान्)** आप्तजन **(विश्वेभ्यः)** समस्त **(यजतेभ्यः)** विद्वानों की सेवा करनेवालों से पाई हुई विद्याओं से **(अरम्)** दूसरों को परिपूर्ण **(करत्)** करता है और जैसे **(त्वे)** तेरे निमित्त **(यम्)** जिस **(यज्ञम्)** यज्ञ को **(वयम्)** हम लोग परिपूर्ण **(चकृम)** करें, वैसे तू **(अपि)** भी कर॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जैसे आप्त विद्वान् जन जगत् के लिये सत्योपदेश कर मनुष्यों को सत्य बोध वाले करते हैं, वैसे सब आप्त विद्वानों को निरन्तर अनुष्ठान करना-कराना चाहिये॥८॥

इस सूक्त में जीव, ईश्वर, विद्वान् और विदुषियों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्तार्थ के साथ सङ्गति समझनी चाहिये॥

यह दूसरे मण्डल में पांचवां सूक्त और छब्बीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

इमामित्यस्याष्टर्चस्य षष्ठस्य सूक्तस्य सोमाहुतिर्भार्गव ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ३, ५, ८ गायत्री। २, ४, ६ निचृद्गायत्री। ७ विराट्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथाग्निगुणानाह॥

अब आठ ऋचावाले छठे सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में अग्नि के गुणों का वर्णन करते हैं॥

इमां मे अग्ने समिधमिमामुपसदं वनेः। इमा उ षु श्रुधी गिरः॥१॥

इमाम्। मे। अग्ने। सम्ऽइधम्। इमाम्। उपऽसदम्। वनेरिति वनेः। इमाः। ऊम् इति। सु। श्रुधि। गिरः॥ १॥

पदार्थः-(**इमाम्**) (**मे**) मम (**अग्ने**) अग्निरिव विद्वन् (**समिधम्**) इन्धनम् (**इमाम्**) (**उपसदम्**) उपसीदन्ति यस्यां तां वेदीम् (**वनेः**) (**इमाः**) (**उ**) (**सु**) सुष्ठु (**श्रुधि**) शृणु। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**गिरः**) वाणीः॥१॥

अन्वयः-हे अग्नेऽध्यापक! यथाऽग्निर्मे ममेमां समिधमिमामुपसदं च सेवते तथा त्वं वनेरिमा उ गिरः सु श्रुधि॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वन्! यथा वह्निः समिद्भिर्वर्धते तथाऽस्मान् परीक्षयाऽस्मद्वचांसि च श्रुत्वा वर्द्धय॥१॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के समान अध्यापक विद्वान्! जैसे अग्नि (**मे**) मेरे (**इमाम्**) इस (**समिधम्**) इन्धन को और (**इमाम्**) इस (**उपसदम्**) वेदी को कि जिसमें स्थित होते हैं, सेवन करता है, वैसे आप (**वनेः**) सेवन करनेवाले विद्यार्थी की (**इमाः**) इन (**उ**) (**गिरः**) वाणियों को (**सु, श्रुधि**) सुन्दरता से सुनो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वान्! जैसे अग्नि समिधाओं में बढ़ता है, वैसे हम लोगों को परीक्षा से और हमारे वचनों को सुन कर बढ़ाइये॥॥

अथ विद्वद्गुणानाह॥

अब विद्वानों के गुणों को अगले मन्त्र में कहा है॥

अया ते अग्ने विधेमोर्जो नपादश्वमिष्टे। एना सूक्तेन सुजात॥२॥

अया। ते। अग्ने। विधेम। ऊर्जः। नपात्। अश्वम्ऽइष्टे। एना। सऽउक्तेन। सुऽजात॥२॥

पदार्थः-(अया) अनया समिधा **(ते)** तव **(अग्ने)** पावक इव प्रकाशमान **(विधेम)** परिचरेम **(ऊर्जः)** पराक्रमस्य **(नपात्)** यो न पातयति तत्सम्बुद्धौ **(अश्वमिष्टे)** योऽश्वमिच्छति तत्सम्बुद्धौ। अत्र **बहुलं छन्दसीति** मुमागमः। **(एना)** एनेन **(सूक्तेन)** सुष्ठूक्तेन **(सुजात)** शोभनेषु प्रसिद्ध॥२॥

अन्वयः-हे सुजाताऽश्वमिष्टे ऊर्जो नपादग्ने ते तवाग्नेरया समिधैना सूक्तेन च वयं विधेम॥२॥

भावार्थः-ये विद्यया साधनैरग्निं युक्त्या संप्रयुञ्जते ते वह्नेः पराक्रमेण स्वकार्याणि साद्धुं शक्नुवन्ति॥२॥

पदार्थः–हे **(सुजात)** शोभन गुणों में प्रसिद्ध! **(अश्वमिष्टे)** घोड़े की इच्छा करने और **(ऊर्जः)** बल को **(नपात्)** न पतन करानेवाले **(अग्ने)** अग्नि के समान प्रकाशमान **(ते)** आपके सम्बन्ध में जो अग्नि है, उसकी **(अया)** इस समिधा से और **(एना)** इस **(सूक्तेन)** उत्तमता से कहे हुए सूक्त से हम लोग **(विधेम)** सेवन करें॥२॥

भावार्थः-जो विद्या और साधनों से अग्नि का युक्ति के साथ अच्छे प्रकार प्रयोग करते हैं, वे अग्नि के पराक्रम से अपने कामों को सिद्ध कर सकते हैं॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तं त्वा गीर्भिर्गिर्वणसं द्रविणस्युं द्रविणोदः। सपर्येम सपर्यवः॥३॥

तम्। त्वा। गीःऽभिः। गिर्वणसम्। द्रविणस्युम्। द्रविणःऽद। सपर्येम। सपर्यवः॥३॥

पदार्थः-(तम्) (त्वा) (गीर्भिः) सुशिक्षिताभिर्वाग्भिः **(गिर्वणसम्)** विद्यावाक् सेवमानम् **(द्रविणस्युम्)** आत्मनो द्रविणमिच्छुम् **(द्रविणोदः)** यो द्रविणो ददाति तत्सम्बुद्धौ **(सपर्येम)** सेवेमहि **(सपर्यवः)** आत्मनः सपर्यामिच्छवः॥३॥

अन्वयः-हे द्रविणोदो! यथाऽग्निरिव वर्त्तमानं द्रविणस्युं गिर्वणसं तन्त्वा सपर्यवो गीर्भिस्सेवन्ते तथा वयं सपर्येम॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये गुणकर्मस्वभावतोऽग्निं विज्ञाय कार्यसिद्धये संप्रयुञ्जते, ते श्रीमन्तो जायन्ते॥३॥

पदार्थः-हे **(द्रविणोदः)** धन को देनेवाले विद्वान् जन! अग्नि के समान वर्त्तमान **(द्रविणस्युम्)** अपने को धन की इच्छा करनेवाले **(गिर्वणसम्)** विद्या की वाणी को सेवते हुए **(तम्)** उन **(त्वा)** आपको **(सपर्यवः)** अपने को सेवने की इच्छा करनेवाले जन **(गीर्भिः)** सुन्दर शिक्षित वाणियों से सेवते हैं, वैसे हम लोग **(सपर्येम)** सेवन करें॥३॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो गुण, कर्म, स्वभाव से अग्नि को विशेष जान कर कार्यसिद्धि के लिये उसका अच्छे प्रकार प्रयोग करते हैं, वे श्रीमान् होते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स बोधि सूरिर्मघवा वसुपते वसुदावन्। युयोध्य१स्मद्द्वेषांसि॥४॥

सः। बोधि। सूरिः। मघऽवा। वसुऽपते। वसुऽदावन्। युयोधि। अस्मत्। द्वेषांसि॥४॥

पदार्थ:-(**सः**) (**बोधि**) जानाति (**सूरिः**) विद्वान् (**मघवा**) परमपूजितधनयुक्तः (**वसुपते**) वसूनां पालक (**वसुदावन्**) यो वसूनि द्रव्याणि ददाति तत्सम्बुद्धौ (**युयोधि**) वियोजय (**अस्मत्**) अस्माकं सकाशात् (**द्वेषांसि**) द्वेषयुक्तानि कर्माणि॥४॥

अन्वय:-हे वसुपते वसुदावन्! यो मघवा सूरिर्भवान् बोधि स त्वमस्मद् द्वेषांसि युयोधि॥४॥

भावार्थ:-हे रागद्वेषविरहा गुणग्राहिणो जना भवन्ति तेऽन्यानपि स्वसदृशान् कृत्वा दातारस्सन्तः श्रीमन्तो भवन्ति॥४॥

पदार्थ:-हे (**वसुपते**) धनों की पालना करने और (**वसुदावन्**) धनों को देनेवाले जो (**मघवा**) परमप्रशंसित धनयुक्त (**सूरिः**) विद्वान्! आप (**बोधि**) सब व्यवहारों को जानते हैं (**सः**) सो आप (**अस्मत्**) हम लोगों के (**द्वेषांसि**) वैर भरे हुए कामों को (**युयोधि**) अलग कीजिये॥४॥

भावार्थ:-जो राग-द्वेषरहित गुणग्राही जन होते हैं, वे औरों को भी अपने सदृश करके दाता होते हुए लक्ष्मीवान् होते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स नो वृष्टिं दिवस्परि स नो वाजमनर्वाणम्। स नः सहस्रिणीरिषः॥५॥

सः। नः। वृष्टिम्। दिवः। परि। सः। नः। वाजम्। अनर्वाणम्। सः। नः। सहस्रिणीः। इषः॥५॥

पदार्थ:-(**सः**) अग्निः (**नः**) अस्मभ्यम् (**वृष्टिम्**) वर्षम् (**दिवः**) सूर्यप्रकाशान्मेघमण्डलात् (**परि**) सर्वतः (**सः**) (**नः**) अस्मान् (**वाजम्**) वेगयुक्तम् (**अनर्वाणम्**) अविद्यमानाऽश्वं रथम् (**सः**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**सहस्रिणीः**) असंख्याताः (**इषः**) अन्नानि॥५॥

अन्वय:-हे विद्वन्! यथा स नो दिवो वृष्टिं करोति स नोऽनर्वाणं वाजः प्रापयति स नः सहस्रिणीरिषः परिजनयति तथा त्वं वर्त्तस्व॥५॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यैस्तथा प्रयतितव्यं यथाऽग्नेः सकाशात्पुष्कलाः उपकाराः स्युः॥५॥

पदार्थ:-हे विद्वान्! जैसे **(सः)** वह अग्नि **(नः)** हम लोगों के लिये **(दिवः)** सूर्यप्रकाश और मेघमण्डल से **(वृष्टिम्)** वर्षाओं को करता है वा **(सः)** वह अग्नि **(नः)** हम लोगों को **(अनर्वाणम्)** घोड़े जिसमें नहीं विद्यमान हैं, उस **(वाजम्)** वेगवान् रथ को प्राप्त कराता है वा **(सः)** वह अग्नि **(नः)** हमारे लिये **(सहस्रिणीः)** असंख्यात प्रकार के **(इषः)** अन्नों को **(परि)** सब ओर से उत्पन्न कराता है, वैसे आप वर्त्ताव कीजिये॥५॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को वैसा यत्न करना चाहिये जिससे अग्नि की उत्तेजना से बहुत उपकार हों॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ईळा॑नायाव॒स्यवे॒ यवि॑ष्ठ दूत नो गि॒रा। यजि॑ष्ठ होत॒रा ग॑हि॥६॥

ईळा॑नाय। अ॒व॒स्यवे॑। यवि॑ष्ठ। दू॒त॒। न॒ः। गि॒रा। यजि॑ष्ठ। होत॒रिति॑। आ। ग॒हि॒॥६॥

पदार्थ:-**(ईळानाय)** स्तुवते **(अवस्यवे)** आत्मनोऽवो रक्षणमिच्छवे **(यविष्ठः)** अतिशयेन युवन् **(दूत)** यो दुनाति दुष्टाँस्तत्सम्बुद्धौ **(नः)** अस्मान् **(गिरा)** वाण्या **(यजिष्ठ)** अतिशयेन पूजितुं योग्य **(होतः)** दातः **(आ) (गहि)** समन्तात् प्राप्नुहि॥६॥

अन्वय:-हे यविष्ठ यजिष्ठ दूत होतस्त्वं यथाऽवस्यव ईळानाय गिरा सुखं प्रयच्छसि तथा नोऽस्मानागहि॥६॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा मनुष्याणां दूतोऽग्निर्भूतलादुपरि पदार्थान्नीत्वा जलं वर्षयित्वा च सर्वस्य रक्षणनिमित्तो भवति तथा विद्वान् सुवचनेन सर्वस्य हितकारी जायते॥६॥

पदार्थ:-हे **(यविष्ठ)** अतीव युवावस्थावाले **(यजिष्ठ)** अत्यन्त प्रशंसा और सत्कार के योग्य **(दूत)** दुष्टों को सब ओर से कष्ट देने और **(होतः)** दानकर्म करनेवाले! आप जैसे **(अवस्यवे)** अपने को रक्षा की इच्छा करनेवाले **(ईळानाय)** स्तुति करते हुए जन के लिये **(गिरा)** वाणी से सुख देते हैं, वैसे आप **(नः)** हम लोगों को **(आगहि)** अच्छे प्रकार प्राप्त हूजिये॥६॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे मनुष्यों को दूतरूप अग्नि पृथिवीतल से ऊपर पदार्थों को पहुँचा और जलों को वर्षा कर सबकी रक्षा का निमित्त होता है, वैसे विद्वान् जन उत्तम वचन से सबका हित करनेवाला होता है॥६॥

अथेश्वरविषयमाह॥

अब ईश्वर के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अन्तर्ह्यग्न ईयसे विद्वान् जन्मोभया कवे। दूतो जन्येव मित्र्यः॥७॥

अन्तः। हि। अग्ने। ईयसे। विद्वान्। जन्म। उभया। कवे। दूतः। जन्याऽइव। मित्र्यः॥७॥

पदार्थः-(अन्तः) मध्ये **(हि)** खलु **(अग्ने)** विद्युदिव स्वप्रकाश जगदीश्वर! **(ईयसे)** प्राप्नोषि **(विद्वान्)** सकलवित् **(जन्म)** जन्मानि **(उभया)** वर्त्तमानेन सह पूर्वापराणि **(कवे)** क्रान्तप्रज्ञसर्वज्ञ **(दूतः)** सर्वतः समाचारप्रदः **(जन्येव)** जनेभ्यो हित इव **(मित्र्यः)** मित्रेषु साधुः॥७॥

अन्वयः-हे कवेऽग्ने विद्वाँस्त्वं हि मित्र्यो दूतो जन्येवान्तरीयस उभया जन्मकृत्यानि वेत्सि तस्मादस्माभिरुपास्योऽसि॥७॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा सत्योपदेष्टा सत्यकारी सर्वस्य प्रियं प्रेप्सुः सुहृदाप्तो बाह्यमन्तरं विज्ञानं प्रदाय धर्मे नियच्छति तथाऽन्तर्बहिःस्थ परमेश्वरः सर्वेषां सर्वाणि कर्माणि विदित्वा फलं ददाति॥७॥

पदार्थः-हे **(कवे)** क्रम-क्रम से बुद्धि की विषयों में प्रविष्ट करनेवाले सर्वज्ञ **(अग्ने)** बिजुली के समान आप ही प्रकाशमान जगदीश्वर वा **(विद्वान्)** सब विषयों को जाननेवाले विद्वान् जन! आप **(हि)** ही **(मित्र्यः)** मित्रों में साधु **(दूतः)** सब **[ओर]** से समाचार के देनेहारे **(जन्येव)** जनों के लिये हितकारी जैसे हो, वैसे **(अन्तः)** हृदयाकाश के बीच **(ईयसे)** प्राप्त होते हो **(उभया)** वर्त्तमान के साथ अगले पिछले **(जन्म)** और कर्मों को जानते हो, इससे हम लोगों के उपासना करने योग्य हो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे सत्य का उपदेश और सत्य का आचरण करनेवाला पुरुष सबके प्रिय काम को चाहनेवाला, सबका मित्र, शास्त्रज्ञ, धर्मात्मा, विद्वान् बाहर-भीतर विज्ञान देकर धर्म में नियत करता है, वैसे भीतर-बाहर परमेश्वर सबके समस्त कामों को जानकर फल देता है॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स विद्वाँ आ च पिप्रयो यक्षि चिकित्व आनुषक्।
आ चास्मिन्त्सत्सि बर्हिषि॥८॥२७॥

सः। विद्वान्। आ। च। पिप्रयः। यक्षि। चिकित्वः। आनुषक्। आ। च। अस्मिन्। सत्सि। बर्हिषि॥८॥

पदार्थः-(सः) जगदीश्वरः **(विद्वान्)** सर्वविद्याधारः **(आ) (च) (पिप्रयः)** प्रीणासि **(यक्षि)** ददासि **(चिकित्वः)** विज्ञानवान् **(आनुषक्)** अनुकूलम् **(आ) (च) (अस्मिन्) (सत्सि)** आसन्नोऽसि **(बर्हिषि)** अन्तरिक्षस्थे जगति॥८॥

अन्वयः-हे चिकित्व ईश्वर स विद्वाँस्त्वमस्मिन्बर्हिष्या सत्सि स त्वमानुषक् पिप्रयश्च यक्षि॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! भवन्तो योऽस्मिञ्जगति व्याप्तः प्रियस्य दाता सर्वज्ञोऽन्तर्यामीश्वरोऽस्ति तमुपासीरन्निति॥८॥

अस्मिन् सूक्ते वह्निविद्वदीश्वरगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेदितव्यम्॥

इति षष्ठं सूक्तं सप्तविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः–हे **(चिकित्वः)** विज्ञानवान् ईश्वर **(सः)** वह **(विद्वान्)** विद्वान्! आप **(अस्मिन्)** इस **(बर्हिषि)** अन्तरिक्ष जगत् में **(आसत्सि)** आसन्न हो रहे हो, प्राप्त हो रहे सो आप **(आनुषक्)** अनुकूल जैसे हो, वैसे **(आ, पिप्रयः)** अच्छे प्रसन्न करते **(च)** और **(यक्षि, च)** अच्छे प्रकार सब वस्तु देते हो॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! आप लोग जो इस जगत् में व्याप्त, प्रिय पदार्थ का देनेवाला और सर्वज्ञ अन्तर्यामी ईश्वर है, उसी की उपासना करें॥८॥

इस सूक्त में वह्नि और ईश्वर के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्तार्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह छठा सूक्त और सत्ताईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

श्रेष्ठमिति षड्चस्य सप्ततमस्य सूक्तस्य सोमाहुतिर्भार्गव ऋषिः। अग्निर्देवता। १-३ निचृद् गायत्री। ४ त्रिपाद् गायत्री। ५ विराट् पिपीलिकामध्या। ६ विराट् गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथ विद्वद्गुणानाह॥

अब छः ऋचावाले सातवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में विद्वानों के गुणों का वर्णन करते हैं॥

श्रेष्ठं यविष्ठ भारताऽग्ने द्युमन्तमा भर। वसो पुरुस्पृहं रयिम्॥ १॥

श्रेष्ठम्। यविष्ठ। भारत। अग्ने। द्युऽमन्तम्। आ। भर। वसो इति। पुरुऽस्पृहम्। रयिम्॥ १॥

पदार्थः-(श्रेष्ठम्) अतिशयेन श्रेयस्करम् **(यविष्ठ)** अतिशयेन युवन् **(भारत)** धारक **(अग्ने)** पावकवद्विद्वन् **(द्युमन्तम्)** बहुप्रकाशयुक्तम् **(आ)** समन्तात् **(भर)** धर **(वसो)** सुखेषु वासयितः **(पुरुस्पृहम्)** बहुभिस्स्पर्हणीयम् **(रयिम्)** श्रियम्॥१॥

अन्वयः-हे वसो भारत यविष्ठाऽग्ने! त्वं श्रेष्ठं द्युमन्तं पुरुस्पृहं रयिमा भर॥१॥

भावार्थः-य उत्तमधनलाभाय बहु प्रयतन्ते ते धनाढ्या जायन्ते॥१॥

पदार्थः–हे **(वसो)** सुखों में वास कराने और **(भारत)** सब विद्या विषयों को धारण करनेवाले **(यविष्ठ)** अतीव युवावस्था युक्त **(अग्ने)** अग्नि के समान प्रकाशमान विद्वान्! आप **(श्रेष्ठम्)** अत्यन्त कल्याण करनेवाली **(द्युमन्तम्)** बहुत प्रकाशयुक्त **(पुरुस्पृहम्)** बहुतों को चाहने योग्य **(रयिम्)** लक्ष्मी को **(आ, भर)** अच्छे प्रकार धारण कीजिये॥१॥

भावार्थः-जो उत्तम धन लाभ के लिये बहुत यत्न करते हैं, वे धनाढ्य होते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

मा नो अरातिरीशत देवस्य मर्त्यस्य च। पर्षि तस्या उत द्विषः॥ २॥

मा। नः। अरातिः। ईशत। देवस्य। मर्त्यस्य। च। पर्षि। तस्याः। उत। द्विषः॥ २॥

पदार्थः-(मा) **(नः)** अस्मान् **(अरातिः)** शत्रुः **(ईशत)** समर्थो भवेत् **(देवस्य)** विदुषः **(मर्त्यस्य)** अविदुषः **(च)** **(पर्षि)** पिपूरय **(तस्याः)** **(उत)** अपि **(द्विषः)** अप्रीतेः॥२॥

अन्वयः-हे विद्वन्नो देवस्य मर्त्त्यस्य चारातिर्मेशत उतापि तस्या द्विषो नो पर्षि पारं नय॥२॥

भावार्थः-ये द्वेषं विहाय धार्मिकाणां विदुषामविदुषां च सङ्गेन सर्वेषु प्रीतिं जनयन्ति, ते केनापि तिरस्कृता न जायन्ते॥२॥

पदार्थः-हे विद्वान्! **(नः)** हम **(देवस्य)** विद्वान् **(मर्त्यस्य, च)** और अविद्वान् का **(अरातिः)** शत्रु **(मा)** मत **(ईशत)** समर्थ हो **(उत)** और हम लोगों को और **(तस्याः)** उस **(द्विषः)** अप्रीतिवाले शत्रु के **(पर्षि)** पार पहुंचाइये॥२॥

भावार्थः-जो द्वेष छोड़ धार्मिक विद्वानों को तथा अविद्वानों के साथ प्रीति उत्पन्न कराते हैं, वे किसी से तिरस्कार को नहीं प्राप्त होते हैं॥२॥

पुनर्विद्वद्विषयमाह॥

फिर विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

विश्वा उत त्वया वयं धारा उदन्याइव। अति गाहेमहि द्विषः॥३॥

विश्वाः। उत। त्वया। वयम्। धाराः। उदन्याःइव। अति। गाहेमहि। द्विषः॥३॥

पदार्थः-**(विश्वाः)** सर्वाः **(उत)** अपि **(त्वया)** आप्तेन विदुषा सह **(वयम्)** **(धाराः)** **(उदन्याइव)** उदकसम्बन्धिन्य इव **(अति)** उल्लङ्घने **(गाहेमहि)** **(द्विषः)** द्वेषवृत्तीः॥३॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा त्वया सह वर्त्तमाना वयं धारा उदन्याइव विश्वा द्विषोऽतिगाहेमहि तथा त्वमुताप्येताः गाहेथाः॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा उदकस्य धाराः प्राप्तं स्थानं त्यक्त्वा स्थानान्तरं गच्छन्ति तथा शत्रुभावं विहाय मित्रभावं सर्वे मनुष्याः प्राप्नुवन्तु॥३॥

पदार्थः-हे विद्वान्! जैसे **(त्वया)** आप्त विद्वान् जो आप उनके साथ वर्त्तमान हम लोग **(धाराः)** **(उदन्याइव)** जल की धाराओं को जैसे वैसे **(विश्वाः)** समस्त **(द्विषः)** वैरवृत्तियों को **(अति, गाहेमहि)** अवगाहें, बिलोडें, मथें, वैसे आप **(उत)** भी इनको गाहो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे जल की धारा प्राप्त हुए स्थान को छोड़ दूसरे स्थान को जाती है, वैसे शत्रुभाव को छोड़ मित्रभाव को सब मनुष्य प्राप्त होवें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

शुचिः पावक वन्द्योऽग्ने बृहद्वि रोचसे। त्वं घृतेभिराहुतः॥४॥

शुचिः। पावक। वन्द्यः। अग्ने। बृहत्। वि। रोचसे। त्वम्। घृतेभिः। आऽहुतः॥४॥

पदार्थः-**(शुचिः)** पवित्रः **(पावक)** पवित्रकर्त्तः **(वन्द्यः)** स्तोतुमर्हः **(अग्ने)** अग्निवत्प्रकाशमान विद्वन् **(बृहत्)** महत् **(वि)** विशेषे **(रोचसे)** प्रकाशसे **(त्वम्)** **(घृतेभिः)** आज्यादिभिः **(आहुतः)** आमन्त्रितः॥४॥

अन्वयः-हे पावकाऽग्ने! घृतेभिः प्रदीप्तोऽग्निरिव शुचिर्वन्द्य आहुतस्त्वं बृहद्विरोचसे स सत्कर्त्तव्योऽसि॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा घृतादिभिः प्रज्वालितः पवित्रकर्त्ताऽग्निर्बहु रोचते तथा सत्कृतो विद्वान् बहु उपकारं करोति॥४॥

पदार्थः-हे **(पावक)** पवित्र करनेवाले **(अग्ने)** अग्नि के समान प्रकाशमान! **(घृतेभिः)** घी आदि पदार्थों से **[**प्रदीप्त**]** अग्नि के समान **(शुचिः)** पवित्र **(वन्द्यः)** स्तुति के योग्य **[(आहुतः)** आमन्त्रित**]** **(त्वम्)** आप **(बृहत्)** बहुत **(विरोचसे)** प्रकाशमान होते हैं, सो सत्कार करने योग्य हैं॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे घी आदि पदार्थों से प्रज्वलित किया हुआ पवित्र करनेवाला अग्नि बहुत प्रकाशित होता है, वैसे सत्कार पाया हुआ विद्वान् जन बहुत उपकार करता है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वं नो असि भारताग्ने वशाभिरुक्षभिः। अष्टापदीभिराहुतः॥५॥

त्वम्। नः। असि। भारत। अग्ने। वशाभिः। उक्षऽभिः। अष्टाऽपदीभिः। आऽहुतः॥५॥

पदार्थः-(त्वम्) (नः) अस्मभ्यम् **(असि)** भवसि **(भारत)** धारक **(अग्ने)** विद्वन् **(वशाभिः)** कमनीयाभिर्गोभिः **(उक्षभिः)** वृषभैः **(अष्टापदीभिः)** अष्टौ पादौ यासां ताभिर्वाग्भिः **(आहुतः)** आमन्त्रितः॥५॥

अन्वयः-हे भारताऽग्ने! यो वशाभिरुक्षभिरष्टापदीभिराहुतस्त्वं नोऽस्मभ्यं सुखं दत्तवानसि सोऽस्माभिरर्च्चनीयोऽसि॥५॥

भावार्थः-यो मनुष्योऽष्टस्थानोच्चारितया वाचा सत्यमुपदिशन् गवादिरक्षणेन सर्वस्य पालनं विधत्ते, स सर्वैः पालनीयो भवेत्॥५॥

पदार्थः-हे **(भारत)** सब विषयों को धारण करनेवाले **(अग्ने)** विद्वान्! जो **(वशाभिः)** मनोहर गौओं से वा **(उक्षभिः)** बैलो से वा **(अष्टापदीभिः)** जिनमें आठ सत्यासत्य के निर्णय करनेवाले चरण हैं, उन वाणियों से **(आहुतः)** बुलाये हुए आप **(नः)** हम लोगों के लिये सुख दिये हुए **(असि)** हैं, सो हम लोगों से सत्कार पाने योग्य हैं॥५॥

भावार्थ:-जो मनुष्य आठ स्थानों में उच्चारण की हुई वाणी से सत्य का उपदेश करता हुआ गवादि पशुओं की रक्षा से सबकी पालना का विधान करता है, वह सबको रखने के योग्य है॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

द्र॒वन्नः॑ स॒र्पिरा॑सुतिः प्र॒त्नो होता॒ वरे॑ण्यः। सह॑सस्पु॒त्रो अद्भु॑तः॥६॥२८॥

द्रुऽअ॑न्नः। स॒र्पिःऽआ॑सुतिः। प्र॒त्नः। होता॑। वरे॑ण्यः। सह॑सः। पु॒त्रः। अद्भु॑तः॥६॥

पदार्थ:-(**द्रवन्नः**) द्रुः काष्ठमन्नं यस्य सः (**सर्पिरासुतिः**) सर्पिरासुतिर्यस्य सः (**प्रत्नः**) प्राक्तनः (**होता**) दाता (**वरेण्यः**) स्वीकर्त्तुमर्हः (**सहसः**) बलिष्ठस्य वायोः (**पुत्रः**) पुत्र इव वर्त्तमानः (**अद्भुतः**) आश्चर्यगुणकर्मस्वभावः॥६॥

अन्वय:-यैर्विद्वद्भिः प्रत्नो द्रवन्नः सर्पिरासुतिः सहसस्पुत्रोऽद्भुतो होता वरेण्योऽग्निः कार्यसिद्धये प्रयुज्यते ते चित्रधनाढ्या जायन्त इति॥६॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। अग्नेर्भोजनस्थानीयं काष्ठं पानार्थं सर्वौषधादिपदार्थानां सारो विद्यत इति वेदितव्यमन्यत्सर्वेष कलागृहेषु काष्ठौषधिसारं जलादिनाऽग्निप्रयोगः कार्यः॥६॥

अत्र विद्वदग्निगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्बोध्या॥

इति द्वितीयमण्डले सप्तमं सूक्तमष्टाविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थ:-जिन विद्वानों से (**प्रत्नः**) पुरातन (**द्रवन्नः**) तथा जिसका काष्ठ अन्न और (**सर्पिरासुतिः**) घी दुग्धसार पान के लिये विद्यमान है और जो (**सहसस्पुत्रः**) बलवान् वायु के समान है, वह (**अद्भुतः**) आश्चर्य गुण, कर्म स्वभावयुक्त (**होता**) सब पदार्थों को देनेवाला (**वरेण्यः**) स्वीकार करने योग्य अग्नि कार्यसिद्धि के लिये प्रयुक्त किया जाता है, वे आश्चर्यरूप धनाढ्य होते हैं॥६॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। अग्नि का भोजन-स्थानी काष्ठ और पीने के अर्थ सब ओषधियों का रस विद्यमान है, यह जानकर काष्ठ और ओषधिसार जल आदि के संयोग से कलाघरों में अग्नि का प्रयोग करना चाहिये॥६॥

इस सूक्त में विद्वान् और अग्नि के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह दूसरे मण्डल में सप्तम सूक्त और अट्ठाईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

वाजयन्निति षड्चस्याऽष्टमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। अग्निर्देवता। १ गायत्री। २ निचृत् पिपीलिकामध्या गायत्री। ३, ५ निचृद्गायत्री। ४ विराड्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः। ६ निचृदनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

अथाग्निविषयमाह॥

अब छः ऋचावाले आठवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में अग्नि विषय का वर्णन करते हैं॥

वाजयन्निव नू रथान् योगाँ अग्नेरुप स्तुहि। यशस्तमस्य मीळ्हुषः॥ १॥

वाजयन्ऽइव। नु। रथान्। योगान्। अग्नेः। उप। स्तुहि। यशःऽतमस्य। मीळ्हुषः॥ १॥

पदार्थः-(वाजयन्निव) यथा गमयन् **(नु)** शीघ्रम् **(रथान्)** रमणीयान् विमानादीन् **(योगान्)** **(अग्नेः)** पावकस्य **(उप)** **(स्तुहि)** प्रशंस **(यशस्तमस्य)** अतिशयेन यशस्विनो बहुजलयुक्तस्य वा **(मीढुषः)** सेचकस्य॥ १॥

अन्वयः-हे विद्वन्! वाजयन्निव त्वं मीढुषो यशस्तमस्याऽग्नेर्योगान् रथाँश्च नूपस्तुहि॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे शिल्पिन् विद्वन्! यथाऽश्वादयो रथान् गमयन्ति तथैवातिशीघ्रगत्या जलयन्त्रप्रेरितोऽग्निर्विमानादियानानि शीघ्रं गमयतीति सर्वान् प्रत्युपदिश॥ १॥

पदार्थः-हे विद्वान्! **(वाजयन्निव)** पदार्थों को प्राप्त कराते हुए आप **(मीढुषः)** सींचनेवाले **(यशस्तमस्य)** अतीव यशस्वी वा बहुत जलयुक्त **(अग्नेः)** अग्नि के समान प्रतापी जल के वा अग्नि के **(योगान्)** योगों की ओर **(रथान्)** विमानादि रथों की **(नु)** शीघ्र **(उपस्तुहि)** प्रशंसा कीजिये॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे शिल्पी विद्वान् जन! आप जैसे घोड़ों और बैल आदि से चलनेवाले रथों को चलाते हैं, वैसे ही अति शीघ्र गति से जल के कलाघरों से प्रेरणा पाया अग्नि विमानादि यानों को शीघ्र चलाता है, यह सबके प्रति उपदेश करो॥ १॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यः सुनीथो ददाशुषेऽजुर्यो जरयन्नरिम्। चारुप्रतीक आहुतः॥ २॥

यः। सुऽनीथः। ददाशुषे। अजुर्यः। जरयन्। अरिम। चारुऽप्रतीकः। आऽहुतः॥ २॥

पदार्थः-(**यः**) (**सुनीथः**) यः सुष्ठु नयति सः (**ददाशुषे**) दात्रे (**अजुर्यः**) अजीर्णेषु भवः (**जरयन्**) नाशयन् (**अरिम्**) शत्रुम् (**चारुप्रतीकः**) सुन्दरगुणकर्मस्वभावैः प्रतीतः (**आहुतः**) आमन्त्रितः॥२॥

अन्वयः-योऽग्निरिव चारुप्रतीक आहुतोऽजुर्यः सुनीथोऽरिञ्जरयन् ददाशुषे सुखं प्रयच्छति **[सः]** श्रीमान् जायते॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा शिल्पकार्येषु प्रेरितोऽग्निरुत्तमानि कार्याणि साध्नोति तथा सुशिक्षिता धीमन्तो बह्वीमुन्नतिं कुर्वन्ति॥२॥

पदार्थः-(**यः**) जो अग्नि के समान (**चारुप्रतीकः**) सुन्दर गुण, कर्म और स्वभावों से प्रतीत (**आहुतः**) वा बुलाया हुआ (**अजुर्यः**) जो न जीर्ण होते न नष्ट होते हैं, उनमें प्रसिद्ध (**सुनीथः**) सुन्दरता से सबकी प्राप्ति करता है और (**अरिम्**) शत्रुजन को (**जरयन्**) नाश करता हुआ (**ददाशुषे**) दानशील के लिये सुख देता है, वह लक्ष्मीवान् होता है॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे शिल्पकामों में प्रेरणा किया हुआ अग्नि उत्तम कामों को सिद्ध करता है, वैसे सुन्दर शिक्षा पाये हुए बुद्धिमान् जन बहुतसी उन्नति करते हैं॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

य उं श्रिया दमेष्वा दोषोषसिं प्रशस्यते। यस्यं व्रतं न मीयते॥३॥

यः। ऊम् इति। श्रिया। दमेषु। आ। दोषा। उषसि। प्रऽशस्यते। यस्य। व्रतम्। न। मीयते॥३॥

पदार्थः-(**यः**) (**उ**) (**श्रिया**) शोभया (**दमेषु**) गृहेषु (**आ**) (**दोषा**) रात्रौ (**उषसि**) दिने (**प्रशस्यते**) प्रशस्तो जायते (**यस्य**) (**व्रतम्**) शीलम् (**न**) (**मीयते**) हिंस्यते॥३॥

अन्वयः-हे विद्वँस्त्वं यो दमेषु दोषोषसि श्रियाऽऽप्रशस्यते यस्य व्रतमु न मीयते तद्वद्भव॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽग्नेः शीलं स्वरूपमनाद्यविनाशि वर्त्तते तथा सर्वेषामीश्वरजीवाकाशादीनां पदार्थानां नित्ये वर्त्तेते॥३॥

पदार्थः-हे विद्वान्! आप (**यः**) जो (**दमेषु**) घरों में (**दोषा**) वा रात्रि और (**उषसि**) दिन में (**श्रिया**) शोभा से (**आ, प्रशस्यते**) अच्छे प्रकार प्रशंसा को प्राप्त किया जाता और (**यस्य**) जिसका (**व्रतम्, उ**) शील (**न**) न (**मीयते**) नष्ट होता है, उसके समान हूजिये॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अग्नि का शील और स्वरूप अनादि अविनाशी वर्त्तमान है, वैसे ईश्वर, जीव और आकाश आदि पदार्थों का शील और स्वरूप नित्य वर्त्तमान है॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ यः स्वर्ण भानुना चित्रो विभात्यर्चिषा। अञ्जानो अजरैरभि॥४॥

आ। यः। स्वः। न। भानुना। चित्रः। विऽभाति। अर्चिषा। अञ्जानः। अजरैः। अभि॥४॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(यः)** **(स्वः)** आदित्यः **(न)** इव **(भानुना)** प्रकाशेन **(चित्रः)** अद्भुतः **(विभाति)** प्रकाशते **(अर्चिषा)** पूजनीयेन **(अञ्जानः)** प्रकटीकुर्वन् **(अजरैः)** वयोहानिरहितैः **(अभि)** सर्वतः॥४॥

अन्वयः-यो विद्यूद्रूपश्चित्रोऽजरैरभ्यञ्जानोऽग्निरर्चिषा भानुना स्वर्ना विभाति स सर्वैरन्वेषणीयः॥४॥

भावार्थः-अग्निरयं सूक्ष्मपरमाणुरूपेषु पदार्थेषु सर्वदा स्वरूपेणावतिष्ठते काष्ठादिषु पदार्थ-वृद्धिह्रासादिना कदाचित् वर्द्धते कदाचिद्ध्रसते च॥४॥

पदार्थः-**(यः)** जो बिजुलीरूप **(चित्रः)** चित्र-विचित्र अद्भुत अग्नि **(अजरैः)** अविनाशी पदार्थों से **(अभि, अञ्जानः)** सब ओर से सब पदार्थों को प्रकट करता हुआ अग्नि **(अर्चिषा)** प्रशंसनीय **(भानुना)** प्रकाश से **(स्वः)** आदित्य के **(न)** समान **(आ, विभाति)** अच्छे प्रकार प्रकाशित होता है॥४॥

भावार्थः-अग्नि यह सूक्ष्म परमाणुरूप पदार्थों में सर्वदा अपने रूप के साथ रहता है। काष्ठ आदि पदार्थों में वृद्धि और न्यूनता आदि से कोई समय में बढ़ता और कभी कमती होता है॥४॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अत्रिमनु स्वराज्यमग्निमुक्थानि वावृधुः। विश्वा अधि श्रियो दधे॥५॥

अत्रिम्। अनु। स्वऽराज्यम्। अग्निम्। उक्थानि। ववृधुः। विश्वाः। अधि। श्रियः। दधे॥५॥

पदार्थः-**(अत्रिम्)** अत्तारम् **(अनु)** **(स्वराज्यम्)** स्वप्रकाशवन्तम् **(अग्निम्)** विद्युतम् **(उक्थानि)** वक्तुं योग्यानि वचनानि **(वावृधुः)** वर्द्धयन्ति **(विश्वाः)** अखिलाः **(अधि)** **(श्रियः)** लक्ष्मीः **(दधे)** उपरि दधाति॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यान्युक्थान्यत्रिं स्वराज्यमग्निं चानु वावृधुर्यथा तैर्विश्वाः श्रियोऽहमधिदधे तथा युष्माभिरप्याचरणीयम्॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। विदुषां योग्यताऽस्ति यैरुपदेशैरग्न्यादिपदार्थविद्या राज्यश्रियश्च वर्द्धेरँस्तैः सर्वानुद्योगिनः सम्पादयन्तु॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(उक्थानि)** कहने योग्य वचन **(अत्रिम्)** सब पदार्थ भक्षण करनेवाले **(स्वराज्यम्)** अपने प्रकाश से युक्त **(अग्निम्)** बिजुली रूप अग्नि को **(अनु, वावृधुः)** अनुकूलता से बढ़ाते है और जैसे उनसे **(विश्वाः)** समस्त **(श्रियः)** धनों को **(अधि, दधे)** अधिक-अधिक मैं धारण करता हूं, वैसे तुमको भी धारण करना चाहिये॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। विद्वानों की योग्यता है कि जिन उपदेशों से अग्न्यादि पदार्थविद्या राज्यलक्ष्मी बढ़े, उनसे सबको उद्योगी करें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अ॒ग्नेरिन्द्र॑स्य॒ सोम॑स्य दे॒वाना॑मू॒तिभि॑र्व॒यम्।
अरि॑ष्यन्तः सचेमह्य॒भि ष्या॑म पृतन्य॒तः॥६॥२९॥

अ॒ग्नेः। इन्द्र॑स्य। सोम॑स्य। दे॒वाना॑म्। ऊ॒तिऽभिः॑। व॒यम्। अरि॑ष्यन्तः। स॒चे॒म॒हि। अ॒भि। स्या॒म॒। पृ॒त॒न्य॒तः॥६॥

पदार्थः-**(अग्नेः)** पावकस्य **(इन्द्रस्य)** सूर्यस्य **(सोमस्य)** चन्द्रस्य **(देवानाम्)** विदुषां पृथिव्यादिलोकानां वा **(ऊतिभिः)** रक्षणादिभिः सह वर्त्तमानाः **(वयम्)** **(अरिष्यन्तः)** अहिंस्यमानाः **(सचेमहि)** सङ्गता भवेम **(अभि)** **(स्याम)** **(पृतन्यतः)** आत्मनः पृतनामिच्छन्तः॥६॥

अन्वयः- हे मनुष्या! यथाऽग्नेरिन्द्रस्य सोमस्य देवानामूतिभिर्वर्त्तमाना अरिष्यन्तः पृतन्यतो वयं सचेमहि सख्यायाभिस्याम तथा यूयमपि भवत॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा विद्वांसोऽग्न्यादिविद्यया रक्षिताः सर्वस्य सुहृदः प्रशस्तसेनावन्तो भूत्वा सखायस्सन्तो धर्मविद्योन्नतिं कुर्युस्तथा सर्वे मनुष्याः प्रयतन्तामिति॥६॥

अत्राग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वितीयाऽष्टके एकोनत्रिंशो वर्गो द्वितीयमण्डले प्रथमानुवाकेऽष्टमं सूक्तञ्च समाप्तम्॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(अग्नेः)** अग्नि **(इन्द्रस्य)** सूर्य **(सोमस्य)** चन्द्रमा और **(देवानाम्)** विद्वान् और पृथिवी आदि लोकों की **(ऊतिभिः)** रक्षा आदि व्यवहारों के साथ वर्त्तमान

(अरिष्यन्तः) न नष्ट होते और **(पृतन्यतः)** अपने को सेना की इच्छा करते हुए **(वयम्)** हम लोग **(सचेमहि)** सङ्ग करें और मित्रपन के लिये **(अभि ष्याम)** सब ओर से प्रसिद्ध होवें, वैसे तुम भी होओ॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे विद्वान् जन अग्न्यादि विद्या से रक्षित सबके मित्र प्रशंसित सेनावाले होकर मित्र होते हुए धर्म और विद्या की उन्नति करें, वैसे सब मनुष्य प्रयत्न करें॥६॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति समझनी चाहिये॥

यह दूसरे अष्टक में उनतीसवां वर्ग और आठवां सूक्त समाप्त हुआ॥

इति श्रीयुत परमहंसपरिव्राजकाचार्य्याणां परमविदुषां श्रीमद्विरजानन्दसरस्वतीस्वामिनां शिष्येण श्रीपरमहंसपरिव्राजकाचार्येण श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिना निर्मिते संस्कृतार्यभाषाभ्यां सुभूषिते सुप्रमाणयुक्त ऋग्वेदभाष्ये द्वितीयाष्टके पञ्चमोऽध्यायः समाप्तः॥

ओ३म्

अथ द्वितीयाष्टके षष्ठाऽध्यायारम्भः॥

विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद्भद्रं तन्न आ सुव॥ ऋ०५.८२.५॥

निहोतेति षड्चस्य नवमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ३ त्रिष्टुप्। ४ विराट् त्रिष्टुप्। ५, ६ निचृत् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथाग्निविषयकानि विद्वत्कर्माण्याह॥

अब द्वितीय अष्टक में छठे अध्याय का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में अग्निविषयक विद्वानों के कर्मों को कहते हैं॥

नि होता होतृषदने विदानस्त्वेषो दीदिवाँ असदत्सुदक्षः।
अदब्धव्रतप्रमतिर्वसिष्ठः सहस्रंभरः शुचिजिह्वो अग्निः॥ १॥

नि। होता। होतृऽसदने। विदानः। त्वेषः। दीदिऽवान्। असदत्। सुऽदक्षः। अदब्धव्रतऽप्रमतिः। वसिष्ठः। सहस्रम्ऽभरः। शुचिऽजिह्वः। अग्निः॥ १॥

पदार्थः-(**नि**) नितराम् (**होता**) ग्रहीता (**होतृषदने**) होतॄणां सदने याने वेद्यां वा (**विदानः**) विद्यमानः (**त्वेषः**) दीप्तियुक्तः (**दीदिवान्**) देदीप्यमानः (**असदत्**) सीदति (**सुदक्षः**) सुष्ठु दक्षो बलं यस्मात् सः (**अदब्धव्रतप्रमतिः**) अदब्धेनाहिंसितेनव्रतेन शीलेन प्रमतिः प्रज्ञानं यस्य सः (**वसिष्ठः**) अतिशयेन वासयिता (**सहस्रम्भरः**) सहस्रस्य जगतो धर्त्ता पोषको वा (**शुचिजिह्वः**) शुचिः पवित्रा जिह्वा यस्मात् सः (**अग्निः**) विद्युदादिकार्यकारणस्य स्वरूपः॥ १॥

अन्वयः-विद्वद्भिर्यो होतृषदने होता विदानस्त्वेषो दीदिवान् सुदक्षोऽदब्धव्रतप्रमतिर्वसिष्ठः शुचिर्जिह्वः सहस्रम्भरोऽग्निर्न्यसदत् स सदा कार्येषु सम्प्रयोक्तव्यः॥ १॥

भावार्थः-ये मनुष्याः कार्येषु भास्वरं नित्यगुणकर्मस्वभावं पवित्रकारकं सकलधर्त्तारं वह्निं यथावत् प्रयुञ्जते तेऽनष्टसुखा भवन्ति॥ १॥

पदार्थः-विद्वानों को जो (**होतृषदने**) ग्रहीत जनों के रथ वा वेदी में (**होता**) ग्रहण करनेहारा (**विदानः**) विद्यमान (**त्वेषः**) दीप्तियुक्त (**दीदिवान्**) वार-वार प्रकाशित होता हुआ (**सुदक्षः**) सुन्दर जिससे बल प्रसिद्ध होता (**अदब्धव्रतप्रमतिः**) नहीं नष्ट हुए शील से जिसका ज्ञान होता (**वसिष्ठः**) जो अतीव निवास करानेहारा (**शुचिजिह्वः**) और जिससे जिह्वा पवित्र होती वह

(सहस्रम्भर:) सहस्रों जगत् का धारण और पोषण करनेवाला **(अग्नि:)** बिजुली आदि कार्य-कारणस्वरूप अग्नि **(नि, असदत्)** निरन्तर स्थिर होता है, उसका प्रयोग सदा कार्यों में अच्छे प्रकार करने योग्य है॥१॥

भावार्थ:-जो मनुष्य कार्यों में प्रदीप्त नित्य गुणकर्मस्वभावयुक्त पवित्र करनेवाले सकल पदार्थों के धारणकर्त्ता अग्नि को यथावत् प्रयुक्त करते हैं, वे अविनाशी सुखवाले होते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वं दूतस्त्वमु न: परस्पास्त्वं वस्य आ वृषभ प्रणेता।
अग्ने तोकस्य नस्तने तनूनामप्रयुच्छन् दीद्यद् बोधि गोपा:॥२॥

त्वम्। दूत:। त्वम्। ऊम् इति। न:। पर:ऽपा:। त्वम्। वस्य:। आ। वृषभ। प्रऽनेता। अग्ने। तोकस्य। न:। तने। तनूनाम्। अप्रऽयुच्छन्। दीद्यत्। बोधि। गोपा:॥२॥

पदार्थ:-(त्वम्) (दूत:) देशान्तरं प्रापक: **(त्वम्) (उ) (न:) (परस्पा:)** पारयिता रक्षकश्च **(त्वम्) (वस्य:)** वसीयान् **(आ) (वृषभ)** बलिष्ठ **(प्रणेता)** प्रकृष्टतया नेता **(अग्ने)** पावकवद्विद्वन् **(तोकस्य)** अपत्यस्य **(न:)** अस्माकम् **(तने)** विस्तारे **(तनूनाम्) (अप्रयुच्छन्) (दीद्यत्)** प्रकाशयति **(बोधि)** बुध्यसे **(गोपा:)** रक्षक:॥२॥

अन्वय:-हे वृषभाऽग्ने! त्वं नो दूतस्त्वमु परस्पास्त्वं वस्यस्तोकस्याऽऽप्रणेता नस्तनूनां तनेऽप्रयुच्छन् गोपा दीद्यद्बोधि॥२॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। ये मनुष्या अग्निप्रयुक्तनौका समुद्रात् पारं गमयतीव दु:खात् पारं गमयन्ति सन्तानानां शिक्षणे शरीराणां रक्षणे च प्रवीणा: प्रमादं विहाय धर्मस्याऽनुष्ठातार: सन्ति, तेऽत्राभ्युदयिकं सुखं प्राप्नुवन्ति॥२॥

पदार्थ:-हे **(वृषभ)** बलवान् **(अग्ने)** अग्नि के समान विद्वान्! **(त्वम्)** आप **(न:)** हमारे **(दूत:)** देशान्तर पहुँचानेवाले **(त्वम्)** आप **(उ)** ही **(परस्पा:)** सबसे पार और रक्षा करनेवाले **(त्वम्)** आप **(वस्य:)** निवास करने योग्य **(तोकस्य)** सन्तान को **(आ, प्रणेता)** सब ओर से अच्छे प्रकार समस्त गुणों में प्रवृत्त करानेहारे **(न:)** हम लोगों के **(तनूनाम्)** शरीरों के **(तने)** विस्तार में **(अप्रयुच्छन्)** न प्रमाद कराते हुए **(गोपा:)** शरीर की रक्षा करनेवाले **(दीद्यत्)** सब विषयों को प्रकाश कराते **(बोधि)** और जानते हो॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। अग्नि प्रयोग से प्रेरणा दी हुई नौका समुद्र से पार जैसे पहुंचाती, वैसे जो मनुष्य दु:खरूपी समुद्र से पार करते हैं, सन्तानों की शिक्षा में और शरीरों की रक्षा करने में प्रवीण और प्रमाद को छोड़ धर्म के अनुष्ठान करनेवाले हैं, वे यहाँ आभ्युदयिक सुख को प्राप्त होते हैं॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

विधेम ते परमे जन्मन्नग्ने विधेम स्तोमैरवरे सधस्थे।
यस्माद्योनेरुदारिथा यजे तं प्र त्वे हवींषि जुहुरे समिद्धे॥३॥

विधेम। ते। परमे। जन्मन्। अग्ने। विधेम। स्तोमैः। अवरे। सधऽस्थे। यस्मात्। योनेः। उत्ऽआरिथ। यजे। तम्। प्र। त्वे इति। हवींषि। जुहुरे। समऽइद्धे॥३॥

पदार्थः-(**विधेम**) विचरेम (**ते**) तव (**परमे**) प्रकृष्टे (**जन्मन्**) जन्मनि (**अग्ने**) विद्वन् (**विधेम**) (**स्तौमैः**) स्तुतिभि: (**अवरे**) अर्वाचीने (**सधस्थे**) सहस्थाने (**यस्मात्**) (**योनेः**) कारणात् (**उदारिथ**) प्राप्नोषि। अत्र**ान्येषामपी**ति दीर्घः। (**यजे**) सङ्गच्छेय (**तम्**) (**प्र**) (**त्वे**) त्वस्मिन् (**हवींषि**) होतुं दातुमर्हाणि (**जुहुरे**) जुह्वति (**समिद्धे**) प्रदीप्ते॥३॥

अन्वयः-हे अग्ने! वयं स्तोमैस्ते परमेऽवरे च जन्मन् विधेम यस्माद् योनेस्त्वमुदारिथ तस्मिन् सधस्थे विधेम यथा त्वे समिद्धेऽग्नौ हवींषि विद्वांसो जुहुरे तथा तमहं प्रयजे॥३॥

भावार्थः-ये शुभानि कर्माणि कुर्वन्ति ते श्रेष्ठं जन्माप्नुवन्ति, येऽधर्ममाचरन्ति ते नीचं जन्माश्नुवते। यथा विद्वांस: प्रदीप्तेऽग्नौ सुगन्ध्यादिकं द्रव्यं हुत्वा जगदुपकुर्वन्ति तथा ते सर्वैरुपकृता जन्मनि जन्मान्तरे वा भवन्ति॥३॥

पदार्थः–हे (**अग्ने**) विद्वान्! हम लोग (**स्तोमैः**) स्तुतियों से (**ते**) आपके (**परमे**) उत्तम और (**अवरे**) अनुत्तम जन्म के निमित्त (**विधेम**) विचारें, (**यस्मात्**) जिस (**योनेः**) कारण से आप (**उदारिथ**) प्राप्त होते हो उस (**सधस्थे**) साथ के स्थान में हम लोग (**विधेम**) उत्तम व्यवहार का विधान करें। जैसे (**त्वे**) उस (**समिद्धे**) प्रदीप्त अग्नि में (**हवींषि**) होमने अर्थात् देने योग्य पदार्थों को विद्वान् जन (**जुहुरे**) होमते, वैसे मैं (**तम्**) उसका (**प्रयजे**) पदार्थों से सङ्ग करूं॥३॥

भावार्थः-जो शुभ कर्मों को करते हैं, वे श्रेष्ठ जन्म को प्राप्त होते हैं। जो अधर्म का आचरण करते हैं, वे नीच जन्म को प्राप्त होते हैं। जैसे विद्वान् जन जलते हुए अग्नि में सुगन्ध्यादि द्रव्य का होम

कर संसार का उपकार करते हैं, वैसे वे सबसे उपकार को वर्त्तमान जन्म में वा जन्मान्तर में प्राप्त होते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्ने यजस्व हविषा यजीयाञ्छ्रुष्टी देष्णमभि गृणीहि राधः।
त्वं ह्यसि रयिपती रयीणां त्वं शुक्रस्य वचसो मनोता॥४॥

अग्ने। यजस्व। हविषा। यजीयान्। श्रुष्टी। देष्णम्। अभि। गृणीहि। राधः। त्वम्। हि। असि। रयिऽपतिः। रयीणाम्। त्वम्। शुक्रस्य। वचसः। मनोता॥४॥

पदार्थः-(**अग्ने**) पावक इव विद्वन् (**यजस्व**) (**हविषा**) होतव्येन वस्तुना (**यजीयान्**) अतिशयेन यष्टा (**श्रुष्टी**) सद्यः (**देष्णम्**) दातुं योग्यम् (**अभि**) (**गृणीहि**) सर्वतः प्रशंस (**राधः**) धनम् (**त्वम्**) (**हि**) (**असि**) (**रयिपतिः**) श्रीस्वामी (**रयीणाम्**) धनानाम् (**त्वम्**) (**शुक्रस्य**) शुद्धिकरस्य (**वचसः**) वचनस्य (**मनोता**) प्रज्ञापकः। अत्र मन धातोर्बाहुलकादौणादिक ओतन् प्रत्ययः॥४॥

अन्वयः-हे अग्ने! यतस्त्वं रयीणां रयिपतिस्त्वं शुक्रस्य वचसो मनोताऽसि तस्माद्धि यजीयान्त्सन् हविषा यजस्व देष्णं राधः श्रुष्ट्यभिगृणीहि॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये धनाढ्या धनेन परोपकारं कुर्युस्ते सर्वेषां प्रिया जायन्ते॥४॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के समान वर्त्तमान विद्वान्! जिस कारण (**त्वम्**) (**रयीणाम्**) धनादि पदार्थों के बीच (**रयिपतिः**) धनपति और (**त्वम्**) आप (**शुक्रस्य**) शुद्ध करनेवाले (**वचसः**) वचन के (**मनोता**) उत्तमता से जतलानेवाले (**असि**) हैं (**हि**) इसी से (**यजीयान्**) अत्यन्त यज्ञकर्त्ता होते हुए (**हविषा**) होमने योग्य वस्तु से (**यजस्व**) यज्ञ कीजिये और (**देष्णम्**) देने योग्य (**राधः**) धन की (**श्रुष्टीः**) शीघ्र (**अभि, गृणीहि**) सब ओर से प्रशंसा करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो धनाढ्य धन से परोपकार करें, वे सबके प्यारे होते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उभयं ते न क्षीयते वसव्यं दिवेदिवे जायमानस्य दस्म।

कृधि क्षुमन्तं जरितारमग्ने कृधि पतिं स्वपत्यस्य रायः॥५॥

उभयम्। ते। न। क्षीयते। वसव्यम्। दिवेऽदिवे। जायमानस्य। दस्म। कृधि। क्षुऽमन्तम्। जरितारम्। अग्ने। कृधि। पतिम्। सुऽअपत्यस्य। रायः॥५॥

पदार्थः-(**उभयम्**) दानं यजनं च (**ते**) तव (**न**) (**क्षीयते**) नश्यति (**वसव्यम्**) वसुषु भवम् (**दिवेदिवे**) प्रतिदिनम् (**जायमानस्य**) (**दस्म**) परदुःखभञ्जक (**कृधि**) कुरु (**क्षुमन्तम्**) बह्वन्नयुक्तम् (**जरितारम्**) विद्यागुणप्रशंसकम् (**अग्ने**) अग्निवद्वर्धमान (**कृधि**) (**पतिम्**) (**स्वपत्यस्य**) शोभनान्यपत्यानि यस्मात्तस्य (**रायः**) दातुं योग्यस्य धनस्य॥५॥

अन्वयः-हे दस्माग्ने! दिवेदिवे जायमानस्य यस्य ते उभयं वसव्यं न क्षीयते, स त्वं जरितारं क्षुमन्तं कृधि स्वपत्यस्य रायः पतिं कृधि॥५॥

भावार्थः-तस्यैव कुलाद्धननाशो न भवति योऽन्येभ्यः सुपात्रेभ्यो जगदुपकाराय प्रयच्छति॥५॥

पदार्थः-हे (**दस्म**) परदुःखभञ्जन करनेवाले और (**अग्ने**) अग्नि के समान बढ़नेवाले विद्वान्! (**दिवेदिवे**) प्रतिदिन (**जायमानस्य**) सिद्ध हुए जिन (**ते**) आपका (**उभयम्**) दान और यज्ञ करना दोनों (**वसव्यम्**) धनों में प्रसिद्ध हुए काम (**न**) नहीं (**क्षीयते**) नष्ट होते सो आप (**जरितारम्**) विद्यादि गुण की प्रशंसा करनेवाले (**क्षुमन्तम्**) बहुत अन्नवाले को (**कृधि**) उत्पन्न करो और (**स्वपत्यस्य**) जिससे उत्तम सन्तान होते उस (**रायः**) देने योग्य धन को (**पतिम्**) पालने रखनेवाले को (**कृधि**) कीजिये॥५॥

भावार्थः-उसी के कुल से धन नाश नहीं होता जो और सुपात्रों के लिये संसार का उपकार करने को देता है॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सैनानीकेन सुविदत्रो अस्मे यष्टा देवाँ आयजिष्ठः स्वस्ति।

अदब्धो गोपा उत नः परस्पा अग्ने द्युमदुत रेवद्दिदीहि॥६॥१॥

सः। एना। अनीकेन। सुऽविदत्रः। अस्मे इति। यष्टा। देवान्। आऽयजिष्ठः। स्वस्ति। अदब्धः। गोपाः। उत। नः। परःऽपाः। अग्ने। द्युऽमत्। उत। रेवत्। दिदीहि॥६॥

पदार्थः-(सः) दाता। अत्र **सोऽचि लोप** इति सुलोपः। **(एना)** एनेन **(अनीकेन)** सेनासमूहेन सह **(सुविदत्रः)** सुष्ठु विज्ञाता दाता वा **(अस्मे)** अस्माकम् **(यष्टा)** सङ्गन्ता **(देवान्)** दिव्यान् गुणान् विजिगीषकान् वीरान् वा **(आयजिष्ठः)** समन्तादतिशयितो यष्टा **(स्वस्ति)** सुखम् **(अदब्धः)** अहिंसितः **(गोपाः)** गवां पाता **(उत)** अपि **(नः)** अस्माकम् **(परस्पाः)** पारयिता **(अग्ने)** विद्वन् **(द्युमत्)** विज्ञानप्रकाशयुक्तम् **(उत)** अपि **(रेवत्)** बहुधनसहितम् **(दिदीहि)** देहि॥६॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथा सोऽस्मे एनाऽनीकेन सुविदत्रो यष्टा आयजिष्ठोऽदब्धो गोपा नः परस्पा द्युमदुत रेवत् स्वस्ति ददात्युत देवान् सेवते तथा त्वमेतद्दिदीहि॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथोत्तमया सेनया युक्तो राजा दुष्टाञ्जित्वा विदुषः सत्कृत्य प्रजाः संरक्ष्य सर्वेषामैश्वर्यं वर्द्धयति तथा सर्वैर्भवितव्यमिति॥६॥

अस्मिन् सूक्तेऽग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति नवमं सूक्तं प्रथमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के समान विद्वान्! जैसे **(सः)** वह देनेवाला **(अस्मे)** हमारे **(एना)** इस **(अनीकेन)** सेना समूह के साथ **(सुविदत्रः)** सुन्दर विज्ञान देने **(यष्टा)** और सब व्यवहारों की सङ्गति करने वाला अच्छा ज्ञानी वा दाता **(आ, यजिष्ठः)** सब ओर से अतीव यज्ञकर्त्ता **(अदब्धः)** न नष्ट हुआ **(गोपाः)** गोपाल **(नः)** हमको **(परस्पाः)** दुःखों से पार करनेवाला **(द्युमत्)** विज्ञान प्रकाशयुक्त **(उत)** और **(रेवत्)** बहुत धन सहित **(स्वस्ति)** सुख को देता है **(उत)** और **(देवान्)** दिव्य गुण वा अपना विजय चाहनेवाले वीरों को सेवते हैं, वैसे आप उक्त समस्त को **(दीदिहि)** दीजिये॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे उत्तम सेना से युक्त राजा दुष्टों को जीत विद्वानों का सत्कार कर और प्रजा को अच्छे प्रकार रक्षा कर सबका ऐश्वर्य बढ़ाता है, वैसे सभों को होना चाहिये॥६॥

इस सूक्त में अग्नि के समान विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह नववां सूक्त और पहिला वर्ग समाप्त हुआ॥

जोहूत्र इति षड्चस्य दशमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। अग्निर्देवता। १, २, ६ विराट् त्रिष्टुप्। ३ त्रिष्टुप्। ४ निचृत् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ५ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथाग्निविषय उपदिश्यते॥

अब छः ऋचावाले दशवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में अग्नि विषय का उपदेश किया है॥

जोहूत्रो अग्निः प्रथमः पितेवेळस्पदे मनुषा यत्समिद्धः।

श्रियं वसानो अमृतो विचेता मर्मृजेन्यः श्रवस्यः स वाजी॥ १॥

जोहूत्रः। अग्निः। प्रथमः। पिताऽइव। इळः। पदे। मनुषा। यत्। सम्ऽइद्धः। श्रियम्। वसानः। अमृतः। विऽचेताः। मर्मृजेन्यः। श्रवस्यः। सः। वाजी॥ १॥

पदार्थः-(**जोहूत्रः**) अतिशयेन सङ्गमनीयः (**अग्निः**) (**प्रथमः**) आदिमो विस्तीर्णगुणकर्मा (**पितेव**) पितृवत् (**इळः**) पृथिव्याः। अत्र क्विप् याडभावश्च। (**पदे**) तले स्थाने (**मनुषा**) मनुष्येण (**यत्**) यः (**समिद्धः**) प्रदीप्तः (**श्रियम्**) शोभाम् (**वसानः**) आच्छादकः (**अमृतः**) नाशरहितः (**विचेताः**) विगतं चेतो विज्ञानं यस्मात्स जडः (**मर्मृजेन्यः**) भृशं शोधकः (**श्रवस्यः**) अन्नेष्वसाधुः (**सः**) (**वाजी**) बहुवेगादिगुणयुक्तः॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! शिल्पिभिर्यद्यो मनुषा पितेव प्रथम इळस्पदे जोहूत्रः समिद्धः श्रियं वसानोऽमृतो विचेता मर्मृजेन्यः श्रवस्यो वाज्यग्निः कार्येषु संप्रयुज्यते स युष्माभिरपि संप्रयोक्तव्यः॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। योऽग्निः पृथिव्यां प्रसिद्धः संप्रयुक्तः सन् धनप्रदः स्वरूपेण नित्यश्चेतनगुणरहितोऽतिवेगवानस्ति स सम्यक् प्रयुक्तः सन् पितृवत्संप्रयोजकान् पालयति॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यत्**) जो (**मनुषा**) मनुष्य से (**पितेव**) पिता के समान (**प्रथमः**) पहिला विस्तृत गुण कर्मवाला (**इळस्पदे**) पृथिवी तल पर (**जोहूत्रः**) अतीव सङ्ग करने अर्थात् कलाघरों में लगाने योग्य (**समिद्धः**) प्रज्वलित (**श्रियम्**) शोभा को (**वसानः**) ढापनेवाला (**अमृतः**) नाशरहित (**विचेताः**) जिससे चैतन्यपन विगत है अर्थात् जो जड़ (**मर्मृजेन्यः**) निरन्तर शुद्धि करनेवाला (**श्रवस्यः**) अन्नादि पदार्थों में उत्तम और (**वाजी**) बहुत वेगादि गुणों से युक्त (**अग्निः**) अग्नि शिल्पकार्यों में अच्छे प्रकार प्रयुक्त किया जाता है (**सः**) वह तुमको भी संयुक्त करना चाहिये॥ १॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो अग्नि पृथिवी में प्रसिद्ध, शिल्पकार्य्यों के प्रयोग में अच्छे प्रकार लगाया हुआ, धन का देनेवाला, स्वरूप से नित्य, चेतनगुणरहित और अति वेगवान् है, वह अच्छे प्रकार प्रयोग किया हुआ पिता के तुल्य शिल्पीजनों को पालता है॥

अथ विदुषामग्निविद्याग्रहणमुपदिश्यते॥

अब विद्वानों को अग्निविद्या ग्रहण का उपदेश किया जाता है॥

श्रूया अग्निश्चित्रभानुर्हवं मे विश्वाभिर्गीर्भिरमृतो विचेता:
श्यावा रथं वहतो रोहिता वोतारुषाह चक्रे बिभृत:॥ २॥

श्रूया:। अग्नि:। चित्रऽभानु:। हवम्। मे। विश्वाभि:। गी:ऽभि:। अमृत:। विऽचेता। श्यावा। रथम्। वहत:। रोहिता। वा। उत। अरुषा। अह। चक्रे। बिऽभृत:॥ २॥

पदार्थ:-(**श्रूया:**) शृणुया: (**अग्नि:**) पावक: (**चित्रभानु:**) विचित्रदीप्ति: (**हवम्**) विद्योपदेशम् (**मे**) मम (**विश्वाभि:**) समग्राभि: (**गीर्भि:**) सुशिक्षितयुक्ताभिर्वाग्भि: (**अमृत:**) मृत्युरहित: (**विचेता:**) विविधचेतो ज्ञानं यस्मात् स: (**श्यावा**) प्राप्तिसाधकौ धारणाकर्षणाख्यावश्विनौ (**रथम्**) रमणीयं जगत् (**वहत:**) प्राप्रयत: (**रोहिता**) रक्तादिगुणविशिष्टौ (**वा**) (**उत**) (**अरुषा**) मर्मसु व्यापकौ (**अह**) (**चक्रे**) करोति (**बिभृत:**) यो विविधं बिभर्ति स:॥ २॥

अन्वय:-हे विद्वँस्त्वं यश्चित्रभानुरमृतो विचेता विभृत्रोऽग्निर्यस्य रथं सवितृ रोहिता उताप्यरुषा श्यावा वहतो [वाह] तं शिल्पी चक्रे तद्धवं मे विश्वाभिर्गीर्भिश्श्रूया:॥ २॥

भावार्थ:-मनुष्या यस्माद्विद्युदादय उत्पद्यन्ते सर्वस्य जीवनं च भवति तस्याग्नेर्विद्यां सर्वैरुपायैर्गृह्णीयु:॥ २॥

पदार्थ:-हे विद्वन्! आप जो (**चित्रभानु:**) चित्र-विचित्र दीप्तिवाला (**अमृत:**) मृत्युधर्मरहित (**विचेता:**) विविध प्रकार का ज्ञान जिससे होता है (**विभृत्र:**) और जो नाना प्रकार पदार्थों से धारण करनेवाला (**अग्नि:**) अग्नि है, जिसके सम्बन्ध के (**रथम्**) रथ को सवितृमण्डलस्थ (**रोहिता**) ललामी आदि गुण के लिये (**उत**) और (**अरुषा**) मर्मस्थलों में व्याप्त होने और (**श्यावा**) सब विषयों की प्राप्ति करानेवाले धारण और आकर्षण गुण (**वहत:**) एक देश से दूसरे देश को पहुंचाते हैं (**वा**) अथवा (**अह**) निश्चय से उसको (**चक्रे**) शिल्पीजन बनाता है, उसकी विद्या के उपदेश को (**मे**) मेरी (**विश्वाभि:**) समस्त (**गीर्भि:**) वाणियों से (**श्रूया:**) सुनिये॥ २॥

भावार्थ:-मनुष्य जिससे बिजुली आदि पदार्थ उत्पन्न होते हैं, सबका जीवन भी होता है, उस अग्नि की विद्या को सब उपायों से ग्रहण करें॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उत्तानायामजनयन्त्सुषूतं भुवदग्निः पुरुपेशासु गर्भः।
शिरिणायां चिदक्तुना महोभिरपरीवृतो वसति प्रचेताः॥३॥

उत्तानायाम्। अजनयन्। सुऽसूतम्। भुवत्। अग्निः। पुरुऽपेशासु। गर्भः। शिरिणायाम्। चित्। अक्तुना। महःऽभिः। अपरिऽवृतः। वसति। प्रऽचेताः॥३॥

पदार्थ:-**(उत्तानायाम्)** उत्तान इव शयानायां पृथिव्याम् **(अजनयन्)** **(सुसूतम्)** सुष्ठु प्रसूतम् **(भुवत्)** भवति **(अग्निः)** विद्युत् **(पुरुपेशासु)** पुरूणि पेशानि रूपाणि यासु तासु ओषधीषु **(गर्भः)** गर्भ इव स्थितः **(शिरिणायाम्)** हिंसितायाम् **(चित्)** अपि **(अक्तुना)** रात्र्या **(महोभिः)** महद्भिर्लोकैः **(अपरिवृतः)** परितः सर्वतो नावृतः **(वसति)** **(प्रचेताः)** यः शयानान् प्रचेतयति सः॥३॥

अन्वय:-हे मनुष्या! योऽक्तुना महोभिश्चापरिवृतः प्रचेताः यं पुरुपेशासु सुसूतमृत्विजोऽजनयन् यं उत्तानायां शिरिणायां च गर्भ इव स्थिताग्निर्भुवद्वसति तमग्निं चित्प्रयुङ्ग्ध्वम्॥३॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! योऽग्निर्विद्यमानायां नष्टायां च पृथिव्या गर्भरूपो विद्यते तद्विद्यां जानीत॥३॥

पदार्थ:–हे मनुष्यो! जो **(अक्तुना)** रात्रि और **(महोभिः)** बड़े-बड़े लोकों के साथ **(अपरिवृतः)** सब ओर से न स्वीकार किया हुआ **(प्रचेताः)** जो सोते प्राणियों को प्रबोधित कराता, ऋतु-ऋतु में यज्ञ करनेवाले जन जिस **(पुरुपेशासु)** बहुत रूपोंवाली ओषधियों में **(सुसूतम्)** सुन्दरता से उत्पन्न हुए अग्नि को **(अजनयन्)** प्रकट करते, जो **(उत्तानायाम्)** उत्ताने के समान सोती सी और **(शिरिणायाम्)** नष्ट हुई पृथिवी में **(गर्भः)** गर्भ के समान स्थित **(अग्निः)** अग्नि बिजुलीरूप **(भुवत्)** होता और **(वसति)** निवास करता है, उस अग्नि को **(चित्)** निश्चय करके प्रयुक्त करो अर्थात् कलाघरों में लगाओ॥३॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो अग्नि विद्यमान और नष्ट हुई पृथिवी में गर्भरूप विद्यमान है, उसी की विद्या को जानो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

जिघर्म्यग्निं हविषा घृतेन प्रतिक्षियन्तं भुवनानि विश्वा।
पृथुं तिरश्चा वयसा बृहन्तं व्यचिष्ठमन्नै रभसं दृशानम्॥४॥

जिघर्मि। अग्निम्। हविषा। घृतेन। प्रतिऽक्षियन्तम्। भुवनानि। विश्वा। पृथुम्। तिरश्चा। वयसा। बृहन्तम्। व्यचिष्ठम्। अन्नैः। रभसम्। दृशानम्॥४॥

पदार्थः-(जिघर्मि) (अग्निम्) (हविषा) होतुमर्हेण सुगन्ध्यादियुक्तेन **(घृतेन)** आज्येन **(प्रतिक्षियन्तम्)** पदार्थं पदार्थं प्रतिवसन्तम् **(भुवनानि)** भवन्ति भूतानि येषु तानि **(विश्वा)** समग्राणि **(पृथुम्)** विस्तीर्णम् **(तिरश्चा)** तिरश्चीनेन **(वयसा)** कमनीयेन जीवनेन सह **(बृहन्तम्)** वर्द्धमानम् **(व्यचिष्ठम्)** अतिशयेन व्याप्तम् **(अन्नैः)** पृथिव्यादिभिः सह **(रभसम्)** वेगवन्तम् **(दृशानम्)** दृश्यमानं दर्शयितारं वा॥४॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा विश्वा भुवनानि प्रतिक्षियन्तं तिरश्चा वयसा सह पृथुं बृहन्तं व्यचिष्ठमन्नैस्सह रभसं दृशानमग्निं हविषा घृतेन सह जिघर्मि तथैव त्वं कुरु॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः सर्वमूर्त्तद्रव्यस्थां विद्युतसाधनैः संगृह्यात्र सुगन्ध्यादिद्रव्यं जुह्वति तेऽनन्तं सुखमाप्नुवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे विद्वन्! जैसे **(विश्वा)** समग्र **(भुवनानि)** जिनमें प्राणी उत्पन्न होते हैं, उन लोकों और **(प्रतिक्षियन्तम्)** पदार्थ-पदार्थ के प्रति वसते हुए **(तिरश्चा)** तिरछे सब पदार्थों में वांकेपन से रहनेवाले **(वयसा)** मनोहर जीवन के साथ **(पृथुम्)** बढ़े हुए **(बृहन्तम्)** वा बढ़ते हुए **(व्यचिष्ठम्)** अतीव सब पदार्थों में व्याप्त और **(अन्नैः)** पृथिव्यादिकों के साथ **(रभसम्)** वेगवान् **(दृशानम्)** देखा जाता वा अपने से अन्य पदार्थों को दिखानेवाले **(अग्निम्)** अग्नि को मैं **(हविषा)** होमने योग्य सुगन्धि आदि पदार्थ वा **(घृतेन)** घी से मैं **(जिघर्मि)** प्रदीप्त करता हूं, वैसे आप भी कीजिये॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य समस्त मूर्त्तिमान् पदार्थों में ठहरे हुए बिजुलीरूप अग्नि को साधनों से अच्छे प्रकार ग्रहण कर इसमें सुगन्धि आदि पदार्थ का होम करते हैं, वे अनन्त सुख को प्राप्त होते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ विश्वतः प्रत्यञ्चं जिघर्म्यरक्षसा मनसा तज्जुषेत।
मर्यश्रीः स्पृहयद्वर्णो अग्निर्नाभिमृशे तन्वा३ जर्भुराणः॥५॥

आ। विश्वतः। प्रत्यञ्चम्। जिघर्मि। अरक्षसा। मनसा। तत्। जुषेत। मर्यऽश्रीः। स्पृहयत्ऽवर्णः। अग्निः। न। अभिऽमृशे। तन्वा। जर्भुराणः॥५॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**विश्वतः**) सर्वतः (**प्रत्यञ्चम्**) प्रत्यञ्चन्तम् (**जिघर्मि**) (**अरक्षसा**) अदुष्टभावेन (**मनसा**) विज्ञानेन (**तत्**) तम् (**जुषेत**) सेवेत (**मर्यश्रीः**) मर्याणां श्रीः शोभा यस्मात् सः (**स्पृहयद्वर्णः**) स्पृहयन् वर्णो यस्य सः (**अग्निः**) पावकः (**न**) निषेधे (**अभिमृशे**) अभिसहे (**तन्वा**) (**जर्भुराणः**) भृशं धरन्॥५॥

अन्वयः-हे विद्वन्! भवान् यथाऽहमरक्षसा मनसा यं प्रत्यञ्चं विश्वत आजिघर्मि यो मर्यश्रीः स्पृहयद्वर्णस्तन्वा जर्भुराणोऽग्निरस्ति तत्तं नाभिमृशे तथा जुषेत॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये शुद्धान्तःकरणाः सुशोभयितारं घृताद्याहुतं सर्वस्य धर्त्तारं सर्वरूपप्रकाशकमसोढव्यमग्निं साध्नुवन्ति ते श्रीमन्तो जायन्ते॥५॥

पदार्थः-हे विद्वान्! आप जैसे मैं (**अरक्षसा**) उत्तम भाव से वा (**मनसा**) विज्ञान से जिस (**प्रत्यञ्चम्**) प्रत्येक पदार्थ को प्राप्त होते हुए अग्नि को (**विश्वतः**) सब ओर से (**आ, जिघर्मि**) अच्छे प्रकार प्रदीप्त करता हूं और (**मर्यश्रीः**) जिससे मरणधर्मा प्राणियों की शोभा और जो (**स्पृहयद्वर्णः**) कांक्षा सी करता हुआ जिसका वर्ण (**तन्वा**) विस्तृत शरीर से (**जर्भुराणः**) निरन्तर पदार्थों को धारण करता हुआ (**अग्निः**) अग्नि विद्यमान है (**तत्**) उसको (**न, अभिमृशे**) आगे नहीं सह सकता हूं, वैसे इसका (**जुषेत**) सेवन करो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो शुद्धान्तःकरण जन सुन्दर शोभा करनेवाले और घृतादि आहुतियों के ग्राहक, सबके धारण करनेवाले, सब रूपों के प्रकाशक और न सहने योग्य अग्नि को सिद्ध करते हैं, वे श्रीमान् होते हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ज्ञेया भागं सहसानो वरेण त्वादूतासो मनुवद्वदेम।
अनूनमग्निं जुह्वा वचस्या मधुपृचं धनसा जोहवीमि॥६॥२॥

ज्ञेयाः। भागम्। सहसानः। वरेण। त्वाऽदूतासः। मनुऽवत्। वदेम। अनूनम्। अग्निम्। जुह्वा। वचस्या। मधुऽपृचम्। धनऽसाः। जोहवीमि॥६॥

पदार्थः-(**ज्ञेयाः**) ज्ञातुं योग्याः (**भागम्**) भजनीयम् (**सहसानः**) सहमानः (**वरेण**) श्रेष्ठेन (**त्वादूतासः**) त्वं दूतो येषान्ते (**मनुवत्**) विद्वद्वत् (**वदेम**) उपदिशेम (**अनूनम्**) ऊनतारहितम् (**अग्निम्**) पावकम् (**जुह्वा**) ग्रहणसाधनया क्रियया (**वचस्या**) वचनैः सुसाध्या (**मधुपृचम्**) मधुरादिसम्बन्धिनम् (**धनसाः**) ये धनानि सनन्ति विभजन्ति ते (**जोहवीमि**) भृशं स्वीकरोमि॥६॥

अन्वयः-हे विद्वन्! वरेण भागं सहसानस्त्वं यथाऽहं वचस्या जुह्वा मधुपृचमनूनमग्निं जोहवीमि तथा त्वं गृहाण यथा त्वादूतासो ज्ञेया धनसा विद्वांसो मनुवद्वदेत्तमुपदिशेयुस्तथैतं वयमपि वदेम॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यथाप्ता विद्वांसोऽग्न्यादिपदार्थविद्यां विदित्वाऽन्येषां हितायोपदिशन्ति तथा वयमप्येतद्विद्यामुपदिशेम॥६॥

अत्राग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति दशमं सूक्तं द्वितीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वन्! (**वरेण**) श्रेष्ठ व्यवहार से (**भागम्**) सेवने योग्य पदार्थ को (**सहसानः**) सहते हुए आप जैसे मैं (**वचस्या**) वचनों में और (**जुह्वा**) ग्रहण करने में उत्तम क्रिया से (**मधुपृचम्**) मधुरादि पदार्थ सम्बन्धी (**अनूनम्**) बहुत (**अग्निम्**) अग्नि को (**जोहवीमि**) निरन्तर स्वीकार करता हूँ, वैसे तुम ग्रहण करो, जैसे (**त्वादूतासः**) तुम जिन महात्माओं के दूत हो (**ज्ञेयाः**) वे जानने योग्य (**धनसाः**) धनादि पदार्थों का विभाग करनेवाले विद्वान् जन (**मनुवत्**) विद्वान् के समान इसको उपदेश करें, वैसे इसको हम लोग भी (**वदेम**) कहें॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जैसे आप्त विद्वान् जन अग्न्यादि पदार्थविद्या को जानकर औरों के हित के लिये उपदेश करते हैं, वैसे हम लोग भी विद्या का उपदेश करें॥६॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वान् के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति समझनी चाहिये॥

यह दसवां सूक्त और दूसरा वर्ग समाप्त हुआ॥

श्रुधीत्येकविंशर्चस्यैकादशस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ८, १०, १३, १९, २० पङ्क्तिः। २, ९ भुरिक् पङ्क्तिः। ३, ४, ६, ११, १२, १४, १८ निचृत् पङ्क्तिः। ७ विराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ५, १६ भुरिक् बृहती। १७ स्वराट् बृहती। १५ बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः। २१ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ राजधर्ममाह॥

अब इक्कीस ऋचावाले ग्यारहवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में राजधर्म का वर्णन करते हैं॥

श्रुधी हवमिन्द्र मा रिषण्यः स्याम ते दावने वसूनाम्।
इमा हि त्वामूर्जो वर्धयन्ति वसूयवः सिन्धवो न क्षरन्तः॥१॥

श्रुधि। हवम्। इन्द्र। मा। रिषण्यः। स्याम। ते। दावने। वसूनाम्। इमाः। हि। त्वाम्। ऊर्जः। वर्धयन्ति। वसुऽयवः। सिन्धवः। न। क्षरन्तः॥१॥

पदार्थः-(**श्रुधि**) शृणु। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**हवम्**) शास्त्रबोधजन्यं शब्दम् (**इन्द्र**) विद्युदिव वर्त्तमान (**मा**) निषेधे (**रिषण्यः**) हिंस्याः (**स्याम**) भवेम (**ते**) तव (**दावने**) दानाय (**वसूनाम्**) प्रथमकल्पानां विदुषां पृथिव्यादीनां वा (**इमाः**) वक्ष्यमाणाः (**हि**) खलु (**त्वाम्**) (**ऊर्जः**) पराक्रमा अन्नादयो वा (**वर्द्धयन्ति**) (**वसूयवः**) आत्मनो वसूनीच्छन्तः (**सिन्धवः**) समुद्राः (**न**) इव (**क्षरन्तः**)॥१॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यं त्वां वसूनां इमा ऊर्जो वसूयवश्च क्षरन्तः सिन्धवो न वर्द्धयन्ति यस्य ते दावने वयं स्याम स त्वमस्मान् मा रिषण्यो हवञ्च श्रुधि॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा समुद्रा जलेन सर्वं वर्द्धयन्ति तथा प्रधानैः पुरुषैः स्वाश्रिताः सर्वे दानेन मानेन च वर्द्धनीयाः॥१॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) बिजुली के समान प्रचण्ड प्रतापवाले राजन्! जिन (**त्वा**) आपको (**वसूनाम्**) प्रथम कक्षा के विद्वान् वा पृथिवी आदि के (**हि**) निश्चय के साथ (**इमाः**) ये (**ऊर्जः**) पराक्रम वा अन्नादि पदार्थ और (**वसूयवः**) अपने को धनों की इच्छा करनेवाले (**क्षरन्तः**) कम्पित करते और चेष्टावान् करते हुए (**सिन्धवः**) समुद्रों के (**न**) समान (**वर्द्धयन्ति**) बढ़ाते हैं, जिन (**ते**) आपके (**दावने**) दान के लिये हम (**स्याम**) हों सो आप हम लोगों को (**मा, रिषण्यः**) मत मारिये और (**हवम्**) शास्त्रबोधजन्य शब्द (**श्रुधि**) सुनिये॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे समुद्र जल से सबको बढ़ाता है, वैसे प्रधान पुरुषों को चाहिये कि अपने आश्रित सब जनों को दान और मान से बढ़ावें॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सृजो महीरिन्द्र या अपिन्वः परिष्ठिता अहिना शूर पूर्वीः।
अमर्त्यं चिद्दासं मन्यमानमवाभिनदुक्थैर्वावृधानः॥२॥

सृजः। महीः। इन्द्र। याः। अपिन्वः। परिऽस्थिताः। अहिना। शूर। पूर्वीः। अमर्त्यम्। चित्। दासम्। मन्यमानम्। अव। अभिनत्। उक्थैः। ववृधानः॥२॥

पदार्थः-**(सृजः)** उत्पादय **(महीः)** महत्यो वाचः **(इन्द्र)** सूर्यवद्वर्त्तमान **(याः)** **(अपिन्वः)** पिन्व **(परिष्ठिताः)** परितः स्थिताः **(अहिना)** मेघेन **(शूर)** निर्भय **(पूर्वीः)** पूर्वं भूताः **(अमर्त्यम्)** आत्मना मरणधर्मरहितम् **(चित्)** अपि **(दासम्)** सेवकम् **(मन्यमानम्)** **(अव)** **(अभिनत्)** भिनत्ति **(उक्थैः)** उत्तमवचनैः **(वावृधानः)** वर्द्धमानः॥२॥

अन्वयः-हे शूर इन्द्र! यथा सूर्योऽहिना परिष्ठिताः पूर्वीरपो वाऽभिनत् तथोक्थैर्ववृधानस्त्वं या महीः सृजस्ताभिश्चिदमर्त्यं मन्यमानं दासमपिन्वः॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सूर्यवत्सुवाचो वर्षन्ति सेवकान् प्रसादयन्ति ते सुप्रतिष्ठता भवन्ति॥२॥

पदार्थः-हे **(शूर)** निर्भय **(इन्द्र)** सूर्य के समान वर्त्तमान! जैसे सूर्य **(अहिना)** मेघ ने **(परिष्ठिताः)** सब ओर से स्थित किये हुए वा **(पूर्वीः)** पहिले सञ्चित हुए जलों को **(अवाभिनत्)** छिन्न-भिन्न करता है, वैसे **(उक्थैः)** उत्तम वचनों से **(ववृधानः)** बढ़े हुए आप **(याः)** जो **(महीः)** बड़ी-बड़ी वाणी हैं, उनको **(सृजः)** उत्पादन कीजिये, उनसे **(चित्)** ही **(अमर्त्यम्)** आत्मा से मरणधर्मरहित **(मन्यमानम्)** माननेवाले **(दासम्)** सेवक को **(अपिन्वः)** तृप्त कीजिये॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो सूर्य के समान उत्तम वाणियों को वर्षते हैं और सेवकों को प्रसन्न करते हैं, वे उत्तम प्रतिष्ठित होते हैं॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उक्थेष्विन्नु शूर येषु चाकन् स्तोमेष्विन्द्र रुद्रियेषु च।

तुभ्येदे॒ता यासु॑ मन्दसा॒नः प्र वा॒यवे॑ सिस्र॒ते न शु॒भ्राः॥३॥

उ॒क्थेषु॑। इत्। नु। शू॒र। येषु॑। चा॒कन्। स्तोमे॑षु। इ॒न्द्र। रु॒द्रिये॑षु। च॒। तुभ्य॑। इत्। ए॒ताः। यासु॑। म॒न्द॒सा॒नः। प्र। वा॒यवे॑। सि॒स्र॒ते। न। शु॒भ्राः॥३॥

पदार्थः-(उक्थेषु) वक्तुं योग्येषु वाक्येषु **(इत्)** एव **(नु)** सद्यः **(शूर)** तमो हिंसकस्सवितेव शत्रुहिंसक **(येषु)** **(चाकन्)** कामयते **(स्तोमेषु)** स्तुवन्ति सर्वा विद्या येषु तेषु **(इन्द्र)** प्रकाशमान **(रुद्रियेषु)** रुद्राणां प्राणानां प्रतिपादकेषु **(च)** **(तुभ्य)** तुभ्यम्। छान्दसो मलोपः। **(इत्)** **(एताः)** **(यासु)** क्रियासु **(मन्दसानः)** प्रशंसितः **(प्र)** **(वायवे)** **(सिस्रते)** सरन्ति **(न)** इव **(शुभ्राः)** विद्युतः॥३॥

अन्वयः-हे शूरेन्द्र! येषु स्तोमेषु रुद्रियेषूक्थेषु स भवान्नु चाकन् यासु च मन्दसान इदसि तासु सर्वासु तुभ्येदेता वायवे शुभ्राः प्रसिस्रते न शोभयन्तु॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा वायुना सह विद्युत्प्रसरति तथा विद्यया सह पुरुषः सुखेषु विहरति॥३॥

पदार्थः-हे **(शूर)** अन्धकार को दूर करनेवाले सूर्य के समान शत्रुदल के नष्ट करनेवाले **(इन्द्र)** प्रकाशमान राजन्! **(येषु)** जिन **(स्तोमेषु)** स्तुति विभागों वा **(रुद्रियेषु)** प्राणों की प्रतिपादना करनेवालों वा **(उक्थेषु)** कहने योग्य वाक्यों में आप **(नु)** शीघ्र **(चाकन्)** कामना करते हो **(यासु, च)** और जिन क्रियाओं में **(मन्दसानः)** प्रशंसित **(इत्)** ही हैं, उन सभी में **(तुभ्य, इत्)** आप ही के लिये जैसे **(एताः)** ये **(वायवे)** पवन के अर्थ **(शुभ्राः)** सुन्दर शोभायुक्त बिजुली **(प्रसिस्रते)** पसरती फैलती हैं **(न)** वैसे सुशोभित हो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे पवन के साथ बिजुली फैलती है, वैसे विद्या के साथ पुरुष सुखों के बीच विहार करता है॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

शु॒भ्रं नु ते॒ शुष्मं॑ व॒र्धय॑न्तः शु॒भ्रं वज्रं॑ बा॒ह्वोर्दधा॑नाः।
शु॒भ्रस्त्वमि॑न्द्र वावृधा॒नो अ॒स्मे दासी॒र्विशः॒ सूर्ये॑ण सह्याः॥४॥

शु॒भ्रम्। नु। ते॒। शुष्म॑म्। व॒र्धय॑न्तः। शु॒भ्रम्। वज्र॑म्। बा॒ह्वोः। दधा॑नाः। शु॒भ्रः। त्वम्। इ॒न्द्र॒। वा॒वृ॒धा॒नः। अ॒स्मे इति॑। दासीः॑। विशः॑। सूर्ये॑ण। स॒ह्याः॥४॥

पदार्थ:-**(शुभ्रम्)** भास्वरम् **(नु)** सद्यः **(ते)** तव **(शुष्मम्)** बलम् **(वर्द्धयन्तः)** उन्नयन्तः **(शुभ्रम्)** स्वच्छम् **(वज्रम्)** शस्त्रसमूहम् **(बाह्वोः)** करयोः **(दधानाः)** **(शुभ्रः)** शुद्धः **(त्वम्)** **(इन्द्र)** परमैश्वर्यप्रापक **(ववृधानः)** वर्द्धमानः **(अस्मे)** अस्माकम् **(दासीः)** सेविकाः **(विशः)** प्रजाः **(सूर्येण)** **(सह्याः)** सोढुं योग्याः॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र सभेश! ववृधानः शुभ्रस्त्वमस्मे दासीर्विशः सूर्येण सह्या दीप्तय इव सम्पादय यस्य ते शुभ्रं शुष्मन्नु वर्द्धयन्तो बाह्वोः शुभ्रं वज्रं दधाना भृत्याः सन्ति तैस्सर्वतः प्रजा वर्द्धय॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सततं राज्यं वर्द्धयितुं क्षमाः शस्त्रास्त्रप्रक्षेपकुशलाः प्रधानान् पुरुषानुन्नयन्ति ते सद्यः प्राधान्यं प्राप्नुवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे **(इन्द्रः)** परम ऐश्वर्य की प्राप्ति करानेवाले सभापति! **(ववृधानः)** बढ़े हुए **(शुभ्रः)** शुद्ध **(त्वम्)** आप **(अस्मे)** हमारी **(दासीः)** सेवा करनेवाली **(विशः)** प्रजा **(सूर्येण)** सूर्यमण्डल के साथ **(सह्याः)** सहने योग्य दीप्तियों के समान सम्पन्न करो। जिन **(ते)** आपका **(शुभ्रम्)** दीप्तिमान् **(शुष्मम्)** बल **(नु)** शीघ्र **(वर्द्धयन्तः)** बढ़ाते हुए अर्थात् उन्नत करते हुए **(बाह्वोः)** भुजाओं में **(शुभ्रम्)** स्वच्छ निर्मल **(वज्रम्)** शस्त्रसमूह को **(दधानाः)** धारण किये हुए भृत्य हैं, उनके सब ओर से प्रजा की वृद्धि करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो निरन्तर राज्य के बढ़ाने को समर्थ और शस्त्र तथा अस्त्र चलाने में कुशल प्रधान पुरुषों की उन्नति देते हैं, वे शीघ्र प्राधान्य को प्राप्त होते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

गुहा॑ हि॒तं गुह्यं॑ गू॒ळ्हम॒प्स्वपी॑वृतं मा॒यिनं॑ क्षि॒यन्त॑म्।
उ॒तो अ॒पो द्यां त॑स्त॒भ्वांस॒मह॒न्नहिं॑ शूर वी॒र्ये॑ण॥५॥३॥

गुहा॑। हि॒तम्। गुह्य॑म्। गू॒ळ्हम्। अ॒प्ऽसु। अपि॑ऽवृतम्। मा॒यिन॑म्। क्षि॒यन्त॑म्। उ॒तो इति॑। अ॒पः। द्याम्। त॒स्त॒भ्वांस॑म्। अह॑न्। अहि॑म्। शू॒र॒। वी॒र्ये॑ण॥५॥

पदार्थः-**(गुहा)** गुहायाम् **(हितम्)** धृतम् **(गुह्यम्)** गोप्तुं योग्यम् **(गूढम्)** गुप्तम् **(अप्सु)** जलेषु **(अपीवृतम्)** आच्छादितम् **(मायिनम्)** मायाविनम् **(क्षियन्तम्)** निवसन्तम् **(उतो)** अपि **(अपः)** जलानि **(द्याम्)** प्रकाशम् **(तस्तभ्वांसम्)** स्तम्भितवन्तम् **(अहन्)** हन्ति **(अहिम्)** मेघम् **(शूर)** निर्भय **(वीर्येण)** पराक्रमेण॥५॥

अन्वयः:-हे शूर! यथाऽप्स्वपीवृतं गूढमप उतो द्यां तस्तभ्वांसमहिं सूर्योऽहँस्तथा वीर्य्येण गुहा हितं गुह्यं क्षियन्तं मायिनं हन्याः॥५॥

भावार्थः:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सर्य्योऽन्तरिक्षस्थमप्सु शयानं मेघं हत्वा सर्वाः प्रजाः पुष्णाति तथा राजा कपटे वर्त्तमानमधर्मिणं शत्रुं भित्वा प्रजाः सुखयेत्॥५॥

पदार्थः-हे **(शूर)** निर्भय राजन्! जैसे **(अप्सु)** जलों में **(अपीवृतम्)** ढपे हुए **(गूढम्)** गुप्त पदार्थ को **(अपः)** और जलों को **(उतो)** तथा **(द्याम्)** प्रकाश को **(तस्तभ्वांसम्)** रोके हुए **(अहिम्)** मेघ को सूर्यमण्डल **(अहन्)** हनता है, वैसे **(वीर्येण)** पराक्रम से **(गुहा)** गुप्त स्थान में **(हितम्)** धरे अर्थात् हित **(गुह्यम्)** गुप्त करने योग्य **(क्षियन्तम्)** निरन्तर वसते हुए **(मायिनम्)** मायावी शत्रुजन को मारो॥५॥

भावार्थः:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य अन्तरिक्षस्थ जलों में सोते हुए मेघ को हन के सब प्रजा को पुष्ट करता है, वैसे राजा कपट के बीच वर्त्तमान अधर्मी शत्रुजन को छिन्न-भिन्न कर प्रजा को सुखी करे॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स्तवा नु त इन्द्र पूर्व्या महान्युत स्तवाम नूतना कृतानि।

स्तवा वज्रं बाह्वोरुशन्तं स्तवा हरी सूर्यस्य केतू॥६॥

स्तव। नु। ते। इन्द्र। पूर्व्या। महानि। उत। स्तवाम। नूतना। कृतानि। स्तव। वज्रम्। बाह्वोः। उशन्तम्। स्तव। हरी इति। सूर्यस्य। केतू इति॥६॥

पदार्थः-**(स्तव)** स्तवाम। अत्र विकरणव्यत्यत्ययेन शप् पुरुषवचनव्यत्ययश्च, सर्वत्र **द्व्यचोऽत-स्तिङ** इति दीर्घः। **(नु)** शीघ्रम् **(ते)** तव **(इन्द्र)** प्रशंसया युक्त **(पूर्व्या)** प्राचीनानि **(महानि)** पूजनीयानि बृहत्तमानि **(उत)** अपि **(स्तवाम)** प्रशंसेम **(नूतना)** नवीनानि **(कृतानि)** अनुष्ठितानि **(स्तव)** स्तवाम। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(वज्रम्)** शस्त्रास्त्रसमूहम् **(बाह्वोः)** भुजयोः **(उशन्तम्)** कोपयमानम् **(स्तव)** स्तवाम। अत्रापि दीर्घः। **(हरी)** धारणाकर्षणकर्माणौ **(सूर्यस्य)** सवितुः **(केतू)** किरणौ॥६॥

अन्वयः:-हे इन्द्र! वयं ते पूर्व्या महानि नु स्तवोत नूतना कृतानि स्तवाम बाह्वोर्वज्रमुशन्तं त्वां स्तव सूर्यस्य केतू इव तव हरी स्तव॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यैरतीतवर्त्तमानैराप्तैर्यानि धर्म्याणि कर्माणि कृतानि वा क्रियन्ते तान्येवेतरैरनुष्ठेयानि॥६॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** प्रशंसायुक्त राजन्! हम लोग **(ते)** आपके **(पूर्व्या)** प्राचीन **(महानि)** प्रशंसनीय बड़े-बड़े कामों की **(नु)** शीघ्र **(स्तव)** स्तुति अर्थात् प्रशंसा करें **(उत)** और **(नूतना)** नवीन **(कृतानि)** किये हुओं की **(स्तवाम)** प्रशंसा करें। तथा **(बाह्वोः)** भुजाओं में **(वज्रम्)** शस्त्र और अस्त्रों की **(उशन्तम्)** चाहना करते हुए आपकी **(स्तव)** स्तुति प्रशंसा करें तथा **(सूर्यस्य)** सूर्य की **(केतू)** किरणों के समान जो **(हरी)** धारणाकर्षणगुणयुक्त कर्मों की **(स्तव)** प्रशंसा करें॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। व्यतीत और वर्तमान आप्त धर्मात्मा सज्जनों ने जो धर्मयुक्त काम किये वा करते हैं, उन्हीं का अनुष्ठान और जनों को भी करना चाहिये॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

हरी॒ नु त॑ इन्द्र वा॒जय॑न्ता घृत॒श्चुत॑ स्वा॒रम॑स्वार्ष्टाम्।
वि स॑म॒ना भूमि॑रप्रथिष्टा॒रं॑स्त पर्व॑तश्चित् सरि॒ष्यन्॥७॥

हरी॒ इति॑। नु। ते॒। इ॒न्द्र॒। वा॒जय॑न्ता। घृ॒त॒ऽश्चुत॑म्। स्वा॒रम्। अ॒स्वा॒र्ष्टा॒म्। वि। स॒म॒ना। भूमि॑ः। अ॒प्र॒थि॒ष्ट॒। अरं॑स्त। पर्व॑तः। चि॒त्। स॒रि॒ष्यन्॥७॥

पदार्थः-**(हरी)** हरणशीलौ किरणौ **(नु)** सद्यः **(ते)** तव **(इन्द्र)** सूर्यवद्वर्त्तमान **(वाजयन्ता)** गमयन्तौ **(घृतश्चुतम्)** उदकात् प्राप्तम् **(स्वारम्)** उपतापं शब्दं वा **(अस्वार्ष्टाम्)** शब्दयन्तः **(वि)** **(समना)** समनानि संग्रामान् **(भूमिः)** पृथिवीव **(अप्रथिष्ट)** प्रथताम् **(अरंस्त)** रमताम् **(पर्वतः)** मेघः **(चित्)** इव **(सरिष्यन्)** गमिष्यन्॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यस्य ते तव घृतश्चुतं स्वारं वाजयन्ता सूर्यस्य हरी इव विद्याविनयावस्वार्ष्टांस्ताभ्यां सह भूमिरिव त्वं नु व्यप्रथिष्टारंस्त सरिष्यन् पर्वतश्चिदिव समना विजयस्व॥७॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये राजपुरुषाः सूर्यवत्प्रजानामुपकारका मेघवदानन्दप्रदा विशालबलाः सन्ति त एव शत्रून् विजेतुं शक्नुवन्ति॥७॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सूर्य के समान प्रतापी राजन्! जिन **(ते)** आपके **(घृतश्चुतम्)** जल से प्राप्त हुए **(स्वारम्)** उपताप वा शब्द को **(वाजयन्ता)** चलते हुए सूर्य के **(हरी)** हरणशील किरणों

के समान विद्या और विनय को जो **(अस्वार्ष्टाम्)** शब्दायमान करते अर्थात् व्यवहार में लाते उनके साथ **(भूमिः)** भूमि के समान आप **(नु)** शीघ्र **(वि, अप्रथिष्ट)** प्रख्यात हूजिये और **(अरंस्त)** सुख में रमण कीजिये तथा **(सरिष्यन्)** गमन करनेवाले होते हुए **(पर्वतः)** मेघ के **(चित्)** समान **(समना)** संग्राम को जीतो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राजपुरुष सूर्य के समान प्रजाजनों के उपकार करने वा मेघ के समान आनन्द देने और उत्तम बलवाले हैं, वे ही शत्रुओं को जीत सकते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

नि पर्वतः साद्यप्रयुच्छन्त्सं मातृभिर्वावशानो अक्रान्।
दूरे पारे वाणीं वर्धयन्त इन्द्रेषितां धमनिं पप्रथन्नि॥८॥

नि। पर्वतः। सादि। अप्रऽयुच्छन्। सम्। मातृऽभिः। वावशानः। अक्रान्। दूरे। पारे। वाणीम्। वर्धयन्तः। इन्द्रऽइषिताम्। धमनिम्। पप्रथन्। नि॥८॥

पदार्थः-**(नि)** नितराम् **(पर्वतः)** मेघ इव **(सादि)** सम्पाद्यते **(अप्रयुच्छन्)** प्रमादमकुर्वन् **(सम्)** **(मातृभिः)** मान्यकर्त्रीभिः **(वावशानः)** कामयमानः **(अक्रान्)** कुर्वन्ति **(दूरे)** विप्रकृष्टदेशे **(पारे)** समुद्रभूमिपरभागे **(वाणीम्)** सुशिक्षितां वाचम् **(वर्द्धयन्तः)** **(इन्द्रेषिताम्)** इन्द्रेण परमेश्वरेण प्रेषिताम् **(धमनिम्)** वेदवाणीम्। **धमनिरिति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं० १.११)। **(पप्रथन्)** विस्तारयेयुः **(नि)** नित्यम्॥८॥

अन्वयः-यो मातृभिर्वावशानोऽप्रयुच्छन् पर्वतइव विद्वद्भिः संसादि तेन सह ये दोषान् दूरे कुर्वन्तो वाणीं पारे वर्द्धयन्तोऽन्यान् विदुषो न्यक्रांस्त इन्द्रेषितां धमनिं नि पप्रथन्॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यान् सन्तानान् मातरः सुशिक्षया विद्यया प्रमादरहितान् कृत्वा वर्द्धयन्ति, ते सुखानि प्राप्य सर्वतो वर्द्धन्ते॥८॥

पदार्थः-जो **(मातृभिः)** मान करनेवाली माता आदि से **(वावशानः)** कामना किया जाता और **(अप्रयुच्छन्)** प्रमाद न करता हुआ **(पर्वतः)** मेघ के समान विद्वानों ने **(सम्, सादि)** अच्छे प्रकार सिद्ध किया उसके साथ जो दोषों को **(दूरे)** दूर करते हुए **(वाणीम्)** सुन्दर शिक्षायुक्त वाणी को **(पारे)** समुद्र की भूमियों के परभाग में **(वर्द्धयन्तः)** बढ़ाते हुए औरों को विद्वान् **(अक्रान्)** करते हैं, वे **(इन्द्रेषिताम्)** परमेश्वर की भेजी हुई वेदवाणी का **(नि, पप्रथन्)** निरन्तर विस्तार करें॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जिन सन्तानों को माता उत्तम शिक्षा और विद्या से प्रमादरहित कर बढ़ाती हैं, वे सुखों को प्राप्त होकर सब ओर से बढ़ते हैं॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इन्द्रो॑ म॒हां सिन्धु॑मा॒शया॑नं माया॒विनं॑ वृ॒त्रम॑स्फुर॒न्निः।
अरे॑जेतां॒ रोद॑सी भिया॒ने कनि॑क्रदतो॒ वृष्णो॑ अस्य॒ वज्रा॑त्॥९॥

इन्द्रः॑। म॒हाम्। सिन्धु॑म्। आ॒ऽशया॑नम्। मा॒या॒ऽविन॑म्। वृ॒त्रम्। अ॒स्फु॒र॒त्। निः। अरे॑जेताम्। रोद॑सी॒ इति॑। भि॒या॒ने इति॑। कनि॑क्रदतः। वृष्णः॑। अ॒स्य॒। वज्रा॑त्॥९॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) सूर्यः (**महाम्**) महत्तमम् (**सिन्धुम्**) समुद्रम् (**आशयानम्**) आस्थितम् (**मायाविनम्**) दुष्टप्रज्ञम् (**वृत्रम्**) मेघम् (**अस्फुरत्**) वर्द्धयति (**निः**) नितराम् (**अरेजेताम्**) कम्पेते (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**भियाने**) भयं प्राप्ताविव (**कनिक्रदतः**) शब्दयतः (**वृष्णः**) वर्षकस्य (**अस्य**) वर्त्तमानस्य (**वज्रात्**) विद्युत्पातशब्दात्॥९॥

अन्वयः-हे सभेश राजन्! यथेन्द्रः सूर्य्यो महां सिन्धुमाशयानं वृत्रं निरस्फुरत्, यथाऽस्य वृष्णो वज्राद्भियाने इव रोदसी अरेजेतां कनिक्रदतस्तथा त्वं मायाविनं भिन्धि दुष्टान् कम्पयस्व रोदय च॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजपुरुषा! यथा सूर्यः स्वकिरणैः सिन्धुजलं मेघमण्डलं गमयित्वा वर्षयित्वा च प्रजाः सुखयति तथा भवन्तो विद्यया समुन्नताः प्रजाः सम्पाद्य सुखयेयुः विद्युच्छब्दश्रवणात् सर्वे बिभ्यति तथा न्यायाचरणोपदेशाद् दुष्टाचारात् सर्वे बिभ्यतु॥९॥

पदार्थः-हे सभापति राजन्! जैसे (**इन्द्रः**) सूर्यलोक (**महाम्**) अत्यन्त बड़े (**सिन्धुम्**) अन्तरिक्ष समुद्र को (**आशयानम्**) प्राप्त (**वृत्रम्**) मेघ को (**निः, अस्फुरत्**) निरन्तर बढ़ाता है वा जैसे (**अस्य**) इस (**वृष्णः**) वर्षनेवाले मेघ की (**वज्रात्**) गिरी हुई बिजुली के शब्द से (**भियाने**) डरपे हुए से (**रोदसी**) आकाश और पृथिवी (**अरेजेताम्**) कंपते और (**कनिक्रदतः**) शब्द करते हैं, वैसे आप (**मायाविनम्**) मायावी दुष्ट बुद्धि पुरुष को विदारो, दुष्टों को कंपाओ और रुलाओ॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजपुरुषो! जैसे सूर्य अपनी किरणों से समुद्र के जल को मेघमण्डल को पहुंचा और उसे वर्षा कर प्रजाजनों को सुखी करता है, वैसे आप विद्या से अच्छे प्रकार उन्नति-संयुक्त प्रजा कर उसे सुखी करें। जैसे बिजुली के श्रवण से सब डरते हैं, वैसे न्यायाचरण के उपदेश से दुष्टाचरण से सब डरें॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अरो॑रवीद् वृष्णो॑ अस्य वज्रोऽमा॑नुषं यन्मानु॑षो नि॒जूर्वा॑त्।

नि मा॒यिनो॑ दान॒वस्य॑ मा॒या अपा॑दयत्पपि॒वान्त्सु॒तस्य॑॥ १०॥ ४॥

अरो॑रवीत्। वृष्णः॑। अ॒स्य॒। वज्रः॑। अमा॑नुषम्। यत्। मानु॑षः। नि॒ऽजूर्वा॑त्। नि। मा॒यिनः॑। दा॒न॒वस्य॑। मा॒याः। अपा॑दयत्। प॒पि॒ऽवान्। सु॒तस्य॑॥ १०॥

पदार्थः-(अरोरवीत्) भृशं शब्दयति **(वृष्णः)** वर्षकस्य **(अस्य)** सूर्यस्य **(वज्रः)** किरणनिपातः **(अमानुषम्)** मनुष्यसम्बन्धरहितम् **(यत्)** यम् **(मानुषः)** मनुष्यः **(निजूर्वात्)** हिंस्यात्। अत्र लुङ्‌ड्यडभावः। बहुलमेतन्निदर्शनमिति हिंसार्थस्य जुर्वधातोर्ग्रहणम् **(नि) (मायिनः)** कुत्सिता माया प्रज्ञा विद्यते यस्य सः **(दानवस्य)** दुष्टकर्मकर्त्तुः **(मायाः)** छलयुक्ताः **(अपादयत्)** विनाशयेत् **(पपिवान्)** पाता **(सुतस्य)** महौषधिनिष्पन्नस्य रसस्य॥ १०॥

अन्वयः-यथाऽस्य वृष्णो वज्रोऽरोरवीदमानुषं मानुष इव यन्निजूर्वात्तथा यो मायिनो दानवस्य माया न्यपादयत् सुतस्य पपिवान् भवेत् स विजयतेतमाम्॥ १०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽन्तरिक्षे तडिच्छब्दा मेघं ज्ञापयन्ति तथा राजानः दुष्टाचरणैर्दुष्टान् प्रज्ञापयेयुः॥ १०॥

पदार्थः–जैसे **(अस्य)** इस **(वृष्णः)** वर्षा निमित्तक सूर्यमण्डल के **(वज्रः)** किरणों का जो निरन्तर गिरना **(अरोरवीत्)** वह बार-बार शब्द करता है और **(अमानुषम्)** मनुष्य सम्बन्धरहित पदार्थ को मनुष्य जैसे वैसे **(यत्)** जिसको **(निजूर्वात्)** छिन्न-भिन्न करे, वैसे जो **(मायिनः)** मायावी निन्दित बुद्धियुक्त **(दानवस्य)** दुष्ट कर्म करनेवाले की **(मायाः)** छलयुक्त बुद्धियों को **(नि, अपादयत्)** निरन्तर नष्ट करें और **(सुतस्य)** बड़ी-बड़ी ओषधियों के निकले हुए रस को **(पपिवान्)** पीनेवाला हो, वह विजय को प्राप्त होता है॥ १०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अन्तरिक्ष में बिजुली के शब्द मेघ को जतलाते हैं, वैसे राजजन दुष्टाचरणों से दुष्टजनों को सचेत करावें अर्थात् उनके छल-कपटों को जता देवें॥ १०॥

अथ वैद्यविषयमाह॥

अब वैद्य विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

पिबा॑पि॒बेदि॑न्द्र शूर॒ सोमं॒ मन्द॑न्तु त्वा म॒न्दिनः॑ सु॒तासः॑।

पृणन्तस्ते कुक्षी वर्धयन्त्वित्था सुतः पौर इन्द्रमाव॥ ११॥

पिबऽपिब। इत्। इन्द्र। शूर। सोमम्। मन्दन्तु। त्वा। मन्दिनः। सुतासः। पृणन्तः। ते। कुक्षी इति। वर्धयन्तु। इत्था। सुतः। पौरः। इन्द्रम्। आव॥ ११॥

पदार्थः-(पिबापिब) भृशं पिबति। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(इत्)** एव **(इन्द्र)** आयुर्वेदविद्यायुक्त **(शूर)** रोगाणां हिंसक **(सोमम्)** सोमलताद्योषधिसारपातारम् **(मन्दन्तु)** हर्षयन्तु **(त्वा)** त्वाम् **(मन्दिनः)** स्तोतुमर्हाः **(सुतासः)** निष्पादिता रसाः **(पृणन्तः)** सुखयन्तः **(ते)** तव **(कुक्षी)** उदरपार्श्वौ **(वर्द्धयन्तु)** **(इत्था)** अनेन हेतुना **(सुतः)** निष्पन्नः **(पौरः)** पुरि भवः **(इन्द्रम्)** ऐश्वर्यम् **(आव)** रक्ष॥ ११॥

अन्वयः-हे शूरेन्द्र! ये मन्दिनः सुतासः सोमं त्वा पृणन्तस्ते कुक्षी वर्द्धयन्तु त्वा मन्दन्तु ताँस्त्वमित्पिबेथा सुतः पौरस्त्वमिन्द्रमाव॥ ११॥

भावार्थः-मनुष्यैर्यदि पुष्टिबुद्धिप्रदा रोगविनाशिन ओषधिसाराः सेव्यन्ते, तर्हि ते पुरुषार्थिनो भूत्वैश्वर्यं वर्द्धयितुं शक्नुवन्ति॥ ११॥

पदार्थः-हे **(शूर)** रोगों को नष्ट करनेवाले **(इन्द्र)** आयुर्वेद विद्यायुक्त वैद्य! जो **(मन्दिनः)** प्रशंसा करने योग्य **(सुतासः)** ओषधियों के निकाले हुए रस **(सोमम्)** सोमलतादि ओषधियों के सार को पीनेवाले **(त्वा)** आपको **(पृणन्तः)** सुखी करते हुए **(ते)** आपके **(कुक्षी)** कोखों की **(वर्द्धयन्तु)** वृद्धि करें और आपको **(मन्दन्तु)** हर्षित करावें, उनको आप **(इत्)** ही **(पिबापिब)** पिओ पिओ **(इत्था)** इस हेतु से **(सुतः)** प्रसिद्ध **(पौरः)** पुर में उत्पन्न हुए आप **(इन्द्रम्)** ऐश्वर्य की **(आव)** रक्षा करो॥ ११॥

भावार्थः-मनुष्य लोग यदि पुष्टि और वृद्धि देनेवाले रोगविनाशक ओषधियों के सार को सेवन करते हैं तो पुरुषार्थी होकर ऐश्वर्य को बढ़ा सकते हैं॥ ११॥

अथ पुनर्वैद्यविद्वद्विषयमाह॥

अब वैद्य विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वे इन्द्राप्यभूम विप्रा धियं वनेम ऋतया सपन्तः।
अवस्यवो धीमहि प्रशस्तिं सद्यस्ते रायो दावने स्याम॥ १२॥

त्वे इति। इन्द्र। अपि। अभूम। विप्राः। धियम्। वनेम। ऋतऽया। सपन्तः। अवस्यवः। धीमहि। प्रऽशस्तिम्। सद्यः। ते। रायः। दावने। स्याम॥ १२॥

पदार्थः-(त्वे) त्वयि **(इन्द्र)** रोगविदारक **(अपि) (अभूम)** भवेम **(विप्राः)** मेधाविनः **(धियम्)** प्रज्ञां कर्म वा **(वनेम)** सम्भजेम **(ऋतया)** सत्यविज्ञानयुक्तया **(सपन्तः)** दुष्टानाक्रोशन्तः **(अवस्यवः)** आत्मनोऽवो रक्षणमिच्छवः **(धीमहि)** धरेम **(प्रशस्तिम्)** प्रशंसाम् **(सद्यः) (ते)** तुभ्यम् **(रायः)** विद्याधनस्य **(दावने)** दात्रे **(स्याम)** भवेम॥१२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वे वयं विप्रा अप्यभूम ऋतया सपन्तो धियं च वनेमावस्यवो वयं प्रशस्तिं धीमहि ते रायो दावने सद्यः स्याम॥१२॥

भावार्थः-मनुष्यैर्ऋतंभरया प्रज्ञया ओषधिविद्यां विदित्वैता ओषधीः संसेव्य पुरुषार्थं कृत्वा श्रीर्धर्त्तव्या॥१२॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** रोग विदीर्ण करनेवाले वैद्य विद्वान् जन! **(त्वे)** आपके समीप में हम लोग भी **(विप्राः)** मेधावी **(अभूम)** हों और **(ऋतया)** सत्य विज्ञानयुक्त बुद्धि क्रिया से **(सपन्तः)** दुष्टों को अच्छे प्रकार कोशते हुए **(धियम्)** बुद्धि वा कर्म को **(वनेम)** अच्छे प्रकार सेवें तथा **(अवस्यवः)** अपने को रक्षा चाहते हुए हम लोग **(प्रशस्तिम्)** प्रशंसा को **(धीमहि)** धारण करें वा पुष्ट करें और **(ते)** आप जो **(रायः)** विद्याधन के **(दावने)** देनेवाले हैं, उनके लिये **(सद्यः)** शीघ्र प्रसिद्ध होवें॥१२॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि सत्य विज्ञानयुक्त बुद्धि से ओषधिविद्या को जान, इन ओषधियों को सेवन कर, पुरुषार्थ बढ़ा, लक्ष्मी का सञ्चय करें॥१२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स्याम ते त इन्द्र ये त ऊती अवस्यव ऊर्जं वर्धयन्तः।
शुष्मिन्तमं यं चाकनाम देवास्मे रयिं रासि वीरवन्तम्॥१३॥

स्याम। ते। ते। इन्द्र। ये। ते। ऊती। अवस्यवः। ऊर्जम्। वर्धयन्तः। शुष्मिन्ऽतमम्। यम्। चाकनाम। देव। अस्मे इति। रयिम्। रासि। वीरऽवन्तम्॥१३॥

पदार्थः-(स्याम) भवेम **(ते) (ते)** तव **(इन्द्र)** ऐश्वर्यप्रद **(ये) (ते)** तव **(ऊती)** ऊत्या रक्षणादि-क्रियया सह **(अवस्यवः)** आत्मनोऽवो रक्षणमिच्छन्तः **(ऊर्जम्)** पराक्रमम् **(वर्द्धयन्तः) (शुष्मिन्तमम्)** अतिशयेन बलवन्तम् **(यम्) (चाकनाम)** कामयेमहि **(देव)** कमनीय **(अस्मे)** अस्मभ्यम् **(रयिम्)** श्रियम् **(रासि)** ददासि **(वीरवन्तम्)** वीरा भवन्ति यस्मात्तम्॥१३॥

अन्वयः-हे देवेन्द्र! येऽवस्यवस्त ऊती ऊर्जं वर्द्धयन्तस्त्वां रक्षन्ति तेऽतुलं सुखं प्राप्नुवन्ति, यस्य ते सम्बन्धे वयं यं शुष्मिन्तमं वीरवन्तं रयिं चाकनाम त्वमस्मे एतं रासि तं प्राप्य वयं सुखिनः स्याम॥१३॥

भावार्थः-ये मनुष्याः परस्परस्य वृद्धिं कुर्वन्ति ते सर्वतो वर्द्धन्ते केनचित्सुकामना नैव त्याज्या॥१३॥

पदार्थः-हे **(देव)** मनोहर **(इन्द्र)** ऐश्वर्य के देनेवाले! **(ये)** जो **(अवस्यवः)** अपनी रक्षा चाहते और **(ते)** आपकी **(ऊती)** रक्षा आदि क्रिया से **(ऊर्जम्)** पराक्रम को **(वर्द्धयन्तः)** बढ़ाते हुए आपकी रक्षा करते **(ते)** वे अतुल सुख को प्राप्त होते हैं, जिन **(ते)** आपके सम्बन्ध में हम लोग **(यम्)** जिस **(शुष्मिन्तमम्)** अति बलवान् **(वीरवन्तम्)** वीरों के प्रसिद्ध करानेवाले **(रयिम्)** धन को **(चाकनाम)** चाहें आप **(अस्मे)** हम लोगों के लिये इसको **(रासि)** देते हो, उसको प्राप्त हो हम लोग सुखी **(स्याम)** हों॥१३॥

भावार्थः-जो भी मनुष्य परस्पर की वृद्धि करते हैं, वे सब ओर से बढ़ते हैं, किसी को अच्छी कामना नहीं छोड़नी चाहिये॥१३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

रासि क्षयं रासि मित्रमस्मे रासि शर्धं इन्द्र मारुतं नः।

सजोषसो ये च मन्दसानाः प्र वायवः पान्त्यग्रणीतिम्॥१४॥

रासि। क्षयम्। रासि। मित्रम्। अस्मे इति। रासि। शर्धः। इन्द्र। मारुतम्। नः। सऽजोषसः। ये। च। मन्दसानाः। प्र। वायवः। पान्ति। अग्रऽनीतिम्॥१४॥

पदार्थः-**(रासि)** ददासि **(क्षयम्)** निवासम् **(रासि)** **(मित्रम्)** सखायम् **(अस्मे)** अस्मभ्यम् **(रासि)** **(शर्द्धः)** बलम् **(इन्द्र)** बलप्रद **(मारुतम्)** मरुतां मनुष्याणामिदम् **(नः)** अस्मान् **(सजोषसः)** समानप्रीतयः **(ये)** **(च)** **(मन्दसानाः)** कामयमानाः **(प्र)** **(वायवः)** विज्ञानबलयुक्ताः **(यान्ति)** **(अग्रणीतिम्)** अग्रा श्रेष्ठा चासौ नीतिश्च ताम्॥१४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ये नोऽस्मान् मन्दसानाः सजोषसश्च वायवोऽग्रणीतिं प्रयान्ति तैस्समं वयं याम यतस्त्वमस्मे क्षयं रासि मित्रं रासि मारुतं शर्द्धश्च तस्मात्प्रशंसनीयोऽसि॥१४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सखायो भूत्वा विद्याविनयौ प्राप्य सत्यं कामयन्ते ते सर्वेभ्यः सुखं दातुं शक्नुवन्ति॥१४॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** बल के देनेवाले! **(ये)** जो **(नः)** हम लोगों की **(मन्दसानाः)** कामना करते हुए **(सजोषसः)** समान प्रीतिवाले **(वायवः)** विज्ञान बलयुक्त जन **(अग्रणीतिम्)** आगे होनेवाली उत्तम नीति को **(प्र, यान्ति)** प्राप्त होते हैं, उनके समान हम लोग प्राप्त होवें, जिससे आप **(अस्मे)** हम लोगों के लिये **(क्षयम्)** निवास **(रासि)** देते हैं, **(मित्रम्)** मित्र **(रासि)** देते हो और **(मारुतम्)** मनुष्यों को **(शर्द्धः)** बल **(च)** भी **(रासि)** देते हो, इससे प्रशंसनीय हो॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मित्र हो विद्या और विनय को प्राप्त होकर सत्य की कामना करते हैं, वे सबको सुख दे सकते हैं॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

व्यन्त्विन्नु येषु मन्दसानस्तृपत्सोमं पाहि द्रह्यदिन्द्र।
अस्मान्त्सु पृत्स्वा तरुत्रावर्धयो द्यां बृहद्भिरर्कैः॥१५॥५॥

व्यन्तु। इत्। नु। येषु। मन्दसानः। तृपत्। सोमम्। पाहि। द्रह्यत्। इन्द्र। अस्मान्। सु। पृत्ऽसु। आ। तरुत्र। अवर्धयः। द्याम्। बृहत्ऽभिः। अर्कैः॥१५॥

पदार्थः-**(व्यन्तु)** कामयन्ताम् **(इत्)** एव **(नु)** सद्यः **(येषु)** **(मन्दसानः)** आनन्दितः **(तृपत्)** तृप्तः सन् **(सोमम्)** ऐश्वर्यम् **(पाहि)** **(द्रह्यत्)** दृढः सन् **(इन्द्र)** ऐश्वर्यवन् **(अस्मान्)** **(सु)** **(पृत्सु)** सङ्ग्रामेषु **(आ)** **(तरुत्र)** अविद्यातारक **(अवर्द्धयः)** वर्द्धयति **(द्याम्)** प्रकाशम् **(बृहद्भिः)** महद्भिः **(अर्कैः)** किरणैः॥१५॥

अन्वयः-हे तरुत्रेन्द्र! यथा सूर्यो बृहद्भिरर्कैर्द्यां न्वावर्द्धयस्तथा त्वमस्मान् पृत्सु पाहि। येषु विद्वांसः सोमं व्यन्तु तेषु मन्दसानः तृपद्द्रह्यदिदैश्वर्यं सुपाहि॥१५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्या येषु विद्वत्सु निवसन्त ऐश्वर्यं प्राप्य तृप्ताः सन्तोऽन्याँस्तर्पयन्ति तेषु सूर्यवत्प्रकाशिता भवन्ति॥१५॥

पदार्थः-हे **(तरुत्र)** अविद्या से तारनेवाले **(इन्द्र)** ऐश्वर्यवान् विद्वान्! जैसे सूर्यमण्डल **(बृहद्भिः)** बड़ी-बड़ी **(अर्कैः)** किरणों से **(द्याम्)** प्रकाश को **(नु, आ, अवर्धयः)** शीघ्र अच्छे प्रकार बढ़ाता है, वैसे आप **(अस्मान्)** हम लोगों की **(पृत्सु)** संग्रामों में रक्षा कीजिये, **(येषु)** जिन में विद्वान् जन **(सोमम्)** ऐश्वर्य की **(व्यन्तु)** कामना करें उनमें **(मन्दसानः)** आनन्द को प्राप्त **(तृपत्)** तृप्त और **(द्रह्यत्)** दृढ़ होते हुए **(इत्)** ही आप ऐश्वर्य की **(सुपाहि)** अच्छे प्रकार रक्षा करें॥१५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्य जिन विद्वान् जनों में निवास करते और ऐश्वर्य को प्राप्त होकर तृप्त होते हुए औरों को तृप्त करते हैं, उनमें वे सूर्य के समान प्रकाशित होते हैं॥१५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

बृहन्त इन्नु ये ते तरुत्रोक्थेभिर्वा सुम्नमाविवासान्।
स्तृणानासो बर्हिः पस्त्यावत् त्वोता इदिन्द्र वाजमग्मन्॥१६॥

बृहन्तः। इत्। नु। ये। ते। तरुत्र। उक्थेभिः। वा। सुम्नम्। आऽविवासान्। स्तृणानासः। बर्हिः। पस्त्यऽवत्। त्वाऽऊताः। इत्। इन्द्र। वाजम्। अग्मन्॥१६॥

पदार्थः-(**बृहन्तः**) महान्तः (**इत्**) एव (**नु**) सद्यः (**ये**) (**ते**) तव (**तरुत्र**) दुःखात्तारक (**उक्थेभिः**) सुष्ठूपदेशैः (**वा**) (**सुम्नम्**) सुखम् (**आविवासान्**) समन्तात् सेवन्ते (**स्तृणानासः**) आच्छादयन्तः (**बर्हिः**) वृद्धम् (**पस्त्यावत्**) गृहवत् (**त्वोताः**) त्वया रक्षिताः (**इत्**) एव (**इन्द्र**) अविद्याविच्छेदक (**वाजम्**) विज्ञानम् (**अग्मन्**) प्राप्नुवन्ति॥१६॥

अन्वयः-हे तरुत्रेन्द्र! ते तवोक्थेभिर्बृहन्त इद्ये सुम्नमाविवासाँस्ते पस्त्यावद् बर्हिस्तृणानासो वा त्वोता इद्वाजं न्वग्मन्॥१६॥

भावार्थः-त एव सुखमाप्नुवन्ति ये धार्मिकैः सुशिक्षिताः रक्षिताः स्युः॥१६॥

पदार्थः-हे (**तरुत्र**) दुःख से तारनेवाले (**इन्द्र**) अविद्या विनाशक! (**ते**) आपके (**उक्थेभिः**) सुन्दर उपदेशों से (**बृहन्तः**) पूज्य प्रशंसनीय (**इत्**) ही (**सुम्नम्**) सुख को (**आ, विवासान्**) सब ओर से सेवते हैं, वे (**पस्त्यावत्**) घर के तुल्य (**बर्हिः**) बढ़े हुए को (**स्तृणानासः**) ढाँपते हुए (**वा**) अथवा (**त्वोताः**) आपके रक्षा किये हुए (**इत्**) ही (**वाजम्**) विज्ञान को (**नु**) शीघ्र (**अग्मन्**) प्राप्त होते हैं॥१६॥

भावार्थः-वे ही सुख को प्राप्त होते हैं जो धार्मिक विद्वान् सत्पुरुषों से सुन्दर शिक्षित और रक्षित हों॥१६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उग्रेष्विन्नु शूर मन्दसानस्त्रिकद्रुकेषु पाहि सोममिन्द्र।

प्रदोधुवच्छ्मश्रुषु प्रीणानो याहि हरिभ्यां सुतस्य पीतिम्॥१७॥

उग्रेषु। इत्। नु। शूर। मन्दसानः। त्रिऽकद्रुकेषु। पाहि। सोमम्। इन्द्र। प्रऽदोधुवत्। श्मश्रुषु। प्रीणानः। याहि। हरिऽभ्याम्। सुतस्य। पीतिम्॥१७॥

पदार्थः-(उग्रेषु) तेजस्विषु **(इत्)** एव **(नु)** सद्यः **(शूर)** दुष्टानां हिंसकः **(मन्दसानः)** कामयमानः **(त्रिकद्रुकेषु)** त्रीणि कद्रुकाणि शरीरात्ममनः पीडनानि येषु तेषु व्यवहारेषु **(पाहि)** **(सोमम्)** महौषधिगणम् **(इन्द्र)** वैद्यकविद्यावित् **(प्रदोधुवत्)** प्रकृष्टतया कम्पयन् **(श्मश्रुषु)** चिबुकादिषु **(प्रीणानः)** तर्पयन् **(याहि)** गच्छ **(हरिभ्याम्)** सुशिक्षिताभ्यामश्वाभ्याम् **(सुतस्य)** निष्पन्नस्य **(पीतिम्)** पानम्॥१७॥

अन्वयः-हे शूरेन्द्र! त्वं त्रिकद्रुकेषु सोमं पाह्युग्रेष्विन्मन्दसानः प्रदोधुवच्छ्मश्रुषु प्रीणानो हरिभ्यां सुतस्य पीतिं नु याहि॥७॥

भावार्थः-यदि मनुष्याः प्रगल्भैर्जनैस्सह संयुञ्जते तर्हि शत्रून् कम्पयन्तो महौषधिरसं पिबन्ति सुशिक्षितैरश्वैर्युक्तेन रथेनेव सद्यः सुखानि प्राप्नुवन्ति॥१७॥

पदार्थः-हे **(शूर)** दुष्टों की हिंसा करने और **(इन्द्र)** वैद्य विद्या जाननेवाले! आप **(त्रिकद्रुकेषु)** जिन व्यवहारों में तीन अर्थात् शरीर, आत्मा और मन की पीड़ा विद्यमान उनके निमित्त **(सोमम्)** महान् ओषधियों के समूह को **(पाहि)** रक्षा करो और **(उग्रेषु)** तेजस्वी प्रबल प्रतापवालों में **(इत्)** ही **(मन्दसानः)** कामना और **(प्रदोधुवत्)** उत्तमता से कम्पन अर्थात् नाना प्रकार की चेष्टा करते और **(श्मश्रुषु)** चिबुकादिक अङ्गों में **(प्रीणानः)** तृप्ति पाते हुए **(हरिभ्याम्)** अच्छे शिक्षित घोड़ों से **(सुतस्य)** निकले हुए ओषधियों के रस के **(पीतिम्)** पीने को **(नु)** शीघ्र **(याहि)** प्राप्त होओ॥१७॥

भावार्थः-जो मनुष्य प्रबल बुद्धिजनों के साथ अच्छे प्रकार कार्यों का प्रयोग करते हैं तो शत्रुओं को कंपाते और बड़ी-बड़ी ओषधियों के रस को पीते हुए अच्छे सिखाये हुए घोड़ों से युक्त रथ से जैसे वैसे शीघ्र सुखों को प्राप्त होते हैं॥१७॥

अथ सेनापतिगुणानाह॥

अब सेनापति के गुणों को अगले मन्त्र में कहा है॥

धिष्वा शवः शूर येन वृत्रमवाभिनद्दानुमौर्णवाभम्।
अपावृणोर्ज्योतिरार्याय नि सव्यतः सादि दस्युरिन्द्र॥१८॥

धिष्व। शवः। शूर। येन। वृत्रम्। अवऽअभिनत्। दानुम्। और्णऽवाभम्। अप। अवृणोः। ज्योतिः। आर्याय। नि। सव्यतः। सादि। दस्युः। इन्द्र॥ १८॥

पदार्थः-(धिष्व) धर। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(शवः)** बलम् **(शूर)** दुःखविनाशक **(येन) (वृत्रम्)** मेघम् **(अवाभिनत्)** विदृणाति **(दानुम्)** जलस्य दातारम् **(और्णवाभम्)** ऊर्णा नाभ्यां यस्य तदपत्यमिव **(अपावृणोः)** दूरीकरोति **(ज्योतिः)** प्रकाशम् **(आर्य्याय)** उत्तमाय जनाय **(नि)** नितराम् **(सव्यतः)** दक्षिणतः **(सादि)** साध्यताम् **(दस्युः)** परपदार्थापहारकः **(इन्द्र)** सूर्यवद्वर्त्तमानसेनेश॥ १८॥

अन्वयः-हे शूरेन्द्र! त्वं येन शवो धिष्व तेन यथा सूर्यो दानुं वृत्रमौर्णवाभमिवावाऽभिनत् सव्यतो ज्योतिः कृत्वा तमो न्यपावृणोस्तथाऽऽर्याय साधुर्भव। यो दस्युरस्ति तं नाशयैवं युद्धे विजयः सादि॥ १८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। राजपुरुषैः सूर्यवदन्यायं निवर्त्य सज्जनहृदयेषु सुखं प्रापय्य सततं बलं वर्द्धनीयम्॥ १८॥

पदार्थः-हे **(शूर)** दुःखविनाशक **(इन्द्र)** सूर्य के समान वर्त्तमान सेनापति! आप **(येन)** जिससे **(शवः)** बल को **(धिष्व)** धारण करो उससे जैसे सूर्य **(दानुम्)** जल देनेवाले **(वृत्रम्)** मेघ को **(और्णवाभम्)** उर्णा जिसकी नाभि में होती उसके पुत्र के समान अर्थात् जैसे वह किसी की देह का विदारण करे, वैसे **(अवाभिनत्)** छिन्न-भिन्न करता है और **(सव्यतः)** दाहिनी ओर से **(ज्योतिः)** प्रकाश कर अन्धकार को **(नि, अप, अवृणोः)** निरन्तर दूर करता है, वैसे **(आर्य्याय)** उत्तम के लिये साधारण होओ, जो **(दस्युः)** दूसरे के पदार्थों को हरनेवाला है, उसका विनाश करो, ऐसे युद्ध के बीच विजय **(सादि)** साधना चाहिये॥ १८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। राजपुरुषों को चाहिये कि जैसे सूर्य अन्धकार को वैसे अन्याय को निवृत्त कर सज्जनों के हृदयों में सुख की प्राप्ति करा निरन्तर बल बढ़ावें॥ १८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सनेम ये त ऊतिभिस्तरन्तो विश्वाः स्पृध आर्येण दस्यून्।
अस्मभ्यं तत्त्वाष्ट्रं विश्वरूपमरन्धयः साख्यस्य त्रिताय॥ १९॥

सनेम। ये। ते। ऊतिऽभिः। तरन्तः। विश्वाः। स्पृधः। आर्येण। दस्यून्। अस्मभ्यम्। तत्। त्वाष्ट्रम्। विश्वऽरूपम्। अरन्धयः। साख्यस्य। त्रिताय॥ १९॥

पदार्थः-(**सनेम**) विभेजम (**ये**) (**ते**) तव (**ऊतिभिः**) रक्षणादिकर्त्रीभिः सेनाभिः (**तरन्तः**) उल्लङ्घमानाः (**विश्वाः**) सर्वान् (**स्पृधः**) स्पर्द्धमानान् (**आर्येण**) उत्तमविद्याधर्मसामर्थ्येन (**दस्यून्**) बलात्कारेण परस्वापहर्त्तॄन् (**अस्मभ्यम्**) (**तत्**) (**त्वाष्ट्रम्**) त्वष्ट्रानिर्मितम् (**विश्वरूपम्**) विविधस्वरूपम् (**अरन्धयः**) हिंस (**साख्यस्य**) सख्युः कर्मणो भावस्य निर्माणस्य (**त्रिताय**) त्रिविधानां शारीरिकवाचिकमानसानां सुखानां प्राप्तिर्यस्य तस्मै॥१९॥

अन्वयः-हे सेनेश! ये ते तवोतिभिर्विश्वास्स्पृधस्तरन्तो वयं त्रितायाऽऽर्येण सह दस्यून् विजयेमहि। यत्साख्यस्य विश्वरूपं त्वाष्ट्रं सनेम तत्तत्त्वमस्मभ्यं सम्पादय दस्यूनरन्धयः॥१९॥

भावार्थः-ये मनुष्याः कृतज्ञं विद्वांसं सेनापतिमधिकृत्य श्रेष्ठैः पुरुषैः सह कर्त्तव्याऽकर्त्तव्ये सुनिश्चित्य प्रजासुखं साधयेयुस्ते सर्वाणि सुखानि लभेरन्॥१९॥

पदार्थः-हे सेनापति! (**ये**) जो (**ते**) आपकी (**ऊतिभिः**) रक्षा आदि कामों को करनेवाली सेनाओं से (**विश्वाः**) समस्त (**स्पृधः**) स्पर्द्धा करनेवालों को (**तरन्तः**) उल्लङ्घन करते हुए हम लोग (**त्रिताय**) त्रिविध अर्थात् शारीरिक, वाचिक और मानसिक सुख जिसको प्राप्त उसके लिये (**आर्येण**) उत्तम विद्या और धर्म सामर्थ्य के साथ (**दस्यून्**) डाकुओं को जीते, जो (**साख्यस्य**) मित्रपन वा मित्रकर्म करने का (**विश्वरूपम्**) विविध स्वरूप (**त्वाष्ट्रम्**) प्रकाशमान का रचा हुआ है, उसको (**सनेम**) अलग-अलग करें, (**तत्**) उसको आप (**अस्मभ्यम्**) हम लोगों के लिये सिद्ध करो और डाकुओं को (**अरन्धयः**) नष्ट करो॥१९॥

भावार्थः-जो मनुष्य किये हुए को जाननेवाले विद्वान् को सेनापति का अधिकार कर श्रेष्ठ पुरुषों के साथ कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य कर्मों को अच्छे प्रकार निश्चय कर प्रजासुख की सिद्धि करें, वे सब सुखों को प्राप्त होवें॥१९॥

अथ सूर्यदृष्टान्तेन राजधर्ममाह॥

अब सूर्य के दृष्टान्त से राजधर्म को कहते हैं॥

अस्य सुवानस्य मन्दिनस्त्रितस्य न्यर्बुदं वावृधानो अस्तः।

अवर्तयत् सूर्यो न चक्रं भिनद्वलमिन्द्रो अङ्गिरस्वान्॥२०॥

अस्य। सुवानस्य। मन्दिनः। त्रितस्य। नि। अर्बुदम्। ववृधानः। अस्तरित्यस्तः। अवर्तयत्। सूर्यः। न। चक्रम्। भिनत्। वलम्। इन्द्रः। अङ्गिरस्वान्॥२०॥

पदार्थः-(**अस्य**) (**सुवानस्य**) ऐश्वर्यजनकस्य (**मन्दिनः**) सर्वस्याऽऽनन्दस्य जनयितुः (**त्रितस्य**) त्रिभिरुत्तममध्यमनिकृष्टोपायैर्युक्तस्य (**नि**) नितराम् (**अर्वुदम्**) एतत्सङ्ख्याकं सैन्यम्

(वावृधानः) वर्द्धयमानः **(अस्तः)** प्रक्षिप्तः **(अवर्त्तयत्)** वर्त्तयति **(सूर्यः)** सविता **(न)** इव **(चक्रम्)** भूगोलसमूहम् **(भिनत्)** भिनत्ति **(बलम्)** मेघम्। **बलमिति मेघनामसु पठितम्।** (निघं० १.१०)। **(इन्द्रः)** विद्युत् **(अङ्गिरस्वान्)** अङ्गिरसो वायोः सम्बन्धो विद्यते यस्य सः॥२०॥

अन्वयः-हे विद्वन्नस्य सुवानस्य मन्दिनस्त्रितस्याऽर्बुदं वावृधानोऽस्तश्चक्रं सूर्यो नावर्त्तयत् स त्वं यथाऽङ्गिरस्वानिन्द्रो बलम् भिनत्तथा वर्त्तस्व॥२०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये राजजना यथा सूर्योऽसङ्ख्यातांल्लोकान् तत्रस्थान् पदार्थान् व्यवस्थापयति वायुप्रेरिता विद्युन्मेघं वर्षयति तथाऽऽचरन्ति ते सर्वतो भद्रमाप्नुवन्ति॥२०॥

पदार्थः-हे विद्वान्! **(अस्य)** इस **(सुवानस्य)** ऐश्वर्य और **(मन्दिनः)** सबको आनन्द उत्पन्न करनेवाले **(त्रितस्य)** तीन उत्तम, मध्यम और निकृष्ट उपायों से युक्त जन की **(अर्वुदम्)** अर्व सेनाओं को **(वावृधानः)** बढ़ाते हुए **(अस्तः)** युद्धक्रिया में प्रेरणा को प्राप्त **(चक्रम्)** भूगोलों के समूहों को **(सूर्यः)** सूर्य **(न)** जैसे वैसे **(अवर्त्तयत्)** वर्त्तते हो सो आप जैसे **(अङ्गिरस्वान्)** पवन का सम्बन्ध जिसके विद्यमान वह **(इन्द्रः)** बिजुली **(बलम्)** मेघ को **(नि, भिनत्)** छिन्न-भिन्न करती, वैसे वर्तो॥२०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजजन जैसे सूर्य असंख्यात लोकों और उनके बीच रहनेवाले पदार्थों की व्यवस्था करता है वा पवन की प्रेरणा दी हुई बिजुली मेघ को वर्षाती है, वैसे आचरण करते हैं, वे सब से कल्याण को प्राप्त होते हैं॥२०॥

पुनर्विद्वद्विषयमाह॥

फिर उसी विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

नूनं सा ते प्रति वरं जरित्रे दुहीयदिन्द्र दक्षिणा मघोनी।
शिक्षा स्तोतृभ्यो माति धग्भगो नो बृहद्वदेम विदथे सुवीराः॥२१॥६॥१॥

नूनम्। सा। ते। प्रति। वरम्। जरित्रे। दुहीयत्। इन्द्र। दक्षिणा। मघोनी। शिक्ष। स्तोतृऽभ्यः। मा। अति। धक्। भगः। नः। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीराः॥२१॥

पदार्थः-**(नूनम्)** निश्चितम् **(सा)** वक्ष्यमाणा **(ते)** तव **(प्रति)** **(वरम्)** श्रेष्ठम् **(जरित्रे)** विद्यास्तावकाय **(दुहीयत्)** प्रतिपादयन् **(इन्द्र)** दातः **(दक्षिणा)** बलकारिणी **(मघोनी)** परमपूजितधनयुक्ता **(शिक्ष)** अनुशास्ति **(स्तोतृभ्यः)** **(मा)** निषेधे **(अति)** **(धक्)** दहति **(भगः)**

धनम् **(नः)** अस्मभ्यम् **(बृहत्)** विस्तीर्णम् **(वदेम)** **(विदथे)** सङ्ग्रामे **(सुवीराः)** शोभनाश्च ते वीराश्च ते॥२१॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यस्य ते दक्षिणा मघोनी नीतिर्जरित्रे वरं सुखं नूनं प्रति दुहीयत्स्तोतृभ्यः शिक्ष मातिधक् सा नो बृहद्भगः प्रापयति तां प्राप्य सुवीरा वयं विदथे वदेम॥२१॥

भावार्थः-ये सर्वेषां विद्यादात्रे सत्योपदेशकर्त्रे पुष्कलां वरां दक्षिणा ददति ते विद्वांसो भूत्वा शूरवीरा जायन्ते॥२१॥

अस्मिन्सूक्ते राजधर्मविद्वत्सेनापतिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वितीयमण्डले एकादशं सूक्तं प्रथमोऽनुवाकः षष्ठो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** विद्या देनेवाले! जिन **(ते)** आपकी **(दक्षिणा)** बल करनेवाली **(मघोनी)** परमपूजित धनयुक्त नीति **(जरित्रे)** विद्या की स्तुति करनेवाले के लिये **(वरम्)** श्रेष्ठ को **(नूनम्)** निश्चय से **(प्रति, दुहीयत्)** पूरा करती हुई **(स्तोतृभ्यः)** स्तुति करनेवालों के लिये **(शिक्ष)** शिक्षा देती है **(मा, अति, धक्)** नहीं अतीव किसी को दहती, नहीं कष्ट देती **(सा)** वह **(नः)** हमारे लिये **(बृहद्भगः)** विस्तृत धन को प्राप्त कराती है, उस नीति को प्राप्त होकर **(सुवीराः)** सुन्दर वीरजन हम लोग **(विदथे)** संग्राम में **(वदेम)** कहें अर्थात् औरों को उपदेश दें॥२१॥

भावार्थः-जो सबको विद्या देने और सत्योपदेश करनेवाले के लिये बहुत श्रेष्ठ दक्षिणा देते हैं, वे विद्वान् होकर शूरवीर होते हैं॥२१॥

इस सूक्त में राजधर्म विद्वान् और सेनापति के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है यह जानना चाहिये॥

यह दूसरे मण्डल में ग्यारहवाँ सूक्त प्रथम अनुवाक और छठा वर्ग समाप्त हुआ॥

यो जात इत्यस्य पञ्चदशर्चस्य द्वादशस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। इन्द्रो देवता। १-५, १२-१५ त्रिष्टुप्। ६-८, १०, ११ निचृत् त्रिष्टुप्। ९ भुरिक् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ सूर्यगुणानाह॥

अब पन्द्रह ऋचावाले बारहवें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में सूर्य के गुणों का वर्णन करते हैं।

यो जात एव प्रथमो मनस्वान् देवो देवान् क्रतुना पर्यभूषत्।
यस्य शुष्माद्रोदसी अभ्यसेतां नृम्णस्य मह्ना स जनास इन्द्रः॥१॥

यः। जातः। एव। प्रथमः। मनस्वान्। देवः। देवान्। क्रतुना। परिऽअभूषत्। यस्य। शुष्मात्। रोदसी इति। अभ्यसेताम्। नृम्णस्य। मह्ना। सः। जनासः। इन्द्रः॥१॥

पदार्थः-(यः) (जातः) उत्पन्नः **(एव) (प्रथमः)** आदिमो विस्तीर्णो वा **(मनस्वान्)** मनो विज्ञानं विद्यते यस्य सः **(देवः)** द्योतमानः **(देवान्)** प्रकाशितव्यान् दिव्यगुणान् पृथिव्यादीन् **(क्रतुना)** प्रकाशकर्मणा **(पर्य्यभूषत्)** सर्वतो भूषत्यलङ्करोति **(यस्य) (शुष्मात्)** बलात् **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(अभ्यसेताम्)** प्रक्षिप्ते भवतः **(नृम्णस्य)** धनस्य **(मह्ना)** महत्त्वेन **(सः) (जनासः)** विद्वांसः **(इन्द्रः)** दारयिता सूर्य्यः॥१॥

अन्वयः-हे जनासो! यः प्रथमो मनस्वान् जातो देवः क्रतुना देवान् पर्य्यभूषद् यस्य शुष्मान्नृम्णस्य मह्ना रोदसी अभ्यसेतां स इन्द्रः सूर्यलोकोऽस्तीति वेद्यम्॥१॥

भावार्थः-येनेश्वरेण सर्वप्रकाशकः सर्वस्य धर्त्ता स्वप्रकाशाकर्षणाद् व्यवस्थापकः सूर्यलोको निर्मितः स सूर्य्यस्य सूर्योऽस्तीति वेद्यम्॥१॥

पदार्थः-हे **(जनासः)** विद्वन् जनो! **(यः)** जो **(प्रथमः)** प्रथम वा विस्तारयुक्त **(मनस्वान्)** जिसमें विज्ञान वर्त्तमान **(जातः)** उत्पन्न हुआ **(देवः)** प्रकाशमान **(क्रतुना)** अपने प्रकाश कर्म से **(देवान्)** प्रकाशित करने योग्य दिव्यगुणवाले पृथिवी आदि लोकों को **(पर्य्यभूषत्)** सब ओर से विभूषित करता है, **(यस्य)** जिसके **(शुष्मात्)** बल से **(नृम्णस्य)** धन के **(मह्ना)** महत्त्व से **(रोदसी)** आकाश और पृथिवी **(अभ्यसेताम्)** अलग होते हैं **(सः)** वह **(इन्द्रः)** अपने प्रताप से सब पदार्थों को छिन्न-भिन्न करनेवाला सूर्य है, ऐसा जानना चाहिये॥१॥

भावार्थः-जिस ईश्वर ने सबका प्रकाश करने और सबका धारण करनेवाला अपने प्रकाश से युक्त आकर्षण शक्तियुक्त लोकों की व्यवस्था करनेवाला सूर्यलोक बनाया है, वह ईश्वर सूर्य का भी सूर्य है, यह जानना चाहिये॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यः पृथिवीं व्यथमानामदृंहद् यः पर्वतान् प्रकुपिताँ अरम्णात्।
यो अन्तरिक्षं विममे वरीयो यो द्यामस्तभ्नात् स जनास इन्द्रः॥२॥

यः। पृथिवीम्। व्यथमानाम्। अदृंहत्। यः। पर्वतान्। प्रऽकुपितान्। अरम्णात्। यः। अन्तरिक्षम्। विऽममे। वरीयः। यः। द्याम्। अस्तभ्नात्। सः। जनासः। इन्द्रः॥२॥

पदार्थः-(**यः**) (**पृथिवीम्**) विस्तीर्णां भूमिम् (**व्यथमानाम्**) चलन्तीम् (**अदृंहत्**) धरति (**यः**) (**पर्वतान्**) मेघान् (**प्रकुपितान्**) प्रकोपयुक्तान् शत्रूनिव वर्त्तमानान् (**अरम्णात्**) वधति। **रम्णातीति वधकर्मासु पठितम्।** (निघं०२.१९)। (**यः**) (**अन्तरिक्षम्**) द्वयोर्लोकयोर्मध्यस्थमाकाशम् (**विममे**) विशेषेण मिमीते (**वरीयः**) अतिशयेन बहु (**यः**) (**द्याम्**) प्रकाशम् (**अस्तभ्नात्**) स्तभ्नाति धरति (**सः**) (**जनासः**) (**इन्द्रः**)॥२॥

अन्वयः-हे जनासो! यो व्यथमानां पृथिवीमदृंहद् यः प्रकुपितान् पर्वतानरम्णाद् यो वरीयोऽन्तरिक्षं विममे यो द्यामस्तभ्नात् स इन्द्रो वेदितव्यः॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यदीश्वरो विद्युतं सूर्यं वा न रचयेत् तर्हि चलतो महतो भूगोलान् को धरेत् कश्च मेघं वर्षयेत्, कोऽन्तरिक्षं स्वप्रकाशेन पूरयेच्च॥२॥

पदार्थः-हे (**जनासः**) विद्वानो! (**यः**) जो (**व्यथमानाम्**) चलती हुई (**पृथिवीम्**) पृथिवी को (**अदृंहत्**) धारण करता है (**यः**) जो (**प्रकुपितान्**) अत्यन्त कोपयुक्त शत्रुओं के समान वर्त्तमान (**पर्वतान्**) मेघों को (**अरम्णात्**) छिन्न-भिन्न करता (**यः**) जो (**वरीयः**) अत्यन्त बहुत विस्तारवाले (**अन्तरिक्षम्**) पृथिव्यादि दो-दो लोकों के बीच भाग का (**विममे**) विशेषता से मान करता है (**यः**) जो (**द्याम्**) प्रकाश को (**अस्तभ्नात्**) धारण करता है (**सः**) वह (**इन्द्रः**) सब पदार्थों को अपने प्रताप से छिन्न-भिन्न करनेवाला सूर्य जानने योग्य है॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो ईश्वर बिजुली वा सूर्य को न रचे तो चलते हुए बड़े-बड़े भूगोलों को कौन धारण करे, कौन मेघ को वर्षावे और कौन अन्तरिक्ष को अपने प्रकाश से पूरित करे॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यो हत्वाहिमरिणात् सप्त सिन्धून् यो गा उदाजदपधा वलस्य।

यो अश्मनोरन्तरग्निं जजान संवृक्समत्सु स जनास इन्द्रः॥३॥

यः। हत्वा। अहिम्। अरिणात्। सप्त। सिन्धून्। यः। गाः। उतऽआजत्। अपऽधा। वलस्य। यः। अश्मनोः। अन्तः। अग्निम्। जजान। सम्ऽवृक्। समत्ऽसु। सः। जनासः। इन्द्रः॥३॥

पदार्थः-(**यः**) (**हत्वा**) (**अहिम्**) मेघम् (**अरिणात्**) गमयति (**सप्त**) सप्तविधान् (**सिन्धून्**) समुद्रान् नदीर्वा (**यः**) (**गाः**) पृथिवीः (**उदाजत्**) ऊर्ध्वं क्षिपति (**अपधा**) योऽपदधाति सः। अत्र **सुपां सुलुगिति** विभक्तेर्डादेशः। (**बलस्य**) (**यः**) (**अश्मनोः**) पाषाणयोर्मेघयोर्वा (**अन्तः**) मध्ये (**अग्निम्**) पावकम् (**जजान**) जनयति (**संवृक्**) यः सम्यग्वर्जयति सः (**समत्सु**) संग्रामेषु (**सः**) (**जनासः**) (**इन्द्रः**)॥३॥

अन्वयः-हे जनासो! योऽहिं हत्वा सप्त सिन्धूनरिणाद् यो गा उदाजद् यो बलस्यापधा योऽश्मनोरन्तरग्निं जजान समत्सु संवृगस्ति स इन्द्रोऽस्तीति वेद्यम्॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः सूर्यलोको मेघं वर्षयित्वा समुद्रान् भरति सर्वान् भूगोलान् स्वं प्रत्याकर्षति स्वकिरणैर्मेघस्य सन्निहितस्य पाषाणस्य मध्ये उष्णताञ्जनयति सोऽग्निरस्तीति वेद्यम्॥३॥

पदार्थः-हे (**जनासः**) विद्वानो! (**यः**) जो (**अहिम्**) मेघ को (**हत्वा**) मार (**सप्त**) सात प्रकार के (**सिन्धून्**) समुद्रों को वा नदियों को (**अरिणात्**) चलाता है, (**यः**) जो (**गाः**) पृथिवियों को (**उदाजत्**) ऊपर प्रेरित करता अर्थात् एक के ऊपर एक को नियम से चला रहा, (**यः**) जो (**बलस्य**) बल को (**अपधा**) धारण करनेवाला और जो (**अश्मनः**) पाषाणों वा मेघों के (**अन्तः**) बीच (**अग्निम्**) अग्नि को (**जजान**) उत्पन्न करता तथा (**समत्सु**) संग्रामों में (**संवृक्**) सब पदार्थों को अलग कराता है (**सः**) वह (**इन्द्रः**) इन्द्र नामक सूर्यलोक है, यह जानना चाहिये॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो सूर्यलोक मेघ को वर्षाकर समुद्रों को भरता है, सब भूगोलों को अपने प्रति खींचता है, अपनी किरणों से मेघ और समीपस्थ पाषाण के बीच ऊष्मा को उत्पन्न करता है, वह अग्निरूप है, यह जानना चाहिये॥३॥

अथेश्वरविषयमाह॥

अब ईश्वर विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

येनेमा विश्वा च्यवना कृतानि यो दासं वर्णमधरं गुहाकः।
श्वघ्नीव यो जिगीवाँ लक्षमाददर्यः पुष्टानि स जनास इन्द्रः॥४॥

येन॑। इ॒मा। विश्वा॑। च्यव॑ना। कृ॒तानि॑। यः। दास॑म्। वर्ण॑म्। अध॑रम्। गुहा॑। अक॒रित्यकः॑। श्वघ्नीऽइ॑व। यः। जि॒गीवान्। ल॒क्षम्। आद॑त्। अ॒र्यः। पु॒ष्टानि॑। सः। ज॒ना॒सः। इन्द्रः॑॥४॥

पदार्थः-(**येन**) ईश्वरेण (**इमा**) इमानि (**विश्वा**) सर्वाणि भुवनानि (**च्यवना**) प्राप्तानि (**कृतानि**) उत्पादितानि (**यः**) (**दासम्**) दातुं योग्यम् (**वर्णम्**) रूपम् (**अधरम्**) निम्नम् (**गुहा**) गुहायाम् (**अकः**) करोति (**श्वघ्नीव**) या शुनो हन्ति तद्वत् (**यः**) (**जिगीवान्**) जयशीलः (**लक्षम्**) लक्षितुं योग्यम् (**आदत्**) आदत्ते (**अर्य्यः**) ईश्वरः। **अर्य इति ईश्वरनामसु पठितम्।** (निघं०२.२२)। (**पुष्टानि**) दृढानि (**सः**) (**जनासः**) (**इन्द्रः**)॥४॥

अन्वयः-हे जनासो! येनेश्वरेणेमा विश्वा च्यवना पुष्टानि कृतानि यो गुहा वर्णमधरं दासमको यः श्वघ्नीव जिगीवान् लक्षमादत् स इन्द्रोऽर्यो बोध्यः॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। य ईश्वरः कारणाद्विविधान् लोकान् पदार्थांश्च निर्मिमीते यः सर्वेषां कर्माणि लक्षीभूतानि रक्षति स सर्वैरुपासनीयः॥४॥

पदार्थः-हे (**जनासः**) मनुष्यो! (**येन**) जिस ईश्वर ने (**इमा**) ये (**विश्वा**) समस्त (**च्यवना**) प्राप्त हुए लोक (**पुष्टानि**) दृढ़ (**कृतानि**) किये (**यः**) जो (**गुहा**) हृदयाकाश में (**वर्णम्**) रूप को (**अधरम्**) उस हृदय के नीचे (**दासम्**) देने योग्य (**अकः**) करता है और (**यः**) जो (**श्वघ्नीव**) कुत्तों को दण्ड देनेवाली के समान (**जिगीवान्**) जयशील (**लक्षम्**) लक्ष को (**आदत्**) ग्रहण करता है (**सः**) वह (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यवान् (**अर्य्यः**) ईश्वर है, यह जानना चाहिये॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो ईश्वर कारण से विविध प्रकार के लोकों और पदार्थों को रचता और जो सब कर्मों को लक्ष सा रखता है, वह सबको उपासना करने योग्य है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यं स्मा॑ पृ॒च्छन्ति॒ कुह॒ सेति॑ घो॒रमु॒तेमा॑हु॒र्नैषो॑ अ॒स्तीत्ये॑नम्।
सो अ॒र्यः पु॒ष्टीर्विज॑इ॒वा मि॑नाति॒ श्रद॑स्मै धत्त स ज॑नास॒ इन्द्रः॑॥५॥७॥

यम्। स्म॒। पृ॒च्छन्ति॑। कुह॑। सः। इति॑। घो॒रम्। उ॒त। ई॒म्। आ॒हुः॒। न। ए॒षः। अ॒स्ति॒। इति॑। ए॒न॒म्। सः। अ॒र्यः। पु॒ष्टीः। विजः॑ऽइव। आ। मि॒नाति॒। श्रत्। अ॒स्मै॒। ध॒त्त॒। सः। ज॒ना॒सः॒। इन्द्रः॑॥५॥

पदार्थः-(**यम्**) (**स्म**) एव। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**पृच्छन्ति**) (**कुह**) क्व (**सः**) (**इति**) (**घोरम्**) हननम् (**उत**) अपि (**ईम्**) सर्वतः (**आहुः**) कथयन्ति (**न**) निषेधे (**एषः**) (**अस्ति**)

(इति) **(एनम्)** **(सः)** **(अर्यः)** ईश्वरः **(पुष्टीः)** पोषणानि **(विजइव)** भयेन सञ्चलित इव **(आ)** **(मिनाति)** हिनस्ति **(श्रत्)** सत्यम् **(अस्मै)** **(धत्त)** धरत **(सः)** **(जनासः)** **(इन्द्रः)**॥५॥

अन्वयः-हे जनासो! विद्वांसो ये स्म कुह स इतीं पृच्छन्ति उतैनं घोरमाहुरपरे एषो नास्तीति सोऽर्य ईश्वरो विजइव दोषानामिनात्यस्मै जीवाय पुष्टीः श्रच्च दधाति स इन्द्रोऽस्तीति यूयं धत्त॥५॥

भावार्थः-य आश्चर्यगुणकर्मस्वभावः परमेश्वरोऽस्ति तं केचित्क्वास्तीति ब्रुवन्ति केचिदेनं भयङ्करं केचिच्छान्तं केचिदयं नास्तीति बहुधा वदन्ति, सः सर्वस्याधारभूतस्सन् सत्यं धर्मं जीवनोपायाँश्च वेदद्वारोपदिशति स सर्वैरुपासनीयः॥५॥

पदार्थः-हे **(जनासः)** मनुष्यो! विद्वान् **(यम्, स्म)** जिसको **(कुह, सः)** वह कहाँ है **(इति)** ऐसा **(ईम्)** सबसे **(पृच्छन्ति)** पूछते हैं **(उत)** और कोई **(एनम्)** इसको **(घोरम्)** हननरूप हिंसारूप अर्थात् भयङ्कर **(आहुः)** कहते हैं, अन्य कोई **(एषः)** यह **(न, अस्ति)** नहीं है **(इति)** ऐसा कहते हैं **(सः)** **(अर्यः)** ईश्वर **(विजइव)** भय से जैसे कोई सञ्चलित हो चेष्टा करे, वैसे दोषों को **(आ, मिनाति)** अच्छे प्रकार नष्ट करता है और **(अस्मै)** इस जीव के लिये **(पुष्टीः)** पुष्टियों और **(श्रत्)** सत्य को धारण करता **(सः)** वह **(इन्द्रः)** परमैश्वर्यवान् है, इसको तुम **(धत्त)** धारण करो॥५॥

भावार्थः-जो आश्चर्य गुणकर्मस्वभावयुक्त परमेश्वर है, उसको कोई वह कहाँ है, ऐसा कहते हैं, कोई उसको भयङ्कर, कोई शान्त और यह नहीं है, ऐसा बहुत प्रकार से कहते हैं। वह सबका आधारभूत हुआ सत्य धर्म और जीवन के उपायों को वेद के द्वारा उपदेश करता है, वह सबको उपासना करने के योग्य है॥५॥

पुनरीश्वरविषयमाह॥

फिर ईश्वर के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यो र॒ध्रस्य॑ चोदि॒ता यः कृ॒शस्य॒ यो ब्र॒ह्मणो॒ नाध॑मानस्य की॒रेः।
यु॒क्तग्रा॑व्णो॒ यो॑ऽवि॒ता सु॑शि॒प्रः सु॒तसो॑मस्य॒ स ज॑नास॒ इन्द्रः॑॥६॥

यः। र॒ध्रस्य॑। चो॒दि॒ता। यः। कृ॒शस्य॑। यः। ब्र॒ह्मणः॑। नाध॑मानस्य। की॒रेः। यु॒क्तऽग्रा॑व्णः। यः। अ॒वि॒ता। सु॒ऽशि॒प्रः। सु॒तऽसो॑मस्य। सः। ज॒ना॒सः॒। इन्द्रः॑॥६॥

पदार्थः-**(यः)** **(रध्रस्य)** हिंसकस्य **(चोदिता)** प्रेरकः **(यः)** **(कृशस्य)** दुर्बलस्य **(यः)** **(ब्रह्मणः)** **(नाधमानस्य)** सकलैश्वर्यप्रापकस्य **(कीरेः)** सकलविद्यास्तोतुः **(युक्तग्राव्णः)** युक्ता ग्रावाणो मेघाः पाषाणा वा यस्मिँस्तस्य **(यः)** **(अविता)** रक्षकः **(सुशिप्रः)** शोभनानि शिप्राणि

सेवनानि यस्मिन् सः। अत्र शेवृ धातोः पृषोदरादिनेष्टसिद्धिः। **(सुतसोमस्य)** सुता उत्पादिताः सोमाः पदार्था येन तस्य **(सः)** **(जनासः)** **(इन्द्रः)**॥६॥

अन्वयः-हे जनासो! यो रध्रस्य यो कृशस्य यो नाधमानस्य यो ब्रह्मणो युक्तग्राव्णो कीरेश्चोदिता यः सुशिप्रः सुतसोमस्याऽविता स इन्द्रः परमेश्वरोऽस्ति॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! तमेव जगदुत्पत्तिस्थितिप्रलयकर्त्तारं सकलविद्यायुक्तस्य वेदस्य प्रज्ञापकं परमेश्वरं यूयमुपाध्वम्॥६॥

पदार्थः–हे **(जनासः)** मनुष्यो! **(यः)** जो **(रध्रस्य)** हिंसा करनेवाले का **(यः)** जो **(कृशस्य)** दुर्बल का **(यः)** जो **(नाधमानस्य)** समस्त ऐश्वर्य प्राप्त करानेवाले का **(यः)** जो **(ब्रह्मणः)** वेद का **(युक्तग्राव्णः)** और जिसमें मेघ वा पत्थरयुक्त हैं, उस पदार्थ का **(कीरेः)** तथा सकल विद्याओं की स्तुति प्रशंसा करनेहारे का **(चोदिता)** प्रेरणा करनेवाला वा **(यः)** जो **(सुशिप्रः)** ऐसा है कि जिसमें सुन्दर सेवन होते और **(सुतसोमस्य)** जिसने उत्पन्न किये सोमादि अच्छे पदार्थ उसकी **(अविता)** रक्षा करनेवाला है **(सः)** वह **(इन्द्रः)** परमैश्वर्यवान् परमेश्वर है॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! उसी परमेश्वर की उपासना तुम करो कि जो जगत् की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलयकर्त्ता तथा सकल विद्यायुक्त वेद का उत्तम ज्ञान करानेवाला है॥६॥

अथ विद्युद्रूपाऽग्निविषयमाह॥

अब बिजुलीरूप अग्नि के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यस्याश्वासः प्रदिशि यस्य गावो यस्य ग्रामा यस्य विश्वे रथासः।
यः सूर्यं य उषसं जजान यो अपां नेता स जनास इन्द्रः॥७॥

यस्य। अश्वासः। प्रऽदिशि। यस्य। गावः। यस्य। ग्रामाः। यस्य। विश्वे। रथासः। यः। सूर्यम्। यः। उषसम्। जजान। यः। अपाम्। नेता। सः। जनासः। इन्द्रः॥७॥

पदार्थः–**(यस्य)** विद्युदाख्यस्य **(अश्वासः)** व्याप्तिशीला वेगादयो गुणाः **(प्रदिशि)** उपदिशि **(यस्य)** **(गावः)** किरणाः **(यस्य)** **(ग्रामाः)** मनुष्यनिवासाः **(यस्य)** **(विश्वे)** सर्वे **(रथासः)** रमणसाधनाः **(यः)** कारणाख्यो विद्युदग्निः **(सूर्यम्)** सवितृमण्डलम् **(यः)** **(उषसम्)** प्रत्यूषकालम् **(जजान)** जनयति **(यः)** **(अपाम्)** जलानाम् **(नेता)** प्रापकः **(सः)** **(जनासः)** **(इन्द्रः)**॥७॥

अन्वयः-हे जनासो विद्वद्वरा! युष्माभिः प्रदिशि यस्य विश्वेऽश्वासो यस्य विश्वे गावो यस्य विश्वे ग्रामा यस्य विश्वे रथासः यस्सूर्यं य उषसं च जजान योऽपां नेताऽस्ति स इन्द्रो वेदितव्यः॥७॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! यदि भवन्तो वेगाद्यनेकगुणयुक्तं सर्वमूर्त्तद्रव्याधारं शीघ्रगामी विमानादियानवर्षानिमित्तं विद्युदग्निं जानीयुस्तर्हि किं किमुत्तमं कार्य्यं साधितुं न शक्नुयु:॥७॥

पदार्थ:-हे **(जनास:)** विद्वद्वर मनुष्यो! तुमको **(प्रदिशि)** प्रति दिशा के समीप **(यस्य)** जिसके **(विश्वे)** समस्त **(अश्वास:)** व्याप्तिशील वेगादि गुणयुक्त **(यस्य)** जिसके समस्त **(गाव:)** किरणें **(यस्य)** जिसके समस्त **(ग्रामा:)** मनुष्यों के निवास **(यस्य)** जिसके समस्त **(रथास:)** विहार करानेवाले रथ **(य:)** जो कारण बिजुली रूप अग्नि **(सूर्यम्)** सूर्यमण्डल और **(य:)** जो **(उषसम्)** प्रभातकाल को **(जजान)** प्रकट करता वा **(य:)** जो **(अपाम्)** जलों की **(नेता)** प्राप्ति करानेहारा है **(स:)** वह **(इन्द्र:)** पदार्थों का छिन्न-भिन्न करनेवाला बिजुली रूप अग्नि है, यह जानना चाहिये॥७॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! यदि आप लोग वेगादि अनेक गुणयुक्त सर्वमूर्तिमान् पदार्थों के आधाररूप शीघ्रगामी विमान आदि यान और वर्षा निमित्त बिजुलीरूप अग्नि को जानें, तब तो कौन-कौन उत्तम कार्य सिद्ध न कर सकें॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यं क्रन्दसी संयती विह्वयेते परेऽवर उभया अमित्रा:।

समानं चिद्रथमातस्थिवांसा नाना हवेते स जनास इन्द्र:॥८॥

यम्। क्रन्दसी इति। संयती इति सम्ऽयती। विह्वयेते इति विऽह्वयेते। परे। अवरे। उभया:। अमित्रा:। समानम्। चित्। रथम्। आतस्थिऽवांसा। नाना। हवेते इति। स:। जनास:। इन्द्र:॥८॥

पदार्थ:-**(यम्)** सूर्य्यम् **(क्रन्दसी)** रोदनशब्दनिमित्ते **(संयती)** संयमेन गच्छन्त्यौ द्यावापृथिव्यौ **(विह्वयेते)** विस्पर्द्धेते इव **(परे)** प्रकृष्टा: **(अवरे)** अर्वाचीना: **(उभया:)** प्रकाशाऽप्रकाशोभयकोटिसम्बन्धिन: **(अमित्रा:)** शत्रव: **(समानम्)** **(चित्)** इव **(रथम्)** रथादियानम् **(आतस्थिवांसा)** समन्तात्तिष्ठन्तौ **(नाना)** अनेकविधा **(हवेते)** आदत्त: **(स:)** **(जनास:)** **(इन्द्र:)**॥८॥

अन्वय:-हे जनासो विद्याप्रिया! युष्माभि: क्रन्दसी संयती द्यावापृथिव्यौ यं विह्वयेते परेऽवर उभया अमित्रा समानं रथं चिदिव आतस्थिवांसा नाना हवेते गृह्णीत: स इन्द्रो बोध्य:॥८॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कार:। यथा द्वे सेने सम्मुखे स्थित्वा युध्येते तथैव प्रकाशाऽप्रकाशौ वर्त्तेते॥८॥

पदार्थः-हे **(जनासः)** विद्याप्रिय मनुष्यो! तुमको **(क्रन्दसी)** रोने का शब्द कराने **(संयती)** और संयम से जानेवाले प्रकाश और पृथिवी **(यम्)** जिस सूर्यमण्डल को जैसे कोई पदार्थ **(विह्वयेते)** स्पर्द्धा करें, वैसे वा **(परे)** उत्तम **(अवरे)** न्यून **(उभयाः)** अर्थात् प्रकाश और अप्रकाशयुक्त दोनों कोटियों का सम्बन्ध करने **(अमित्राः)** शत्रुजन जैसे **(समानम्)** समान **(रथम्)** रथ आदि यान को **(चित्)** वैसे **(आतस्थिवांसा)** सब ओर से स्थिर **(नाना)** अनेक प्रकार से **(हवेते)** ग्रहण करते हैं **(सः)** वह **(इन्द्रः)** परमैश्वर्यवान् है, यह जानना चाहिये॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे दो सेना सम्मुख खड़ी होकर युद्ध करती हैं, वैसे प्रकाश और अप्रकाश वर्त्तमान हैं॥८॥

अथेश्वरविद्युद्विषयमाह॥

अब ईश्वर और बिजुली के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यस्मा॒न्न ऋ॒ते वि॒जय॑न्ते॒ जना॑सो॒ यं युध्य॑माना॒ अव॑से॒ हव॑न्ते।
यो विश्व॑स्य प्रति॒मानं॑ ब॒भूव॒ यो अ॑च्यु॒त॒च्युत् स ज॑नास॒ इन्द्रः॑॥९॥

यस्मा॑त्। न। ऋ॒ते। वि॒ऽजय॑न्ते। जना॑सः। यम्। युध्य॑मानाः। अव॑से। हव॑न्ते। यः। विश्व॑स्य। प्र॒ति॒ऽमान॑म्। ब॒भूव॑। यः। अ॒च्यु॒त॒ऽच्युत्। सः। ज॒ना॒सः॒। इन्द्रः॑॥९॥

पदार्थः-**(यस्मात्)** **(न)** **(ऋते)** विना **(विजयन्ते)** **(जनासः)** योद्धारः **(यम्)** **(युध्यमानाः)** **(अवसे)** रक्षणाय **(हवन्ते)** **(यः)** परमेश्वरो विद्वान् वा **(विश्वस्य)** संसारस्य **(प्रतिमानम्)** परिमाणसाधकः **(बभूव)** भवति **(यः)** **(अच्युतच्युत्)** योऽच्युतेषु च्यवते ताँश्च्यावयति **(सः)** **(जनासः)** **(इन्द्रः)**॥९॥

अन्वयः-हे जनासो! विद्वांसो जनासो यस्मादृते न विजयन्ते यं युध्यमाना अवसे हवन्ते यो विश्वस्य प्रतिमानं योऽच्युतच्युद् बभूव स इन्द्रोऽस्तीति विजानन्तु॥९॥

भावार्थः-अत्र श्लेषालङ्कारः। ये परमेश्वरन्नोपासन्ते विद्युद्विद्यां न जानन्ति ते विजयिनो न भवन्ति, यदिदं विश्वं यच्च रूपं तत्सर्वं परमेश्वरस्य विद्युतो विज्ञापकमस्ति॥९॥

पदार्थः-हे **(जनासः)** मनुष्यो! **(जनासः)** विद्वान् जन **(यस्मात्)** जिससे **(ऋते)** विना **(न)** नहीं **(विजयन्ते)** विजय को प्राप्त होते हैं **(यम्)** जिसको **(युध्यमानाः)** युद्ध करते हुए **(अवसे)** रक्षा आदि के लिये **(हवन्ते)** ग्रहण करते हैं **(यः)** जो **(विश्वस्य)** संसार का **(प्रतिमानम्)** परिमाणसाधक **(यः)** जो **(अच्युतच्युत्)** स्थिर पदार्थों में चलायमान होता व उन स्थिर पदार्थों को चलानेवाला **(बभूव)** होता **(सः)** वह **(इन्द्रः)** परमैश्वर्यवान् परमेश्वर है, यह जानना चाहिये॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में श्लेषालङ्कार है। जो परमेश्वर की उपासना नहीं करते, बिजुली की विद्या को नहीं जानते, वे विजयशील नहीं होते। जो यह विश्व और जो सब पदार्थों का रूपमात्र है, वह परमेश्वर और बिजुली का विज्ञान करानेवाला है॥९॥

अथेश्वरविषयमाह॥

अब ईश्वर के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यः शश्वतो मह्येनो दधानानमन्यमानाञ्छर्वा जघान।
यः शर्धते नानुददाति शृध्यां यो दस्योर्हन्ता स जनास इन्द्रः॥१०॥८॥

यः। शश्वतः। महि। एनः। दधानान्। अमन्यमानान्। शर्वा। जघान। यः। शर्धते। न। अनुऽददाति। शृध्याम्। यः। दस्योः। हन्ता। सः। जनासः। इन्द्रः॥१०॥

पदार्थः-(**यः**) परमेश्वरः (**शश्वतः**) अनादिस्वरूपान् पदार्थान् (**महि**) महत् (**एनः**) पापम् (**दधानान्**) धरतः (**अमन्यमानान्**) अज्ञानिनः शठान् (**शर्वा**) शासनवज्रेण (**जघान**) हन्ति (**यः**) (**शर्द्धते**) यः शर्द्धं करोति तस्मै (**न**) (**अनुददाति**) (**शृध्याम्**) शब्दकुत्साम् (**यः**) (**दस्योः**) परपदार्थहर्त्तुर्दुष्टस्य (**हन्ता**) (**सः**) (**जनासः**) (**इन्द्रः**)॥१०॥

अन्वयः-हे जनासो विद्वांसो! युष्माभिर्यः शश्वतो धरति मह्येनो दधानानमन्यमानान् पापिष्ठाञ्छर्वा जघान यः शर्द्धते शृध्यां नानुददाति या दस्योर्हन्ताऽस्ति स इन्द्रः सेवनीयः॥१०॥

भावार्थः-यदि परमेश्वरो दुष्टाचारान्न ताडयेद् धार्मिकान्न सत्कुर्याद् दस्यून्न हन्यात् तर्हि न्यायव्यवस्था नश्येत्॥१०॥

पदार्थः-हे (**जनासः**) विद्वान् मनुष्यो! तुम लोगों को (**यः**) जो परमेश्वर (**शश्वतः**) अनादिस्वरूप पदार्थों को धारण करता (**महि**) अत्यन्त (**एनः**) पाप को (**दधानान्**) धारण किये हुए (**अमन्यमानान्**) अज्ञानी शठ पापियों को (**शर्वा**) शासनकारी वज्र से (**जघान**) मारता (**यः**) जो (**शर्द्धते**) कुत्सित निन्दित पापयुक्त शब्द करने अर्थात् उच्चारण करनेवाले के लिये (**शृध्याम्**) शब्द निन्दा न (**अनुददाति**) अनुकूलता से देता है और (**यः**) जो (**दस्योः**) दूसरे के पदार्थों को हरनेवाले दुष्ट को (**हन्ता**) मारनेवाला है (**सः**) वह (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यवान् परमेश्वर सेवने योग्य है॥१०॥

भावार्थः- जो परमेश्वर दुष्टाचारियों को न ताड़ना दे, धार्मिकों का सत्कार न करे और डाकुओं को न मारे तो न्यायव्यवस्था नष्ट हो जाये॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यः शम्बरं पर्वतेषु क्षियन्तं चत्वारिंश्यां शरद्यन्वविन्दत्।
ओजायमानं यो अहिं जघान दानुं शयानं स जनास इन्द्रः॥ ११॥

यः। शम्बरम्। पर्वतेषु। क्षियन्तम्। चत्वारिंश्याम्। शरदि। अनुऽअविन्दत्। ओजायमानम्। यः। अहिम्। जघान। दानुम्। शयानम्। सः। जनासः। इन्द्रः॥ ११॥

पदार्थः-(**यः**) (**शम्बरम्**) मेघम् (**पर्वतेषु**) अभ्रेषु (**क्षियन्तम्**) निवसन्तम् (**चत्वारिंश्याम्**) चत्वारिंशतः पूर्णायाम् (**शरदि**) शरदृतौ (**अन्वविन्दत्**) अनुलभते (**ओजायमानम्**) ओजः पराक्रममिवाचरन्तम् (**यः**) (**अहिम्**) मेघम् (**जघान**) हन्ति (**दानुम्**) दातारम् (**शयानम्**) कृतशयनमिव वर्त्तमानम् (**सः**) (**जनासः**) इन्द्रः॥ ११॥

अन्वयः-हे जनासो धीमन्तो! युष्माभिर्यः पर्वतेषु चत्वारिंश्यां शरदि क्षियन्तं शम्बरमन्वविन्दद् यो दानुं शयानमोजायमानमहिं जघान स इन्द्रो बोध्यः॥ ११॥

भावार्थः-यदि चत्वारिंशद्वर्षाणि वृष्टिर्न स्यात्तर्हि कः प्राणं धर्तुं शक्नुयात्। यदि सूर्यो जलं नाकर्षेन्न धरेन्न वर्षयेत्तर्हि को बलं प्राप्तुमर्हेत्॥ ११॥

पदार्थः-हे (**जनासः**) बुद्धिमान् मनुष्यो! तुमको (**यः**) जो (**पर्वतेषु**) बादलों में (**चत्वारिंश्याम्**) चालीसवीं (**शरदि**) शरद ऋतु में (**क्षियन्तम्**) निवास करते हुए (**शम्बरम्**) मेघ को (**अन्वविन्दत्**) अनुकूलता से प्राप्त होता और (**यः**) जो (**दानुम्**) देनेवाले (**शयानम्**) तथा सोते हुए के समान वर्त्तमान [(**ओजायमानम्**) पराक्रम करनेवाले के समान आचरण करते हुए] (**अहिम्**) मेघ को (**जघान**) मारता है, (**सः**) वह (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यवान् सूर्य जानना चाहिये॥ ११॥

भावार्थः-जो चालीस वर्ष पर्यन्त वर्षा न हो तो कौन प्राण धर सके। जो सूर्य जल को न खींचे, न धारण करे और न वर्षावे तो कौन बल पाने को योग्य हो॥ ११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यः सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मानवासृजत् सर्तवे सप्त सिन्धून्।
यो रौहिणमस्फुरद् वज्रबाहुर्द्यामारोहन्तं स जनास इन्द्रः॥ १२॥

यः। सप्तऽरश्मिः। वृषभः। तुविष्मान्। अवऽअसृजत्। सर्तवे। सप्त। सिन्धून्। यः। रौहिणम्। अस्फुरत्। वज्रऽबाहुः। द्याम्। आऽरोहन्तम्। सः। जनासः। इन्द्रः॥१२॥

पदार्थः-(यः) (सप्तरश्मिः) सप्तविधा रश्मयो यस्य सः **(वृषभः)** मेघशक्तिनिरोधकः **(तुविष्मान्)** बहुबलाकर्षणयुक्तः **(अवासृजत्)** अवसर्जति **(सर्त्तवे)** गन्तुम् **(सप्त)** सप्तविधान् **(सिन्धून्)** नदान् **(यः) (रौहिणम्)** रोहणशीलं मेघम् **(अस्फुरत्)** स्फुरति संचालयति वा **(वज्रबाहुः)** बाहुरिव वज्रः किरणसमूहो यस्य **(द्याम्)** प्रकाशम् **(आरोहन्तम्) (सः) (जनासः) (इन्द्रः)**॥१२॥

अन्वयः-हे जनासो! युष्माभिर्यः सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मान्त्सविता सप्त सिन्धून् सर्त्तवे वासृजत् यो वज्रबाहुर्द्यामारोहन्तं रौहिणमस्फुरत् स इन्द्रः प्रज्ञापनीयः॥१२॥

भावार्थः-यस्मिन् रक्तादिवर्णाः सप्तप्रकाराः किरणाः सन्ति स एव सूर्य्यलोको वृष्टिद्वारा नदी नदानापूरयति पुनरूर्ध्वं जलमाकृष्य धरति पुनर्वर्षति एवमेवेश्वरनियोगेनेदं चक्रं प्रवर्त्तते॥१२॥

पदार्थः-हे **(जनासः)** मनुष्यो! तुमको **(यः)** जो **(सप्तरश्मिः)** सात प्रकार की किरणों से युक्त **(वृषभः)** मेघ की शक्ति को रोकनेवाला **(तुविष्मान्)** बहुत बल से खींचने की शक्ति से युक्त सूर्य्यलोक **(सप्त)** सात **(सिन्धून्)** सिन्धुओं को **(सर्त्तवे)** चलने अर्थात् बहने के लिये **(अवासृजत्)** उत्पन्न करता अर्थात् जल आदि पदार्थों से परिपूर्ण करता है **(यः)** जो **(वज्रबाहुः)** भुजा के तुल्य किरण समूहवाला **(द्याम्)** प्रकाश को **(आरोहन्तम्)** चढ़ते हुए **(रौहिणम्)** चढ़ने के शीलवाले मेघ को **(अस्फुरत्)** फुरती देता वा चलाता है **(सः)** वह **(इन्द्रः)** सूर्यलोक सबको बताने के योग्य है॥१२॥

भावार्थः-जिसमें रक्तादि वर्णयुक्त सात प्रकार के किरण विद्यमान हैं, वही सूर्यलोक वर्षा द्वारा नदी और नदों को अच्छे प्रकार परिपूर्ण करता और फिर ऊपर को जल खींच के धारण करता, फिर वर्षाता है, ऐसे ही ईश्वर के आज्ञारूप नियम से यह संसारचक्र वर्त्तमान है॥१२॥

पुनः सूर्यविषयमाह॥

फिर सूर्य विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

द्यावा चिदस्मै पृथिवी नमेते शुष्माच्चिदस्य पर्वता भयन्ते।
यः सोमपा निचितो वज्रबाहुर्यो वज्रहस्तः स जनास इन्द्रः॥१३॥

द्यावा। चित्। अस्मै। पृथिवी इति। नमेते इति। शुष्मात्। चित्। अस्य। पर्वताः। भयन्ते। यः। सोमऽपाः। निऽचितः। वज्रऽबाहुः। यः। वज्रऽहस्तः। सः। जनासः। इन्द्रः॥१३॥

पदार्थ:-(**द्यावा**) द्यौ: (**चित्**) इव (**अस्मै**) सूर्याय (**पृथिवी**) भूमि: (**नमेते**) प्रभूतं शब्दयेते (**शुष्मात्**) बलात् (**चित्**) अपि (**अस्य**) सूर्य्यस्य (**पर्वता:**) मेघा: (**भयन्ते**) बिभ्यति। अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम्। (**य:**) (**सोमपा:**) य: सोमं रसं पिबति स: (**निचित:**) निश्चितश्चित: (**वज्रबाहु:**) बाहुवत् किरणबल: (**य:**) (**वज्रहस्त:**) वज्रा: किरणा हस्ता यस्य स: (**स:**) (**जनास:**) (**इन्द्र:**)॥१३॥

अन्वय:-हे जनासो! युष्माभिरस्मै द्यावापृथिवी चिन्नमेते अस्य शुष्माच्चित्पर्वता भयन्ते य: सोमपा निचितो वज्रबाहुर्यो वज्रहस्तोऽस्ति स इन्द्रो वेदितव्य:॥१३॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! यस्याकर्षणेन प्रकाशक्षिति नम्रे इव वर्त्तेते मेघा भ्रमन्ति हस्ताभ्यामिव यो रसमूर्ध्वन्नयति तं यथावत्संप्रयुङ्क्त॥१३॥

पदार्थ:–हे (**जनास:**) मनुष्यो! तुमको (**अस्मै**) इस सूर्यमण्डल के लिये (**द्यावापृथिवी**) आकाश और भूमि के समान बृहत् पदार्थ (**चित्**) भी (**नमेते**) अति सामर्थ्ययुक्त शब्दायमान होते हैं (**अस्य**) इस सूर्यमण्डल के (**शुष्मात्**) बल से (**चित्**) ही (**पर्वता:**) मेघ (**भयन्ते**) भयभीत होते हैं (**य:**) जो (**सोमपा:**) रस को पीता (**निचित:**) निरन्तर अनेक पदार्थों से इकट्ठा किया गया और (**य:**) जो (**वज्रबाहु:**) बाहुओं के तुल्य किरण बलयुक्त तथा (**वज्रहस्त:**) जिसकी हाथों के समान किरणें हैं, वह (**इन्द्र:**) सूर्य्यलोक जानने योग्य है॥१३॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जिसके आकर्षण से प्रकाश और क्षिति नमे हुए वर्त्तमान हैं, मेघ भ्रमि रहे हैं, हाथों के समान जो रस को ऊर्ध्व पहुँचाता है, उसका यथावत् अच्छे प्रकार प्रयोग करो॥१३॥

अथेश्वरविषयमाह॥

अब ईश्वर के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

य: सुन्वन्तमवति य: पचन्तं य: शंसन्तं य: शशमानमूती।

यस्य ब्रह्म वर्धनं यस्य सोमो यस्येदं राध: स जनास इन्द्र:॥१४॥

य:। सुन्वन्तम्। अवति। य:। पचन्तम्। य:। शंसन्तम्। य:। शशमानम्। ऊती। यस्य। ब्रह्म। वर्धनम्। यस्य। सोम:। यस्य। इदम्। राध:। स:। जनास:। इन्द्र:॥१४॥

पदार्थ:-(**य:**) (**सुन्वन्तम्**) सर्वस्य सुखायाभिषवं निष्पादयन्तम् (**अवति**) रक्षति (**य:**) (**पचन्तम्**) परिपक्वं कुर्वन्तम् (**य:**) (**शंसन्तम्**) प्रशंसां कुर्वन्तम् (**य:**) (**शशमानम्**) अधर्ममुल्लङ्घमानम् (**ऊती**) रक्षणाद्यया क्रियया (**यस्य**) (**ब्रह्म**) वेद: (**वर्द्धनम्**) (**यस्य**)

जगदीश्वरस्य **(सोमः)** चन्द्रौषधिगणः **(यस्य)** **(इदम्)** **(राधः)** धनम् **(सः)** **(जनासः)** **(इन्द्रः)**॥१४॥

अन्वयः-हे जनासो विद्वांसो! युष्माभिर्यो जगदीश्वरः ऊत्या सुन्वतम् यः पचन्तं कुर्वन्तं यः शंसन्तं यः शशमानं चावति यस्य ब्रह्म वर्द्धनं यस्य सोमो यस्येदं राधोऽस्ति स इन्द्रः सततमुपासनीयः॥१४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन परमात्मना वेदोपदेशद्वारा मनुष्योन्नतिः कृता येन धार्मिका रक्ष्यन्ते दुष्टाचारास्ताड्यन्ते यस्येदं जगत्सर्वमैश्वर्यमस्ति तमात्मसु सततं ध्यायत॥१४॥

पदार्थः-हे **(जनासः)** विद्वान् मनुष्यो! तुम लोगों को **(यः)** जो जगदीश्वर **(ऊती)** रक्षा आदि क्रिया से **(सुन्वन्तम्)** सबके सुख के लिये उत्तम उत्तम पदार्थों के रस निकालते हुए को वा **(यः)** जो **(पचन्तम्)** पक्का करते हुए को वा **(यः)** जो **(शंसन्तम्)** प्रशंसा करते हुए को वा **(यः)** जो **(शसमानम्)** अधर्म को उल्लंघन करते हुए को **(अवति)** रखता है, पालता है **(यस्य)** जिसका **(ब्रह्म)** वेद **(वर्द्धनम्)** वृद्धिरूप **(यस्य)** जिस जगदीश्वर का **(सोमः)** चन्द्रमा और औषधियों का समूह **(यस्य)** जिसका **(इदम्)** यह **(राधः)** धन है **(सः)** वह **(इन्द्रः)** सर्वैश्वर्यवान् जगदीश्वर निरन्तर उपासना करने योग्य है॥१४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस परमात्मा ने वेदोपदेश द्वारा मनुष्यों की उन्नति की वा जिससे धर्मात्मा जन पलते वा जिससे दुष्टाचरण करनेवाले ताड़ना पाते वा जिसका यह सब जगत् ऐश्वर्यरूप है, उसका ध्यान अपने-अपने आत्माओं में निरन्तर करो॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यः सुन्वते पचते दुध्र आ चिद् वाजं दर्दर्षि स किलासि सत्यः।
वयं त इन्द्र विश्वह प्रियासः सुवीरासो विदथमा वदेम॥१५॥९॥

यः। सुन्वते। पचते। दुध्रः। आ। चित्। वाजम्। दर्दर्षि। सः। किल। असि। सत्यः। वयम्। ते। इन्द्र। विश्वह। प्रियासः। सुऽवीरासः। विदथम्। आ। वदेम॥१५॥

पदार्थः-**(यः)** **(सुन्वते)** अभिषवं कुर्वते **(पचते)** परिपक्वं संपादयते **(दुध्रः)** दुःखेन धर्त्तुं योग्यः। अत्र **छान्दसो वर्णलोपो वे**ति वर्णलोपो **घञर्थे कविधानमि**ति धृधातोः कः प्रत्ययः। **(आ)** समन्तात् **(चित्)** अपि **(वाजम्)** सर्वेषां वेगम् **(दर्दर्षि)** भृशं विदृणासि **(सः)** **(किल)** **(असि)** **(सत्यः)** त्रैकाल्याऽबाध्यः **(वयम्)** **(ते)** तव **(इन्द्र)** परमैश्वर्यप्रद **(विश्वह)** विश्वेषु अहस्सु। अत्र

छान्दसो वर्णलोपो वेत्यलोपः **सुपां सुलुगिति** विभक्तेर्लुक्। **(प्रियासः)** प्रीताः कामयमानाः **(सुवीरासः)** शोभना वीरा येषान्ते **(विदथम्)** विज्ञानस्वरूपम् **(आ) (वदेम)** उपदिशेम॥१५॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यो दुध्रस्त्वं सुन्वते पचते वाजमादर्दर्षि स किल त्वं सत्योऽसि तस्य ते विदथं प्रियासः सुवीरासस्सन्तो वयं विश्वह चिदावदेम॥१५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः परमेश्वरो मूर्खैरधर्मात्मभिर्ज्ञातुमशक्यः सर्वस्य जगतः सन्धाता विच्छेदको विज्ञानस्वरूपोऽविनाश्यस्ति तमेव प्रशंसतोपाध्वं च॥१५॥

अत्र सूर्येश्वरविद्युद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वादशं सूक्तं नवमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** परमैश्वर्य के देनेवाले ईश्वर! **(यः)** जो **(दुध्रः)** दुःख से ग्रहण करने योग्य आप **(सुन्वते)** उत्तम-उत्तम पदार्थों का रस निकालते वा **(पचते)** पदार्थों को परिपक्व करते हुए के लिये **(वाजम्)** सबके वेग को **(आ, दर्दर्षि)** सब ओर से निरन्तर विदीर्ण करते हो **(सः)** **(किल)** वही आप **(सत्यः)** सत्य अर्थात् तीन काल में अबाध्य निरन्तर एकता रखनेवाला हैं, उन **(ते)** आपके **(विदथम्)** विज्ञानस्वरूप की **(प्रियासः)** प्रीति और कामना करते हुए **(सुवीरासः)** सुन्दर वीरोंवाले होते हुए हम लोग **(विश्वह)** सब दिनों में **(चित्)** निश्चय से **(आ, वदेम)** उपदेश करें॥१५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो परमेश्वर मूर्ख अधर्मियों से जाना नहीं जा सकता और वह सब जगत् का याथातथ्य रचनेवाला वा विनाश करनेवाला विज्ञानस्वरूप अविनाशी है, उसी की प्रशंसा और उपासना करो॥१५॥

इस सूक्त में सूर्य, ईश्वर और बिजुली के गुणों का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह बारहवां सूक्त और नवमां वर्ग समाप्त हुआ॥

ऋतुरिति त्रयोदशर्चस्य त्रयोदशस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। इन्द्रो देवता। १-३, १०-१२ भुरिक् त्रिष्टुप्। ७, ८ निचृत्त्रिष्टुप्। ९, १३ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४ निचृज्जगती। ५, ६ विराड् जगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथ विद्वद्गुणानाह॥

अब तेरह ऋचावाले तेरहवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में विद्वानों के गुणों का उपदेश करते हैं॥

ऋतुर्जनित्री तस्या अपस्परि मक्षू जात आविशद्यासु वर्धते।
तदाहना अभवत्पिप्युषी पयोंऽशोः पीयूषं प्रथमं तदुक्थ्यम्॥ १॥

ऋतुः। जनित्री। तस्याः। अपः। परि। मक्षु। जातः। आ। अविशत्। यासु। वर्धते। तत्। आहनाः। अभवत्। पिप्युषी। पयः। अंशोः। पीयूषम्। प्रथमम्। तत्। उक्थ्यम्॥ १॥

पदार्थः-(ऋतुः) वसन्तादिः **(जनित्री)** **(तस्याः)** **(अपः)** जलानि **(परि)** सर्वतः **(मक्षु)** सद्यः **(जातः)** **(आ)** समन्तात् **(अविशत्)** विशति **(यासु)** **(वर्द्धते)** **(तत्)** ताः **(आहनाः)** व्याप्ताः **(अभवत्)** भवति **(पिप्युषी)** पानकर्त्री **(पयः)** रसम् **(अंशोः)** अंशात् **(पीयूषम्)** पातुं योग्यम् **(प्रथमम्)** **(तत्)** **(उक्थ्यम्)** उक्थेषु वक्तुं योग्येषु भवम्॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य ऋतुर्जातस्सँस्तदाहना अप आविशत् यासु मक्षु परिवर्द्धते तस्य या जनित्री तस्याः पयः पिप्युष्यभवत् तदंशोर्यत् प्रथमं पीयूषं तदुक्थ्यं सर्वं यूयं प्राप्नुत॥ १॥

भावार्थः-मनुष्यैर्ऋतूनामुत्पादिका विद्युद्वेद्या यस्याः प्रभावाद् मेघा अमृतात्मकं जलं वर्षयन्ति येन सर्वाः प्रजा वर्द्धन्ते सा वेद्या॥ १॥

पदार्थः–हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(ऋतुः)** वसन्तादि ऋतुगण **(जातः)** उत्पन्न हुआ **(तत्)** उन **(आहनाः)** सब पदार्थों में व्याप्त **(अपः)** जलों को **(आ, अविशत्)** सब प्रकार से प्रवेश करता है **(यासु)** जिनमें **(मक्षु)** शीघ्र **(परिवर्द्धते)** सब ओर से बढ़ता है, उसकी जो **(जनित्री)** उत्पन्न करनेवाली समय वेला है **(तस्याः)** उसकी जो **(पयः)** रस का **(पिप्युषी)** पान करनेवाली अन्तर्वेला **(अभवत्)** होती है, उसके **(अंशोः)** अंश से जो **(प्रथमम्)** प्रथम **(पीयूषम्)** पीने योग्य उत्पन्न होता है, उस प्रशंसनीय समस्त अंश को तुम प्राप्त होओ॥ १॥

भावार्थः-मनुष्यों को वसन्तादि ऋतुओं की उत्पन्न करनेवाली बिजुली जाननी चाहिये, जिस बिजुली के प्रभाव से अमृत के समान मेघ जल वर्षाते हैं, जिससे सब प्रजा बढ़ती है, वह जाननी चाहिये॥ १॥

पुनरीश्वरविषयमाह॥

फिर ईश्वर के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स॒ध्रीमा य॑न्ति॒ परि॒ बिभ्र॑तीः॒ पयो॑ वि॒श्वप्स्न्या॑य॒ प्र भ॑रन्त॒ भोज॑नम्।
स॒मा॒नो अध्वा॑ प्र॒वता॑मनु॒ष्यदे॒ यस्ताकृ॑णोः प्रथ॒मं सास्यु॒क्थ्यः॑॥ २॥

स॒ध्री। ई॒म्। आ। य॒न्ति॒। परि॑। बिभ्र॑तीः। पय॑ः। वि॒श्वऽप्स्न्या॑य। प्र। भ॒र॒न्त॒। भोज॑नम्। स॒मा॒नः। अध्वा॑। प्र॒ऽवता॑म्। अ॒नु॒ऽस्यदे॑। यः। ता। अकृ॑णोः। प्र॒थ॒मम्। सः। अ॒सि॒। उ॒क्थ्यः॑॥ २॥

पदार्थः-(**सध्री**) समानस्थानाः (**ईम्**) जलम् (**आ**) (**यन्ति**) समन्तात् प्राप्नुवन्ति (**परि**) सर्वतः (**बिभ्रतीः**) धरन्त्यः पोषयन्त्यः (**पयः**) रसम् (**विश्वप्स्न्याय**) विश्वस्य पालनाय (**प्र**) (**भरन्त**) भरन्ति (**भोजनम्**) पालनम् (**समानः**) तुल्यः (**अध्वा**) मार्गः (**प्रवताम्**) गच्छताम् (**अनुष्यदे**) आनुकूल्येन किञ्चित्प्रस्रवणाय (**यः**) (**ता**) तानि (**अकृणोः**) कुरु (**प्रथमम्**) (**सः**) (**असि**) (**उक्थ्यः**) प्रशंसितुं योग्यः॥ २॥

अन्वयः-या सध्री पयो बिभ्रतीराप अनुष्यदे विश्वप्स्न्यायेम् पर्यायन्ति भोजनं प्रभरन्त यासां प्रवतां समानोऽध्वास्ति यस्ता प्रथममकृणोः स त्वमुक्थ्योऽसि॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यज्जलं वायुना सह चरति येन सर्वस्य पालनं जायते तत्सदा शोधयत यतो भवन्तः प्रशंसिताः स्युः॥ २॥

पदार्थः-जो (**सध्री**) समान ठहरनेवाले (**पयः**) रस को (**बिभ्रतीः**) धारण किये हुए जल (**अनुष्यदे**) अनुकूलता से किञ्चित्-किञ्चित् झरने के लिये (**विश्वप्स्न्याय**) संसार की पालना के लिये (**ईम्**) सब ओर से (**परि, आ, यन्ति**) पर्याय से प्राप्त होते हैं (**भोजनम्**) पालना को (**प्र, भरन्त**) धारण करते जिन (**प्रवताम्**) जाते हुए जलों का (**समानः**) समान (**अध्वा**) मार्ग है (**यः**) जो (**ता**) उनको (**प्रथमम्**) उत्तम् नियमवान् (**अकृणो**) करते हैं (**सः**) वह आप (**उक्थ्यः**) प्रशंसा करने योग्य (**असि**) हैं॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो जल पवन के साथ चलता है, जिससे सबका पालन होता है, उसको सदा शोधो, जिससे आप लोग प्रशंसित हों॥ २॥

पुनरीश्वरविषयमाह॥

फिर ईश्वर विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अन्वेको॑ वदति॒ यद्ददा॑ति॒ तद्रू॒पा मि॒नन्तद॑पा॒ एक॑ ईयते।

विश्वा एकस्य विनुदस्तितिक्षते यस्ताकृणोः प्रथमं सास्युक्थ्यः॥३॥

अनु। एकः। वदति। यत्। ददाति। तत्। रूपा। मिनन्। तत्ऽअपाः। एकः। ईयते। विश्वाः। एकस्य। विऽनुदः। तितिक्षते। यः। ता। अकृणोः। प्रथमम्। सः। असि। उक्थ्यः॥३॥

पदार्थः-(अनु) (एकः) असहायः **(वदति) (यत्)** यानि **(ददाति) (तत्)** तानि **(रूपा)** रूपाणि **(मिनन्)** हिंसन् **(तदपाः)** तदपः कर्म यस्य सः **(एकः)** असहायः **(ईयते)** प्राप्नोति **(विश्वाः)** अखिलाः **(एकस्य) (विनुदः)** विविधतया प्रेरकस्य **(तितिक्षते)** सहते। अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम्। **(यः) (ता)** तानि **(अकृणोः)** करोति **(प्रथमम्)** विस्तीर्णम् **(सः) (असि) (उक्थ्यः)**॥३॥

अन्वयः-हे जगदीश्वर! भवानेको विश्वा विद्या यदनुवदति तत्सहरूपा मिनन् तदपाः सन्नेक ईयते तितिक्षते यस्ता प्रथममकृणोर्यस्य विनुद एकस्येदं जगदस्ति स त्वमुक्थ्योऽसि॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! योऽद्वितीयो जगदीश्वरोऽस्मत्कल्याणाय सृष्ट्यादौ वेदानुपदिशति जगत्सृष्टिस्थितिप्रलयान् करोति योऽन्तर्य्याम्यपारशक्तिः सर्वानपवादान् सहते तमेव सर्वोत्तमप्रशंसार्थं भगवन्तमुपासीरन्॥३॥

पदार्थः-हे जगदीश्वर! **(एकः)** एकाकी आप **(विश्वाः)** समस्त विद्याओं के **(यत्)** जिन **(अनुवदति)** अनुवादों को करते हैं **(तत्)** वह साथ **(रूपा)** नाना प्रकार के रूपों को **(मिनत्)** छिन्न-भिन्न करते और **(तदपाः)** वही कर्म जिनका ऐसे होते हुए आप **(एकः)** एकाकी **(ईयते)** प्राप्त होते **(तितिक्षते)** सबका सहन करते **(यः)** जो **(ता)** उन उक्त कर्मों का **(प्रथमम्)** विस्तार जैसे हो, वैसे **(अकृणोः)** करते हैं, जिन **(विनुदः)** प्रेरणा करनेवाले **(एकस्य)** एक आपका यह जगत् है **(सः)** वह आप **(उक्थ्यः)** कथनीय जनों में प्रसिद्ध **(असि)** हैं॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो अद्वितीय जगदीश्वर हम लोगों के कल्याण के लिये सृष्टि के आदि में वेदों का उपदेश करता, संसार की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय करता है, जो अन्तर्यामी अपारशक्ति सब अपवादों को सहता है, उसी सर्वोत्तम प्रशंसा योग्य की आप लोग प्रशंसा करें॥३॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

प्रजाभ्यः पुष्टिं विभजन्त आसते रयिमिव पृष्ठं प्रभवन्तमायते।
असिन्वन्दंष्ट्रैः पितुरत्ति भोजनं यस्ताकृणोः प्रथमं सास्युक्थ्यः॥४॥

प्रऽजाभ्यः। पुष्टिम्। विऽभजन्तः। आसते। रयिम्ऽइव। पृष्ठम्। प्रऽभवन्तम्। आऽयते। असिन्वन्। दंष्ट्रैः। पितुः। अत्ति। भोजनम्। यः। ता। अकृणोः। प्रथमम्। सः। असि। उक्थ्यः॥४॥

पदार्थः-(प्रजाभ्यः) **(पुष्टिम्)** पोषणार्हान् पदार्थान् **(विभजन्तः)** विविधतया सेवमानाः **(आसते)** उपविष्टाः सन्ति **(रयिमिव)** श्रियमिव **(पृष्ठम्)** आधारम् **(प्रभवन्तम्)** उत्पद्यमानम् **(आयते)** समीपं प्राप्नुवते **(असिन्वन्)** बध्नन्ति **(दंष्ट्रैः)** दद्भिः **(पितुः)** अन्नम् **(अत्ति)** भक्षयति **(भोजनम्)** भक्षणीयं वस्तु **(यः)** **(ता)** **(अकृणोः)** **(प्रथमम्)** **(सः)** **(असि)** **(उक्थ्यः)**॥४॥

अन्वयः-ये प्रजाभ्यः पुष्टिं विभजन्त आयते प्रभवन्तं पृष्ठं रयिमिवाऽसिन्वन्नासते तैस्सह यो दंष्ट्रैः पितुर्भोजनमत्ति ता प्रथममकृणोः स त्वमुक्थ्योऽसि॥४॥

भावार्थः-ये मनुष्या मनुष्याणां विद्याधनवृद्धये बद्धपरिकराःस्युस्ते सुखिनः सन्तः प्रशंसनीया भवेयुः॥४॥

पदार्थः–जो **(प्रजाभ्यः)** प्रजाजनों के लिये **(पुष्टिम्)** पुष्टि के योग्य पदार्थों को **(विभजन्तः)** विविध प्रकार से सेवन करते हुए जन **(आयते)** समीप प्राप्त हुए जिज्ञासु जन के लिये **(प्रभवन्तम्)** उत्पद्यमान **(पृष्ठम्)** आधार को **(रयिमिव)** धन के समान **(असिन्वन्)** बांधते और **(आसते)** स्थिर होते हैं, उनके साथ **(यः)** जो **(दंष्ट्रैः)** दन्तों से **(पितुः)** अन्न **(भोजनम्)** भोजन के योग्य पदार्थ को **(अत्ति)** भक्षण करते हैं [**(ता)** उन उक्त कर्मों का **(प्रथमम्)** विस्तार जैसे हो, वैसे **(अकृणोः)** करते हैं,]**(सः)** वह आप **(उक्थ्यः)** कहने योग्य जनों में प्रसिद्ध **(असि)** हैं॥४॥

भावार्थः-जो मनुष्य दूसरे मनुष्यों की विद्या और धन की वृद्धि के लिये बद्धपरिकर अर्थात् कटिबद्ध होते हैं, वे सुखी होते हुए प्रशंसनीय हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अधाकृणोः पृथिवीं संदृशे दिवे यो धौतीनामहिहन्नारिणक्पथः।
तं त्वा स्तोमेभिरुदभिर्न वाजिनं देवं देवा अजनन्त्सास्युक्थ्यः॥५॥१०॥

अध। अकृणोः। पृथिवीम्। सम्ऽदृशे। दिवे। यः। धौतीनाम्। अहिऽहन्। अरिणक्। पथः। तम्। त्वा। स्तोमेभिः। उदऽभिः। न। वाजिनम्। देवम्। देवाः। अजनन्। सः। असि। उक्थ्यः॥५॥

पदार्थः-(अध) **(अकृणोः)** करोति **(पृथिवीम्)** भूमिम् **(संदृशे)** सम्यग्द्रष्टुं **(दिवे)** प्रकाशाय **(यः)** **(धौतीनाम्)** धावन्तीनां नदीनाम् **(अहिहन्)** अहेर्मेघस्य हन्तेव शत्रुहन् **(अरिणक्)** विरिणक्ति **(पथः)** मार्गान् **(तम्)** **(त्वा)** त्वाम् **(स्तोमेभिः)** स्तुतिभिः **(उदभिः)** उदकैः **(न)** इव **(वाजिनम्)**

वेगवन्तम् **(देवम्)** दिव्यगुणकर्मस्वभावम् **(देवाः)** देदीप्यमानाः **(अजनन्)** जनयन्ति **(सः)** **(असि)** **(उक्थ्यः)**॥५॥

अन्वयः-हे अहिहन्! यो भवान् धौतीनां पथोऽरिणगध दिवे पृथिवीं संदृशेऽकृणोः। यं त्वा वाजिनं देवं देवा अजनँस्तं त्वामुदभिर्न स्तोमेभिः प्रशंसेम स त्वमुक्थ्योऽसि॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सविता नदीनां मार्गान् जनयति सर्वं मूर्त्तद्रव्यं प्रकाशयति तथा न्यायमार्गान् संचाल्य विद्याशिक्षे यूयं प्रकाशयत॥५॥

पदार्थः-हे **(अहिहन्)** मेघहन्ता सूर्य के समान शत्रुओं को हननेवाले! **(यः)** जो आप **(धौतीनाम्)** धावन करती हुई नदियों के **(पथः)** मार्गों को **(अरिणक्)** अलग-अलग करते हैं **(अध)** इसके अनन्तर **(दिवे)** प्रकाश के लिये **(पृथिवीम्)** भूमि को **(संदृशे)** अच्छे प्रकार देखने को **(अकृणोः)** करते हैं अर्थात् मार्गों को शुद्ध कराते जिन **(त्वा)** आपको **(वाजिनम्)** वेगवान् और **(देवम्)** दिव्य गुण, कर्म, स्वभाववाले को **(देवाः)** देदीप्यमान विद्वान् जन **(अजनन्)** उत्पन्न करते हैं **(तम्)** उन आपको **(उदभिः)** जलों से **(न)** जैसे वैसे **(स्तोमेभिः)** स्तुतियों से हम लोग प्रशंसित करते हैं **(सः)** वह आप **(उक्थ्यः)** कथनीय जनों में प्रसिद्ध **(असि)** हैं॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे मनुष्यो! जैसे सविता नदियों के मार्गों को उत्पन्न करता सब मूर्त्तिमान् द्रव्य को प्रकाशित करता, वैसे न्याय मार्गों को अच्छे प्रकार चला कर विद्या और शिक्षा का प्रकाश तुम करो॥५॥

अथेश्वरविषयमाह॥

अब ईश्वर के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यो भोज॑नं च द॒यसे॑ च व॒र्धन॑मा॒र्द्रादा शुष्कं॒ मधु॑मद् दु॒दोहि॑थ।

स शे॑व॒धिं नि द॑धिषे वि॒वस्व॑ति विश्व॒स्यैक॑ ईशिषे॒ सास्यु॒क्थ्यः॑॥६॥

यः। भोज॑नम्। च॒। द॒यसे॑। च॒। व॒र्धन॑म्। आ॒र्द्रात्। आ। शुष्क॑म्। मधु॑ऽमत्। दु॒दोहि॑थ। सः। शे॒व॒ऽधिम्। नि। द॒धि॒षे॒। वि॒वस्व॑ति। विश्व॑स्य। एक॑ः। ई॒शि॒षे॒। सः। अ॒सि॒। उ॒क्थ्य॑ः॥६॥

पदार्थः-**(यः)** **(भोजनम्)** पालनम् **(च)** पुरुषार्थम् **(दयसे)** **(च)** धरति **(वर्द्धनम्)** **(आर्द्रात्)** **(आ)** समन्तात् **(शुष्कम्)** अस्नेहम् **(मधुमत्)** बहुमधुरगुणयुक्तम् **(दुदोहिथ)** धोक्षि **(सः)** **(शेवधिम्)** निधिम् **(नि)** नितराम् **(दधिषे)** धरसि **(विवस्वति)** सूर्ये **(विश्वस्य)** सर्वस्य जगतः **(एकः)** असहायोऽद्वितीयः **(ईशिषे)** ईश्वरोऽसि **(सः)** **(असि)** **(उक्थ्यः)**॥६॥

अन्वयः-हे जगदीश्वर! य एकस्त्वं विवस्वति विश्वस्य भोजनं च वर्द्धनं च दयसे ईशिषे शुष्कमार्द्रान्मधुमद् दुदोहिथ स त्वं शेवधिं निदधिषे अतः स त्वमुक्थ्योऽसि॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो दयमान ईश्वरः सर्वं जगन्निर्माय संरक्ष्य रक्षणसाधनान् पदार्थान् दत्वा सर्वं विश्वं सुखैः पिपर्त्ति स एक एवोपासितुं योग्योऽस्ति॥६॥

पदार्थः–हे जगदीश्वर! **(यः)** जो **(एकः)** एक असहाय अद्वितीय आप **(विवस्वति)** सूर्य में अभिव्याप्त होते **(विश्वस्य)** समस्त जगत् के **(भोजनम्)** पालन **(च)** और पुरुषार्थ और वृद्धि की **(दयसे)** रक्षा करते **(ईशिषे)** और ईश्वरता को प्राप्त हैं वा **(शुष्कम्)** सूखे पदार्थ को **(आर्द्रात्)** गीले पदार्थ से **(मधुमत्)** मधुर गुणयुक्त **(दुदोहिथ)** परिपूर्ण करते **(सः)** वह आप **(शेवधिम्)** निधिरूप पदार्थ को **(निदधिषे)** निरन्तर धारण करते हैं, इस कारण **(सः)** वह आप **(उक्थ्यः)** प्रशंसनीयों में प्रसिद्ध **(असि)** हैं॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो पालना करता हुआ ईश्वर समस्त जगत् का निर्माण कर और उसी की रक्षा कर सिद्धि करनेवाले पदार्थों को देकर समस्त विश्व को सुखों से परिपूर्ण करता है, वह एक ही उपासना के योग्य है॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यः पुष्पिणीश्च प्रस्वश्च धर्मणाधि दाने व्य१वनीरधारयः।
यश्चासमा अजनो दिद्युतो दिव उरुरूर्वाँ अभितः सास्युक्थ्यः॥७॥

यः। पुष्पिणीः। च। प्रऽस्वः। च। धर्मणा। अधि। दाने। वि। अवनीः। अधारयः। यः। च। असमाः। अजनः। दिद्युतः। दिवः। उरुः। ऊर्वान्। अभितः। सः। असि। उक्थ्यः॥७॥

पदार्थः-**(यः)** **(पुष्पिणीः)** बहूनि पुष्पाणि यासु ताः **(च)** **(प्रस्वः)** प्रसावित्रीः **(च)** **(धर्मणा)** धर्मेण **(अधि)** उपरिभावे **(दाने)** दीयते येन तस्मिन् **(वि)** विशेषेण **(अवनीः)** पृथिवीः **(अधारयः)** धरति **(यः)** **(च)** **(असमाः)** असदृशीः **(अजनः)** जनयति **(दिद्युतः)** तडितः **(दिवः)** प्रकाशमयाँल्लोकान् **(उरुः)** बहुशक्तिः **(ऊर्वान्)** विनश्वरान् पदार्थान् **(अभितः)** **(सः)** **(असि)** **(उक्थ्यः)**॥७॥

अन्वयः-हे जगदीश्वर! यस्त्वं धर्मणा दाने पुष्पिणीश्च प्रस्वश्चावनीरध्यधारयः। योऽसमा दिद्युतो दिवोऽभितो व्यजनः। यश्चोरुरूर्वान् प्रकटयति सोऽस्माभिस्त्वमुक्थ्योऽसि॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येनेश्वरेण बहुपुष्पफलयुक्ता ओषधीः सर्वाधारा पृथिवी विद्युदादयः पदार्था निर्मिताः स एवाऽस्माभिरुपास्योऽस्ति॥७॥

पदार्थः-हे जगदीश्वर! **(यः)** जो आप **(धर्मणा)** धर्म से **(दाने)** देने में **(पुष्पिणीः)** फूलोंवाली **(च)** वा **(प्रस्वः)** फल उत्पन्न करनेवाली लतादिकों **(च)** वा **(अवनीः)** भूमियों को **(अधि, अधारयः)** अधिकता से धारण करते **(यः)** जो **(असमाः)** असमान **(विद्युतः)** बिजुलियों को वा **(दिवः)** प्रकाशमय लोकों को **(अभितः)** सब ओर से **(वि, अजनः)** विशेषता से उत्पन्न करते हैं **(च)** और जो **(उरुः)** बहुशक्तिमान् आप **(ऊर्वान्)** अविनाशी पदार्थों को प्रकट करते हैं **(सः)** वह आप हम लोगों से **(उक्थ्यः)** प्रशंसनीयों में प्रसिद्ध **(असि)** हैं॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस ईश्वर ने बहुत पुष्प और फलयुक्त ओषधी, सबकी आधारभूत पृथिवी और बिजुली आदि पदार्थ उत्पन्न किये हैं, वही आप हम लोगों को उपास्य है॥७॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यो नार्मरं सहवसुं निहन्तवे पृक्षाय च दासवेशाय चावहः।
ऊर्जयन्त्या अपरिविष्टमास्यमुतैवाद्य पुरुकृत्सास्युक्थ्यः॥८॥

यः। नार्मरम्। सहऽवसुम्। निऽहन्तवे। पृक्षाय। च। दासऽवेशाय। च। अवहः। ऊर्जयन्त्याः। अपरिऽविष्टम्। आस्यम्। उत। एव। अद्य। पुरुऽकृत्। सः। असि। उक्थ्यः॥८॥

पदार्थः-**(यः)** **(नार्मरम्)** नृन्मारयति स वायुस्तस्याऽयं सम्बन्ध्यग्निस्तम् **(सहवसुम्)** वसुभिस्सह वर्त्तमानम् **(निहन्तवे)** नितरां हन्तुम् **(पृक्षाय)** सेचनाय **(च)** **(दासवेशाय)** दासाः सेवकाः विशन्ति यस्मिँस्तस्मै **(च)** **(अवहः)** वहति प्राप्नोति **(ऊर्जयन्त्याः)** ऊर्जयन्तीषु बलयन्तीषु साध्यः **(अपरिविष्टम्)** परिवेषरहितम् **(आस्यम्)** मुखम् **(उत)** अपि **(एव)** **(अद्य)** अस्मिन् दिने **(पुरुकृत्)** यः पुरूणि बहूनि वस्तूनि करोति सः **(सः)** **(असि)** अस्ति **(उक्थ्यः)**॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः पुरुकृत् सेनेशः दासवेशाय पृक्षाय च सहवसुं नार्मरमवहः येनास्यमपरिविष्टमुतापि ऊर्जयन्त्या आपश्च स एवाद्योक्थ्योऽसीति यूयं विजानीत॥८॥

भावार्थः-ये सज्जना भृत्यान् सेवकांश्चेष्टं भोजनादिकं दत्वा नन्दयन्ति ते स्तुतिभाजो भूत्वा बहून् भोगाँल्लभन्ते॥८॥

पदार्थः–हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(पुरुकृत्)** बहुत वस्तुओं को करनेवाला सेनापति विद्वान् **(दासवेशाय)** जिसमें सेवक प्रवेश करते उसके लिये और **(पृक्षाय)** सेचन करने के लिये **(च)** भी **(सहवसुम्)** धनादि पदार्थों के साथ वर्त्तमान **(नार्मरम्)** मनुष्यों को मरवा देनेवाले पवन के सम्बन्धित अग्नि को **(अवहः)** प्राप्त होता है, जिससे **(आस्यम्)** मुख **(अपरिविष्टम्)** परिवेष परसने के कर्म से रहित हुआ हो **(उत)** और **(ऊर्जयन्त्याः)** बलवती सामग्रियों में उत्तम जल **(च)** भी विद्यमान है **(सः, एव)** वही सेनापति **(अद्य)** आज **(उक्थ्यः)** कथनीय पदार्थों में **(असि)** है, यह तुम लोग जानो॥८॥

भावार्थः-जो राजजन भृत्यों को और सेवकों की श्रेष्ठ भोजनादि देकर आनन्दित करते हैं, वे स्तुति सेवनेवाले होकर बहुत भोगों को प्राप्त होते हैं॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

शतं वा यस्य दश साकमाद्य एकस्य श्रुष्टौ यद्ध चोदमाविथ।
अरज्जौ दस्यून्त्समुनब्दभीतये सुप्राव्यो अभवः सास्युक्थ्यः॥९॥

शतम्। वा। यस्य। दश। साकम्। आ। अद्यः। एकस्य। श्रुष्टौ। यत्। ह। चोदम्। आविथ। अरज्जौ। दस्यून्। सम्। उनप्। दभीतये। सुप्रऽअव्यः। अभवः। सः। असि। उक्थ्यः॥९॥

पदार्थः-**(शतम्)** **(वा)** **(यस्य)** **(दश)** **(साकम्)** **(आ)** **(अद्यः)** अत्तुं योग्यः **(एकस्य)** असहायस्य **(श्रुष्टौ)** प्राप्तव्ये सुखे **(यत्)** यः **(ह)** किल **(चोदम्)** प्रेरणाम् **(आविथ)** अवति **(अरज्जौ)** असृष्टौ **(दस्यून्)** दुष्टाचारान् मनुष्यान् **(सम्)** सम्यक् **(उनप्)** उम्भति पूरयति **(दभीतये)** मारणाय **(सुप्राव्यः)** सुष्ठु प्रकाशेन रक्षितुं योग्यः **(अभवः)** भवसि **(सः)** **(असि)** **(उक्थ्यः)**॥९॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यस्य ते दश शतं वा योद्धारस्साकं वर्त्तन्ते यद्वाद्य एकस्य श्रुष्टौ चोदमाविथ। अरज्ञौ दभीतये हिंसनाय दस्यून् समुनप्सुप्राव्यस्त्वमभवस्तस्मात् स त्वमुक्थ्योऽसि॥९॥

भावार्थः-येन केनचिद् दश शतं वीराः सत्कृत्य रक्षन्ते स चोरादीन्निवारयितुं शक्नोति॥९॥

पदार्थः–हे विद्वान्! **(यस्य)** जिन आपके **(दश शतं वा)** दश सौ [अर्थात्] एक सहस्त्र योद्धा **(साकम्)** साथ में वर्त्तमान हैं वा **(यत्, ह)** जो ही **(अद्यः)** भोजन करने योग्य आप **(एकस्य)** जो सहायरहित है, उसके **(श्रुष्टौ)** पाने योग्य सुख के निमित्त **(चोदम्)** प्रेरणा को **(आविथ)** चाहते हो **(अरज्जौ)** विना किसी रचना विशेष स्थान में **(दभीतये)** मारने के लिये **(दस्यून्)** दुष्टाचारी मनुष्यों को **(समुनप्)** अच्छे प्रकार पूरण करते हो और **(सुप्राव्यः)** सुन्दरता से

प्रकाश के साथ रखने योग्य **(अभवः)** होते हो, इस कारण **(सः)** वह आप **(उक्थ्यः)** अनेक के बीच प्रशंसनीय **(असि)** हो॥९॥

भावार्थः-जिस किसी से एक सहस्र वीर योद्धा सत्कार करके रक्खे जाते हैं, वह चोरादिकों को निवृत्त कर सकता है॥९॥

पुनः प्रकारान्तरेण विद्वद्विषयमाह॥

फिर प्रकारान्तर से विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

विश्वेदनु रोधना अस्य पौंस्यं ददुरस्मै दधिरे कृत्नवे धनम्।
षळस्तभ्ना विष्टिरः पञ्च संदृशः परि परो अभवः सास्युक्थ्यः॥१०॥११॥

विश्वा। इत्। अनु। रोधनाः। अस्य। पौंस्यम्। ददुः। अस्मै। दधिरे। कृत्नवे। धनम्। षट्। अस्तभ्नाः। विऽस्तिरः। पञ्च। सम्ऽदृशः। परि। परः। अभवः। सः। असि। उक्थ्यः॥१०॥

पदार्थः-**(विश्वा)** सर्वाणि **(इत्)** एव **(अनु)** आनुकूल्ये **(रोधनाः)** रोधनानि **(अस्य)** जनस्य **(पौंस्यम्)** पुरुषार्थम् **(ददुः)** ददति **(अस्मै)** **(दधिरे)** दधति **(कृत्नवे)** कर्त्तुम् **(धनम्)** **(षट्)** **(अस्तभ्नाः)** स्तभ्नाति **(विष्टिरः)** ये विशेषेण तरन्ति ते ऋतवः **(पञ्च)** भूतानि **(संदृशः)** ये सम्यक् पश्यन्ति ते **(परि)** सर्वतः **(परः)** प्रकृष्टः **(अभवः)** प्रसिद्धो भवसि **(सः)** **(असि)** **(उक्थ्यः)**॥१०॥

अन्वयः-मनुष्या अस्मै कृत्नवे जनाय षड् विष्टिरः पञ्च संदृशः विश्वा रोधना अनु ददुः धनमित्परि दधिरेऽस्य पौंस्यमनुदधिरे स परो धनमस्तभ्ना अभवः स उक्थ्योऽस्यस्ति॥१०॥

भावार्थः-ये मनुष्या युक्ताहारविहारा जितेन्द्रिया जायन्ते ते सर्वेष्वृतुषु पञ्चभिरिन्द्रियैः सुखानि प्राप्नुवन्ति॥१०॥

पदार्थः-मनुष्य **(अस्मै)** इस **(कृत्नवे)** कर्म करनेवाले मनुष्य के लिये **(षट्, विष्टरः)** छः जो विशेषता से अपने-अपने समय को पार होती हैं वे ऋतुयें **(पञ्च)** और पांच **(संदृशः)** अपने-अपने विषय को देखनेवाले पृथिवी, अप, तेज, वायु, आकाश ये भूत वा पांच कर्मेन्द्रियां **(विश्वा)** सब **(रोधनाः)** रुकावटों को **(अनु ददुः)** अनुकूलता से देते हैं और **(धनम्)** धन को **(इत्)** ही **(परि, दधिरे)** सब ओर से धारण करते हैं **(अस्य)** इसके **(पौंस्यम्)** पुरुषार्थ को अनुकूलता से धारण करते अर्थात् जानते हैं, वह **(परः)** उत्कृष्ट धन को **(अस्तभ्नाः)** रोकता है और **(अभवः)** प्रसिद्ध होता है **(सः)** वह **(उक्थ्यः)** अनेक में प्रशंसनीय **(असि)** है॥१०॥

भावार्थः-जो मनुष्य युक्त आहार-विहार करनेवाले जितेन्द्रिय होते हैं, वे सब ऋतुओं में पाँचों इन्द्रियों से सुखों को प्राप्त होते हैं॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सुप्रवाचनं तव वीर वीर्यं१ यदेकेन क्रतुना विन्दसे वसु।
जातूष्ठिरस्य प्र वयः सहस्वतो या चकर्थ सेन्द्र विश्वास्युक्थ्यः॥११॥

सुऽप्रवाचनम्। तव। वीर। वीर्यम्। यत्। एकेन। क्रतुना। विन्दसे। वसु। जातूऽस्थिरस्य। प्र। वयः। सहस्वतः। या। चकर्थ। सः। इन्द्र। विश्वा। असि। उक्थ्यः॥११॥

पदार्थः-**(सुप्रवाचनम्)** सुष्ठु प्रकृष्टमध्यापनं श्रावणम् वा **(तव)** **(वीर)** प्रशस्तबलयुक्त **(वीर्य्यम्)** पराक्रमम् **(यत्)** **(एकेन)** **(क्रतुना)** कर्मणा प्रज्ञानेन वा **(विन्दसे)** लभसे **(वसु)** द्रव्यम् **(जातूष्ठिरस्य)** कदाचिल्लब्धस्थितेः **(प्र)** **(वयः)** विज्ञानम् **(सहस्वतः)** बलवतः **(या)** यानि **(चकर्थ)** करोषि **(सः)** **(इन्द्र)** परमैश्वर्यप्रापक **(विश्वा)** सर्वाणि **(असि)** **(उक्थ्यः)** प्रशंसितुं योग्यः॥११॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यतस्त्वमुक्थ्योऽसि हे वीर! यस्य जातूष्ठिरस्य सहस्वतस्तव सुप्रवाचनं वीर्यं यद्यस्त्वमेकेन क्रतुना वयो वसु च प्रविन्दसे या विश्वोत्तमानि कर्माणि चकर्थ स त्वमेतेभ्यो नो राजोपदेशकोऽध्यापको वा भव॥११॥

भावार्थः-येषां वेदपारगा अध्यापकाः प्रेम्णा प्रज्ञां प्रयच्छन्ति ते कदाचिदपि दुःखिता निन्दिताश्च न भवन्ति॥११॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** परमैश्वर्य की प्राप्ति करनेवाले! जिस कारण आप **(उक्थ्यः)** प्रशंसा करने योग्य **(असि)** हो, हे **(वीर)** प्रशंसित बलयुक्त! जिन **(जातूष्ठिरस्य)** कभी स्थिर पाये हुए **(सहस्वतः)** बलवान् **(तव)** आपका **(सुप्रवाचनम्)** सुन्दर अति उत्कृष्ट पढ़ाना, श्रवण कराना और **(वीर्यम्)** उत्तम पराक्रम है, **(यत्)** जो आप **(एकेन)** एक **(क्रतुना)** कर्म वा ज्ञान से **(वयः)** विज्ञान और **(वसु)** धन को **(प्रविन्दसे)** प्राप्त होते हैं, **(या)** जिन **(विश्वा)** समस्त उक्त कामों को **(चकर्थ)** करते हैं **(सः)** वह आप उन कामों के लिये हम लोगों के राजा वा उपदेशक वा अध्यापक हूजिये॥११॥

भावार्थः-जिनके वेद के पारङ्गत अध्यापक विद्वान् प्रेम से उत्तम ज्ञान को देते हैं, वे कभी दुःखी वा निन्दित नहीं होते हैं॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अरमयः सरपसस्तराय कं तुर्वीतये च वय्याय च स्रुतिम्।

नीचा सन्तमुदनयः परावृजं प्रान्धं श्रोणं श्रवयन्त्सास्युक्थ्यः॥ १२॥

अरमयः। सरःऽअपसः। तराय। कम्। तुर्वीतये। च। वय्याय। च। स्रुतिम्। नीचा। सन्तम्। उत्। अनयः। पराऽवृजम्। प्र। अन्धम्। श्रोणम्। श्रवयन्। सः। असि। उक्थ्यः॥ १२॥

पदार्थः-(**अरमयः**) रमयसि (**सरपसः**) सराणि सृतान्यपांसि पापानि येन तस्य (**तराय**) उल्लङ्घकाय (**कम्**) सुखम् (**तुर्वीतये**) साधनैर्व्याप्तये (**च**) (**वय्याय**) तन्तुसन्तानकाय (**च**) (**स्रुतिम्**) विविधां गतिम् (**नीचा**) नीचेन (**सन्तम्**) (**उत्**) (**अनयः**) उन्नयेः (**परावृजम्**) परागता वृजस्त्यागकारा यस्मात्तम् (**प्र**) (**अन्धम्**) चक्षुर्विहीनम् (**श्रोणम्**) बधिरम् (**श्रवयन्**) श्रवणं कारयन् (**सः**) (**असि**) (**उक्थ्यः**)॥ १२॥

अन्वयः-हे विद्वँस्त्वं सरपसस्तराय तुर्वीतये च वय्याय च कं स्रुतिं बोधाय परावृजं प्रान्धं श्रोणमिव श्रवयन् नीचा सन्तमुत्तमे व्यवहारेऽरमयः सर्वान्नुदनयोऽस्मात् स त्वमुक्थ्योऽसि॥ १२॥

भावार्थः-यथा शिल्पविदोऽन्याञ्छिल्पविद्यादानेनोत्कृष्टान् सम्पादयन्तोऽन्धं चक्षुष्मन्तमिव संप्रेक्षकान् बधिरं श्रुतिमन्तमिव बहुश्रुतान् कुर्युस्तेऽस्मिञ्जगति पूज्याः स्युः॥ १२॥

पदार्थः-हे विद्वान्! आप (**सरपसः**) जिससे पाप चलाये जाते हैं (**तराय**) उसके उल्लंघन और (**तुर्वीतये**) साधनों से व्याप्त होने के लिये (**च**) और (**वय्याय**) सूत के विस्तार के लिये (**च**) भी [(**कम्**) सुखपूर्वक] (**स्रुतिम्**) नाना प्रकार की चाल को जताइये और (**परावृजम्**) लौट गये हैं त्याग करनेवाले जिससे उस मनुष्य को (**प्रान्धम्**) अत्यन्त अन्धे वा (**श्रोणम्**) बहिरे के समान (**श्रवयन्**) सुनाते हुए (**नीचा**) नीच व्यवहार से (**सन्तम्**) विद्यमान मनुष्य को उत्तम व्यवहार में (**अरमयः**) रमाते हैं तथा सबको (**उदनयः**) उन्नति करते हो, इस कारण (**सः**) वह आप (**उक्थ्यः**) प्रशंसनीय (**असि**) हैं॥ १२॥

भावार्थः-जैसे शिल्पवेत्ता विद्वान् जन औरों को शिल्पविद्या के दान से उत्कृष्ट करते हुए अन्धे को देखते हुए के समान वा बहिरे को श्रवण करनेवाले के समान बहुश्रुत करते हैं, वे इस संसार में पूज्य होते हैं॥ १२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अस्मभ्यं तद्वसो दानाय राधः समर्थयस्व बहु ते वसव्यम्।
इन्द्र यच्चित्रं श्रवस्या अनु द्यून् बृहद्वदेम विदथे सुवीराः॥ १३॥ १२॥

अस्मभ्यम्। तत्। वसो इति। दानाय। राधः। सम्। अर्थयस्व। बहु। ते। वसव्यम्। इन्द्र। यत्। चित्रम्। श्रवस्याः। अनु। द्यून्। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीराः॥ १३॥

पदार्थः-(**अस्मभ्यम्**) (**तत्**) (**वसो**) सुखेषु वासयिता (**दानाय**) (**राधः**) साध्नुवन्ति सुखानि येन तत् (**समर्थयस्व**) समर्थं कुरु (**बहु**) (**ते**) तव (**वसव्यम्**) वसुषु द्रव्येषु भवम् (**इन्द्र**) ऐश्वर्यप्रद (**यत्**) (**चित्रम्**) अद्भुतम् (**श्रवस्याः**) श्रवस्सु श्रवणेषु साधवः (**अनु**) (**द्यून्**) प्रकाशान् (**बृहत्**) महत् (**वदेम**) (**विदथे**) संग्रामे (**सुवीराः**) सुष्ठु शौर्योपेतैर्जनैर्गुणैर्वा युक्ताः॥ १३॥

अन्वयः-हे वसो इन्द्र! यत्ते वसव्यं चित्रं बृहद्बहु राधोऽस्ति तदस्मभ्यं दानाय समर्थयस्व येन श्रवस्याः सुवीरा वयमनुद्यून् विदथे बृहद्वदेम॥ १३॥

भावार्थः-त एव विद्वांसो येऽन्यञ्छरीरात्मबलयोगेन समर्थान् धनाढ्याञ्छूरवीरान् पुरुषार्थिनः संपादयन्ति॥ १३॥

अस्मिन् सूक्ते विद्युद्विद्वदीश्वरगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रयोदशं सूक्तं द्वादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**वसो**) सुखों में वसाने और (**इन्द्र**) ऐश्वर्य देनेवाले विद्वान्! [**जो**] (**ते**) आपके (**वसव्यम्**) धनादि पदार्थों में हुए (**चित्रम्**) अद्भुत (**बृहत्**) बड़ा बढ़ता हुआ (**बहु**) बहुत (**राधः**) सुखसाधक धन है (**तत्**) [वह] (**अस्मभ्यम्**) हमारे लिये (**दानाय**) देने को (**समर्थयस्व**) समर्थ करो, जिससे (**श्रवस्याः**) सुनने के व्यवहारों में उत्तम (**सुवीराः**) सुन्दर शूरतायुक्त मनुष्य व गुणों से युक्त हम लोग (**अनुद्यून्**) प्रत्येक पराक्रमादि के प्रकाशों को (**विदथे**) संग्राम में (**बृहत्**) बहुत (**वदेम**) कहें॥ १३॥

भावार्थः-वे ही विद्वान् हैं जो औरों को शरीर, आत्मा, बल के योग से समर्थ और धनाढ्य, शूरवीर, पुरुषार्थी करते हैं॥ १३॥

इस सूक्त में बिजुली, विद्वान् और ईश्वर के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह तेरहवां सूक्त और बारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अवर्ध्यव इति द्वादशर्चस्य चतुर्दशसूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ३, ४, ९, १०, १२ त्रिष्टुप्। २, ६, ८ निचृत् त्रिष्टुप्। ७ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ५ निचृत्पङ्क्तिः। ११ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ सोमगुणानाह॥

अब बारह ऋचावाले चौदहवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में सोम के गुणों को कहते हैं॥

अध्वर्यवो भरतेन्द्राय सोममामत्रेभिः सिञ्चता मद्यमन्धः।
कामी हि वीरः सदमस्य पीतिं जुहोत वृष्णे तदिदेष वष्टि॥१॥

अध्वर्यवः। भरत। इन्द्राय। सोमम्। आ। अमत्रेभिः। सिञ्चत। मद्यम्। अन्धः। कामी। हि। वीरः। सदम्। अस्य। पीतिम्। जुहोत। वृष्णे। तत्। इत्। एषः। वष्टि॥१॥

पदार्थः-(**अध्वर्यवः**) आत्मनोऽध्वरं कामयमानाः (**भरत**) (**इन्द्राय**) परमैश्वर्याय (**सोमम्**) ओषध्यादिरसम् (**आ**) समन्तात् (**अमत्रेभिः**) पात्रैः (**सिञ्चत**) अत्राऽन्येषामपीति दीर्घः। (**मद्यम्**) हर्षप्रदम् (**अन्धः**) अन्नम् (**कामी**) कामयितुं शीलः (**हि**) खलु (**वीरः**) (**सदम्**) प्राप्तव्यम् (**अस्य**) सोमस्य (**पीतिम्**) पानम् (**जुहोत**) गृह्णीत (**वृष्णे**) बलवर्द्धनाय (**तत्**) तम् (**इत्**) (**एषः**) (**वष्टि**) कामयते॥१॥

अन्वयः-हे अध्वर्यवो! यूयं य एषः कामी वीरो वृष्णेऽस्य पीतिं वष्टि तदित्सदं हि यूयं जुहोतेन्द्रायामत्रेभिर्मद्यमन्धः सोमं सिञ्चत बलमाभरत॥१॥

भावार्थः-ये मनुष्या सर्वरोगहरं बुद्धिबलप्रदं भोजनं पानं च कामयन्ते ते बलिष्ठा वीरा जायन्ते॥१॥

पदार्थः-हे (**अध्वर्यवः**) अपने को यज्ञ कर्मों की चाहना करनेवाले मनुष्यो! तुम जो (**एषः**) यह (**कामी**) कामना करने का स्वभाववाला (**वीरः**) वीर (**वृष्णे**) बल बढ़ाने के लिये (**अस्य**) इस सोमरस के (**पीतिम्**) पान को (**वष्टि**) चाहता है (**तत्, इत्**) उसे (**सदम्**) पाने योग्य सोम (**हि**) को निश्चय से तुम (**जुहोत**) ग्रहण करो (**इन्द्राय**) और परमैश्वर्य के लिये (**अमत्रेभिः**) उत्तम पात्रों से (**मद्यम्**) हर्ष के देनेवाले (**अन्धः**) अन्न को तथा (**सोमम्**) सोम रस को (**सिञ्चत**) सींचो और बल को (**आ, भरत**) पुष्ट करो॥१॥

भावार्थः-जो मनुष्य सर्व रोग हरने, बुद्धि और बल के देनेवाले भोजन और पान अर्थात् उत्तम वस्तु पीने की कामना करते हैं, वे बलिष्ठ वीर होते हैं॥१॥

अथ विद्युद्विषयमाह॥

अब बिजुली के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अध्वर्यवो यो अपो वव्रिवांसं वृत्रं जघानाशन्येव वृक्षम्।
तस्मा एतं भरत तद्वशायँ एष इन्द्रो अर्हति पीतिमस्य॥२॥

अध्वर्यवः। यः। अपः। वव्रिऽवांसम्। वृत्रम्। जघान। अशन्याऽइव। वृक्षम्। तस्मै। एतम्। भरत। तत्ऽवशाय। एषः। इन्द्रः। अर्हति। पीतिम्। अस्य॥२॥

पदार्थः-(**अध्वर्यवः**) आत्मनोऽध्वरमहिंसामिच्छन्तः (**यः**) (**अपः**) जलानि (**वव्रिवांसम्**) आवरकम् (**वृत्रम्**) मेघम् (**जघान**) हन्ति (**अशन्येव**) विद्युता (**वृक्षम्**) (**तस्मै**) (**एतम्**) द्वयम् (**भरत**) (**तद्वशाय**) तत्तत् कामयमानाय (**एषः**) (**इन्द्रः**) ऐश्वर्यवान् (**अर्हति**) योग्यो भवति (**पीतिम्**) पानम् (**अस्य**) सोमलतादिरसस्य॥२॥

अन्वयः-हे अध्वर्यवो! यस्सूर्यो वव्रिवांसं वृत्रमशन्येव वृक्षं जघानापो वर्षति य एष इन्द्रोऽस्य पीतिमर्हति तस्मा तद्वशायैतं भरत॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये सूर्यवद्विद्यां मेघवत्सुखं जनयन्ति सदा पथ्यसेविनस्सन्त ओषधीः सेवन्ते ते परोपकारमपि कर्त्तुमर्हन्ति॥२॥

पदार्थः-हे (**अध्वर्यवः**) अपने को अहिंसा की इच्छा करनेवालो! (**यः**) जो सूर्य (**वव्रिवांसम्**) आवरण करनेवाले (**वृत्रम्**) मेघ को (**अशन्येव**) बिजुली के समान (**वृक्षम्**) वृक्ष को (**जघान**) मारता है अर्थात् दाहशक्ति से भस्म कर देता है और (**अपः**) जलों को वर्षाता तथा जो (**एषः**) यह (**इन्द्रः**) ऐश्वर्यवान् जन (**अस्य**) सोमलतादि रस के (**पीतिम्**) पीने को (**अर्हति**) योग्य होता है, इस कारण (**तद्वशाय**) उन-उन पदार्थों की कामना करनेवाले के लिये (**एतम्**) उक्त पदार्थ द्वय को धारण करो अर्थात् उसके गुणों को अपने मन से निश्चित करो॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो सूर्य के समान विद्या और मेघ के समान सुख की उत्पत्ति करते हैं और सदा पथ्योषधि सेवी हुए ओषधियों का सेवन करते हैं, वे परोपकार करने को भी योग्य होते हैं॥२॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राज विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अध्वर्यवो यो दृभीकं जघान यो गा उदाजदप हि बलं वः।

तस्मा एतमन्तरिक्षे न वातमिन्द्रं सोमैरोर्णुत जूर्न वस्त्रैः॥ ३॥

अध्वर्यवः। यः। दृभीकम्। जघान। यः। गाः। उत्ऽआजत्। अप। हि। बलम्। वरिति वः। तस्मै। एतम्। अन्तरिक्षे। न। वातम्। इन्द्रम्। सोमैः। आ। ऊर्णुत। जूः। न। वस्त्रैः॥ ३॥

पदार्थः-(अध्वर्यवः) यज्ञसम्पादकाः **(यः) (दृभीकम्)** भयकरम् **(जघान)** हन्यात् **(यः) (गाः)** धेनूः **(उदाजत्)** विक्षिपेद्धन्यात् **(अप) (हि) (बलम्) (वः)** वृणोति **(तस्मै) (एतम्)** यज्ञम् **(अन्तरिक्षे) (न)** इव **(वातम्)** वायुम् **(इन्द्रम्)** मेघानां धारकम् **(सोमैः)** ओषधिरसैरैश्वर्यैर्वा **(आ) (ऊर्णुत)** आच्छादयत **(जूः)** जीर्णावस्थां प्राप्तः **(न)** इव **(वस्त्रैः)** वासोभिः॥ ३॥

अन्वयः-हे अध्वर्यवो! यो दृभीकं जघान कं यो गा उदाजद्बलमप वस्तस्मै ह्येतमन्तरिक्षे वातन्नेन्द्रं वस्त्रैर्जूर्न सोमैरोर्णुत॥ ३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये राजपुरुषा भयानकान् गोहत्याकर्त्तॄन् घ्नन्ति, उत्तमान् रक्षन्ति ते निर्भया जायन्ते॥ ३॥

पदार्थः-हे **(अध्वर्यवः)** यज्ञ संपादन करनेवाले जनो! **(यः)** जो **(दृभीकम्)** भयङ्कर प्राणी को **(जघान)** मारता है किसको कि **(यः)** जो **(गाः)** गौओं को **(उदाजत्)** विविध प्रकार से फेंके अर्थात् उठा-उठाय पटक के मारे और **(बलम्)** बल को **(अप, वः)** अपवारण करे रोके **(तस्मै)** उसके लिये **(हि)** ही **(एतम्)** इस यज्ञ को **(अन्तरिक्षे)** अन्तरिक्ष में **(वातम्)** पवन के **(न)** समान वा **(इन्द्रम्)** मेघों की धारणा करनेवाले सूर्य को **(वस्त्रैः)** वस्त्रों से **(जूः)** बुड्ढे के **(न)** समान **(सौमैः)** ओषधियों वा ऐश्वर्यों से **(आ, ऊर्णुत)** आच्छादित करो अर्थात् अपने यज्ञधूम से सूर्य को ढापो॥ ३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राजपुरुष भयानक गोहत्या करनेवालों को मारते हैं और उत्तमों को रक्षा करते हैं, वे निर्भय होते हैं॥ ३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अध्वर्यवो य उरणं जघान नव चख्वांसं नवतिं च बाहून्।
यो अर्बुदमव नीचा बबाधे तमिन्द्रं सोमस्य भृथे हिनोत॥ ४॥

अध्वर्यवः। यः। उरणम्। जघान। नव। चख्वांसम्। नवतिम्। च। बाहून्। यः। अर्बुदम्। अव। नीचा। बबाधे। तम्। इन्द्रम्। सोमस्य। भृथे। हिनोत॥ ४॥

पदार्थ:-(अध्वर्यव:) सर्वस्य प्रियाचरणा: **(य:)** जन: **(उरणम्)** आच्छादकम् **(जघान)** हन्यात् **(नव) (चख्वांसम्)** प्रतिघातम् **(नवतिम्) (च) (बाहून्)** बाहुवत्सहायिन: **(य:) (अर्बुदम्)** एतत्संख्याकम् **(अव) (नीचा)** नीचकर्मकर्त्तॄन् **(बबाधे)** बाधते **(तम्) (इन्द्रम्)** विद्युतमिव सेनेशम् **(सोमस्य)** ऐश्वर्यस्य **(भृथे)** धारणे **(हिनोत)** प्रेरयत॥४॥

अन्वय:-हे अध्वर्यवो विद्वांसो! यूयं य उरणं चख्वांसं जघान नवनवतिं बाहूँश्च जघान यो:ऽर्बुदं नीचावबबाधे तमिन्द्रं सोमस्य भृथे हिनोत॥४॥

भावार्थ:-हे सेनास्थजना! युष्माभिरनेकेषां दुष्टानां ससहायानां नीचकर्मकारिणां जनानां हन्ता राज्यैश्वर्यस्य भर्त्ता सेनेश: कर्त्तव्य:॥४॥

पदार्थ:–हे **(अध्वर्यव:)** सबके प्रियाचरणों को करनेवाले विद्वानो! तुम **(य:)** जो जन **(उरणम्)** आच्छादन करनेवाले **(चख्वांसम्)** मारनेवाले के प्रति मारनेवाले को **(जघान)** मारे और **(नव, नवतिम्)** निन्यानवे **(बाहून्)** बाहुओं के समान सहाय करनेवालों को **(च)** भी मारे **(य:)** जो **(अर्बुदम्)** दशक्रोड़ **(नीचा)** नीचों को **(अव, बबाधे)** विलोता है **(तम्)** उस **(इन्द्रम्)** बिजुली के समान सेनापति को **(सोमस्य)** ऐश्वर्य के **(भृथे)** धारण करने में **(हिनोत)** प्रेरणा देओ॥४॥

भावार्थ:-हे सेनास्थ मनुष्यो! तुमको जो कि अनेक सहाययुक्त दुष्ट करनेवाले दुराचारियों का मारने और राज्यैश्वर्य का पुष्ट करनेवाला हो, वह सेनापति करना चाहिये॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अध्व॑र्यवो॒ य: स्वश्नं॑ ज॒घान॒ य: शुष्ण॑मशु॒षं यो व्यं॑सम्।
य: पिप्रुं॒ नमु॑चिं॒ यो रु॑धि॒क्रां तस्मा॒ इन्द्रा॒यान्ध॑सो जुहोत॥५॥

अध्व॑र्यव:। य:। सु। अश्न॑म्। ज॒घान॑। य:। शुष्ण॑म्। अ॒शु॒षम्। य:। विऽअं॑सम्। य:। पिप्रु॑म्। नमु॑चिम्। य:। रु॒धि॒ऽक्राम्। तस्मै॑। इन्द्रा॑य। अन्ध॑स:। जु॒हो॒त॒॥५॥

पदार्थ:-(अध्वर्यव:) (य:) (सु) सुष्ठु **(अश्नम्)** मेघम् **(जघान) (य:) (शुष्णम्)** शुष्कम् **(अशुषम्)** आर्द्रम् **(य:) (व्यंसम्)** विगता अंसा यस्मात्तम् **(य:) (पिप्रुम्)** पालकम् **(नमुचिम्)** योऽधर्मं न मुञ्चति **(य:) (रुधिक्राम्)** यो रुधीनावरकान् क्रामति तम् **(तस्मै) (इन्द्राय)** सूर्यायेव सेनेशाय **(अन्धस:)** अन्नस्य **(जुहोत)** दत्त॥५॥

अन्वय:-हे अध्वर्यवो! यूयं य: सूर्य: स्वश्नमिव शत्रुं जघान य: शुष्णमशुषं यो व्यंसं करोति य: नमुचिं प्रिप्रुं यो रुधिक्रान्निपातयति तस्मा इन्द्रायान्धसो यूयं जुहोत॥५॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो जनो यथा सूर्यो मेघं धृत्वा वर्षति तथा यो करं गृहीत्वा पुनर्ददाति दुष्टान्निरोध्य श्रेष्ठान्निरोधयति स सेनापतिर्भवितुं योग्यः॥५॥

पदार्थ:-हे **(अध्वर्यव:)** अपने को यज्ञ कर्म की इच्छा करने वा सबके प्रियाचरण करनेवालो! तुम **(य:)** जो जन सूर्य जैसे **(स्वश्नम्)** सुन्दर मेघ को, वैसे शत्रु को **(जघान)** मारता है वा **(य:)** जो **(शुष्णम्)** सूखे पदार्थ को **(अशुषम्)** गीला वा **(य:)** जो **(व्यंसम्)** शत्रु को निर्भुज करता वा **(य:)** जो **(नमुचिम्)** अधर्मात्मा **(पिप्रुम्)** प्रजापालक अर्थात् राजा को वा **(य:)** जो **(रुधिक्राम्)** राज्य व्यवहारों के रोकनेवालों को निरन्तर गिराता है **(तस्मै)** उस **(इन्द्राय)** सूर्य के समान सेनापति के लिये **(अन्धस:)** अन्न **(जुहोत)** देओ॥५॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य जैसे सूर्य मेघ को धारण कर वर्षाता है, वैसे जो कर को लेकर फिर देता है, दुष्टों को रोकवा के श्रेष्ठों को यथा समय रोकता, वह सेनापति होने योग्य है॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अध्वर्यवो यः शतं शम्बरस्य पुरो बिभेदाश्मनेव पूर्वीः।
यो वर्चिनः शतमिन्द्रः सहस्रमपावपद्भरता सोममस्मै॥६॥१३॥

अध्वर्यवः। यः। शतम्। शम्बरस्य। पुरः। बिभेद। अश्मनाऽइव। पूर्वीः। यः। वर्चिनः। शतम्। इन्द्रः। सहस्रम्। अपऽअवपत्। भरत। सोमम्। अस्मै॥६॥

पदार्थ:-**(अध्वर्यव:)** युद्धयज्ञसिद्धिकराः **(य:)** **(शतम्)** **(शम्बरस्य)** शं सुखं वृणोति येन तस्य मेघस्य **(पुर:)** पुराणी **(बिभेद)** भिनत्ति **(अश्मनेव)** यथाऽश्मना घटं तथा **(पूर्वी:)** पूर्वं भूताः प्रजाः **(य:)** **(वर्चिन:)** प्रदीप्तस्य **(शतम्)** **(इन्द्र:)** **(सहस्रम्)** **(अपावपत्)** अधोवपति **(भरत)** धरत। अत्रा**न्येषामपी**ति दीर्घः। **(सोमम्)** ऐश्वर्यम् **(अस्मै)** सेनेशाय॥६॥

अन्वय:-हे अध्वर्यवो! यूयं यः शम्बरस्य शतं पुरो घटमश्मनेव बिभेद य इन्द्रो वर्चिनः शतं सहस्रं च पूर्वीरपावपत्तद्दस्मै सोमं भरत॥६॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सूर्यो विद्युद्वा मेघस्यासंख्याः पुरीश्छिनत्ति पृथिव्यामपरिमितं जलं पातयति तथा यः प्रजार्थमैश्वर्यं धरति तं सततं सत्कुरुत॥६॥

पदार्थः–हे **(अध्वर्यवः)** युद्धरूप यज्ञ की सिद्धि करनेवालो! तुम लोगों में से **(यः)** जो **(शम्बरस्य)** सुख जिससे स्वीकार किया जाता उस मेघ के **(शतम्)** सौ **(पुरः)** पुरों को जैसे घड़े को **(अश्मनेव)** पत्थर से वैसे **(बिभेद)** छिन्न-भिन्न करता है, **(यः)** जो **(इन्द्रः)** ऐश्वर्यवान् **(वर्चिनः)** प्रदीप्त अपने सर्व बल से देदीप्यमान राजा के **(शतम्)** सौ और **(सहस्रम्)** हजार **(पूर्वीः)** पहिले हुई प्रजाओं को **(अपावपत्)** नीचा करता है, **(अस्मै)** इस सेनेश के लिये **(सोमम्)** ऐश्वर्य को **(भरत)** धारण करो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सूर्य वा बिजुली मेघ की असंख्य नगरियों को छिन्न-भिन्न करता है, पृथिवी पर अपरिमित जल वर्षाता है, वैसे जो प्रजा के लिये ऐश्वर्य को धारण करता है, उसका निरन्तर सत्कार करो॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अध्वर्यवो यः शतमा सहस्रं भूम्या उपस्थेऽवपज्जघन्वान्।
कुत्सस्यायोरतिथिग्वस्य वीरान् न्यवृणग्भरता सोममस्मै॥७॥

अध्वर्यवः। यः। शतम्। आ। सहस्रम्। भूम्याः। उपऽस्थे। अवपत्। जघन्वान्। कुत्सस्य। आयोः। अतिथिऽग्वस्य। वीरान्। नि। अवृणक्। भरत। सोमम्। अस्मै॥७॥

पदार्थः-**(अध्वर्यवः)** **(यः)** **(शतम्)** **(आ)** **(सहस्रम्)** असंख्यम् **(भूम्याः)** **(उपस्थे)** **(अवपत्)** वपति **(जघन्वान्)** हन्ति **(कुत्सस्य)** अवक्षेप्तुः **(आयोः)** प्राप्तस्य **(अतिथिग्वस्य)** अतिथीन् गच्छतः **(वीरान्)** शत्रुबलव्यापकान् **(नि)** नितराम् **(अवृणक्)** वृणक्ति **(भरत)** पुष्णीत। अत्रापि दीर्घः। **(सोमम्)** **(अस्मै)**॥७॥

अन्वयः-हे अध्वर्यवो! यूयं यः सूर्यइव भूम्या उपस्थे शतं सहस्रमावपद् दुष्टाञ्जघन्वानतिथिग्वस्यायोः कुत्सस्य वीरान् न्यवृणगस्मै सोमं भरत॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सूर्येण हतो मेघोऽसंख्यान् बिन्दून् वर्षति तथा ये शत्रुसैन्यस्योपरि शस्त्रास्त्राणि वर्षयेयुस्ते विजयमाप्नुयुः॥७॥

पदार्थः-हे **(अध्वर्यवः)** युद्धरूप यज्ञ को सिद्धि करनेवाले जनो! तुम **(यः)** जो सूर्य के समान **(भूम्याः)** भूमि के **(उपस्थे)** ऊपर **(शतम्)** सैकड़ों वा **(सहस्रम्)** सहस्रों वीरों को **(आ, अवपत्)** बोता अर्थात् गिरा देता दुष्टों को **(जघन्वान्)** मारता वा **(अतिथिग्वस्य)** अतिथियों को प्राप्त होनेवाले **(आयोः)** और प्राप्त हुए **(कुत्सस्य)** बाण आदि फेंकनेवाले प्रजापति के **(वीरान्)**

शत्रु बलों को व्याप्त होते वीरों को **(नि, अवृणक्)** निरन्तर वर्जता है **(अस्मै)** इसके लिये **(सोमम्)** ऐश्वर्य को **(भरत)** पुष्ट करो॥७॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सूर्य से छिन्न-भिन्न हुआ मेघ असंख्य बिन्दुओं को वर्षता है, वैसे जो शत्रु सेना पर शस्त्रों को वर्षावे, वह विजय को प्राप्त होवे॥७॥

अथ प्रजाविषयमाह॥

अब प्रजा विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अध्वर्यवो यन्नरः कामयाध्वे श्रुष्टी वहन्तो नशथा तदिन्द्रे।
गभस्तिपूतं भरत श्रुतायेन्द्राय सोमं यज्यवो जुहोत॥८॥

अध्वर्यवः। यत्। नरः। कामयाध्वे। श्रुष्टी। वहन्तः। नशथ। तत्। इन्द्रे। गभस्तिऽपूतम्। भरत। श्रुताय। इन्द्राय। सोमम्। यज्यवः। जुहोत॥८॥

पदार्थ:-**(अध्वर्यवः)** सर्वहितं कामयमानाः **(यत्)** यद्राज्यं धनं वा **(नरः)** नायकाः **(कामयाध्वे)** कामयध्वम् **(श्रुष्टी)** सद्यः। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(वहन्तः)** **(नशथ)** अदृश्या भवथ। अत्राऽ**न्येषामपी**ति दीर्घः। **(तत्)** **(इन्द्रे)** सभेशे **(गभस्तिपूतम्)** गभस्तिभिः किरणैर्वा बाहुभ्यां पवित्रीकृतम् **(भरत)** **(श्रुताय)** प्रशंसितश्रुतिविषयाय **(इन्द्राय)** सभेशाय **(सोमम्)** ओषधिरसमैश्वर्यं वा **(यज्यवः)** सङ्गन्तारः **(जुहोत)** गृह्णीत॥८॥

अन्वय:-हे अध्वर्यवो! नरो यूयं यच्छ्रुष्टी वहन्तः कामयाध्वे नशथ तद्गभस्तिपूतमिन्द्रे भरत। हे यज्यवो! यूयं श्रुतायेन्द्राय सोमं जुहोत॥८॥

भावार्थ:-हे विद्वांसो! यादृशीं विद्यां स्वार्थां कामयध्वं तथान्यार्थामपि कामयन्तां येन सर्वे बह्वैश्वर्य्ययुक्ताः स्युः॥८॥

पदार्थ:-हे **(अध्वर्यवः)** सबका हित चाहनेवाले **(नरः)** नायक मनुष्यो! तुम **(यत्)** जिस राज्य वा धन को **(श्रुष्टी)** शीघ्र **(वहन्तः)** प्राप्त करते हुए **(कामयाध्वे)** उसकी कामना करो **(नशथ)** वा छिपाओ **(तत्)** उस **(गभस्तिपूतम्)** किरणों वा बाहुओं से पवित्र किये हुए को **(इन्द्रे)** सभापति के निमित्त **(भरत)** धारण करो। **(यज्यवः)** सङ्ग करनेवाले जनो! तुम **(श्रुताय)** जिसका प्रशंसित श्रुति विषय है, उस **(इन्द्राय)** सभापति के लिये **(सोमम्)** ओषधियों के रस को वा ऐश्वर्य को **(जुहोत)** ग्रहण करो॥८॥

भावार्थ:-हे विद्वानो! जिस प्रकार की विद्या अपने अर्थ चाहो, वैसे दूसरों के लिये भी चाहो, जिससे सब बहुत ऐश्वर्यवाले हों॥८॥

अथ क्रियाकौशलविषयमाह॥

अब क्रियाकौशल विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अध्वर्यवः कर्तना श्रुष्टिमस्मै वने निपूतं वन उन्नयध्वम्।
जुषाणो हस्त्यमभि वावशे व इन्द्राय सोमं मदिरं जुहोत॥९॥

अध्वर्यवः। कर्तन। श्रुष्टिम्। अस्मै। वने। निऽपूतम्। वने। उत्। नयध्वम्। जुषाणः। हस्त्यम्। अभि। वावशे। वः। इन्द्राय। सोमम्। मदिरम्। जुहोत॥९॥

पदार्थ:-(**अध्वर्यवः**) पुरुषार्थिनः (**कर्त्तन**) कुरुत। अत्राऽन्येषामपीति दीर्घः। (**श्रुष्टिम्**) शीघ्रम् (**अस्मै**) सभेशाय (**वने**) किरणेषु (**निपूतम्**) नितरां पवित्रं दुर्गन्धप्रमादत्वगुणरहितम् (**वने**) किरणेषु (**उत्**) (**नयध्वम्**) उत्कर्षत (**जुषाणः**) प्रीतः सेवमानो वा (**हस्त्यम्**) हस्तेषु साधुम् (**अभि**) आभिमुख्ये (**वावशे**) भृशं कामयते (**वः**) युष्माकम् (**इन्द्राय**) (**सोमम्**) सोमलतादि रसम् (**मदिरम्**) आनन्दप्रदम् (**जुहोत**) दत्त॥९॥

अन्वयः-हे अध्वर्यवो! यूयमस्मै वने श्रुष्टिं निपूतं कर्त्तन वन उन्नयध्वं यो हस्त्यं जुषाणो मदिरं सोममभि वावशे तस्मै वो युष्मभ्यमिन्द्राय चैतज्जुहोत॥९॥

भावार्थ:-ये वैद्याः सूर्यकिरणैर्निष्पन्नमोषधिरसं क्रिययोत्कृष्टं कृत्वा स्वयं सेवन्तेऽन्येभ्यः प्रयच्छन्ति च ते सद्यः स्वकार्यं साद्धुं शक्नुवन्ति॥९॥

पदार्थ:–हे (**अध्वर्यवः**) पुरुषार्थी जनो! तुम (**अस्मै**) इस सभापति के लिये (**वने**) किरणों में (**श्रुष्टिम्**) शीघ्र (**निपूतम्**) निरन्तर पवित्र और दुर्गन्ध वा प्रमादपन से रहित पदार्थ (**कर्त्तन**) करो (**वने**) और किरणों में (**उन्नयध्वम्**) उत्कर्ष देओ, जो (**हस्त्यम्**) हस्तों में उत्तम हुए पदार्थ को (**जुषाणः**) प्रीति करता वा सेवन करता हुआ (**मदिरम्**) आनन्द देनेवाले (**सोमम्**) सोमलतादि रस को (**अभि, वावशे**) प्रत्यक्ष चाहता (**तस्मै**) उस सभापति के लिये और (**वः**) तुम लोगों को (**इन्द्राय**) ऐश्वर्यवान् जन के लिये उक्त पदार्थ को (**जुहोत**) देओ॥९॥

भावार्थ:-जो वैद्य जन सूर्यकिरणों से निष्पन्न हुए ओषधि रस को क्रिया से उत्कृष्ट करके आप सेवते तथा औरों के लिये देते हैं, वे शीघ्र अपने कार्य को कर सकते हैं॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अध्वर्यवः पयसोधर्यथा गोः सोमेभिरीं पृणता भोजमिन्द्रम्।
वेदाहमस्य निभृतं म एतद् दित्सन्तं भूयो यजतश्चिकेत॥१०॥

अध्वर्यवः। पयसा। ऊधः। यथा। गोः। सोमेभिः। ईम्। पृणत। भोजम्। इन्द्रम्। वेद। अहम्। अस्य। निऽभृतम्। मे। एतत्। दित्सन्तम्। भूयः। यजतः। चिकेत॥१०॥

पदार्थः-(अध्वर्यवः) महौषधिनिष्पादकाः **(पयसा)** दुग्धेन **(ऊधः)** स्तनाधारः **(यथा)** **(गोः)** धेनोः **(सोमेभिः)** सोमाद्योषधीभिर्भक्षिताभिः **(ईम्)** जलम् **(पृणत)** तृप्यत। अत्रापि दीर्घः। **(भोजम्)** भोक्तारम् **(इन्द्रम्)** ऐश्वर्यवन्तम् **(वेद)** जानीयाम् **(अहम्)** **(अस्य)** **(निभृतम्)** निश्चितपोषणम् **(मे)** मम **(एतत्)** **(दित्सन्तम्)** दातुमिच्छन्तम् **(भूयः)** बहु **(यजतः)** सङ्गतान् **(चिकेत)** विजानीयात्॥१०॥

अन्वयः-हे अध्वर्यवो! यूयं यथा गोः पयसोधस्तथा सोमेभिरीं पीत्वा पृणत यथा भोजमिन्द्रमहं वेदाऽस्य निभृतं जानीयां तथा यूयं विजानीत यं म एतद्दित्सन्तं यजतश्च यथाहं वेद तथैतं भूयो यश्चिकेत तं पृणत॥१०॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। मनुष्या यथा गावो घासादिकं जग्ध्वा दुग्धं जनयन्ति तथा महौषधीनां संग्रहं कृत्वा श्रेष्ठान्यौषधानि निष्पादयेयुः॥१०॥

पदार्थः-हे **(अध्वर्यवः)** बड़ी-बड़ी औषधियों के सिद्ध करनेवाले जनो! तुम **(यथा)** जैसे **(गोः)** गौ के **(पयसा)** दूध से **(ऊधः)** ऐन भरा होता है, वैसे **(सोमेभिः)** खाई हुई सोमादि ओषधियों के साथ **(ईम्)** जल को पी के **(पृणत)** तृप्त होओ, जैसे **(भोजम्)** भोजन करनेवाले **(इन्द्रम्)** ऐश्वर्यवान् को **(अहम्)** मैं **(वेद)** जानूं, **(अस्य)** इसकी **(निभृतम्)** निश्चित पुष्टि को जानूं, वैसे तुम जानो, जिस **(मे)** मेरे **(एतत्)** इस पूर्वोक्त पदार्थ के **(दित्सन्तम्)** देनेवाले का **(यजतः)** सङ्ग करते हुए जनों को जैसे मैं जानूं, वैसे इस विषय को **(भूयः)** बार-बार जो **(चिकेत)** जाने, उसको तृप्त करो॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जैसे गौवें घास आदि को खाकर दूध उत्पन्न करती हैं, वैसे मनुष्य महौषधियों का संग्रह कर श्रेष्ठ ओषधियों को सिद्ध करें॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अध्वर्यवो यो दिव्यस्य वस्वो यः पार्थिवस्य क्षम्यस्य राजा।

तमूर्दरं न पृणता यवेनेन्द्रं सोमेभिस्तदपो वो अस्तु॥११॥

अध्वर्यवः। यः। दिव्यस्य। वस्वः। यः। पार्थिवस्य। क्षम्यस्य। राजा। तम्। ऊर्दरम्। न। पृणत। यवेन। इन्द्रम्। सोमेभिः। तत्। अपः। वः। अस्तु॥११॥

पदार्थः-(**अध्वर्यवः**) राजसम्बन्धिनः (**यः**) (**दिव्यस्य**) दिवि भवस्य (**वस्वः**) वसोर्धनस्य (**यः**) (**पार्थिवस्य**) पृथिव्यां विदितस्य (**क्षम्यस्य**) क्षमायां साधोः (**राजा**) (**तम्**) (**ऊर्दरम्**) कुसूलम् (**न**) इव (**पृणत**) पूरयत। अत्रापि दीर्घः। (**यवेन**) (**इन्द्रम्**) ऐश्वर्यवन्तम् (**सोमेभिः**) ओषधिभिः (**तत्**) (**अपः**) (**वः**) युष्मभ्यम् (**अस्तु**) भवतु॥११॥

अन्वयः-हे अध्वर्यवो! यो दिव्यस्य वस्वो यः पार्थिवस्य क्षम्यस्य मध्ये वो राजाऽस्तु तमिन्द्रं यवेनोर्दरन्न सोमेभिः पृणत तदपः प्राप्नुत॥११॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये विद्वांसो धान्येन कुसूलमिव विद्यार्थिनां बुद्धीर्विद्यासुशिक्षाभ्यां पिपुरति ते राजसेव्याः स्युः॥११॥

पदार्थः-हे (**अध्वर्यवः**) राजसम्बन्धी विद्वान् जनो! (**यः**) जो (**दिव्यस्य**) प्रकाश में उत्पन्न हुए (**वस्वः**) धन को वा (**यः**) जो (**पार्थिवस्य**) पृथिवी में विदित (**क्षम्यस्य**) सहनशीलता में उत्तम उसके बीच (**वः**) तुम्हारे लिये (**राजा**) राजा (**अस्तु**) हो (**तम्**) उस (**इन्द्रम्**) ऐश्वर्यवान् को (**यवेन**) यव अन्न से जैसे (**ऊर्दरम्**) मटका को वा डिहरा को (**न**) वैसे (**सोमेभिः**) सोमादि ओषधियों से (**पृणत**) पूरो परिपूर्ण करो (**तत्**) उस (**अपः**) कर्म को प्राप्त होओ॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो विद्वान् जन धान्य अन्न से मटका वा डिहरा को जैसे वैसे विद्यार्थियों की बुद्धियों को विद्या और उत्तम शिक्षा से तृप्त करते हैं, वे राजा को सेवने योग्य हों॥११॥

अथेश्वरविषयमाह॥

अब ईश्वर विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अस्मभ्यं तद्वसो दानाय राधः समर्थयस्व बहु ते वसव्यम्।
इन्द्र यच्चित्रं श्रवस्या अनु द्यून् बृहद्वदेम विदथे सुवीराः॥१२॥१४॥

अस्मभ्यम्। तत्। वसो इति। दानाय। राधः। सम्। अर्थयस्व। बहु। ते। वसव्यम्। इन्द्र। यत्। चित्रम्। श्रवस्याः। अनु। द्यून्। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीराः॥१२॥

पदार्थः-(**अस्मभ्यम्**) (**तत्**) (**वसो**) वसुप्रद (**दानाय**) अन्येषां सत्काराय (**राधः**) समृद्धिकरं धनम् (**सम्**) सम्यक् (**अर्थयस्व**) अर्थं कुरुष्व (**बहु**) (**ते**) तव (**वसव्यम्**) वसुषु

पृथिव्यादिषु भवम् **(इन्द्र)** परमैश्वर्ययुक्त **(यत्)** **(चित्रम्)** अद्भुतम् **(श्रवस्याः)** श्रवेभ्योऽन्नेभ्यो हिताय पृथिव्या मध्ये **(अनु)** **(द्यून्)** प्रतिदिनम् **(बृहत्)** महत् **(वदेम)** उपदिशेम **(विदथे)** विज्ञानसंग्राममये यज्ञे **(सुवीराः)**॥१२॥

अन्वयः-हे वसो इन्द्र! सुवीरा वयं यत्ते बहु चित्रं वसव्यं बृहद्राधः श्रवस्या अनुद्यून् विदथे वदेम तदस्मभ्यं दानाय त्वं समर्थयस्व॥१२॥

भावार्थः-सज्जनानां धनमन्येषां सुखाय दुष्टानां च दुःखाय भवति ये धनैश्वर्योन्नतये सर्वदा प्रयतन्ते ते पुष्कलं वैभवं प्राप्नुवन्तीति॥१२॥

अत्र सोमविद्युद्राजप्रजाक्रियाकौशलप्रयोजनवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुर्दशं सूक्तं चतुर्दशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(वसो)** धन देनेवाले **(इन्द्र)** परमैश्वर्ययुक्त! **(सुवीराः)** सुन्दर वीरोंवाले हम लोग जो **(ते)** तुम्हारा **(बहु)** बहुत **(चित्रम्)** अद्भुत **(वसव्यम्)** पृथिवी आदि वसुओं से सिद्ध हुए **(बृहत्)** बहुत **(राधः)** समृद्धि करनेवाले धन को **(श्रवस्याः)** अन्नों के लिये हित करनेवाली पृथिवी के बीच **(अनु द्यून्)** प्रतिदिन **(विदथे)** विज्ञानरूपी संग्राम यज्ञ में **(वदेम)** कहें उसको हमारे लिये देने को आप **(समर्थयस्व)** समर्थ करो॥१२॥

भावार्थः-सज्जनों का धन औरों के सुख के लिये और दुष्टों का धन औरों के दुःख के लिये होता है। जो धन और ऐश्वर्यों की उन्नति के लिये सर्वदा प्रयत्न करते हैं, वे पुष्कल वैभव पाते हैं॥१२॥

इस सूक्त में सोम, बिजुली, राजप्रजा और क्रियाकौशलता के प्रयोजनों के वर्णन से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्तार्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह चौदहवां सूक्त और चौदहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

प्र घेति दशर्चस्य पञ्चदशस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ भुरिक् पङ्क्तिः। ७ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, ४-६, ९, १० त्रिष्टुप्। ३ निचृत् त्रिष्टुप्। ८ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ विद्युत्सूर्यपरमेश्वरविषयमाह॥

अब दश ऋचावाले पन्द्रहवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में विद्वान्, सूर्य और परमेश्वर के विषय को कहते हैं॥[१]

प्र घा न्वस्य महतो महानि सत्या सत्यस्य करणानि वोचम्।
त्रिकद्रुकेष्वपिबत् सुतस्यास्य मदे अहिमिन्द्रो जघान॥१॥

प्र। घ। नु। अस्य। महतः। महानि। सत्या। सत्यस्य। करणानि। वोचम्। त्रिऽकद्रुकेषु। अपिबत्। सुतस्य। अस्य। मदे। अहिम्। इन्द्रः। जघान॥१॥

पदार्थः-(प्र) प्रकृष्टतया **(घ)** एव। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। **(नु)** सद्यः **(अस्य)** जगदीश्वरस्य **(महतः)** पूज्यस्य व्यापकस्य वा **(महानि)** महान्ति पूज्यानि **(सत्या)** सत्यान्यविनश्वराणि **(सत्यस्य)** नाशरहितस्य **(करणानि)** साधनानि कर्माणि वा **(वोचम्)** वच्मि **(त्रिकद्रुकेषु)** त्रिभिः कद्रुकैः विकलनैर्युक्तेषु कर्मसु **(अपिबत्)** पिबति **(सुतस्य)** सम्पादितस्य **(अस्य)** सोमाद्योषधिरसस्य **(मदे)** हर्षे **(अहिम्)** मेघम् **(इन्द्रः)** सूर्यः **(जघान)** हन्ति॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथेन्द्रः सुतस्यास्य त्रिकद्रुकेष्वपिबन्मदेऽहिं जघान तदिदमस्य महतः सत्यस्य जगदीश्वरस्य सत्या महानि करणानि घाहं नु प्रवोचं तथा यूयमवोचत॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या यथा सूर्यः किरणैः सर्वस्य रसं स्वप्रकाशेनोन्नयति शोधयति वा तथौषधिरसं रोगनिवारकत्वेनाऽऽनन्दप्रदं सेवन्ते परमेश्वरस्य सत्यगुणकर्मस्वभावसाधनानुकूलानि कर्माणि कुर्वन्ति त एव सद्यः सुखमश्नुवते॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(इन्द्रः)** सूर्य **(सुतस्य)** संपादित किये हुए **(अस्य)** सोमादि ओषधि के रस को **(त्रिकद्रुकेषु)** तीन प्रकार की विशेष गतियों से युक्त कर्मों में **(अपिबत्)** पीता है और **(मदे)** हर्ष के निमित्त **(अहिम्)** मेघ को **(जघान)** मारता है, इस कर्म को अथवा **(अस्य)** इस **(महतः)** पूज्य वा व्यापक **(सत्यस्य)** नाशरहित जगदीश्वर के **(सत्या)** सत्य अविनाशी **(महानि)**

---

१. संस्कृत में 'विद्युत्' शब्द दिया है, जबकि हिन्दी में 'विद्वान्' कर दिया है।

प्रशंसनीय **(करणानि)** साधन वा कर्मों को **(घ)** ही मैं **(नु)** शीघ्र **(प्रवोचम्)** प्रकर्षता से कहता हूं, वैसे तुम लोग भी कहो॥१॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य जैसे सूर्य किरणों से सबके रस को अपने प्रकाश से उन्नत करता वा शोधता है, वैसे ओषधियों के रस को जो कि रोगनिवारण करने से आनन्द देनेवाला है, उसको सेवते वा परमेश्वर के सत्यगुण, कर्म, स्वभाव और साधनों के अनुकूल कर्मों को करते हैं, वे ही शीघ्र सुख को प्राप्त होते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अवंशे द्यामस्तभायद् बृहन्तमा रोदसी अपृणदुन्तरिक्षम्।
स धारयत् पृथिवीं पप्रथच्च सोमस्य ता मद इन्द्रश्चकार॥२॥

अवंशे। द्याम्। अस्तभायत्। बृहन्तम्। आ। रोदसी इति। अपृणत्। अन्तरिक्षम्। सः। धारयत्। पृथिवीम्। पप्रथत्। च। सोमस्य। ता। मदे। इन्द्रः। चकार॥२॥

पदार्थ:-**(अवंशे)** अविद्यमाने वंश इव वर्त्तमानेऽन्तरिक्षे **(द्याम्)** प्रकाशम् **(अस्तभायत्)** स्तभ्नाति **(बृहन्तम्)** महान्तम् **(आ)** **(रोदसी)** सूर्यभूमी **(अपृणत्)** पृणाति व्याप्नोति **(अन्तरिक्षम्)** आकाशम् **(स:)** **(धारयत्)** धरति **(पृथिवीम्)** **(पप्रथत्)** विस्तारयति **(च)** **(सोमस्य)** उत्पन्नस्य जगतो मध्ये **(ता)** तानि **(मदे)** आनन्दे **(इन्द्र:)** परमेश्वर: **(चकार)** करोषि॥२॥

अन्वय:-हे मनुष्या! योऽवंशे द्यामस्तभायद् बृहन्तं ब्रह्माण्डं रोदसी अन्तरिक्षं चापृणत् पृथिवीं धारयत् सोमस्य मदे ता पप्रथदेतत्सर्वं इन्द्र: क्रमेण चकार स युष्माभिरुपासनीय:॥२॥

भावार्थ:-केचिन्नास्तिक्यमाश्रित्य यद्येवं वदेयुर्य इमे लोका: परस्पराकर्षणेन स्थिता एषां कश्चिदन्यो धारको रचयिता वा नास्तीति तान् प्रत्येवं विद्वांस: समादध्यु:-यदि सूर्याद्याकर्षणेनैव सर्वे लोका: स्थितिं लभन्ते तर्हि सृष्टे: प्रान्तेऽन्याकर्षकलोकाभावादाकर्षणं कथं संभवेत् तस्मात् सर्वव्यापकस्य परमेश्वरस्याकर्षणेनैव सूर्यादयो लोका: स्वस्वरूपं स्वक्रियाश्च धरन्त्येतानि जगदीश्वरकर्माणि दृष्ट्वा धन्यवादैरीश्वर: सदा प्रशंसनीय:॥२॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो **(अवंशे)** अविद्यमान जिसका मान उस वंश के समान वर्त्तमान अन्तरिक्ष में **(द्याम्)** प्रकाश को **(अस्तभायत्)** रोकता, **(बृहन्तम्)** बढ़ते हुए ब्रह्माण्ड को **(रोदसी)** सूर्यलोक, भूमिलोक और **(अन्तरिक्षम्)** आकाश को **(अपृणत्)** प्राप्त होता, **(पृथिवीम्)** पृथिवी को धारण करता, **(सोमस्य)** उत्पन्न हुए जगत् के बीच **(मदे)** आनन्द के निमित्त **(ता)** उक्त कर्मों को

(पप्रथत्) विस्तारता है, इस सबको **(इन्द्रः)** परमैश्वर्यवान् परमेश्वर क्रम से **(चकार)** करता है **(सः)** वह तुम लोगों को उपासना करने योग्य है॥२॥

भावार्थः-कोई नास्तिकता को स्वीकार कर यदि ऐसे कहें कि जो ये लोक परस्पर के आकर्षण से स्थिर हैं, इनका कोई और धारण करने वा रचनेवाला नहीं है, उनके प्रति विद्वान् जन ऐसा समाधान देवें कि यदि सूर्यादि लोकों के आकर्षण से ही सब लोक स्थिति पाते हैं तो सृष्टि के अन्त में अर्थात् जहाँ कि सृष्टि के आगे कुछ नहीं है वहाँ के लोकों का और लोकों के आकर्षण के बिना आकर्षण होना कैसे सम्भव है? इससे सर्वव्यापक परमेश्वर की आकर्षण शक्ति से ही सूर्यादि लोक अपने रूप और अपनी क्रियाओं को धारण करते हैं। ईश्वर के इन उक्त कर्मों को देख धन्यवादों से ईश्वर की प्रशंसा सर्वदा करना चाहिये॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सद्मेव प्राचो वि मिमाय मानैर्वज्रेण खान्यतृणन्नदीनाम्।
वृथासृजत् पथिभिर्दीर्घयाथैः सोमस्य ता मद इन्द्रश्चकार॥३॥

सद्मऽइव। प्राचः। वि। मिमाय। मानैः। वज्रेण। खानि। अतृणत्। नदीनाम्। वृथा। असृजत्। पथिऽभिः। दीर्घऽयाथैः। सोमस्य। ता। मदे। इन्द्रः। चकार॥३॥

पदार्थः-(सद्मेव) गृहमिव **(प्राचः)** प्राचीनाँल्लोकान् **(वि) (मिमाय)** मिमीते **(मानैः)** परिमाणैः **(वज्रेण)** विज्ञानेन **(खानि)** खातानि **(अतृणत्)** सन्तारयति। अत्र व्यत्ययेन श्ना। **(नदीनाम्)** अव्यक्तशब्दयुक्तानां सरिताम् **(वृथा) (असृजत्) (पथिभिः)** मार्गैः **(दीर्घयाथैः)** दीर्घा यथा गमनानि येषु तैः **(सोमस्य)** उत्पद्यमानस्य **(ता)** तानि **(मदे)** हर्षे **(इन्द्रः) (चकार)** करोति॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य इन्द्रो जगदीश्वरो मानैः सद्मेव प्राचो विमिमाय नदीनां खानि वज्रेणातृणद् दीर्घयाथैः पथिभिस्सह सर्वांल्लोकान् वृथासृजत् सोमस्य मदे ता चकार स जगन्निर्माता दयालुरीश्वरो वेद्यः॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। हे मनुष्या! येन जगदीश्वरेण प्राक्कल्परीत्या परमाणुभिश्च लोकलोकान्तराणि निर्मीयन्ते यस्य स्वकीयं प्रयोजनं परोपकारं विहाय किञ्चिदपि नास्ति तानि जगदीश्वरस्य धन्यवादार्हाणि कर्माणि यूयं सततं स्मरत॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(इन्द्रः)** परमैश्वर्यवान् परमेश्वर **(मानैः)** परिमाणों से **(सद्मेव)** घर के समान **(प्राचः)** प्राचीन लोकों को **(वि, मिमाय)** निर्माण करता बनाता है **(नदीनाम्)** अव्यक्त शब्दयुक्त नदियों के **(खानि)** खातों को अर्थात् जल स्थानों **(वज्रेण)** विज्ञान से **(अतृणत्)** विस्तारता **(दीर्घयाथैः)** जिनमें दीर्घ बड़े-बड़े गमन चालें उन **(पथिभिः)** मार्गों के साथ सब लोकों को **(वृथा)** वृथा **(असृजत्)** रचता **(सोमस्य)** उत्पन्न हुए जगत् के **(मदे)** हर्ष के निमित्त **(ता)** उन उक्त कर्मों को **(चकार)** करता है, वह जगत् का निर्माण करनेवाला दयालु ईश्वर जानना चाहिये॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे मनुष्यो! जिस ईश्वर से पूर्व कल्प की रीति से और परमाणुओं से लोक-लोकान्तरों का निर्माण किया जाता है, जिसका अपना प्रयोजन केवल परोपकार को छोड़ कर और कुछ भी नहीं है, उस जगदीश्वर के उक्त काम धन्यवाद के योग्य हैं, उनका तुम स्मरण करो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स प्रवो॒ळ्हॄन् प॑रि॒गत्या॑ द॒भीते॒र्विश्व॑मधा॒गायु॑धमि॒द्धे अ॒ग्नौ।

सं गोभि॒रश्वै॑रसृज॒द्रथे॑भिः सोम॑स्य॒ ता मद॒ इन्द्र॑श्चकार॥४॥

सः। प्र॒ऽवोळ्हॄन्। प॒रि॒ऽगत्य॑। द॒भीतेः॑। विश्व॑म्। अ॒धा॒क्। आयु॑धम्। इ॒द्धे। अ॒ग्नौ। सम्। गोभिः॑। अश्वैः॑। अ॒सृ॒ज॒त्। रथे॑भिः। सोम॑स्य। ता। मदे॑। इन्द्रः॑। च॒कार॒॥४॥

पदार्थः-**(सः)** **(प्रवोढॄन्)** प्रकृष्टतया वहतः **(परिगत्य)** परितः सर्वतो गत्वा। अत्रा**न्येषामपी**ति दीर्घः। **(दभीतेः)** हिंसनात् **(विश्वम्)** सर्वं जगत् **(अधाक्)** दहति **(आयुधम्)** आयुधमिव **(इद्धे)** प्रदीप्ते **(अग्नौ)** **(सम्)** **(गोभिः)** धेनुभिः **(अश्वैः)** तुरङ्गैः **(असृजत्)** सृजति **(रथेभिः)** भूरथादियानैः **(सोमस्य)** उत्पन्नस्य जगतः **(ता)** तानि **(मदे)** हर्षे **(इन्द्रः)** सर्वपदार्थविच्छेता **(चकार)** करोति॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य इन्द्रो जगदीश्वरो दभीतेः परिगत्य विश्वं प्रवोढॄँश्चायुधमिव समिद्धेऽग्नावधाक् गोभिरश्वै रथेभिः सोमस्य मदे ता चकार स प्रलयकृदीश्वरोऽस्तीति ध्यातव्यः॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा संप्राप्तोऽग्निः शुष्कमार्द्रञ्च भस्मीकरोति तथा संप्राप्ते प्रलयसमये जगदीश्वरो सर्वं प्रविलापयति॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(इन्द्रः)** जगदीश्वर **(दभीतेः)** हिंसा से **(परिगत्य)** सब ओर से प्राप्त होकर **(विश्वम्)** समस्त जगत् को **(प्रवोढ़न्)** उसको प्रकृष्टता से पहुँचानेवालों को **(आयुधम्)** शस्त्र के समान **(समिद्धे)** प्रदीप्त **(अग्नौ)** अग्नि में **(अधाक्)** भस्म करता है वा **(गोभिः)** गौओं **(अश्वैः)** तुरङ्गों और **(रथेभिः)** भूमि में चलवानेवाले रथादि यानों से **(सोमस्य)** उत्पन्न हुए जगत् के **(मदे)** हर्ष के निमित्त **(ता)** ऐश्वर्य सम्बन्धी उक्त कामों को **(चकार)** करता है **(सः)** वह प्रलय का करनेवाला ईश्वर सबको सब ओर से ध्यान करने योग्य है॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे संप्राप्त अग्नि सूखे और गीले पदार्थ को भस्म करता है, वैसे अच्छे प्रकार प्राप्त हुए प्रलय समय में जगदीश्वर सबको प्रलय करता है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स ईं मुहीं धुनिमेतोररम्णात् सो अस्नातृनपारयत् स्वस्ति।
त उत्स्नाय रयिमभि प्र तस्थुः सोमस्य ता मद इन्द्रश्चकार॥५॥१५॥

सः। ईम्। महीम्। धुनिम्। एतोः। अरम्णात्। सः। अस्नातृन्। अपारयत्। स्वस्ति। ते। उत्ऽस्नाय। रयिम्। अभि। प्र। तस्थुः। सोमस्य। ता। मदे। इन्द्रः। चकार॥५॥

पदार्थः-**(सः)** सूर्य इव परमेश्वरः **(ईम्)** जलम् **(महीम्)** पृथिवीम् **(धुनिम्)** चलिताम् **(एतोः)** अयनम् **(अरम्णात्)** हन्ति। **रम्णातीति वधकर्मासु पठितम्।** (निघं०२.१९)। **(सः)** **(अस्नातृन्)** अस्नातकान् **(अपारयत्)** पारयति **(स्वस्ति)** **(ते)** **(उत्स्नाय)** स्नानं कृत्वा **(रयिम्)** द्रव्यम् **(अभि)** **(प्र)** **(तस्थुः)** प्रतिष्ठन्ते **(सोमस्य)** उत्पन्नस्य जगतो मध्ये **(ता)** तानि **(मदे)** **(इन्द्रः)** **(चकार)**॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य इन्द्रः सोमस्येन्धुनिं महीमरम्णात् सोऽस्नातृनेतोः स्वस्त्यभिरपारयद् यस्ता मदे चकार येऽस्मिन्नुत्स्नाय रयिं प्रतस्थुस्ते दुःखं जहति स सर्वैः सेव्यः॥५॥

भावार्थः-यो जगदीश्वरो जगतः सृष्टा पाता हन्ता मुक्तौ शुद्धाचारान् दुःखात् पारयितास्ति येऽस्मिन् शुद्धे समाधिना निमज्य पवित्रयन्ति ते सर्वत्र प्रतिष्ठाँल्लभन्ते॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(इन्द्रः)** परमैश्वर्यवान् परमेश्वर **(सोमस्य)** उत्पन्न जगत् के बीच **(ईम्)** जल और **(धुनिम्)** चलती हुई **(महीम्)** पृथिवी को **(अरम्णात्)** हन्ता है **(सः)** वह **(अस्नातृन्)** अस्नातक अर्थात् जो यज्ञ स्नान नहीं किये उनके **(एतोः)** गमन को **(स्वस्ति)** कल्याण जैसे हो, वैसे **(अभि, अपारयत्)** सब ओर से पार पहुँचाता है, जो **(ता)** उक्त कामों को **(मदे)**

हर्ष के निमित्त **(चकार)** करता है और जो विद्वान् जन उक्त ईश्वर के निमित्त **(उत्स्नाय)** उत्तम समाधिस्नान कर **(रयिम्)** धन को **(प्रतस्थुः)** प्रस्थित करते-फिरते **(ते)** वे दुःख को छोड़ते, वह सबको सेवने योग्य है॥५॥

भावार्थः-जो जगदीश्वर जगत् का रचने वा पालना करने वा हननेवाला और मुक्ति में शुद्धाचरण करनेवालों को दुःख से पार करनेवाला है। जो इस शुद्ध ईश्वर में समाधि से न्हाय [=स्नान कर] के पवित्र होते हैं, वे सब जगत् में सब जगह प्रतिष्ठा को प्राप्त होते हैं॥५॥

अथ सूर्यविषयमाह॥

अब सूर्य के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सोदञ्चं सिन्धुमरिणान्महित्वा वज्रेणान उषसः सं पिपेष।
अजवसो जविनीभिर्विवृश्चन्त्सोमस्य ता मद इन्द्रश्चकार॥६॥

सः। उदञ्चम्। सिन्धुम्। अरिणात्। महिऽत्वा। वज्रेण। अनः। उषसः। सम्। पिपेष। अजवसः। जविनीभिः। विऽवृश्चन्। सोमस्य। ता। मदे। इन्द्रः। चकार॥६॥

पदार्थः-**(सः)** **(उदञ्चम्)** ऊर्ध्वं प्राप्नुवन्तम् **(सिन्धुम्)** समुद्रम् **(अरिणात्)** रिणाति प्राप्नोति **(महित्वा)** महत्वेन **(वज्रेण)** किरणेन वज्रेण **(अनः)** शकटम् **(उषसः)** प्रभातात् **(सम्)** **(पिपेष)** पिनष्टि **(अजवसः)** वेगरहितः **(जविनीभिः)** वेगवती क्रियाभिः **(विवृश्चन्)** विविधतया छिन्दन् **(सोमस्य)** ऐश्वर्ययुक्तस्य संसारस्य **(ता)** तानि **(मदे)** आनन्दे **(इन्द्रः)** **(चकार)** करोति॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य इन्द्रः सूर्यो महित्वा वज्रेणोदञ्चं सिन्धुमरिणादुषसो नः संपिपेषाऽजवसो जविनीभिः पदार्थान् विवृश्चन् सोमस्य मदे ता चकार स युष्माभिर्वेद्यः॥६॥

भावार्थः-यथा सूर्यो महत्त्वेन स्वप्रकाशेन जलमुपरि गमयति रात्रिं नाशयत्यतिवेगैर्गमनैरद्भुतानि कर्माणि करोति तथाऽस्माभिरप्यनुष्ठेयम्॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(इन्द्रः)** सब पदार्थों को अपनी किरणों से छिन्न-भिन्न करनेवाला सूर्य **(महित्वा)** महत्व से **(वज्रेण)** अपने किरणरूपी वज्र से **(उदञ्चम्)** ऊपर को प्राप्त होते हुए **(सिन्धुम्)** समुद्र को **(अरिणात्)** गमन करता वा उच्छिन्न करता **(उषसः)** प्रभात समय से लेकर **(संपिपेष)** अच्छे प्रकार पीसता अर्थात् अपने आतप से समुद्र के जल को कण-कण कर सोखता **(अजवसः)** वेगरहित भी **(जविनीभिः)** वेगवती क्रियाओं से पदार्थों को **(विवृश्चन्)** छिन्न-भिन्न

करता हुआ **(सोमस्य)** ऐश्वर्य्ययुक्त संसार के **(मदे)** आनन्द के निमित्त **(ता)** उन कामों को **(चकार)** करता है **(सः)** वह तुम लोगों को जानने योग्य है॥६॥

भावार्थः-जैसे सूर्य महत्व से अपने प्रकाश से जल को ऊपर पहुँचाता, रात्रि को विनाशता, अति वेग और अपनी चालों से अद्भुत कामों को करता है, वैसे हम लोगों को भी आरम्भ करना चाहिये॥६॥

अथ सूर्यदृष्टान्तेन विद्वद्विषयमाह॥

अब सूर्य के दृष्टान्त से विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स विद्वाँ अपगोहं कनीनामाविर्भवन्नुदतिष्ठत् परावृक्।
प्रति श्रोणः स्थाद् व्यनगचष्ट सोमस्य ता मद इन्द्रश्चकार॥७॥

सः। विद्वान्। अपऽगोहम्। कनीनाम्। आविः। भवन्। उत्। अतिष्ठत्। पराऽवृक्। प्रति। श्रोणः। स्थात्। वि। अनक्। अचष्ट। सोमस्य। ता। मदे। इन्द्रः। चकार॥७॥

पदार्थः-**(सः)** **(विद्वान्)** सकलशास्त्रवित् **(अपगोहम्)** आच्छादकम् **(कनीनाम्)** कान्तीनाम् **(आविः)** प्रकटतया **(भवन्)** **(उत्)** उत्कृष्टे **(अतिष्ठत्)** तिष्ठति **(परावृक्)** यः परावृणक्ति **(प्रति)** **(श्रोणः)** श्रोता **(स्थात्)** तिष्ठति **(वि)** **(अनक्)** प्रकटीकरोति **(अचष्ट)** उपदिशति **(सोमस्य)** संसारस्य **(ता)** **(मदे)** **(इन्द्रः)** **(चकार)**॥७॥

अन्वयः-यः श्रोणो विद्वानिन्द्रो यथा सोमस्य मध्ये कनीनामपगोहं परावृगाविर्भवन्नुदतिष्ठत् प्रतिष्ठाद् व्यनगचष्ट तथा मदे ता चकार स सर्वैः सत्करणीयः॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सूर्यः स्वप्रकाशदानेनाऽन्धकारं निवर्त्य विचित्रं जगद्दर्शयति तथा ये विद्वांसः सत्यविद्योपदेशदानेनाऽविद्यां निवर्त्य विविधपदार्थविज्ञानं प्रकटयन्ति ते विश्वभूषका जायन्ते॥७॥

पदार्थः-जो **(श्रोणः)** सुननेवाला विद्वान् जन **(इन्द्रः)** सर्व पदार्थ अलग-अलग करनेवाला सूर्य जैसे **(सोमस्य)** संसार के बीच **(कनीनाम्)** कान्तियों के **(अपगोहम्)** अपगूहन आच्छादन करने को **(परावृक्)** खोलता **(आविर्भवन्)** प्रकट होता हुआ **(उदतिष्ठत्)** ऊपर को स्थिर होता अर्थात् उदय होकर ऊपर को बढ़ता **(प्रतिष्ठात्)** और प्रतिष्ठा पाता, **(व्यनक्)** पदार्थों को प्रकट करता, **(अचष्ट)** उपदेश करता अर्थात् अपनी गति से यथावत् समय को बतलाता, वैसे **(मदे)** हर्ष के निमित्त **(ता)** उन कामों को **(चकार)** करता है **(सः)** वह सबको सत्कार करने योग्य है॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे सूर्य्य अपने प्रकाशदान से अन्धकार को निवृत्त कर विचित्र संसार दिखलाता है, वैसे जो विद्वान् जन सत्यविद्या का उपदेश देने से

अविद्या को निवृत्त कर विविध पदार्थविज्ञान को प्रकट करते हैं, वे विश्व के भूषित करनेवाले होते हैं॥७॥

पुनः प्रकारान्तरेण विद्वद्विषयमाह॥

फिर प्रकारान्तर से विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

भिनद् बलमङ्गिरोभिर्गृणानो वि पर्वतस्य दृंहितान्यैरत्।
रिणग्रोधांसि कृत्रिमाण्येषां सोमस्य ता मद इन्द्रश्चकार॥८॥

भिनत्। बलम्। अङ्गिरःऽभिः। गृणानः। वि। पर्वतस्य। दृंहितानि। ऐरत्। रिणक्। रोधांसि। कृत्रिमाणि। एषाम्। सोमस्य। ता। मदे। इन्द्रः। चकार॥८॥

पदार्थः-(**भिनत्**) भिनत्ति (**बलम्**) मेघम् (**अङ्गिरोभिः**) अङ्गसदृशैः किरणैः (**गृणानः**) (**वि**) (**पर्वतस्य**) मेघस्येव प्रजायाः (**दृंहितानि**) वर्द्धितानि (**ऐरत्**) प्राप्नोति (**रिणक्**) हिनस्ति (**रोधांसि**) आवरणानि (**कृत्रिमाणि**) क्रियमाणानि (**एषाम्**) (**सोमस्य**) विश्वस्य (**ता**) (**मदे**) (**इन्द्रः**) (**चकार**)॥८॥

अन्वयः-हे विद्वन्! गृणानस्त्वं यथेन्द्रः सूर्योऽङ्गिरोभिः पर्वतस्य बलं विभिनत्सोमस्य दृंहितानैरदेषां कृत्रिमाणि रोधांसि रिणक् ता मदे चकार तथा प्रयतस्व॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्याः! यथा वायुसहायेनाग्निरद्भुतानि कर्माणि करोति तथा धार्मिकविद्वत्सहायेन मनुष्या महान्त्युत्तमानि कर्माणि कर्तुं शक्नुवन्ति॥८॥

पदार्थः-हे विद्वान्! (**गृणानः**) प्रशंसा करते हुए आप जैसे (**इन्द्रः**) सर्व पदार्थ छिन्न-भिन्न करता सूर्य (**अङ्गिरोभिः**) अङ्गों के सदृश किरणों से (**पर्वतस्य**) मेघ के समान प्रजा के (**बलम्**) बल को (**वि, भिनत्**) विशेषता से छिन्न-भिन्न करता (**सोमस्य**) विश्व के (**दृंहितानि**) बढ़े हुए पदार्थों को (**ऐरत्**) प्राप्त होता वा (**एषाम्**) इन पदार्थों के (**कृत्रिमाणि**) कृत्रिम (**रोधांसि**) आवरणों को अर्थात् जिनसे यह उन्नति को नहीं प्राप्त होते उन पदार्थों को (**रिणक्**) मारता नष्ट करता (**ता**) उक्त कामों को (**मदे**) हर्ष के निमित्त (**चकार**) करता है, वैसा प्रयत्न करिये॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे वायु के सहाय से अग्नि अद्भुत कर्मों को करता है, वैसे धार्मिक विद्वान् के सहाय से मनुष्य बड़े-बड़े उत्तम काम कर सकते हैं॥८॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राज विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स्वप्नेनाभ्युप्या चुमुरिं धुनिं च जघन्थ दस्युं प्र दभीतिमावः।
रम्भी चिदत्र विविदे हिरण्यं सोमस्य ता मद इन्द्रश्चकार॥९॥

स्वप्नेन। अभिऽउप्य। चुमुरिम्। धुनिम्। च। जघन्थ। दस्युम्। प्र। दभीतिम्। आवः। रम्भी। चित्। अत्र। विविदे। हिरण्यम्। सोमस्य। ता। मदे। इन्द्रः। चकार॥९॥

पदार्थः-(**स्वप्नेन**) शयनेन (**अभ्युप्य**) अभितो वपनं कृत्वा। अत्र दीर्घः। (**चुमुरिम्**) वक्त्रसंयुक्तम् (**धुनिम्**) कम्पन्तम् (**च**) (**जघन्थ**) हन्यात् (**दस्युम्**) बलात्कारिणं चोरम् (**प्र**) (**दभीतिम्**) हिंसकम् (**आवः**) अवेत् (**रम्भी**) आरम्भी (**चित्**) अपि (**अत्र**) राज्यप्रबन्धे (**विविदे**) विन्देत (**हिरण्यम्**) सुवर्णम् (**सोमस्य**) विश्वस्य (**ता**) (**मदे**) (**इन्द्रः**) (**चकार**)॥९॥

अन्वयः-य इन्द्रस्सेनेशः स्वप्नेन सह वर्त्तमानं चुमुरिं च धुनिं दस्युमभ्युप्य जघन्थ दभीतिं प्रावो रम्भी चिदत्र सोमस्य हिरण्यं विविदे स मदे ता तानि चकार॥९॥

भावार्थः-ये पुरुषार्थिनो जना दस्य्वादीन् दुष्टान् निवार्य्य श्रेष्ठान् रक्षणे सन्दध्युस्ते जगत्यैश्वर्यं लभन्ते॥९॥

पदार्थः-जो (**इन्द्रः**) सेनापति (**स्वप्नेन**) निद्रापन से वर्त्तमान (**चुमुरिम्**) सुखयुक्त अर्थात् चोरपन का मुख बनाये और (**धुनिम्**) कंपते हुए (**दस्युम्**) बलात्कारी अति साहसकारी डाकू, चोर का (**अभ्युप्य**) सब ओर से शिर मुंडवा कर (**जघन्थ**) मारे (**दभीतिम्**) हिंसक प्राणी को (**प्राव:**) उत्कर्षता से रक्खे (**रम्भी**) कार्यारम्भ करनेवाला (**चित्**) भी (**अत्र**) इस राज्य व्यवहार में (**सोमस्य**) विश्व का (**हिरण्यम्**) सुवर्ण (**विविदे**) पावे (**सः**) वह (**मदे**) हर्ष के निमित्त (**ता**) उक्त कामों को (**चकार**) करे॥९॥

भावार्थः-जो पुरुषार्थी जन डाकू आदि दुष्टों का निवारण कर श्रेष्ठों को रक्षा के निमित्त इकट्ठे करें वे जगत् के बीच ऐश्वर्य को पाते हैं॥९॥

अथ दातृकर्मविषयमाह॥

अब दान देने के कर्म का विषय अगले मन्त्र में कहा है॥

नूनं सा ते प्रति वरं जरित्रे दुहीयदिन्द्र दक्षिणा मघोनी।
शिक्षा स्तोतृभ्यो माति धग्भगो नो बृहद्वदेम विदथे सुवीराः॥१०॥१६॥

नूनम्। सा। ते। प्रति। वरम्। जरित्रे। दुहीयत्। इन्द्र। दक्षिणा। मघोनी। शिक्षा। स्तोतृऽभ्यः। मा। अति। धक्। भगः। नः। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीराः॥१०॥

पदार्थः-(नूनम्) निश्चितम् **(सा) (ते)** तव **(प्रति) (वरम्) (जरित्रे)** सर्वविद्यास्तावकाय **(दुहीयत्)** दुह्यात्। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम्, यासुटो ह्रस्वश्च। **(इन्द्र)** दातः **(दक्षिणा) (मघोनी)** पूजितधनयुक्ता **(शिक्षा)** विद्याग्रहणसाधिका **(स्तोतृभ्यः)** धार्मिकेभ्यो विद्वद्भ्यः **(मा) (अति) (धक्)** दह्यात् **(भगः)** ऐश्वर्यम् **(नः)** अस्माकम् **(बृहत्) (वदेम) (विदथे)** यज्ञे **(सुवीराः)** शोभनाश्च ते वीरास्तैर्युक्ताः॥१०॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ते मघोनी दक्षिणा स्तोतृभ्यः शिक्षा च जरित्रे प्रतिवरं दुहीयत् सा नोऽस्माकं यो भगस्तं मातिधग्यतः सुवीरा वयं विदथे बृहन्नूनं वदेम॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्या! युष्माभिरुत्तमेभ्यो विद्वद्भ्य इष्टा दक्षिणा विद्यार्थिभ्यः शिक्षा च देया येन दातारो ग्रहीतारश्च फलयुक्ताः स्युरिति॥१०॥

अत्र विद्वत्सूर्यपरमेश्वरराज्यदातृकर्मवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चदशं सूक्तं षोडशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** दान करनेवाले जन! **(ते)** तेरी **(मघोनी)** प्रशंसित धनयुक्त **(दक्षिणा)** दक्षिणा और **(स्तोतृभ्यः)** धार्मिक विद्वानों के लिये **(शिक्षा)** विद्या ग्रहण की सिद्धि करानेवाली शिक्षा **(जरित्रे)** समस्त विद्याओं की प्रशंसा करनेवाले जन के लिये **(प्रतिवरम्)** श्रेष्ठ कार्य के प्रति श्रेष्ठ कार्य को **(दुहीयत्)** पूर्ण करे **(सा)** वह **(नः)** हमारा जो **(भगः)** ऐश्वर्य उसको **(मातिधक्)** मत नष्ट करे, जिससे **(सुवीराः)** सुन्दर वीरों से युक्त हम लोग **(विदथे)** यज्ञ में **(बृहत्)** बहुत **(नूनम्)** निश्चित **(वदेम)** कहें॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! तुमको उत्तम विद्वानों के लिये अभीष्ट दक्षिणा और विद्यार्थियों के लिये शिक्षा देनी चाहिये जिससे देने और लेनेवाले फलयुक्त हों॥१०॥

इस सूक्त में विद्वान्, सूर्य, परमेश्वर, राज्य और दातृकर्म का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति समझनी चाहिये॥

यह पन्द्रहवां सूक्त और सोलहवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

प्र व इति नवर्चस्य षोडशस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषि:। इन्द्रो देवता। १, ७ जगती। ३ विराड् जगती। ४-६, ८ निचृज्जगती च च्छन्द:। निषाद: स्वर:। २ भुरिक् त्रिष्टुप्। ९ त्रिष्टुप् छन्द:। धैवत: स्वर:॥

अथ विद्युद्विषयमाह॥

अब नव ऋचावाले सोलहवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में बिजुली के विषय को कहते हैं॥

प्र व॑: स॒तां ज्येष्ठ॑तमाय सुष्टु॒तिम॒ग्नावि॑व समि॒धा॒ने ह॒विर्भ॑रे।
इन्द्र॑मजु॒र्यं ज॒रय॑न्तमुक्षि॒तं स॒नाद्युवा॑न॒मव॑से हवामहे॥ १॥

प्र। व॒:। स॒ताम्। ज्येष्ठ॑ऽतमाय। सु॒ऽस्तु॒तिम्। अ॒ग्नौऽइ॑व। स॒म्ऽइ॒धा॒ने। ह॒वि:। भ॒रे। इन्द्र॑म्। अ॒जु॒र्यम्। ज॒रय॑न्तम्। उ॒क्षि॒तम्। स॒नात्। युवा॑नम्। अव॑से। ह॒वा॒म॒हे॒॥ १॥

पदार्थ:-(प्र) (व:) युष्माकम् **(सताम्)** सज्जनानाम् **(ज्येष्ठतमाय)** अतिशयेन वृद्धाय **(सुष्टुतिम्)** शोभनां स्तुतिम् **(अग्नाविव) (समिधाने)** सम्यक् प्रदीप्ते **(हवि:) (भरे)** बिभृयात् **(इन्द्रम्)** विद्युतम् **(अजुर्यम्)** अजीर्णम् **(जरयन्तम्)** अन्यान् जरां प्रापयन्तम् **(उक्षितम्)** सेवकम् **(सनात्)** निरन्तरम् **(युवानम्)** भेदकम् **(अवसे)** रक्षणाद्याय **(हवामहे)** स्वीकुर्म:॥१॥

अन्वय:-हे विद्वांसो! वयं सतां वो ज्येष्ठतमायावसे हविर्भरे समिधानेऽग्नाविव सुष्टुतिं हवामहे सनाद्युवानमुक्षितमजुर्यं जरयन्तमिन्द्रं प्रहवामहे॥१॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कार:। यथाऽग्निर्विभागादि कर्मकृद्विद्युद्रूपोऽग्निश्च युक्त्या संयोजित: बह्वैश्वर्यं जनयति तथा सत्पुरुषाणां प्रशंसा सर्वेषां श्रेष्ठत्वाय प्रकल्प्यते॥१॥

पदार्थ:–हे विद्वानो! हम लोग **(सताम्)** आप सज्जनों के **(ज्येष्ठतमाय)** अत्यन्त बढ़े हुए **(अवसे)** रक्षा आदि के लिये **(हवि:)** हविष्य पदार्थ को **(भरे)** भरें, धारण करें वा पुष्ट करें उस **(समिधाने)** अच्छे प्रकार प्रदीप्त **(अग्नाविव)** अग्नि में जैसे वैसे **(सुष्टुतिम्)** सुन्दर स्तुति को **(हवामहे)** स्वीकार करें और **(सनात्)** निरन्तर **(युवानम्)** दूसरे का भेद और **(उक्षितम्)** सेचन करनेवाले तथा **(अजुर्यम्)** पुष्ट **(जरयन्तम्)** औरों को जरावस्था प्राप्त करानेवाले **(इन्द्रम्)** विद्युत् रूप अग्नि को उत्तमता से स्वीकार करें॥१॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे अग्नि और विभाग आदि कर्मों का करनेवाला बिजुली रूप अग्नि युक्ति के साथ संयुक्त किया हुआ बहुत ऐश्वर्य को उत्पन्न करता है, वैसे सत्पुरुषों की प्रशंसा सबकी श्रेष्ठता के लिये कल्पना की जाती है॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यस्मादिन्द्राद् बृहतः किं चनेमृते विश्वान्यस्मिन्त्संभृताधि वीर्या।
जठरे सोमं तन्वी३ सहो महो हस्ते वज्रं भरति शीर्षणि क्रतुम्॥ २॥

यस्मात्। इन्द्रात्। बृहतः। किम्। चन। ईम्। ऋते। विश्वानि। अस्मिन्। संऽभृता। अधि। वीर्या। जठरे। सोमम्। तन्वि। सहः। महः। हस्ते। वज्रम्। भरति। शीर्षणि। क्रतुम्॥ २॥

पदार्थः-(**यस्मात्**) (**इन्द्रात्**) विद्युतः (**बृहतः**) महतः (**किम्**) (**चन**) (**ईम्**) सर्वतः (**ऋते**) विना (**विश्वानि**) सर्वाणि (**अस्मिन्**) (**संभृता**) सम्यग्धृतानि (**अधि**) (**वीर्या**) वीरेषु शत्रुप्रक्षेपकेषु विद्वत्सु साधूनि (**जठरे**) उदरे (**सोमम्**) ओषध्यन्नम् (**तन्वि**) शरीरे (**सहः**) बलम् (**महः**) (**हस्ते**) करे (**वज्रम्**) शस्त्रम् (**भरति**) दधाति (**शीर्षणि**) शिरसि (**क्रतुम्**) प्रज्ञाम्॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्माद् बृहत इन्द्रादृते किञ्चन नास्त्यस्मिञ्जठरे विश्वानि वीर्य्या संभृता यस्तन्वीं सोमं सहो हस्ते महो वज्रं शीर्षणि क्रतुं चाभिभरति स सर्वैर्यथावत् संप्रयोज्यः॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यावत्स्थूलं वस्तु जगत्यस्ति तावत्सर्वं विद्युता विना न विद्यते तं प्रयत्नेन यूयं विजानीत॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यस्मात्**) जिस (**बृहतः**) बड़े (**इन्द्रात्**) विद्युत् अग्नि से (**ऋते**) विना (**किञ्चन**) कुछ भी नहीं है (**अस्मिन्**) इसके (**जठरे**) उदर में (**विश्वानि**) समस्त वे पदार्थ (**वीर्य्या**) जो वीर शत्रुओं को फेंकनेवाले विद्वानों में उपयोगी हैं (**सम्भृता**) अच्छे प्रकार धरे हुए हैं, जो (**तन्वि**) अपने शरीर में (**ईम्**) सब ओर से (**सोमम्**) ओषधि अन्न को (**सहः**) और बल को तथा (**हस्ते**) हाथ में (**महः**) बड़े (**वज्रम्**) शस्त्र को (**शीर्षणि**) और शिर के बीच (**क्रतुम्**) उत्तम बुद्धि को (**अभि, भरति**) अधिकता से धारण करता है, वह विद्युत् अग्नि सबको यथावत् अच्छे प्रकार काम में लाने योग्य है॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जितना स्थूल वस्तु मात्र संसार में है, उतना समस्त बिजुली के विना नहीं है, उसको प्रयत्न से तुम लोग जानो॥ २॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

न क्षोणीभ्यां परिभ्वे त इन्द्रियं न संमुद्रैः पर्वतैरिन्द्र ते रथः।

न ते वज्रमन्वंश्नोति कश्चन यदाशुभिः पतसि योजना पुरु॥ ३॥

न। क्षोणीभ्याम्। परिऽभ्वे। ते। इन्द्रियम्। न। समुद्रैः। पर्वतैः। इन्द्र। ते। रथः। न। ते। वज्रम्। अनु। अश्नोति। कः। चन। यत्। आशुऽभिः। पतसि। योजना। पुरु॥ ३॥

पदार्थः-(न) (क्षोणीभ्याम्) द्यावापृथिवीभ्याम्। **क्षोणी इति द्यावापृथिवीनामसु पठितम्।** (निघं०३.३०)। **(परिभ्वे)** परिभवनीयः **(ते)** तव **(इन्द्रियम्)** धनम् **(न)** निषेधे **(समुद्रैः)** सागरैः **(पर्वतैः)** शैलैः **(इन्द्र)** विद्युदिव वर्त्तमान **(ते)** तव **(रथः)** यानम् **(न) (ते)** तव **(वज्रम्)** छेदकं शस्त्रम् **(अनु) (अश्नोति)** व्याप्नोति **(कश्चन) (यत्) (आशुभिः)** शीघ्रगमयित्रीभिर्विद्युदादिपदार्थैः **(पतसि)** गच्छसि **(योजना)** योजनानि **(पुरु)** पुरूणि बहूनि॥ ३॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यस्य त इन्द्रियं क्षोणीभ्यां न परिभ्वे यस्य ते समुद्रैः पर्वतै रथो न परिभ्वे यस्य ते वज्रं कश्चन नान्वश्नोति यदाऽऽशुभिस्सह युक्तेन रथेन पुरु योजना पतसि स त्वं सर्वथा विजयी भवितुमर्हसि॥ ३॥

भावार्थः-ये मनुष्या वह्न्यादिपदार्थयुक्तशस्त्राऽस्त्रादीनि साध्नुवन्ति ते परिभवं नाप्नुवन्ति। ये रथानन्तरिक्षे समुद्रे पर्वतयुक्तायामपि भूमौ सङ्गमयन्ति ते सुखेनाध्वानमतियान्ति॥ ३॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** बिजुली के समान वर्त्तमान! जिन **(ते)** आपको **(इन्द्रियम्)** धन **(क्षोणीभ्याम्)** आकाश और पृथिवी से **(न)** नहीं **(परिभ्वे)** तिरस्कार प्राप्त होता जिन **(ते)** आपका **(समुद्रैः)** सागरों और **(पर्वतैः)** पर्वतों से **(रथः)** रथ **(न)** नहीं तिरस्कार को प्राप्त होता जिन **(ते)** आपका **(वज्रम्)** छिन्न-भिन्न करनेवाले शस्त्र को **(कश्चन)** कोई **(न)** नहीं **(अनु, अश्नोति)** अनुकूलता से व्याप्त होता **(यत्)** जो **(आशुभिः)** शीघ्र गमन करानेवाली बिजुली के साथ रथ से **(पुरु)** बहुत **(योजना)** योजनों को **(पतसि)** जाते हैं, सो आप सर्वथा विजयी होने योग्य हैं॥ ३॥

भावार्थः-जो मनुष्य अग्नि आदि पदार्थों से युक्त शस्त्र-अस्त्र आदि पदार्थों को सिद्ध करते हैं, वे तिरस्कार को नहीं पहुंचते और जो लोग आकाश, समुद्र तथा पहाड़ी भूमि में भी रथों को चलाते हैं, वे सुख से मार्ग के पार होते हैं॥ ३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

विश्वे ह्यस्मै यजताय धृष्णवे क्रतुं भरन्ति वृषभाय सश्चते।
वृषा यजस्व हविषा विदुष्टरः पिबेन्द्र सोमं वृषभेण भानुना॥ ४॥

विश्वे। हि। अस्मै। यजताय। धृष्णवे। क्रतुम्। भरन्ति। वृषभाय। सश्चते। वृषा। यजस्व। हविषा। विदुःऽतरः। पिब। इन्द्र। सोमम्। वृषभेण। भानुना॥४॥

पदार्थः-(विश्वे) सर्वस्मिन् **(हि)** **(अस्मै)** **(यजताय)** सङ्गमनाय **(धृष्णवे)** दृढत्वाय **(क्रतुम्)** प्रज्ञाम् **(भरन्ति)** दधति **(वृषभाय)** श्रेष्ठत्वाय **(सश्चते)** सम्बन्धाय **(वृषा)** परशक्तिबन्धकः **(यजस्व)** सङ्गच्छस्व **(हविषा)** दातुं ग्रहीतुं योग्येन **(विदुष्टरः)** अतिशयेन विद्वान् **(पिब)** **(इन्द्र)** ऐश्वर्यमिच्छो **(सोमम्)** ओषध्यादिरसम् **(वृषभेण)** वर्षकेण **(भानुना)** प्रदीप्त्या॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र वृषा विदुष्टरस्त्वं ये हि विश्वे वृषभेण भानुना युक्तः सूर्यो रसमिवाऽस्मै यजताय धृष्णवे वृषभाय सश्चते क्रतुं भरन्ति तदनुषङ्गी सन् हविषा यजस्व सोमं पिब॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये प्रथमतः स्वप्रज्ञामुन्नीय विदुषः सत्कुर्वन्ति ते सर्वत्र सत्कृता भवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** ऐश्वर्य के इच्छुक **(वृषा)** शत्रु की शक्ति बांधनेहारे **(विदुष्टरः)** अतीव विद्वान्! आप जो **(हि)** ही **(विश्वे)** सर्वत्र **(वृषभेण)** वर्षा करानेवाले **(भानुना)** ताप से युक्त सूर्य जैसे रस को, वैसे **(अस्मै)** इस **(यजताय)** सङ्गम **(धृष्णवे)** दृढ़ता **(वृषभाय)** श्रेष्ठता **(सश्चते)** और सम्बन्ध के लिये **(क्रतुम्)** प्रज्ञा को **(भरन्ति)** धारण करते हैं, उनके अनुषङ्गी होते हुए **(हविषा)** देने-लेने योग्य वस्तु से **(यजस्व)** यज्ञ करो और **(सोमम्)** ओषध्यादि पदार्थों के रस को **(पिब)** पीओ॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो प्रथम से अपनी बुद्धि को उन्नति देकर विद्वानों का सत्कार करते हैं, वे सब जगत् में सत्कारयुक्त होते हैं॥४॥

अथ सूर्यविषयमाह॥

अब सूर्य विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वृष्णः कोशः पवते मध्व ऊर्मिर्वृषभान्नाय वृषभाय पातवे।
वृषणाध्वर्यू वृषभासो अद्रयो वृषणं सोमं वृषभाय सुष्वति॥५॥१७॥

वृष्णः। कोशः। पवते। मध्वः। ऊर्मिः। वृषभऽअन्नाय। वृषभाय। पातवे। वृषणा। अध्वर्यू इति। वृषभासः। अद्रयः। वृषणम्। सोमम्। वृषभाय। सुस्वति॥५॥

पदार्थः-(वृष्णः) वर्षकात् सूर्य्यात् **(कोशः)** मेघः **(पवते)** प्राप्नोति। **पवत इति गतिकर्मासु पठितम्।** (निघं०२.१४)। **(मध्वः)** मधोः **(ऊर्मिः)** तरङ्गः **(वृषभान्नाय)** वृषभमन्नं यस्मात्तस्मै

(वृषभाय) श्रेष्ठाय **(पातवे)** पातुम् **(वृषणा)** वरौ **(अध्वर्यू)** आत्मनोऽध्वरमहिंसामिच्छू **(वृषभासः)** वर्षकाः **(अद्रयः)** मेघाः **(वृषणम्)** बलकरम् **(सोमम्)** सोमलताद्योषधिरसम् **(वृषभाय)** दुष्टशक्तिप्रतिबन्धकाय **(सुष्वति)** सुन्वति। अत्र **बहुलं छन्दसी**ति शपः श्लुः **दभ्यस्तादि**ति झोऽदादेशः॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा मध्व ऊर्मिर्वृष्णः कोशो वृषभान्नाय वृषभाय पवते यथा पातवे वृषभासोऽद्रयो वृषभाय वृषणं सोमं वृषणाध्वर्यू च सुष्वति तथा यूयमपि भवत॥५॥

भावार्थः-यथा मेघः सूर्यादुत्पद्य पुष्कलान्ननिमित्तो भवति सर्वान् प्राणिनः प्रीणाति तथा विद्वद्भिरपि भवितव्यम्॥५॥

पदार्थः–हे मनुष्यो! जैसे **(मध्वः)** शहद वा मधुर रस की **(ऊर्मिः)** तरङ्ग वा **(वृष्णः)** जल वर्षानेवाले सूर्य से **(कोशः)** मेघ **(वृषभान्नाय)** श्रेष्ठ जिससे अन्न हो उस **(वृषभाय)** श्रेष्ठ के लिये **(पवते)** प्राप्त होता वा जैसे **(पातवे)** पीने के लिये **(वृषभासः)** वर्षनेवाले **(अद्रयः)** मेघ **(वृषभाय)** दुष्टों की शक्ति को बांधनेवाले के लिये **(वृषणम्)** बलकारक **(सोमम्)** सोमलतादि ओषधि रस को और **(वृषणा)** श्रेष्ठ **(अध्वर्यू)** अपने को अहिंसा की इच्छा करनेवाले का **(सुष्वति)** सार निकालते हैं, वैसे तुम भी निकालनेवाले हूजिये॥५॥

भावार्थः-जैसे मेघ सूर्य से उत्पन्न होकर पुष्कल अन्न का निमित्त होता और सब प्राणियों को तृप्त करता है, वैसे विद्वानों को भी होना चाहिये॥५॥

पुनर्विद्वद्विषयमाह॥

फिर विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वृषा॑ ते॒ वज्र॑ उ॒त ते॒ वृषा॒ रथो॒ वृष॑णा॒ हरी॑ वृष॒भाण्यायु॑धा।
वृष्णो॒ मद॑स्य वृषभ॒ त्वमी॑शिष॒ इन्द्र॒ सोम॑स्य वृष॒भस्य॑ तृष्णुहि॥६॥

वृषा॑। ते॒। वज्र॑ः। उ॒त। ते॒। वृषा॑। रथ॑ः। वृष॑णा। हरी॒ इति॑। वृ॒ष॒भाणि॑। आयु॑धा। वृष्ण॑ः। मद॑स्य। वृ॒ष॒भ॒। त्वम्। ई॒शि॒षे॒। इन्द्र॑। सोम॑स्य। वृ॒ष॒भस्य॑। तृ॒ष्णु॒हि॒॥६॥

पदार्थः-**(वृषा)** परशक्तिप्रतिबन्धकः **(ते)** तव **(वज्रः)** वेगः **(उत)** अपि **(ते)** तव **(वृषा)** वेगवान् **(रथः)** यानम् **(वृषणा)** बलिष्ठौ **(हरी)** हरणशीलावश्वौ **(वृषभाणि)** शत्रुबलनिवारकाणि **(आयुधा)** शस्त्राऽस्त्राणि **(वृष्णः)** बलकरस्य **(मदस्य)** हर्षस्य **(वृषभ)** अत्युत्तम **(त्वम्)** **(ईशिषे)** **(इन्द्र)** परमैश्वर्ययुक्त **(सोमस्य)** रसस्य **(वृषभस्य)** पुष्टिकरस्य **(तृष्णुहि)** तृप्तो भव॥६॥

अन्वयः-हे वृषभेन्द्र! यस्य ते वृषा वज्र उत ते वृषा रथो वृषणा हरी वृषभाण्यायुधानि सन्ति स यस्य वृष्णो मदस्य वृषभस्य सोमस्य त्वमीशिषे तेन तृण्णुहि॥६॥

भावार्थः-येषां सर्वकर्मसिद्धिकराणि साधनोपसाधनानि दृढानि प्रशंसितानि कर्माणि वा सन्ति ते कार्यं साधितुं न व्यथन्ते॥६॥

पदार्थः-हे **(वृषभ)** अत्युत्तम **(इन्द्र)** परमैश्वर्ययुक्त विद्वान्! जिन **(ते)** आपका **(वृषा)** दूसरे की शक्ति का प्रतिबन्धन करनेवाला **(वज्रः)** वेग **(उत)** और **(ते)** आपका **(वृषा)** वेगवान् **(रथः)** रथ **(वृषणा)** बलिष्ठ **(हरी)** हरणशील घोड़े **(वृषभाणि)** और शत्रुओं के बल को रोकनेवाले **(आयुधा)** शस्त्र-अस्त्र हैं सो जिस **(वृष्णः)** बल करनेवाले **(मदस्य)** हर्ष का और **(वृषभस्य)** पुष्टि करनेवाले **(सोमस्य)** ओषध्यादि रस के आप **(ईशिषे)** स्वामी होते हैं, उससे **(तृण्णुहि)** तृप्त होओ॥६॥

भावार्थः-जिनके सब कामों की सिद्धि करानेवाले साधनोपसाधन दृढ़ वा प्रशंसित काम हैं, वे कामों के साधन कराने को पीड़ित नहीं होते॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

प्र ते नावं न समने वचस्युवं ब्रह्मणा यामि सवनेषु दाधृषिः।
कुविन्नो अस्य वचसो निबोधिषदिन्द्रमुत्सं न वसुनः सिचामहे॥७॥

प्र। ते। नावम्। न। समने। वचस्युवम्। ब्रह्मणा। यामि। सवनेषु। दाधृषिः। कुवित्। नः। अस्य। वचसः। निऽबोधिषत्। इन्द्रम्। उत्सम्। न। वसुनः। सिचामहे॥७॥

पदार्थः-**(प्र)** **(ते)** तव **(नावम्)** **(न)** इव **(समने)** सङ्ग्रामे **(वचस्युवम्)** आत्मनो वच इच्छन्तम् **(ब्रह्मणा)** वेदेन **(यामि)** गच्छामि **(सवनेषु)** ऐश्वर्येषु प्रेरणेषु **(दाधृषिः)** अतिशयेन प्रगल्भः **(कुवित्)** महान् **(नः)** अस्मान् **(अस्य)** **(वचसः)** **(निबोधिषत्)** निश्चितं बुध्यात् **(इन्द्रम्)** विद्युतमिवैश्वर्यम् **(उत्सम्)** कूपम् **(न)** इव **(वसुनः)** द्रव्यस्य **(सिचामहे)** सिञ्चेम॥७॥

अन्वयः-हे विद्वन्! सवनेषु दाधृषिरहन्ते तव समने नावन्न प्रयामि ब्रह्मणा वचस्युवं प्रयामि कुविद्विद्वानस्य वचसो नोऽस्मान्निबोधिषद् वयमुत्सं नेन्द्रं वसुनः सिचामहे॥७॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये नौभिः समुद्रे रथैः पृथिव्यां विमानैराकाशे युध्येरँस्ते सदैश्वर्यमश्नुवते॥७॥

पदार्थः-हे विद्वान्! **(सवनेषु)** ऐश्वर्यों वा प्रेरणाओं में **(दाधृषिः)** अतीव प्रगल्भ मैं **(ते)** तुम्हारे **(समने)** संग्राम के निमित्त **(नावम्)** जल में नाव को जैसे **(न)** वैसे **(प्रयामि)** प्राप्त होता **(ब्रह्मणा)** वेद के साथ **(वचस्युवम्)** अपने को वचन की इच्छा करते अर्थात् वेद शिक्षाओं को चाहते हुए जन को प्राप्त होता **(कुवित्)** महान् आप **(अस्य)** इस **(वचसः)** वचन के सम्बन्ध करनेवाले **(नः)** हम लोगों को **(निबोधिषत्)** निश्चित जानो, हम लोग **(उत्सम्)** कूप के **(न)** समान वा **(इन्द्रम्)** बिजुली के समान ऐश्वर्य के **(वसुनः)** द्रव्य-सम्बन्धि व्यवहारों से **(सिञ्चामहे)** सींचते हैं॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो नौकाओं से समुद्र में, रथों से पृथिवी पर और विमानों से आकाश में युद्ध करते हैं, वे सदा ऐश्वर्य को प्राप्त होते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

पुरा संबाधादभ्या ववृत्स्व नो धेनुर्न वत्सं यवसस्य पिप्युषी।
सकृत्सु ते सुमतिभिः शतक्रतो सं पत्नीभिर्न वृषणो नसीमहि॥८॥

पुरा। सम्ऽबाधात्। अभि। आ। ववृत्स्व। नः। धेनुः। न। वत्सम्। यवसस्य। पिप्युषी। सकृत्। सु। ते। सुमतिऽभिः। शतक्रतो इति शतऽक्रतो। सम्। पत्नीभिः। न। वृषणः। नसीमहि॥८॥

पदार्थः-**(पुरा)** प्रथमतः **(सम्बाधात्)** **(अभि)** **(आ)** **(ववृत्स्व)** **(नः)** अस्माकम् **(धेनुः)** गौः **(न)** इव **(वत्सम्)** **(यवसस्य)** **(पिप्युषी)** वृद्धा **(सकृत्)** एकवारम् **(सु)** **(ते)** तव **(सुमतिभिः)** शोभना मतयो यासान्ताभिः **(शतक्रतो)** असंख्यप्रज्ञ **(सम्)** **(पत्नीभिः)** **(न)** इव **(वृष्णः)** बलिष्ठाः सेक्तारः **(नसीमहि)** गच्छेम। **नसत इति गतिकर्मासु पठितम्।** (निघं०२.१४)॥८॥

अन्वयः-हे शतक्रतो! त्वं यवसस्य वत्सं पिप्युषी धेनुर्न सुमतिभिः पत्नीभिर्वृषणो न ते तव सम्बाधात् पुरा नोऽस्मान् त्वमभ्याववृत्स्व यतो वयं सकृत्सु सन्नसीमहि॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। येऽन्यान् प्राणिनः पीडातो निवर्त्तयन्ति ते स्वयमपि पीडातो निवर्त्तन्ते यथा क्रियमाणया पत्न्या सह पतिर्मोदते तथा सज्जनसङ्गेन सर्वे आनन्दन्ति॥८॥

पदार्थः-हे **(शतक्रतो)** असंख्य बुद्धियोंवाले जन! आप **(यवसस्य)** यवादि अन्न सम्बन्धी **(वत्सम्)** बछड़े को **(पिप्युषी)** वृद्ध **(धेनुः)** गौ **(न)** जैसे वैसे वा **(सुमतिभिः)** जिनकी सुन्दर बुद्धियां उन **(पत्नीभिः)** पत्नियों के साथ **(वृषणः)** बलवान् सेचनकर्त्ता जन जैसे **(न)** वैसे **(ते)**

आपके **(सम्बाधात्)** सम्बन्ध से **(पुरा)** प्रथम **(नः)** हम लोगों को **(अभि, आ, ववृत्स्व)** सब ओर से अच्छे प्रकार वर्त्तो, जिससे हम लोग **(सकृत्)** एक बार **(सुसन्नसीमहि)** सुन्दरता से जावें॥८॥

भावार्थः-जो और प्राणियों को पीड़ा से निवृत्त करते हैं वे आप भी पीड़ा से निवृत्त होते हैं। जैसे क्रियमाण पत्नी के साथ पति आनन्दित होता है, वैसे सज्जन के साथ सब आनन्दित होते हैं॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

नूनं सा ते प्रति वरं जरित्रे दुहीयदिन्द्र दक्षिणा मघोनी।
शिक्षा स्तोतृभ्यो माति धग्भगो नो बृहद्वदेम विदथे सुवीराः॥९॥१८॥

नूनम्। सा। ते। प्रति। वरम्। जरित्रे। दुहीयत्। इन्द्र। दक्षिणा। मघोनी। शिक्ष। स्तोतृभ्यः। मा। अति। धक्। भगः। नः। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीराः॥९॥

पदार्थः-**(नूनम्)** निश्चितम् **(सा)** **(ते)** तव **(प्रति)** **(वरम्)** **(जरित्रे)** स्तावकाय **(दुहीयत्)** **(इन्द्र)** **(दक्षिणा)** **(मघोनी)** पूजनीया विद्या प्रतिष्ठा च **(शिक्ष)** अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(स्तोतृभ्यः)** स्तावकेभ्यो विद्वद्भ्यः **(मा)** निषेधे **(अति)** **(धक्)** दहेः **(भगः)** ऐश्वर्यम् **(नः)** अस्मभ्यम् **(बृहत्)** महत् **(वदेम)** **(विदथे)** यज्ञे **(सुवीराः)**॥९॥

अन्वयः-हे इन्द्र! या ते तव मघोनी दक्षिणा जरित्रे प्रतिवरं दुहीयत् सा तव नूनं निश्चितं श्रेयः सम्पादयति। भवान् स्तोतृभ्यो मातिधग्यो नो भगस्तं शिक्ष यतो वयं सुवीराः सन्तोऽपि विदथे बृहद्वदेम॥९॥

भावार्थः-ये कस्याप्युपकारं न प्रन्धन्ति सत्यमुपदिशन्ति ते यशस्विनो भवन्ति॥९॥

अस्मिन् सूक्ते विद्युद्वित्सूर्यविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेदितव्यम्॥

इति षोडशं सूक्तमष्टादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** विद्वान्! जो **(ते)** आपकी **(मघोनी)** प्रशंसा करने के योग्य विद्या और प्रतिष्ठा **(दक्षिणा)** और दक्षिणा **(जरित्रे)** स्तुति करनेवाले के लिये **(प्रतिवरम्)** श्रेष्ठ के प्रति श्रेष्ठ पदार्थ को **(दुहीयत्)** पूर्ण करे **(सा)** वह आपका **(नूनम्)** निश्चित श्रेय अत्यन्त कल्याण सिद्ध

करती है, आप **(स्तोतृभ्यः)** स्तुति करनेवाले विद्वानों के लिये जो पदार्थ उनको **(मा, अति, धक्)** मत भस्म कर, मत नष्ट कर, जो **(नः)** हमारे लिये **(भगः)** ऐश्वर्य है उसको **(शिक्ष)** शिक्षा देओ। जिससे हम लोग **(सुवीराः)** सुन्दर वीरोंवाले हुए **(विदथे)** यज्ञभूमि में **(बृहत्)** बहुत **(वदेम)** कहें॥९॥

भावार्थः-जो लोग किसी के उपकार को नहीं रोकते, सत्य उपदेश करते हैं, वे यशस्वी होते हैं॥९॥

इस सूक्त में बिजुली, विद्वान्, सूर्य और फिर विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह सोलहवां सूक्त और अठारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

तदस्मावित्ति नवर्चस्य सप्तदशस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ५, ६ विराट् जगती। २, ४ निचृज्जगती छन्दः। निषादः स्वरः। ३, ७ भुरिक् त्रिष्टुप्। ९ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ८ निचृत्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ सूर्यगुणानाह॥

अब नव ऋचावाले सत्रहवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में सूर्य के गुणों का उपदेश करते हैं॥

तदस्मै नव्यमङ्गिरस्वदर्चत शुष्मा यदस्य प्रत्नथोदीरते।
विश्वा यद्गोत्रा सहसा परीवृता मदे सोमस्य दृंहितान्यैरयत्॥ १॥

तत्। अस्मै। नव्यम्। अङ्गिरस्वत्। अर्चत। शुष्माः। यत्। अस्य। प्रत्नऽथा। उत्ऽईरते। विश्वा। यत्। गोत्रा। सहसा। परिऽवृता। मदे। सोमस्य। दृंहितानि। ऐरयत्॥ १॥

पदार्थः-(तत्) **(अस्मै)** **(नव्यम्)** नवमेव स्वरूपम् **(अङ्गिरस्वत्)** अङ्गिरसा प्राणेन तुल्यम् **(अर्चत)** सत्कुरुत **(शुष्माः)** शुष्माणि शोषकाणि बलानि **(यत्)** यानि **(अस्य)** सूर्यस्य **(प्रत्नथा)** प्रत्नं पुरातनमिव **(उदीरते)** उत्कृष्टतया कम्पयन्ति **(विश्वा)** विश्वानि **(यत्)** यानि **(गोत्रा)** गोत्राणि **(सहसा)** बलेन **(परीवृता)** परितः सर्वतो वर्त्तन्ते यानि तानि **(मदे)** आनन्दाय **(सोमस्य)** ओषधिगणस्य **(दृंहितानि)** धृतानि वर्द्धितानि वा **(ऐरयत्)** कम्पयति॥ १॥

अन्वयः-हे विद्वांसोऽस्य सोमस्य यद्यानि प्रत्नथा शुष्मा विश्वा गोत्रा परीवृता सहसा दृंहितान्युदीरते तन्नव्यमस्मा अङ्गिरस्वद्यूयमर्चत यन्मदे प्रभवति तद्य ऐरयत्तं स्वरूपतो विजानीत॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन जगदीश्वरेण सर्वेषां भूगोलानां धारणाय सूर्यो निर्मितस्तं सदा ध्यायत॥ १॥

पदार्थः–हे विद्वानो! **(अस्य)** इस सूर्यमण्डल सम्बन्धी **(सोमस्य)** ओषधि गण के **(यत्)** जो **(प्रत्नथा)** पुरातन पदार्थ के समान **(शुष्माः)** दूसरों को शुष्क करनेवाले **(विश्वा)** और समस्त **(गोत्रा)** गोत्र जो कि **(परीवृता)** सब ओर से वर्त्तमान वे **(सहसा)** बल के साथ **(दृंहितानि)** धारण किये वा बढ़े हुए **(उदीरते)** उत्कर्षता से दूसरे पदार्थों को कंपन दिलाते हैं **(तत्)** वह **(नव्यम्)** नवीन कर्म **(अस्मै)** इसके लिये **(अङ्गिरस्वत्)** प्राण के तुल्य तुम लोग **(अर्चत)** सत्कृत करो **(यत्)** जो **(मदे)** आनन्द के लिये उत्तमता से होता है, उसको जो **(ऐरयत्)** कंपाता कार्य में लाता है, उसको तुम स्वरूप से जानो॥ १॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जिस जगदीश्वर ने समस्त भूगोलों के धारण करने को सूर्यमण्डल बनाया है, उसका सदा ध्यान किया करो॥१॥

अथेश्वरविषयमाह॥

अब ईश्वर विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स भूतु यो ह प्रथमाय धायस ओजो मिमानो महिमानमातिरत्।
शूरो यो युत्सु तन्वं परिव्यत शीर्षणि द्यां महिना प्रत्यमुञ्चत॥ २॥

सः। भूतु। यः। ह। प्रथमाय। धायसे। ओजः। मिमानः। महिमानम्। आ। अतिरत्। शूरः। यः। युत्ऽसु। तन्वम्। परिऽव्यत। शीर्षणि। द्याम्। महिना। प्रति। अमुञ्चत॥ २॥

पदार्थ:-(**सः**) जगदीश्वरः (**भूतु**) भवतु। अत्र **बहुलं छन्दसीति** शपो लुक्। **भूसुवोस्तिङीति** गुणाभावः। (**यः**) (**ह**) किल (**प्रथमाय**) आदिमाय (**धायसे**) धारणाय (**ओजः**) बलम् (**मिमानः**) निर्माता सन् (**महिमानम्**) स्वप्रभावम् (**आ**) (**अतिरत्**) सन्तारयति (**शूरः**) निर्भयो मनुष्यः (**यः**) (**युत्सु**) संग्रामेषु (**तन्वम्**) शरीरम् (**परिव्यत**) सर्वतो व्याप्नुत (**शीर्षणि**) शिरसि (**द्याम्**) प्रकाशम् (**महिना**) महिम्ना महत्वेन (**प्रति**) (**अमुञ्चत**) मुञ्चति॥२॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यो ह प्रथमाय धायस ओजो मिमानो महिमानमातिरत् सोऽस्मभ्यं सुखप्रदो भूतु यश्शूरो युत्सु तन्वं प्रक्षिपति तं परिव्यत यो जगदीश्वरो महिना शीर्षणि द्यां प्रत्यमुञ्चत तं परिव्यत॥२॥

भावार्थ:-यो जगदीश्वरो धर्तॄणां धर्त्ता बलिनां बली महतां महान् पूज्यानां पूज्योऽस्ति, तं सर्व उपासीरन्॥२॥

पदार्थ:–हे मनुष्यो! (**यः**) जो (**ह**) ही (**प्रथमाय**) प्रथम (**धायसे**) धारण के लिये (**ओजः**) बल को (**मिमानः**) निर्माण करता बनाता हुआ (**महिमानम्**) अपने प्रभाव को (**आतिरत्**) सम्यक् पार पहुंचाता (**सः**) वह जगदीश्वर हम लोगों के लिये सुख देनेवाला (**भूतु**) हो, (**यः**) जो (**शूरः**) निर्भय मनुष्य (**युत्सु**) संग्रामों में (**तन्वम्**) शरीर को छोड़ता है, उसको (**परिव्यत**) सब ओर से व्याप्त होओ अर्थात् प्राप्त होओ, जो जगदीश्वर (**महिना**) अपने महत्त्व से (**शीर्षणि**) शिर पर (**द्याम्**) प्रकाश को (**प्रति अमुञ्चत**) छोड़ता है, उसको सब ओर से व्याप्त होओ अर्थात् उसमें रमो॥२॥

भावार्थ:-जो जगदीश्वर धारण करनेवालों का धारणकर्त्ता, बलवानों का बलवान्, बड़ों का बड़ा और पूज्यों का पूज्य है, उसकी सब उपासना करें॥२॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अधाकृणोः प्रथमं वीर्यं महद् यदस्याग्रे ब्रह्मणा शुष्ममैरयः।
रथेष्ठेन हर्यश्वेन विच्युताः प्र जीरयः सिस्रते सध्र्यक् पृथक्॥४॥

अध। अकृणोः। प्रथमम्। वीर्यम्। महत्। यत्। अस्य। अग्रे। ब्रह्मणा। शुष्मम्। ऐरयः। रथेऽस्थेन। हरिऽअश्वेन। विऽच्युताः। प्र। जीरयः। सिस्रते। सध्र्यक्। पृथक्॥३॥

पदार्थः-(**अध**) आनन्तर्ये (**अकृणोः**) कुर्याः (**प्रथमम्**) (**वीर्य्यम्**) पराक्रमम् (**महत्**) पुष्कलम् (**यत्**) येन (**अस्य**) जगतः (**अग्रे**) आदौ (**ब्रह्मणा**) अन्नेन (**शुष्मम्**) बलम् (**ऐरयः**) ईर्ष्व (**रथेष्ठेन**) यो रथे तिष्ठति तेन (**हर्यश्वेन**) हरणशीला अश्वा यस्मिँस्तेन (**विच्युताः**) विशेषेण चलिताः (**प्र**) (**जीरयः**) वयो हर्त्तारः (**सिस्रते**) सरन्ति (**सध्र्यक्**) यः सध्रिं समानं स्थानं प्राप्नोति सः (**पृथक्**)॥३॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यदि त्वमस्याग्रे प्रथमं महद्वीर्य्यमकृणोः यद्येन ब्रह्मणा शुष्ममैरयः। ये विद्वांसो हर्य्यश्वेन रथेष्ठेन विच्युताः प्रजीरयः सन्तो सध्र्यक् पृथक् सिस्रतेऽध ते शत्रुभ्यो पराजयं नाप्नुवन्ति॥३॥

भावार्थः-य इह सर्वेषां बलपराक्रमवर्द्धकाः साधनोपसाधनयुक्ताः पृथक् मिलित्वा वा प्रयतन्ते ते अन्नाद्यैश्वर्ययुक्ता भवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे विद्वान्! यदि आप (**अस्य**) इस जगत् के (**अग्रे**) प्रथम में (**महत्**) बहुत (**वीर्य्यम्**) पराक्रम (**अकृणोः**) करो कि (**यत्**) जिससे (**ब्रह्मणा**) अन्न के योग से (**शुष्मम्**) बल को (**ऐरयः**) प्रेरित करो यदि विद्वान् जन (**हर्य्यश्वेन**) हर्यश्वरथ अर्थात् हरणशील शीघ्रगामी अश्व जिसमें उस (**रथेष्ठेन**) रथ में स्थित जन के साथ (**विच्युताः**) विशेषता से चलायमान (**प्र, जीरयः**) उत्तमता से अवस्था के हरण करनेवाले होते हुए और (**सध्र्यक्**) जो समान स्थान को प्राप्त होता वह मनुष्य (**पृथक्**) अलग-अलग (**सिस्रते**) प्राप्त होते हैं (**अध**) इसके अनन्तर वह **[या]** वे पूर्वोक्त जन शत्रुओं से पराजय को नहीं प्राप्त होते॥३॥

भावार्थः-जो इस संसार में सबके बल पराक्रम को बढ़ानेवाले, साधनोपसाधनयुक्त, अलग-अलग वा मिलकर प्रयत्न करते हैं, वे अन्नादि ऐश्वर्य्ययुक्त होते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अधा यो विश्वा भुवनाभि मज्मनेशानकृत्प्रवया अभ्यवर्धत।
आद्रोदसी ज्योतिषा वह्निरातनोत् सीव्यन्तमांसि दुधिता समव्ययत्॥४॥

अध। यः। विश्वा। भुवना। अभि। मज्मना। ईशानऽकृत्। प्रऽवयाः। अभि। अवर्धत। आत्। रोदसी इति। ज्योतिषा। वह्निः। अतनोत्। सीव्यन्। तमांसि। दुधिता। सम्। अव्ययत्॥४॥

पदार्थः-(अध) आनन्तर्ये। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(यः)** सूर्य इव जगदीश्वरः **(विश्वा)** सर्वाणि **(भुवना)** भुवनानि लोकान् **(अभि)** आभिमुख्ये **(मज्मना)** बलेन **(ईशानकृत्)** य ईशानानीशञ्छीलान् पुरुषार्थिनः करोति **(प्रवयाः)** यः प्रकर्षेण व्याप्नोति **(अभि) (अवर्द्धत)** वर्द्धते **(आत्)** समन्तात् **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(ज्योतिषा)** प्रकाशेन **(वह्निः)** सर्वस्य वोढा **(आ, अतनोत्)** सर्वतो विस्तृणाति **(सीव्यन्)** रचयन् **(तमांसि)** रात्रीः **(दुधिता)** दुर्हितानि दूरे सन्ति सुखकारकाणि **(सम्) (अव्ययत्)** सर्वतः संवृणोति॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य ईशानकृत्प्रवया मज्मना विश्वा भुवनाभ्यवर्द्धत यथा वह्निर्ज्योतिषा तमांसि निवर्त्तयति तथा रोदसी आतनोदभिसीव्यन्दुधिता समव्ययत् सोऽध सर्वैः पूजनीयः॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। येन जगदीश्वरेण प्रकाशाय सूर्यो भोजनायौषधानि पानाय जलरसा निवासाय भूमिः कर्मकरणाय शरीरादीनि निर्मितानि स पितृवत्सर्वैः सत्कर्त्तव्यः॥४॥

पदार्थः–हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(ईशानकृत्)** ईश्वरता का शील रखनेवाले पुरुषों को करता वा **(प्रवयाः)** उत्कर्षता से व्याप्त होता और **(मज्मना)** बल से **(विश्वा)** समस्त **(भुवना)** लोकों के **(अभि, अवर्द्धत)** अभिमुख वृद्धि को प्राप्त होता और जैसे **(वह्निः)** सबको एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँचानेवाला अग्नि **(ज्योतिषा)** अपनी लपट से **(तमांसि)** रात्रिरूपी अन्धकारों को निवृत्त करता, वैसे **(रोदसी)** आकाश और पृथिवियों को **(आतनोत्)** विस्तार तथा **(अभिसीव्यन्)** सब ओर से उन लोकों को रचता हुआ **(दुधिता)** जो पदार्थ दूसरे देश में होते वा सुख करनेवाले होते हैं, उनको **(समव्ययत्)** सब ओर से आच्छादित करता है **(सः)** वह **(अध)** उक्त विषयों के अनन्तर सबको पूजनीय है॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जिस जगदीश्वर ने प्रकाश के लिये सूर्य, भोजनों के लिये औषधी, पीने के लिये जल रसों को, निवास के लिये भूमि और कर्म करने के लिये शरीर आदि बनाये हैं, वह पिता के तुल्य सबको सत्कार करने योग्य है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स प्राचीनान् पर्वतान् दृंहदोजसाधराचीनमकृणोदुपामपः।
अधारयत् पृथिवीं विश्वधायसमस्तभ्नान्मायया द्यामवस्रसः॥५॥१९॥

सः। प्राचीनान्। पर्वतान्। दृंहत्। ओजसा। अधराचीनम्। अकृणोत्। अपाम्। अपः। अधारयत्। पृथिवीम्। विश्वऽधायसम्। अस्तभ्नात्। मायया। द्याम्। अवऽस्रसः॥५॥

पदार्थः-(**सः**) (**प्राचीनान्**) पूर्वतो वर्त्तमानान् (**पर्वतान्**) पर्वतानिव मेघान् (**दृंहत्**) दृंहति धरति (**ओजसा**) बलेन (**अधराचीनम्**) योऽधोऽञ्चति तम् (**अकृणोत्**) करोति (**अपाम्**) अन्तरिक्षस्य (**अपः**) जलानि (**अधारयत्**) धारयति (**पृथिवीम्**) (**विश्वधायसम्**) विश्वस्य धारणसमर्थम् (**अस्तभ्नात्**) स्तभ्नाति (**मायया**) प्रज्ञया (**द्याम्**) प्रकाशम् (**अवस्रसः**) अवसारयति॥५॥

अन्वयः-स परमेश्वरो यथा प्राचीनान् पर्वतानोजसा दृंहदधराचीनं कृत्वा[पामपो]ऽकृणोद्विश्वधायसं पृथिवीमधारयन्मायया द्यामस्तभ्नादवस्रसस्तथा सकलं विश्वं धरति॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्यः सन्निहिताँल्लोकान् धरति तथा परमेश्वरः सूर्याद्यखिलं जगद्धत्ते॥५॥

पदार्थः-(**सः**) वह परमेश्वर जैसे (**प्राचीनान्**) प्राचीन अर्थात् पहिले से वर्त्तमान (**पर्वतान्**) पर्वतों के समान मेघों को (**ओजसा**) बल के साथ (**दृंहत्**) धारण करता (**अधराचीनम्**) और जो नीचे को प्राप्त होता उसको बना कर (**अपाम्**) अन्तरिक्ष के (**अपः**) जलों को (**अकृणोत्**) सिद्ध करता है (**विश्वधायसम्**) विश्व के धारण करने को समर्थ (**पृथिवीम्**) पृथिवी को (**अधारयत्**) धारण करता जो (**मायया**) प्रज्ञा से (**द्याम्**) प्रकाश को (**अस्तभ्नात्**) रोकता वा (**अवस्रसः**) विस्तारता है, वैसे समस्त विश्व का धारण करता है॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य अपने निकट के लोकों को धारण करता, वैसे परमेश्वर सूर्यादि समस्त जगत् को धारण करता है॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सास्मा अरं बाहुभ्यां यं पिताकृणोद् विश्वस्मादा जनुषो वेदसस्परि।
येना पृथिव्यां नि क्रिविं शयध्यै वज्रेण हत्व्यवृणक्तुविष्वणिः॥६॥

सः। अस्मै। अरम्। बाहुऽभ्याम्। यम्। पिता। अकृणोत्। विश्वस्मात्। आ। जनुषः। वेदसः। परि। येन। पृथिव्याम्। नि। क्रिविम्। शयध्यै। वज्रेण। हत्वी। अवृणक्। तुविऽस्वनिः॥६॥

पदार्थः-(**सः**) (**अस्मै**) (**अरम्**) अलम् (**बाहुभ्याम्**) (**यम्**) (**पिता**) (**अकृणोत्**) करोति (**विश्वस्मात्**) सर्वस्मात् (**आ**) समन्तात् (**जनुषः**) प्रसिद्धात् (**वेदसः**) धनाद्विज्ञानाद्वा (**परि**) सर्वतः (**येन**)। अत्राऽन्येषामपीति दीर्घः। (**पृथिव्याम्**) (**नि**) नितराम् (**क्रिविम्**) कूपम्। **क्रिविरिति कूपनामसु पठितम्।** (निघं०३.२३)। (**शयध्यै**) (**वज्रेण**) शस्त्रेण (**हत्वी**) हत्वा (**अवृणक्**) छिनत्ति (**तुविष्वणिः**) परमाणूनामेकीभूतानां विभक्ता सूर्यः॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्य! पिता विश्वस्माज्जनुषो वेदसो बाहुभ्यां यमरमकृणोत् स त्वं यथा तुविष्वणिर्येन वज्रेण पृथिव्यां शयध्यै क्रिविमिव हत्वी पर्य्यवृणक् तथाऽस्मै सुखमाकृणोत्॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्यो मेघं भित्वा जलं जनयित्वा सर्वेषां सुखं सम्पादयति तथाऽध्यापको जनको वा सर्वाभिः सुशिक्षाभिः सन्तानान् सुभूषितान् कृत्वा सततं सुखयेत्॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्य! (**पिता**) सबकी पालना करनेवाला ईश्वर (**विश्वस्मात्**) सब (**जनुषः**) प्रसिद्ध (**वेदसः**) धन वा विज्ञान वा (**बाहुभ्याम्**) भुजाओं से (**यम्**) जिसको (**अरम्**) पूर्ण (**अकृणोत्**) करता है (**सः**) वह तू जैसे (**तुविष्वणिः**) बहुत परमाणुओं का जो कि इकट्ठे होकर एक पदार्थ हो रहे हैं, उनका अच्छे प्रकार विभाग करनेवाला सूर्य (**येन**) जिस (**वज्रेण**) वज्र से (**पृथिव्याम्**) पृथिवी पर (**शयध्यै**) सोने के लिये अर्थात् गिरने के लिये (**क्रिविम्**) कूप के समान (**हत्वी**) छिन्न-भिन्न कर अर्थात् खोद के कूप जल को जैसे निकालें, वैसे मेघ को (**पर्य्यवृणक्**) सब ओर से छिन्न-भिन्न करता और संसार की पालना करता है, वैसे (**अस्मै**) इस बालक आदि के लिये सुख (**आ**) अच्छे प्रकार सिद्ध करो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य मेघ को छिन्न-भिन्न कर जल को उत्पन्न कर सबका सुख सिद्ध करता है, वैसे अध्यापक वा पिता समस्त सुन्दर शिक्षाओं से सन्तानों को सुभूषित कर निरन्तर सुखी करें॥६॥

अथ विदुषीविषयमाह॥

अब विदुषी के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अमाजूरिव पित्रोः सचा सती समानादा सदसस्त्वामिये भगम्।

कृधि प्रकेतमुप मास्या भर दद्धि भागं तन्वो३ येन मामहः॥७॥

अमाजूःऽइव। पित्रोः। सचा। सती। समानात्। आ। सदसः। त्वाम्। इये। भगम्। कृधि। प्रऽकेतम्। उप। मासि। आ। भर। दद्धि। भागम्। तन्वः। येन। ममहः॥७॥

पदार्थः-(अमाजूरिव) योऽमा गृहे जूर्यति तद्वत् **(पित्रोः)** **(सचा)** समवायेन **(सती)** वर्त्तमाना **(समानात्)** **(आ)** समन्तात् **(सदसः)** सीदन्ति यस्मिँस्तस्माद् गृहात् **(त्वाम्)** **(इये)** प्राप्नुयाम। अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम्, लडर्थे लिट् च। **(भगम्)** ऐश्वर्यम् **(कृधि)** कुरु **(प्रकेतम्)** प्रकृष्टं विज्ञानम् **(उप)** **(मासि)** मासे **(आ)** **(भर)** **(दद्धि)** याचस्व। **दद्धीति याच्ञाकर्मासु पठितम्।** (निघं०३.१९)। **(भागम्)** भजनीयम् **(तन्वः)** शरीरस्य **(येन)** **(मामहः)** पूज्यान्॥७॥

अन्वयः-हे कन्ये! सती त्वं सचामाजूरिव पित्रोः समानात् सदसो यां त्वामहमिये सा त्वं प्रकेतं भगं कृधि मास्युपाभर भागं दद्धि येन मामहः प्राप्नुयास्तेन तन्वो भागं याचस्व॥७॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। याः कन्या विद्यामधीत्य गृहाश्रमं प्राप्नुयुस्ताः पूज्यान् सत्कृत्याऽपूज्यान् तिरस्कृत्य पुरुषार्थेनैश्वर्य्यं वर्द्धयेयुः॥७॥

पदार्थः-हे कन्ये! **(सती)** वर्त्तमान तू **(सचा)** सम्बन्ध से **(अमाजूरिव)** जो घर में बुड्ढा होता उसके समान **(पित्रोः)** माता-पिता के **(समानात्)** समान भाव से **(सदसः)** जिसमें पहुँचते हैं, उस स्थान से जिस **(त्वा)** तुझे मैं **(इये)** प्राप्त होऊं वह तू **(प्रकेतम्)** उत्कर्ष विज्ञान को और **(भागम्)** ऐश्वर्य को **(कृधि)** सिद्ध कर तथा **(मासि)** प्रति महीने में **(उपाभर)** उत्तम प्राप्त हुए आभूषणों को पहिना कर **(भागम्)** सेवन करने योग्य पदार्थ **(दद्धि)** मांगो; **(येन)** जिससे **(मामहः)** सत्कार करने योग्य पुत्रादिकों को वा प्रशंसा करने योग्य पदार्थों को प्राप्त हो उस व्यवहार से **(तन्वः)** शरीर के भाग को मांगो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो कन्या विद्या को पढ़ कर गृहाश्रम को प्राप्त हों, वे सत्कार करने योग्यों को सत्कार कर और तिरस्कार करने योग्यों का तिरस्कार कर पुरुषार्थ से ऐश्वर्य को बढ़ावें॥७॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

भोजं त्वामिन्द्र वयं हुवेम दुदिष्ट्वमिन्द्रापांसि वाजान्।
अविड्ढीन्द्र चित्रया न ऊती कृधि वृषन्निन्द्र वस्यसो नः॥८॥

भोजम्। त्वाम्। इन्द्र। वयम्। हुवेम। ददिः। त्वम्। इन्द्र। अपांसि। वाजान्। अविड्ढि। इन्द्र। चित्रया। नः। ऊती। कृधि। वृषन्। इन्द्र। वस्यसः। नः॥८॥

पदार्थः-(भोजम्) भोक्तारम् **(त्वाम्) (इन्द्र)** परमैश्वर्य्ययुक्त **(हुवेम)** स्वीकुर्याम **(ददिः)** दाता **(त्वम्) (इन्द्र)** दुःखविदारक **(अपांसि)** कर्माणि **(वाजान्)** बोधान् **(अविड्ढि)** रक्ष। अत्रावधातो**र्वाच्छन्दसी**ति लोट् सिप्यशादेशः। **(इन्द्र)** शत्रुविनाशक **(चित्रया)** अनेक विधया **(नः)** अस्मान् **(ऊती)** ऊत्या **(कृधि)** कुरु **(वृषन्)** सेचक **(इन्द्र)** सुखप्रद **(वस्यसः)** अतिशयेन वसीयसो वसुमतः **(नः)** अस्मान्॥८॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यं भोजं त्वां वयं हुवेम स त्वमस्माञ्जुहुधि। हे इन्द्र! ददिस्त्वमपांसि वाजानविड्ढि। हे इन्द्र! त्वं चित्रयोतीयुक्तान् नः कृधि। हे वृषन्निन्द्र! त्वन्नो वस्यसः कृधि॥८॥

भावार्थः-यथा सखायः सखीन् स्तुवन्ति तथाऽध्येतारोऽध्यापकान् प्रशंसन्तु एवं परस्पररक्षणेनैश्वर्यमुन्नयेयुः॥८॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** परमैश्वर्ययुक्त विद्वान्! जिन **(भोजम्)** भोगनेवाले **(त्वाम्)** आपको **(वयम्)** हम लोग **(हुवेम)** स्वीकार करें सो आप हम लोगों को स्वीकार कीजिये। हे **(इन्द्र)** दुःख विदीर्ण करनेवाले विद्वान्! **(ददिः)** दानशील **(त्वम्)** आप **(अपांसि)** कर्मों को **(वाजान्)** बोधों को **(अविड्ढि)** सुरक्षित करो। हे **(इन्द्र)** शत्रु विनाशनेवाले विद्वान्! आप **(चित्रया)** चित्र-विचित्र अनेकविध **(ऊती)** रक्षा से युक्त **(नः)** हम लोगों को **(कृधि)** करो। हे **(वृषन्)** सींचनेवाले **(इन्द्र)** सुख देनेवाले विद्वन्! आप **(नः)** हम लोगों को **(वस्यसः)** अत्यन्त धनवान् करो॥८॥

भावार्थः-जैसे मित्र मित्रों की स्तुति करते हैं, वैसे पढ़नेवाले पढ़ानेवालों की प्रशंसा करें, ऐसे एक-दूसरे की रक्षा से ऐश्वर्य की उन्नति करें॥८॥

पुनर्विदुषी गुणानाह॥

फिर विदुषी के गुणों को कहते हैं॥

नूनं सा ते प्रति वरं जरित्रे दुहीयदिन्द्र दक्षिणा मघोनी।
शिक्षा स्तोतृभ्यो माति धग्भगो नो बृहद् वदेम विदथे सुवीराः॥९॥२०॥

नूनम्। सा। ते। प्रति। वरम्। जरित्रे। दुहीयत्। इन्द्र। दक्षिणा। मघोनी। शिक्ष। स्तोतृऽभ्यः। मा। अति। धक्। भगः। नः। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीराः॥९॥

पदार्थः-(नूनम्) निश्चये **(सा)** विदुषी **(ते)** तव **(प्रति) (वरम्)** श्रेष्ठं कर्म **(जरित्रे)** स्तोत्रे **(दुहीयत्)** प्रपूरयेत् **(इन्द्र)** दातः **(दक्षिणा)** प्राणप्रदा **(मघोनी)** बहुधनयुक्ता **(शिक्ष)** उपदिश **(स्तोतृभ्यः)** विद्वद्भ्यः **(मा)** निषेधे **(अति) (धक्)** दहेः **(भगः)** ऐश्वर्य्यम् **(नः)** अस्मभ्यम् **(बृहत्)**

महद्विद्याजं विज्ञानशास्त्रम् **(वदेम)** उपदिशेम **(विदथे)** विद्यादाने यज्ञे **(सुवीरा:)** सुष्ठुविद्यासु व्यापिनो वीरा येषान्ते॥९॥

अन्वय:-हे इन्द्र राजन्! ते तव राज्ये या दक्षिणा मघोनी विदुषी जरित्रे प्रतिवरं दुहीयत् सा नूनं कल्याणकारिणी स्यात्। हे विदुषि! त्वं कन्या: शिक्ष न: स्तोतृभ्यो माति धक् येन सुवीरा वयं विदथे बृहद्भगो वदेम॥९॥

भावार्थ:-हे विद्वांसो या धर्मात्मानो विदुष्य: स्त्रिय: स्युस्ताभि: सर्वा: कन्या: शिक्षयन्तु यत: कार्यनाशो न स्यात् सर्वथा विद्यायुक्ता भूत्वाऽत्युत्तमानि कर्माणि कुर्य्यु:॥९॥

अत्र सूर्यविद्वदीश्वरविदुषीगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेदितव्या॥

इति सप्तदशं सूक्तं विंशो वर्गश्च समाप्त:॥

पदार्थ:–हे **(इन्द्र)** देनेवाले राजन्! **(ते)** आपके राज्य में जो **(दक्षिणा)** प्राण देनेवाली **(मघोनी)** बहुत धन से युक्त विदुषी **(जरित्रे)** स्तुति करनेवाले के लिये **(प्रतिवरम्)** श्रेष्ठ काम को **(दुहीयत्)** पूर्ण करे **(सा)** वह **(नूनम्)** निश्चय से कल्याण करनेवाली हो। हे विदुषि! तू कन्याओं को **(शिक्ष)** शिक्षा दे **(न:)** हम लोगों के लिये **(स्तोतृभ्य:)** स्तुति करनेवाले विद्वानों से **(मा, अति, धक्)** मत किसी काम का विनाश कर जिससे **(सुवीरा:)** सुन्दर विद्या में व्याप्त होनेवाले वीरों से युक्त हम लोग **(विदथे)** विद्यादानरूपी यज्ञ में **(बृहत्)** बहुत **(भग:)** ऐश्वर्य को **(वदेम)** कहें॥९॥

भावार्थ:-हे विद्वानो! जो धर्मात्मा, विदुषी वा पण्डितानी स्त्रियां हों उनसे सब कन्याओं को सुन्दर शिक्षा दिलाओ जिससे कार्य विनाश न हो॥९॥

इस सूक्त में विद्वान् और विदुषियों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति समझनी चाहिये॥

यह सत्रहवां सूक्त और बीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

प्रातरिति नवर्चस्याष्टादशसूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ पङ्क्तिः। ४, ८ भुरिक् पङ्क्तिः। ५, ६ स्वराट् पङ्क्तिः। ७ निचृत् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, ३, ९ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ यानविषयमाह॥

अब नव ऋचावाले अठारहवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में यान-विषय को कहते हैं।

प्राता रथो नवो योजि सस्निश्चतुर्युगस्त्रिकशः सप्तरश्मिः।
दशारित्रो मनुष्यः स्वर्षाः स इष्टिभिर्मतिभी रंह्यो भूत्॥१॥

प्रातरिति। रथः। नवः। योजि। सस्निः। चतुःऽयुगः। त्रिऽकशः। सप्तऽरश्मिः। दशऽअरित्रः। मनुष्यः। स्वःऽसाः। सः। इष्टिऽभिः। मतिऽभिः। रंह्यः। भूत्॥१॥

पदार्थः-(**प्रातः**) प्रभाते (**रथः**) गमनसाधनं यानम् (**नवः**) नवीनः (**योजि**) अयोजि (**सस्निः**) शेते यस्मिन् सः (**चतुर्युगः**) यश्चतुर्षु युज्यते सः (**त्रिकशः**) त्रिधा कशा गमनानि गमनसाधनानि वा यस्मिन् (**सप्तरश्मिः**) सप्तविधा रश्मयः किरणा यस्य सः (**दशारित्रः**) दश अरित्राणि स्तम्भनसाधनानि यस्मिन् सः (**मनुष्यः**) मननशीलः (**स्वर्षाः**) स्वः सुखं सुनोति येन सः (**सः**) (**इष्टिभिः**) सङ्गताभिः (**मतिभिः**) प्रज्ञाभिः (**रंह्यः**) गमयितुं योग्यः (**भूत्**) भवति॥१॥

अन्वयः-हे विद्वन्! शिल्पिभिर्यो दशारित्रः सस्निश्चतुर्युगस्त्रिकशः सप्तरश्मिर्नवो रथस्स्वर्षा मनुष्यश्च प्रातर्योजि स इष्टिभिर्मतिभी रंह्यो भूत्॥१॥

भावार्थः-ये मनुष्या ईदृग्यानेन यातुमायातुमिच्छेयुस्तेऽव्याहतगतयः स्युः॥१॥

पदार्थः-हे विद्वान्! शिल्पियों से जो (**दशारित्रः**) दश अरित्रोंवाला अर्थात् जिसमें दश रुकावट के साधन हैं (**सस्निः**) और जिसमें सोते हैं (**चतुर्युगः**) जो चार स्थानों में जोड़ा जाता (**त्रिकशः**) तीन प्रकार के गमन व गमन साधन जिसमें विद्यमान (**सप्तरश्मिः**) जिसकी सात प्रकार की किरणें (**नवः**) ऐसा नवीन (**रथः**) रथ और (**स्वर्षाः**) जिससे सुख उत्पन्न हो ऐसा और (**मनुष्यः**) विचारशील मनुष्य (**प्रातः**) प्रभात समय में (**योजि**) युक्त किया जाता (**सः**) वह (**इष्टिभिः**) सङ्गत हुई और प्राप्त हुई (**मतिभिः**) प्रज्ञाओं से (**रंह्यः**) चलाने योग्य (**भूत्**) होता है॥१॥

भावार्थः-जो मनुष्य ऐसे यान से जाने-आने को चाहें, वे निर्विघ्न गतिवाले हों॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सास्मा अरं प्रथमं स द्वितीयमुतो तृतीयं मनुषः स होता।
अन्यस्या गर्भमन्य ऊं जनन्त सो अन्येभिः सचते जेन्यो वृषा॥ २॥

सः। अस्मै। अरम्। प्रथमम्। सः। द्वितीयम्। उतो इति। तृतीयम्। मनुषः। सः। होता। सः। अन्यस्याः। गर्भम्। अन्ये। ऊम् इति। जनन्त। सः। अन्येभिः। सचते। जेन्यः। वृषा॥ २॥

पदार्थः-(**सः**) रथः (**अस्मै**) स्वामिने (**अरम्**) पर्य्याप्तम् (**प्रथमम्**) आदिमं पृथिव्यां गमनम् (**सः**) (**द्वितीयम्**) जले गमनम् (**उतो**) अपि (**तृतीयम्**) अन्तरिक्षे गमनम् (**मनुषः**) मनुष्यजातस्य पदार्थसमूहस्य (**सः**) (**होता**) सुखप्रदाता (**अन्यस्याः**) गतेः (**गर्भम्**) ग्रहणम् (**अन्ये**) अपरे विद्वांसः (**ऊम्**) वितर्के (**सः**) (**जनन्त**) (**अन्येभिः**) विद्वद्भिस्सह (**सचते**) समवैति (**जेन्यः**) जापयितुं शीलः (**वृषा**) बलिष्ठः॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्य! सोऽस्मै प्रथमं स द्वितीयमुतो तृतीयं सचते स मनुषो होता स जेन्यो वृषा सन्नन्यस्या गर्भमरं सचते तमू अन्येभिरन्ये जनन्त॥ २॥

भावार्थः-विद्वांसो यदि विद्युदादिरूपमग्निं यानेषु संप्रयुञ्जते तर्ह्ययं सर्वाणि यानानि सर्वा गतीर्गमयति विजयहेतुश्च भवति॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्य! (**सः**) वह रथयान गमन साधन (**अस्मै**) इस स्वामी के लिये कि जो बनाने वाला है (**प्रथमम्**) पहिले अर्थात् पृथिवी में गमन (**सः**) वह (**द्वितीयम्**) दूसरे जल में गमन (**उतो**) और (**तृतीयम्**) तीसरे अन्तरिक्ष में गमन को सम्बद्ध करता मिलाता है तथा (**सः**) वह (**मनुषः**) मनुष्यों से उत्पन्न हुए सर्व पदार्थ का (**होता**) सुख देनेवाला (**सः**) वह (**जेन्यः**) विजय करानेवाला और (**वृषा**) अत्यन्त बलयुक्त होता हुआ (**अन्यस्याः**) दूसरी गति का (**गर्भम्**) ग्रहण (**अरम्**) पूर्ण (**सचते**) सम्बद्ध करता है (**ऊम्**) उसी को (**अन्येभिः**) और विद्वानों के साथ (**अन्ये**) और विद्वान् (**जनन्त**) उत्पन्न करें॥ २॥

भावार्थः-विद्वान् जन यदि बिजुली रूप अग्नि को रथों में अच्छे प्रकार युक्त करें तो यह समस्त यानों को सब गतियों से चलाता और विजय का हेतु होता है॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

हरी नु कं रथ इन्द्रस्य योजमायै सूक्तेन वचसा नवेन।
मो षु त्वामत्र बहवो हि विप्रा नि रीरमन्यजमानासो अन्ये॥ ३॥

हरी इति। नु। कम्। रथे। इन्द्रस्य। योजम्। आऽयै। सुऽउक्तेन। वचसा। नवेन। मो इति। सु। त्वाम्। अत्र। बहवः। हि। विप्राः। नि। रीरमन्। यजमानासः। अन्ये॥ ३॥

पदार्थः-(**हरी**) धारणाकर्षणवेगादिगुणौ वाय्वग्नी (**नु**) सद्यः (**कम्**) सुखम् (**रथे**) याने (**इन्द्रस्य**) विद्युतः (**योजम्**) युनज्मि (**आयै**) एतुं गन्तुम् (**सूक्तेन**) सुष्ठु प्रतिपादितेन (**वचसा**) भाषणेन (**नवेन**) नूतनेन (**मो**) (**सु**) (**त्वाम्**) (**अत्र**) (**बहवः**) (**हि**) (**विप्राः**) मेधाविनः (**नि**) नितराम् (**रीरमन्**) रमयन्ति (**यजमानासः**) सम्यग् ज्ञातारः (**अन्ये**)॥ ३॥

अन्वयः-हे विद्वन्! य इन्द्रस्य रथे हरी नु कं साध्नुवन्ति यानहमत्र सूक्तेन वचसा नवेनायै योजमत्र बहवो विप्रास्त्वां हि सुनिरीरमन्। अन्ये यजमानासश्चात्र विपरीता मो रीरमन्॥ ३॥

भावार्थः-ये विद्युद्रथं न साध्नुवन्ति ते सर्वत्र रन्तुं रमयितुं च न शक्नुवन्ति॥ ३॥

पदार्थः-हे विद्वान्! जो (**इन्द्रस्य**) बिजुली रूप अग्नि सम्बन्धी (**रथे**) यान में (**हरी**) धारण, आकर्षण और वेग आदि गुणोंवाले वायु और अग्नि (**नु**) शीघ्र (**कम्**) सुख को सिद्ध करते हैं वा जिनको मैं (**अत्र**) इसमें (**सूक्तेन**) सुन्दर प्रतिपादन किये (**वचसा**) भाषण से (**नवेन**) नवीन प्रबन्ध से (**आयै**) गमन करने को (**योजम्**) युक्त करता हूं, इस रथ में (**बहवः**) बहुत (**विप्राः**) मेधावी जन (**त्वाम्**) आपको (**हि**) ही (**सु, नि, रीरमन्**) अच्छे प्रकार रमा रहे हैं (**अन्ये**) और (**यजमानासः**) सम्यग् ज्ञाता भी अर्थात् उन मेधावियों से दूसरे विज्ञानवान् जन भी इस उक्त रथ में विपरीत हैं, वे (**मो**) नहीं रमाते हैं॥ ३॥

भावार्थः-जो बिजुली-रथ को नहीं सिद्ध करते हैं, वे सर्वत्र आप न रम सकते हैं और न दूसरों को रमा सकते हैं॥ ३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ द्वाभ्यां हरिभ्यामिन्द्र याह्या चतुर्भिरा षड्भिर्हूयमानः।
आष्टाभिर्दशभिः सोमपेयमयं सुतः सुमख मा मृधस्कः॥ ४॥

आ। द्वाभ्याम्। हरिऽभ्याम्। इन्द्र। याहि। आ। चतुःऽभिः। आ। षट्ऽभिः। हूयमानः। आ। अष्टाभिः। दशऽभिः। सोमऽपेयम्। अयम्। सुतः। सुऽमख। मा। मृधः। करिति कः॥ ४॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(द्वाभ्याम्)** **(हरिभ्याम्)** हरणशीलाभ्यां पदार्थाभ्याम् **(इन्द्र)** परमैश्वर्ययुक्त **(याहि)** गच्छ **(आ)** समन्तात् **(चतुर्भिः)** **(आ)** **(षड्भिः)** **(हूयमानः)** **(आ)** **(अष्टाभिः)** **(दशभिः)** **(सोमपेयम्)** सोमानां पदार्थानां पातुं योग्यम् **(अयम्)** **(सुतः)** निष्पन्नः **(सुमख)** शोभना मखा यज्ञा यस्य तत्सम्बुद्धौ **(मा)** निषेधे **(मृधः)** अभिकाङ्क्षितान् संग्रामान् **(कः)** कुर्य्याः॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! हूयमानस्त्वं द्वाभ्यां हरिभ्यां युक्तेन यानेना याहि चतुर्भिर्युक्तेनायाहि। षड्भिर्युक्तेनायाहि। अष्टाभिर्दशभिश्च युक्तेन न योऽयं सुतः सोमस्तं सोमपेयमायाहि। हे सुमख! त्वं सज्जनैस्सह मृधो मा कः॥४॥

भावार्थः-येऽनेकैर्वह्न्यादिभिः पदार्थैर्जनितैर्यन्त्रैश्चालितेषु यानेषु स्थित्वा गच्छन्त्यागच्छन्ति ते स्तुत्या जायन्ते ये धार्मिकैः सह विरोधं न कुर्वन्ति ते विजयिनो भवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** परमैश्वर्युयुक्त! **(हूयमानः)** बुलाये हुए आप **(द्वाभ्याम्)** दो **(हरिभ्याम्)** हरणशील पदार्थों के साथ यान से **(आ, याहि)** आइये, **(चतुर्भिः)** चार हरणशील पदार्थों से युक्त यान से आओ, **(षड्भिः)** छः पदार्थों से युक्त यान से आओ, **(अष्टाभिः)** आठ वा **(दशभिः)** दश पदार्थों से युक्त यान से आओ, जो **(अयम्)** यह **(सुतः)** उत्पन्न किया हुआ पदार्थों का पीने योग्य रस है, उस **(सोमपेयम्)** पदार्थों के रस के पीने के लिये आओ, हे **(सुमख)** सुन्दर यज्ञोंवाले! आप सज्जनों के साथ **(मृधः)** अभीष्ट संग्रामों को **(मा, कः)** मत करो॥४॥

भावार्थः-जो अनेक अग्नि आदि पदार्थों से उत्पन्न किये हुए यन्त्रों से चलाये हुए यानों में स्थित होकर जाते-आते हैं, वे स्तुति के साथ प्रकट होते हैं। जो धार्मिकों के साथ विरोध नहीं करते, वे विजयी होते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ विंशत्या त्रिंशता याह्यर्वाङा चत्वारिंशता हरिभिर्युजानः।

आ पञ्चाशता सुरथेभिरिन्द्रा षष्ट्या सप्तत्या सोमपेयम्॥५॥२१॥

आ। विंशत्या। त्रिंशता। याहि। अर्वाङ्। आ। चत्वारिंशता। हरिऽभिः। युजानः। आ। पञ्चाशता। सुऽरथेभिः। इन्द्र। आ। षष्ट्या। सप्तत्या। सोमऽपेयम्॥५॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(विंशत्या)** एतत्संख्यया संख्यातैः **(त्रिंशता)** **(याहि)** **(अर्वाङ्)** योऽधोऽञ्चति सः **(आ)** **(चत्वारिंशता)** **(हरिभिः)** हरणशीलैः पदार्थैः **(युजानः)** युक्तः सन् **(आ)**

(पञ्चाशता) (सुरथेभिः) शोभनैर्यानैः **(इन्द्र)** असंख्यैश्वर्यप्रद **(आ) (षष्ट्या) (सप्तत्या) (सोमपेयम्)** सोमेष्वोषधीषु यः पेयो रसस्तम्॥५॥

अन्वयः-हे इन्द्र! युजानस्त्वं विंशत्या त्रिंशता च हरिभिश्चालितेन यानेनार्वाङ् सोमपेयमायाहि चत्वारिंशता युक्तेन चायाहि। पञ्चाशता हरिभिर्युक्तैः सुरथेभिः षष्ट्या सप्तत्या च हरिभिर्युक्तैः सुरथेभिरायाहि॥५॥

भावार्थः-यथा विंशतिस्त्रिंशच्चत्वारिंशत्पञ्चाशत्षष्टिः सप्ततिश्च बलिष्ठा अश्वा युगपद्युक्त्वा यानं सद्यो गमयन्ति ततोऽप्यधिकवेगेन वह्न्यादयो गमयन्ति॥५॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** असंख्य ऐश्वर्य देनेवाले! **(युजानः)** युक्त होते हुए आप **(विंशत्या)** बीस **(त्रिंशता)** और तीस **(हरिभिः)** हरनेवाले पदार्थों से चलाये हुए यान से **(अर्वाङ्)** जो नीचे को जाता उस **(सोमपेयम्)** सोमादि ओषधियों में पीने योग्य रस को **(आ, याहि)** प्राप्त होओ आओ, **(चत्वारिंशता)** चालीस पदार्थों से युक्त रथ से **(आ)** आओ, **(पञ्चाशता)** पचास हरणशील पदार्थों से युक्त **(सुरथेभिः)** सुन्दर रथों से **(आ)** आओ, **(षष्ट्या)** साठ वा **(सप्तत्या)** सत्तर हरणशील पदार्थों से युक्त सुन्दर रथों से आओ॥५॥

भावार्थः-जैसे बीस, तीस, चालीस, साठ, सत्तर बलवान् घोड़े एक साथ जोड़ कर यान को शीघ्र चलाते हैं, उससे अधिक वेग से अग्नि आदि पदार्थ यान को ले जाते हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आशी॒त्या न॑व॒त्या या॑ह्य॒र्वाङा श॒तेन॒ हरि॑भिरु॒ह्यमा॑नः।

अ॒यं हि ते॑ शु॒नहो॑त्रेषु॒ सोम॒ इन्द्र॑ त्वा॒या परि॑षिक्तो॒ मदा॑य॥६॥

आ। अ॒शी॒त्या। न॒व॒त्या। या॒हि। अ॒र्वाङ्। आ। श॒तेन॑। हरि॑ऽभिः। उ॒ह्यमा॑नः। अ॒यम्। हि। ते॒। शु॒नऽहो॑त्रेषु। सोम॑ः। इन्द्र॑। त्वा॒ऽया। परि॑ऽसिक्तः। मदा॑य॥६॥

पदार्थः-**(आ) (अशीत्या) (नवत्या) (याहि) (अर्वाङ्) (आ) (शतेन) (हरिभिः) (उह्यमानः)** गम्यमानः **(अयम्) (हि) (ते)** तव **(शुनहोत्रेषु)** शुनं सुखं जुह्वति ददति तेषु। **शुनमिति सुखनामसु पठितम्।** (निघं०३.६) **(सोमः)** ओषधिगणः **(इन्द्र)** दुःखविदारक **(त्वाया)** त्वत्कामनया **(परिषिक्तः)** परितः सर्वतोऽन्यैरुत्तमैर्द्रव्यैः सिक्तः **(मदाय)** आनन्दाय॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ते तव त्वाया योऽयं शुनहोत्रेषु मदाय सोमः परिषिक्तोऽस्ति तं हि त्वमर्वाङ् सन्नशीत्या नवत्या हरिभिर्युक्तेन यानेनोह्यमानो याहि शतेन मदाय चायाहि॥६॥

भावार्थः-य ओषधीसेवनसुपथ्याभ्यां रोगराहित्येनानन्दिताः सन्तः शतविधानि यानानि यन्त्राणि च निर्मिमते त अध ऊर्ध्वं गन्तुं शक्नुवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** दुःख विदीर्ण करनेवाले! **(ते)** आपके **(त्वाया)** आपकी कामना से जो **(अयम्)** यह **(शुनहोत्रेषु)** सुख देनेवाले कलाघरों में [आनन्द के लिये **(सोमः)** ओषधियों का समूह] **(परिषिक्तः)** सब ओर से उत्तम पदार्थों से सींचा हुआ है **(हि)** उसी को आप **(अर्वाङ्)** नीचे जाते हुए **(अशीत्या)** अस्सी **(नवत्या)** नब्बे **(हरिभिः)** हरणशील पदार्थों से युक्त यान से **(उह्यमानः)** चलाये जाते हुए **(आ)** आओ, **(शतेन)** सौ पदार्थों से युक्त रथ से **(मदाय)** आनन्द के लिये **(आ, याहि)** आओ॥६॥

भावार्थः-जो ओषधियों के सेवन और सुन्दर पथ्य से नीरोगता से आनन्दित होते हुए सौ प्रकार के यानों और यन्त्रों को बनाते हैं, वे नीचे-ऊपर जा सकते हैं॥६॥

अथ पदार्थविषयमाह॥

अब पदार्थों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

मम ब्रह्मेन्द्र याह्यच्छा विश्वा हरी धुरि धिष्वा रथस्य।

पुरुत्रा हि विहव्यो बभूथास्मिञ्छूर सवने मादयस्व॥७॥

मम। ब्रह्म। इन्द्र। याहि। अच्छ। विश्वा। हरी इति। धुरि। धिष्व। रथस्य। पुरुऽत्रा। हि। विऽहव्यः। बभूथ। अस्मिन्। शूर। सवने। मादयस्व॥७॥

पदार्थः-**(मम)** **(ब्रह्म)** धनम् **(इन्द्र)** धनमिच्छुक **(याहि)** प्राप्नुहि **(अच्छ)** सम्यग् गत्या। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(विश्वा)** सर्वाणि **(हरी)** धारणाकर्षणौ **(धुरि)** धारकेऽवयवे **(धिष्व)** **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(रथस्य)** यानसमूहस्य **(पुरुत्रा)** पुरूणि बहूनि **(हि)** खलु **(विहव्यः)** विहोतुमर्हः **(बभूथ)** भव **(अस्मिन्)** **(शूर)** निर्भय **(सवने)** ऐश्वर्ये **(मादयस्व)** आनन्दयस्व॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं मम ब्रह्म याहि यो रथस्य धुरि हरी स्तस्ताभ्यां यानं धिष्व तेन पुरुत्रा विश्वा धनान्यच्छायाहि। हे शूर! अस्मिन् सवने विहव्यस्त्वं बभूथ अस्मान् हि मादयस्व॥७॥

भावार्थः-सर्वैः सज्जनैः सर्वान् प्रत्येवं वाच्यं येऽस्माकं पदार्थास्सन्ति ते युष्मत् सुखाय सन्तु यथा यूयमस्मानानन्दयध्वं तथा वयं युष्मानानन्दयेम॥७॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** धन की इच्छा करनेवाले! आप **(मम)** मेरे **(ब्रह्म)** धन को **(याहि)** प्राप्त होओ, जो **(रथस्य)** यानसमूह के **(धुरि)** धारण करनेवाले अङ्ग में [अर्थात् धुरि में] **(हरी)** धारण

और आकर्षण खींचने का गुण जिनमें है, उन दोनों से यान रथादि को **(धिष्व)** धारण करो, उससे **(पुरुत्रा)** बहुत **(विश्वा)** समस्त धनों को **(अच्छ)** उत्तम गति से **(याहि)** आओ [अर्थात् प्राप्त होओ]। हे **(शूर)** निर्भय! **(अस्मिन्)** इस **(सवने)** ऐश्वर्य के निमित्त **(विहव्यः)** विविध प्रकार ग्रहण करने योग्य आप **(बभूथ)** होओ और हम लोगों को **(हि)** ही **(मादयस्व)** आनन्दित कीजिये॥७॥

भावार्थः-सब सज्जनों को सबके प्रति ऐसा कहना चाहिये कि जो हमारे पदार्थ हैं, वे आप के सुख के लिये हों। जैसे तुम लोग हम लोगों को आनन्दित करो, वैसे हम लोग तुमको आनन्दित करें॥७॥

अथ ईश्वरविद्वद्विषयमाह॥

अब ईश्वर और विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

न मे इन्द्रेण सख्यं वि योषदुस्मभ्यमस्य दक्षिणा दुहीत।
उप ज्येष्ठे वरूथे गभस्तौ प्रायेप्राये जिगीवांसः स्याम॥८॥

न। मे। इन्द्रेण। सख्यम्। वि। योषत्। अस्मभ्यम्। अस्य। दक्षिणा। दुहीत। उप। ज्येष्ठे। वरूथे। गभस्तौ। प्रायेऽप्राये। जिगीवांसः। स्याम॥८॥

पदार्थः-**(न)** निषेधे **(मे)** मम **(इन्द्रेण)** परमेश्वरेणाप्तेन विदुषा वा **(सख्यम्)** मित्रस्य भावः **(वि)** **(योषत्)** विनश्येत् **(अस्मभ्यम्)** **(अस्य)** **(दक्षिणा)** विद्यासुशिक्षा दानम् **(दुहीत)** परिपूर्णा स्यात् **(उप)** **(ज्येष्ठे)** प्रशस्ये **(वरूथे)** अत्युत्तमे **(गभस्तौ)** विज्ञानप्रकाशे **(प्रायेप्राये)** कमनीये कमनीये **(जिगीवांसः)** जेतुं शीलाः **(स्याम)** भवेम॥८॥

अन्वयः-यस्यास्य दक्षिणाऽस्मभ्यं ज्येष्ठे वरूथे गभस्तौ प्रायेप्राये उप दुहीत तेनेन्द्रेण मम सख्यं यथा न वियोषत्तथा भवतु येन वयं जिगीवांसः स्याम॥८॥

भावार्थः-ये सत्यप्रेम्णा जगदीश्वरमाप्तान् विदुषो वा प्राप्तुं सेवितुञ्च कामयन्ते तद्विरोधं नेच्छन्ति ते विद्वांसो भूत्वा ज्येष्ठा जायन्ते॥८॥

पदार्थः-जिस **(अस्य)** इस **(दक्षिणा)** विद्या और सुन्दर शिक्षा का दान **(अस्मभ्यम्)** हम लोगों के लिये **(ज्येष्ठे)** प्रशंसा योग्य **(वरूथे)** अतीव उत्तम **(गभस्तौ)** विज्ञान प्रकाश में **(प्रायेप्राये)** और मनोहर मनोहर परमेश्वर वा आप्त विद्वान् में **(उप, दुहीत)** परिपूर्ण होती हो उस **(इन्द्रेण)** उक्त परमेश्वर वा आप्त विद्वान् से मेरी **(सख्यम्)** मित्रता जैसे **(न, वियोषत्)** न विनष्ट हो, वैसे हो, जिससे हम लोग **(जिगीवांसः)** विजयशील **(स्याम)** हों॥८॥

भावार्थः-जो सत्य प्रेम से जगदीश्वर वा आप्त विद्वानों को प्राप्त होने और सेवन करने की कामना करते हैं और उसके विरोध की इच्छा नहीं चाहते हैं, वे विद्वान् होकर ज्येष्ठ होते हैं अर्थात् अति प्रशंसित होते हैं॥८॥

अथेश्वरोपदेशकगुणानाह॥

अब ईश्वर और उपदेशकों के गुणों को कहते हैं॥

नूनं सा ते प्रति वरं जरित्रे दुहीयदिन्द्र दक्षिणा मघोनी।
शिक्षा स्तोतृभ्यो माति धग्भगो नो बृहद्वदेम विदथे सुवीराः॥९॥२२॥

नूनम्। सा। ते। प्रति। वरम्। जरित्रे। दुहीयत्। इन्द्र। दक्षिणा। मघोनी। शिक्ष। स्तोतृऽभ्यः। मा। अति। धक्। भगः। नः। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीराः॥९॥

पदार्थः-**(नूनम्)** **(सा)** धारणा **(ते)** तव **(प्रति)** **(वरम्)** **(जरित्रे)** **(दुहीयत्)** **(इन्द्र)** **(दक्षिणा)** **(मघोनी)** **(शिक्षा)** **(स्तोतृभ्यः)** अध्यापकेभ्यः **(मा)** **(अति)** **(धक्)** **(भगः)** ऐश्वर्यम् **(नः)** अस्मान् **(बृहत्)** **(वदेम)** **(विदथे)** विद्याप्रचारे **(सुवीराः)**॥९॥

अन्वयः-हे इन्द्र जगदीश्वर सत्योपदेशक वा! ते तव सा जरित्रे वरं दक्षिणा मघोनी स्तोतृभ्यः प्रति दुहीयत्। त्वमस्मान्नूनं शिक्ष नो भगो मातिधग्यतः सुवीरा वयं विदथे बृहद्वदेम॥९॥

भावार्थः-या भगवत आप्तानां विदुषां शिक्षा मनुष्यान् प्राप्नोति सा शोकसागरात् पृथक् करोति महदैश्वर्यमपि नाभिमानयतीति॥९॥

अत्र यानपदार्थेश्वरविद्वदुपदेशकबोधवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यष्टादशं सूक्तं द्वाविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** जगदीश्वर वा सत्योपदेशक! **(ते)** आपकी **(सा)** वह धारणा **(जरित्रे)** स्तुति प्रशंसा करनेवाले के लिये और **(दक्षिणा)** विद्या सुशिक्षा रूपी दक्षिणा **(मघोनी)** जो कि बहुत ऐश्वर्ययुक्त है वह **(स्तोतृभ्यः)** अध्यापकों के लिये **(प्रति, दुहीयत्)** प्रत्येक विषय को परिपूर्ण करती है, आप हम लोगों को **(नूनम्)** निश्चय से **(शिक्ष)** शिक्षा देओ, **(नः)** हम लोगों के लिये **(भगः)** ऐश्वर्य को **(मा,अति, धक्)** मत नष्ट करो, जिससे **(सुवीराः)** श्रेष्ठ वीरोंवाले हम लोग **(विदथे)** विद्याप्रचार में **(बृहत्)** बहुत कुछ **(वदेम)** कहें॥९॥

भावार्थः-जो ईश्वर और आप्त विद्वानों की शिक्षा मनुष्यों को प्राप्त होती है, वह शोकरूपी समुद्र से अलग करती है और बहुत ऐश्वर्य का भी अभिमान नहीं कराती है॥९॥

यहाँ यान, पदार्थ, ईश्वर, विद्वान् वा उपदेशकों के बोध का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह अठारहवां सूक्त और बाईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अपायीत्येकोनविंशतितमस्य नवर्चस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, २, ६, ८ विराट् त्रिष्टुप्। ९ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३ पङ्क्तिः। ४, ७ भुरिक् पङ्क्तिः। ५ निचृत् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब नव ऋचावाले उन्नीसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में विद्वानों के विषय का वर्णन करते हैं॥

अपाय्यस्यान्धसो मदाय मनीषिणः सुवानस्य प्रयसः।
यस्मिन्निन्द्रः प्रदिवि वावृधान ओको दधे ब्रह्मण्यन्तश्च नरः॥१॥

अपायि। अस्य। अन्धसः। मदाय। मनीषिणः। सुवानस्य। प्रयसः। यस्मिन्। इन्द्रः। प्रऽदिवि। ववृधानः। ओकः। दधे। ब्रह्मण्यन्तः। च। नरः॥१॥

पदार्थः-(**अपायि**) (**अस्य**) (**अन्धसः**) अन्नस्य (**मदाय**) आनन्दाय (**मनीषिणः**) जितमनस्काः (**सुवानस्य**) उत्पद्यमानस्य (**प्रयसः**) कमनीयस्य (**यस्मिन्**) (**इन्द्रः**) सूर्यः (**प्रदिवि**) प्रकृष्टप्रकाशे (**वावृधानः**) वर्द्धमानः (**ओकः**) स्थानम् (**दधे**) दधाति (**ब्रह्मण्यन्तः**) ब्रह्म महद्धनं कामयमानाः (**च**) (**नरः**) नेतारः॥१॥

अन्वयः-हे मनीषिणो! ब्रह्मण्यन्तो नरश्च यस्मिन् प्रदिवि वावृधान इन्द्र ओको दधे तत्र सुवानस्य प्रयसोऽस्याऽन्धसो मदाय युष्माभिरपायि तद्वयमपि गृह्णीयाम॥१॥

भावार्थः-विद्वांसो यस्मिन् वर्द्धमाना विद्यां दधति तत्र वयमपि स्थित्वैतद्विज्ञानं स्वीकुर्य्याम॥१॥

पदार्थः-हे (**मनीषिणः**) मनीषी=मन जीते हुए! (**ब्रह्मण्यन्तः**) बहुत धन की कामना करनेवाले (**च**) और (**नरः**) नायक अग्रगन्ता मनुष्यो! (**यस्मिन्**) जिस (**प्रदिवि**) प्रकृष्ट प्रकाश में (**वावृधानः**) बढ़ा हुआ (**इन्द्रः**) सूर्य (**ओकः**) स्थान को (**दधे**) धारण करता है, उसमें (**सुवानस्य**) उत्पद्यमान (**प्रयसः**) मनोहर (**अस्य**) इस (**अन्धसः**) अन्न को (**मदाय**) आनन्द के लिये तुम लोगों ने (**अपायि**) पान किया, उस सबको हम लोग भी ग्रहण करें॥१॥

भावार्थः-विद्वान् जन जिसमें बढ़े हुए विद्या को धारण करते हैं, उसमें हम लोग भी बैठें, इस विज्ञान को स्वीकार करें॥१॥

अथ सूर्यविषयमाह॥

अब सूर्य विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अस्य मन्दानो मध्वो वज्रहस्तोऽहिमिन्द्रो अर्णोवृतं वि वृश्चत्।

प्र यद् वयो न स्वसराण्यच्छा प्रयांसि च नदीनां चक्रमन्त॥ २॥

अस्य। मन्दानः। मध्वः। वज्रऽहस्तः। अहिम्। इन्द्रः। अर्णःऽवृतम्। वि। वृश्चत्। प्र। यत्। वयः। न। स्वसराणि। अच्छ। प्रयांसि। च। नदीनाम्। चक्रमन्त॥ २॥

पदार्थः-(अस्य) (मन्दानः) प्राप्तः **(मध्वः)** विज्ञेयस्य **(वज्रहस्तः)** किरणपाणिः **(अहिम्)** मेघम् **(इन्द्रः)** सूर्य्यः **(अर्णोवृतम्)** अर्णांसि वर्त्तन्ते यस्मिँस्तम् **(वि) (वृश्चत्)** वृश्चति **(प्र) (यत्)** यस्मात् **(वयः)** पक्षिणः **(न)** इव **(स्वसराणि)** दिनानि **(अच्छ)** सम्यक्। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(प्रयांसि)** कमनीयानि स्रोतांसि **(च) (नदीनाम्)** सरिताम् **(चक्रमन्त)** रमन्ते॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यद्यस्माद्वयो न स्वसराणि नदीनां प्रयांसि चाऽच्छा प्रचक्रमन्त यो वज्रहस्तोऽस्य मध्वो जगतो मध्ये मन्दान इन्द्रोऽर्णोवृतमहिं विवृश्चत् तं यथावद्विजानीत॥ २॥

भावार्थः-यथा पक्षिणो गच्छन्त्यागच्छन्ति तथैवाहोरात्रा वर्त्तन्ते यथा सूर्योऽस्य जगत आनन्दयितास्ति तथा सज्जनैर्वर्त्तितव्यम्॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यत्)** जिससे **(वयः)** पखेरुओं के **(न)** समान **(स्वसराणि)** दिनों को **(च)** और **(नदीनाम्)** नदियों के **(प्रयांसि)** मनोहर स्रोतों को **(अच्छ)** अच्छे प्रकार **(प्रचक्रमन्त)** रमते हैं, जो **(वज्रहस्तः)** किरणरूपी हाथोंवाला **(अस्य)** इस **(मध्वः)** विशेष कर जानने योग्य जगत् के बीच **(मन्दानः)** प्राप्त हुआ **(इन्द्रः)** सूर्य **(अर्णोवृतम्)** जिसमें जल विद्यमान हैं, उस **(अहिम्)** मेघ को **(वि, वृश्चत्)** विभिन्न करता है, उसको यथावत् जानो॥ २॥

भावार्थः-जैसे पक्षी जाते-आते हैं, वैसे रात्रि-दिन वर्त्तमान हैं। जैसे सूर्य इस जगत् को आनन्द देनेवाला है, वैसे सज्जनों को वर्त्तना चाहिये॥ २॥

पुनः सूर्यविषयमाह॥

फिर सूर्य विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स माहिन इन्द्रो अर्णो अपां प्रैरयदहिहाच्छा समुद्रम्।
अजनयत् सूर्यं विदद् गा अक्तुनाह्नां वयुनानि साधत्॥ ३॥

सः। माहिनः। इन्द्रः। अर्णः। अपाम्। प्र। ऐरयत्। अहिऽहा। अच्छ। समुद्रम्॥ अजनयत्। सूर्यम्। विदत्। गाः। अक्तुना। अह्नाम्। वयुनानि। साधत्॥ ३॥

पदार्थः-(सः) (माहिनः) महान् **(इन्द्रः)** विद्युत् **(अर्णः)** जलम् **(अपाम्)** अन्तरिक्षस्य मध्ये **(प्र) (ऐरयत्) (अहिहा)** मेघस्य हन्ता **(अच्छ)** यथाक्रमम्। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः।

(समुद्रम्) सागरम् **(अजनयत्)** जनयति **(सूर्यम्)** सवितृमण्डलम् **(विदत्)** प्राप्नोति **(गाः)** पृथिवी **(अक्तुना)** रात्र्या **(अह्नाम्)** दिनानाम् **(वयुनानि)** प्रज्ञानानि **(साधत्)** साध्नुयात्॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा स माहिनाऽहिहेन्द्रोऽपामर्णोऽच्छ प्रैरयत्। समुद्रं सूर्यमजनयदक्तुनाऽह्नां गा विदद्वयुनानि साधत्तथा यूयमप्याचरत॥३॥

भावार्थः-ये मनुष्या विद्युद्वद्वेगाऽऽकर्षणयुक्ताः शत्रुहन्तारो विद्यादिशुभगुणप्रचारका अन्यायाऽन्धकारनाशका जगतः सुखं साध्नुवन्ति ते सर्वत्र पूज्यन्ते॥३॥

पदार्थः–हे मनुष्यो! जैसे **(सः)** वह **(माहिनः)** बड़ा **(अहिहा)** मेघ का हननेवाला **(इन्द्रः)** बिजुली रूप अग्नि **(अपाम्)** अन्तरिक्ष के बीच **(अर्णः)** जल को **(अच्छ)** यथा क्रम से **(प्रैरयत्)** प्रेरणा देता है, **(समुद्रम्)** समुद्र को और **(सूर्यम्)** सूर्यमण्डल को **(अजनयत्)** उत्पन्न करता है, **(अक्तुना)** रात्रि के साथ **(अह्नाम्)** दिनों के सम्बन्ध करनेवाली **(गाः)** पृथिवियों को **(विदत्)** प्राप्त होता और **(वयुनानि)** उत्तम ज्ञानों को **(साधत्)** सिद्ध करता, वैसे तुम लोग भी आचरण करो॥३॥

भावार्थः-जो मनुष्य बिजुली के समान वेग और आकर्षणयुक्त शत्रुओं के हनने और विद्यादि शुभ गुणों को प्रचार करनेवाले हैं, अन्याय और अन्धकार का विनाश करनेवाले संसार का सुख सिद्ध करते हैं, वे सर्वत्र पूज्य होते हैं॥३॥

अथ दातृविषयमाह॥

अब दाता के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सो अप्रतीनि मनवे पुरूणीन्द्रो दाशद्दाशुषे हन्ति वृत्रम्।
सद्यो यो नृभ्यो अतसाय्यो भूत् पस्पृधानेभ्यः सूर्यस्य सातौ॥४॥

सः। अप्रतीनि। मनवे। पुरूणि। इन्द्रः। दाशत्। दाशुषे। हन्ति। वृत्रम्। सद्यः। यः। नृऽभ्यः। अतसाय्यः। भूत्। पस्पृधानेभ्यः। सूर्यस्य। सातौ॥४॥

पदार्थः-**(सः)** **(अप्रतीनि)** अविद्यमाना प्रतीतिः परिमाणं येषान्तानि **(मनवे)** मननशीलाय मनुष्याय **(पुरूणि)** बहूनि **(इन्द्रः)** सूर्य इव दाता **(दाशत्)** दद्यात् **(दाशुषे)** दात्रे **(हन्ति)** **(वृत्रम्)** मेघम् **(सद्यः)** **(यः)** **(नृभ्यः)** मनुष्येभ्यः **(अतसाय्यः)** परोपकारे निरन्तरं वर्त्तमानः **(भूत्)** भवति। अत्राडभावः। **(पस्पृधानेभ्यः)** स्पर्द्धमानेभ्य ईर्ष्यमानेभ्यो वा **(सूर्यस्य)** **(सातौ)** संविभागे॥४॥

अन्वयः-य इन्द्रो यथा सूर्यो वृत्रं हन्ति तथा शत्रून् हनन् दाशुषे मनवेऽप्रतीनि पुरूणि धनानि दाशत्सूर्यस्य सातावतसाय्यः सन् पस्पृधानेभ्यो नृभ्यः सद्यः आनन्दयिता भूत् स सर्वतः सत्कारं प्राप्नुयात्॥४॥

भावार्थः-येऽपरिमितं धनं संचिन्वन्ति जगदुपकारकेभ्यस्सुपात्रेभ्यः प्रयच्छन्ति ते सततमस्पर्द्धनीया भवन्ति॥४॥

पदार्थः-(यः) जो **(इन्द्रः)** सूर्य के समान देनेवाला जन जैसे सूर्य **(वृत्रम्)** मेघ को **(हन्ति)** हनता है, वैसे शत्रुओं को मारता हुआ **(दाशुषे)** दूसरे देनेवाले **(मनवे)** विचारशील मनुष्य के लिये **(अप्रतीनि)** जिनकी प्रतीति नहीं है, उन **(पुरूणि)** बहुत से धनों को **(दाशत्)** देवें वा **(सूर्यस्य)** सूर्य की **(सातौ)** साति में अर्थात् सूर्यमण्डलकृत विभाग में **(अतसाय्यः)** परोपकार में निरन्तर वर्त्तमान होता हुआ **(पस्पृधानेभ्यः)** स्पर्द्धा वा ईप्सा करनेवाले **(नृभ्यः)** मनुष्यों के लिये **(सद्यः)** शीघ्र आनन्द देनेवाला **(भूत्)** होता है **(सः)** वह सब स्थानों से सत्कार पाता है॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार[४] है। जो अपरिमित धन को इकट्ठा करते और जगत् के उपकारी सुपात्रों के लिये देते हैं, वे निरन्तर ईर्ष्या वा ईप्सा करने योग्य नहीं है॥४॥

अथ विद्युद्विषयमाह॥

अब बिजुली के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स सुन्वत इन्द्रः सूर्यमा देवो रिणङ्मर्त्याय स्तवान्।

आ यद् रयिं गुहदवद्यमस्मै भरदंशं नैतशो दशस्यन्॥५॥२३॥

सः। सुन्वते। इन्द्रः। सूर्यम्। आ। देवः। रिणक्। मर्त्याय। स्तवान्। आ। यत्। रयिम्। गुहत्ऽअवद्यम्। अस्मै। भरत्। अंशम्। न। एतशः। दशस्यन्॥५॥

पदार्थः-(सः) (सुन्वते) अभिषवं कुर्वते **(इन्द्रः)** विद्युत् **(सूर्य्यम्)** सवितारम् **(आ) (देवः)** देदीप्यमानः **(रिणक्)** रिणक्ति **(मर्त्याय) (स्तवान्)** स्तुतिः **(आ) (यत्)** यः **(रयिम्)** श्रियम्

---

४. संस्कृत-भावार्थ में 'वाचकलुप्तोपमालङ्कार' नहीं दिया है। संस्कृत-भावार्थ का कथन उचित प्रतीत होता है।

(गुहदवद्यम्) आच्छादितनिन्द्यम् **(अस्मै)** **(भरत्)** भरति **(अंशम्)** प्राप्तम् **(न)** निषेधे **(एतशः)** प्राप्नुवन् **(दशस्यन्)** उपक्षयन्॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यद्यो देव इन्द्रः सुन्वते सूर्य्यं मर्त्याय स्तवान्नारिणक् गुहदवद्यं रयिमस्मा आ भरत्। अंशं दशस्यन्नेतशो न भवति स युष्माभिरुपयोक्तव्यः॥५॥

भावार्थः-ये कस्याप्युन्नतेः क्षयं नेच्छन्ति सर्वस्यैश्वर्यं वर्द्धयन्ति ते सूर्यवदुपकारका भवन्ति॥५॥

पदार्थः–हे मनुष्यो! **(यत्)** जो **(देवः)** देदीप्यमान **(इन्द्रः)** बिजुली **(सुन्वते)** पदार्थों का सार निकालनेवाले मनुष्य के लिये **(सूर्य्यम्)** सवितृमण्डल को और **(मर्त्याय)** साधारण मनुष्य के लिये **(स्तवान्)** स्तुतियों को **(न, आ, रिणक्)** नहीं छोड़ती और **(गुहदवद्यम्)** ढंपे हुए निन्द्य **(रयिम्)** धन को **(अस्मै)** इस मनुष्य के लिये **(आ, भरत्)** आभूषित करती और **(अंशम्)** प्राप्त भाग को **(दशस्यन्)** नष्ट करती हुई **(एतशः)** प्राप्त नहीं होती **(सः)** वह बिजुली आप लोगों को उपयोग में लानी योग्य है॥५॥

भावार्थः-जो मनुष्य किसी की उन्नति के नाश की नहीं इच्छा करते, किन्तु सबके ऐश्वर्य को बढ़वाते हैं, वे सूर्य के समान उपकार करनेवाले होते हैं॥५॥

अथ सूर्यविषयमाह॥

अब सूर्य विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स रन्धयत् सदिवः सारथये शुष्णमशुषं कुयवं कुत्साय।
दिवोदासाय नवतिं च नवेन्द्रः पुरो व्यैरच्छम्बरस्य॥६॥

सः। रन्धयत्। सऽदिवः। सारथये। शुष्णम्। अशुषम्। कुयवम्। कुत्साय। दिवःऽदासाय। नवतिम्। च। नव। इन्द्रः। पुरः। वि। ऐरत्। शम्बरस्य॥६॥

पदार्थः-**(सः)** **(रन्धयत्)** संराध्नोति **(सदिवः)** द्यावा सह वर्त्तमानम् **(सारथये)** सुशिक्षिताय यानप्रचालकाय **(शुष्णम्)** बलम् **(अशुषम्)** अशुष्कमार्द्रम् **(कुयवम्)** कुत्सितसङ्गमम् **(कुत्साय)** निन्दिताय **(दिवोदासाय)** प्रकाशदात्रे **(नवतिम्)** **(च)** **(नव)** **(इन्द्रः)** सूर्यः **(पुरः)** पुराणि **(वि)** **(ऐरत्)** ऐरयति **(शम्बरस्य)** मेघस्य॥६॥

अन्वयः-यो मनुष्यो इन्द्रः कुत्साय सारथयेऽशुषं शुष्णं कुयवं सदिवो रन्धयद्दिवोदासाय नवनवतिं शम्बरस्य पुरो व्यैरत् स सततमुपयोक्तव्यः॥६॥

भावार्थः-ये मनुष्या दुष्टं बलं कुशिक्षां च निवर्त्य बलसुशिक्षाभ्यां कुसंस्कारान्निवार्य शतशो बोधाञ्जनयन्ति ते सर्वदा पूज्या भवन्ति॥६॥

पदार्थः-जो मनुष्यों को **(इन्द्रः)** सूर्य **(कुत्साय)** निन्दित **(सारथये)** अच्छे सीखे हुए यान चलानेवाले के लिये **(अशुषम्)** गीले **(शुष्णम्)** बल **(कुयवम्)** कुत्सित सङ्गम और **(सदिवः)** प्रकाश के सहित वर्त्तमान अर्थात् अन्तरिक्षस्थ पदार्थों को **(रन्धयत्)** अच्छे प्रकार सिद्ध करता है **(दिवोदासाय)** प्रकाश देनेवाले के लिये **(नव, नवतिम्, च)** निन्यानवे **(शम्बरस्य)** मेघ के **(पुरः)** पुरों को **(व्यैरत्)** प्रेरित करता है **(सः)** वह उपयोग में लाना योग्य है॥६॥

भावार्थः-जो मनुष्य दुष्ट बल को और कुशिक्षा को निवार के **[**=निवृत्त कर**]** बल और उत्तम शिक्षाओं से कुसंस्कारों को निवार के सैकड़ों बोधों को उत्पन्न करते हैं, वे सर्वदा पूज्य होते हैं॥६॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

एवा तं इन्द्रोचथमहेम श्रवस्या न त्मना वाजयन्तः।

अश्याम तत् साप्तमाशुषाणा ननमो वधरदेवस्य पीयोः॥७॥

एव। ते। इन्द्र। उचथम्। अहेम। श्रवस्या। न। त्मना। वाजयन्तः। अश्याम। तत्। साप्तम्। आशुषाणाः। ननमः। वधः। अदेवस्य। पीयोः॥७॥

पदार्थः-**(एव)** निश्चये। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(ते)** तव **(इन्द्र)** विद्वन् **(उचथम्)** वक्तव्यम् **(अहेम)** व्याप्नुयाम **(श्रवस्या)** श्रोतुं योग्यानि **(न)** इव **(त्मना)** आत्मना **(वाजयन्तः)** ज्ञापयन्तः **(अश्याम)** प्राप्नुयाम **(तत्)** **(साप्तम्)** सप्तविधम् **(आशुषाणाः)** सद्यः कुर्वाणाः **(ननमः)** नमेम **(वधः)** वध्यन्ते शत्रवो यस्मात्तच्छस्त्रम् **(अदेवस्य)** अविदुषः **(पीयोः)** पातुः॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ते त्मना वाजयन्तो वयं श्रवस्या नोचथमेवाहेम आशुषाणाः सन्तो वयं तत्साप्तमश्याम अदेवस्य पीयोर्वधोऽश्याम। परमेश्वरं च ननमः॥७॥

भावार्थः-ये मनुष्या वक्तव्यं वदेयुः प्राप्तव्यं प्राप्नुयुर्नमस्यं नमेयुर्हन्तव्यं हन्युर्ज्ञातव्यं जानीयुस्त एवाप्ता जायन्ते॥७॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** विद्वान्! **(ते)** आपके **(त्मना)** आत्मा से **(वाजयन्तः)** ज्ञान कराते हुए हम लोग **(श्रवस्या)** श्रवण करने योग्य पदार्थ के **(न)** समान **(उचथम्)** और कहने योग्य प्रस्ताव **(एव)** ही को **(अहेम)** व्याप्त हों तथा **(आशुषाणाः)** शीघ्रता करते हुए हम लोग **(तत्)** उस **(साप्तम्)** सात प्रकार के विषय को **(अश्याम)** व्याप्त हों, **(अदेवस्य)** अविद्वान् **(पीयोः)** पालना

करनेवाले सूर्य के **(वधः)** वध करनेवाले शस्त्र को व्याप्त हों और परमेश्वर को **(ननमः)** नमस्कार करें॥७॥

भावार्थः-जो मनुष्य कहने योग्य को कहें, पाने योग्य को पावें, नमने योग्य को नमें, मारने योग्य को मारें और जानने योग्य को जानें, वे ही आप्त होते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

एवा ते गृत्समदाः शूर मन्मावस्यवो न वयुनानि तक्षुः।
ब्रह्मण्यन्त इन्द्र ते नवीय इषमूर्जं सुक्षितिं सुम्नमश्युः॥८॥

एव। ते। गृत्सऽमदाः। शूर। मन्म। अवस्यवः। न। वयुनानि। तक्षुः। ब्रह्मण्यन्तः। इन्द्र। ते। नवीयः। इषम्। ऊर्जम्। सुऽक्षितिम्। सुम्नम्। अश्युः॥८॥

पदार्थः-**(एव)** अत्रापि दीर्घः। **(ते)** तव **(गृत्समदाः)** गृत्सोऽभिकाङ्क्षितो मद आनन्दो येषान्ते **(शूर)** **(मन्म)** मन्तव्यम् **(अवस्यवः)** आत्मनो रक्षणमिच्छवः **(न)** इव **(वयुनानि)** प्रज्ञानानि **(तक्षुः)** विस्तृणीयुः **(ब्रह्मण्यन्तः)** ब्रह्म धनं कामयन्तः **(इन्द्र)** विद्वन् **(ते)** तव **(नवीयः)** नवीनम् **(इषम्)** अन्नम् **(ऊर्जम्)** पराक्रमम् **(सुक्षितिम्)** शोभनां भूमिम् **(सुम्नम्)** सुखम् **(अश्युः)** प्राप्नुयुः॥८॥

अन्वयः-हे शूरेन्द्र! ये गृत्समदा ब्रह्मण्यन्तो जनास्ते मन्मावस्यवो न वयुनानि तक्षुस्ते एव ते तव नवीय इषमूर्जं सुक्षितिं सुम्नं चाश्युः॥८॥

भावार्थः-ये विदुषां सुशिक्षया विज्ञानवन्तो भवेयुस्तेऽनेकविधं सुखमश्नुयुः॥८॥

पदार्थः-हे **(शूर)** शूर **(इन्द्र)** विद्वान्! जो **(गृत्समदाः)** अभीष्ट आनन्दवाले **(ब्रह्मण्यन्तः)** धन की कामना करते हुए जन **(ते)** आपके **(मन्म)** मन्तव्य को और **(अवस्यवः)** अपने को रक्षा चाहते हुए के **(न)** समान **(वयुनानि)** उत्तम ज्ञानों को **(तक्षुः)** विस्तारें वे **(एव)** ही **(ते)** आपके **(नवीयः)** नवीन **(इषम्)** अन्न और **(ऊर्जम्)** पराक्रम को तथा **(सुक्षितिम्)** सुन्दर भूमि को और **(सुम्नम्)** सुख को **(अश्युः)** प्राप्त हों॥८॥

भावार्थः-जो विद्वानों की उत्तम शिक्षा से विज्ञानवान् हों, वे अनेकविध सुख को प्राप्त हों॥८॥

अथ दक्षिणागुणानाह॥

अब दक्षिणा के गुणों को कहते हैं॥

नूनं सा ते प्रति वरं जरित्रे दुहीयदिन्द्र दक्षिणा मघोनी।

शिक्षा स्तोतृभ्यो माति धग्भगो नो बृहद् वदेम विदथे सुवीराः॥९॥२४॥

नूनम्। सा। ते। प्रति। वरम्। जरित्रे। दुहीयत्। इन्द्र। दक्षिणा। मघोनी। शिक्ष। स्तोतृऽभ्यः। मा। अति। धक्। भगः। नः। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीराः॥९॥

पदार्थः-(नूनम्) निश्चितम् **(सा)** विनयाढ्या क्रिया **(ते) (प्रति) (वरम्) (जरित्रे)** दानस्तावकाय **(दुहीयत्) (इन्द्र) (दक्षिणा) (मघोनी) (शिक्ष)** विद्या ग्राहय **(स्तोतृभ्यः)** विद्यामिच्छुभ्यः **(मा) (अति) (धक्)** दहेत् **(भगः)** प्रभावम् **(नः)** अस्मभ्यम् **(बृहत्) (वदेम) (विदथे) (सुवीराः)**॥९॥

अन्वयः-हे इन्द्र! भवान् नो भगो मातिधग्या ते मघोनी दक्षिणा जरित्रे वरं दुहीयत् सा यथा नः प्राप्नुयात् तथैतां स्तोतृभ्यः शिक्ष यतः सुवीरा वयं नूनं विदथे बृहद्वदेम॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यस्याक्षया दक्षिणा शिक्षा चास्ति स वरः सर्वत्र सत्कृतः स्यादिति॥९॥

अत्र विद्वत्सूर्य्यदातृदक्षिणागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकोनविंशतितमं सूक्तं चतुर्विंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** विद्वान्! आप **(नः)** हमारे लिये **(भगः)** प्रभाव को **(मा, अति, धक्)** मत नष्ट करो और जो **(ते)** आपकी **(मघोनी)** ऐश्वर्यवती **(दक्षिणा)** दक्षिणा **(जरित्रे)** दान की स्तुति करनेवाले **[के लिये] (वरम्)** उत्तम पदार्थ को **(दुहीयत्)** पूर्ण करे **(सा)** वह जैसे **(नः)** हम लोगों के लिये प्राप्त हो, वैसे इसको **(स्तोतृभ्यः)** विद्या की कामना करनेवालों के **[लिये] (शिक्ष)** सिखाइये, जिससे **(सुवीराः)** उत्तम वीरोंवाले हम लोग **(नूनम्)** निश्चय से **(विदथे)** संग्राम में **(बृहत्)** बहुत **(वदेम)** कहें॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जिसकी अक्षय दक्षिणा और शिक्षा है, वह श्रेष्ठ और सर्वत्र सत्कार को पावे॥९॥

इस सूक्त में विद्वान्, सूर्य, दाता और दक्षिणा के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह उन्नीसवां सूक्त और चौबीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

वयमिति नवर्चस्य विंशतितमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ६, ८ विराट् त्रिष्टुप्। ९ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २ बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः। ३ पङ्क्तिः। ४, ५, ७ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथेन्द्रशब्देन विद्वद्गुणानाह॥

अब नव ऋचावाले बीसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में इन्द्र शब्द से विद्वान् के गुणों का उपदेश किया है॥

वयं ते वय इन्द्र विद्धि षु णः प्र भरामहे वाजयुर्न रथम्।
विपन्यवो दीध्यतो मनीषा सुम्नमियक्षन्तस्त्वावतो नॄन्॥ १॥

वयम्। ते। वयः। इन्द्र। विद्धि। सु। नः। प्र। भरामहे। वाजऽयुः। न। रथम्। विपन्यवः। दीध्यतः। मनीषा। सुम्नम्। इयक्षन्तः। त्वाऽवतः। नॄन्॥ १॥

पदार्थः-(**वयम्**) (**ते**) तव (**वयः**) कमनीय (**इन्द्र**) विद्वन् (**विद्धि**) जानीहि (**सु**) सुष्ठु (**नः**) अस्मान् (**प्र**) (**भरामहे**) पुष्येम (**वाजयुः**) यो वाजं वेगं कामयते सः (**न**) इव (**रथम्**) विमानादियानम् (**विपन्यवः**) विशेषेण स्तुत्या व्यवहर्त्तारः (**दीध्यतः**) देदीप्यमानाः (**मनीषा**) प्रज्ञया (**सुम्नम्**) सुखम् (**इयक्षन्तः**) सत्कुर्वन्तः (**त्वावतः**) त्वत्सदृशान् (**नॄन्**)॥ १॥

अन्वयः-हे वय इन्द्र! ये विपन्यवस्त्वावतो नॄनियक्षन्तो दीध्यतो वयं मनीषा ते रथं वाजयुर्न सुम्नं सुप्रभरामहे तान्नोऽस्माँस्त्वं विद्धि॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये सत्कर्त्तव्यान् पूजयन्ति सत्येन व्यवहरन्ति ते सर्वं सुखं धर्तुमर्हन्ति॥ १॥

पदार्थः-हे (**वयः**) मनोहर (**इन्द्र**) विद्वान्! जो (**विपन्यवः**) विशेष कर स्तुति के व्यवहारों को करनेवाले (**त्वावतः**) आपके सदृश (**नॄन्**) मनुष्यों का (**इयक्षन्तः**) सत्कार करते हुए (**दीध्यतः**) देदीप्यमान (**वयम्**) हम लोग (**मनीषा**) बुद्धि से (**ते**) आपके (**रथम्**) विमानादि यान को (**वाजयुः**) वेग की कामना करनेवाला (**न**) जैसे वैसे (**सुम्नम्**) सुख को (**सु, प्र, भरामहे**) अच्छे प्रकार पुष्ट करें। उन (**नः**) हम लोगों को आप (**विद्धि**) जानें॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो सत्कार करने योग्यों को सत्कार करते और सत्य व्यवहार से वर्त्ताव वर्त्तते हैं, वे समस्त सुख के धारण करने को योग्य होते हैं॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वं न इन्द्र त्वाभिरूती त्वायतो अभिष्टिपासि जनान्।
त्वमिनो दाशुषो वरूतेत्थाधीरभि यो नक्षति त्वा॥ २॥

त्वम्। नः। इन्द्रः। त्वाभिः। ऊती। त्वाऽयतः। अभिष्टिऽपा। असि। जनान्। त्वम्। इनः। दाशुषः। वरूता। इत्थाऽधीः। अभि। यः। नक्षति। त्वा॥ २॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**नः**) अस्मान् (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययुक्त विद्वान् वा (**त्वाभिः**) त्वदीयाभिः (**ऊती**) रक्षाभिः (**त्वायतः**) त्वां कामयमानान् (**अभिष्टिपा**) योऽभिष्टिं पाति सः। अत्राकारादेशः। (**असि**) (**जनान्**) (**त्वम्**) (**इनः**) समर्थः (**दाशुषः**) दातॄन् (**वरूता**) वारयिता (**इत्थाधीः**) इत्थाऽनेन हेतुना धीर्धारणावती बुद्धिर्यस्य (**अभि**) आभिमुख्ये (**यः**) (**नक्षति**) प्राप्नोति। **नक्षतीति गतिकर्मासु पठितम्।** (निघं०२.१४)। (**त्वा**) त्वाम्॥ २॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यो वरूता इत्थाधीर्जनो त्वाभि नक्षति स इनस्त्वायतो दाशुषो जनान् नोऽस्माँश्च रक्षतु त्वं च रक्ष यतस्त्वमभिष्टिपा असि तस्मात्त्वाभिरूती सहिता वयं सुम्नं प्रभरामहे॥ २॥

भावार्थः-पूर्वस्मान्मन्त्रात् (**सुम्नम्**) (**प्रभरामहे**) चेति पदद्वयमनुवर्त्तते। ये विदुषः प्राप्य प्राणिनां सुखं कामयन्ते ते दातारो जायन्ते॥ २॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययुक्त विद्वान्! (**यः**) जो (**वरूता**) स्वीकार करनेवाला (**इत्थाधीः**) इस हेतु से धारणावाली हुई है बुद्धि जिसकी वह जन (**त्वा**) आपको (**अभि, नक्षति**) सम्मुख प्राप्त होता, वह (**इनः**) समर्थ (**त्वायतः**) आपकी कामना करते हुए (**दाशुषः**) देनेवाले (**जनान्**) जनों को और (**नः**) हम लोगों को पाले, राखे (**त्वम्**) आप भी रक्षा करें और जिस कारण से (**त्वम्**) आप (**अभिष्टिपा**) अभिकांक्षा के पालनेवाले (**असि**) हैं, इसी कारण (**त्वाभिः**) आपकी (**ऊती**) रक्षाओं के सहित हम लोग सुख को अच्छे प्रकार धारण करते हैं॥ २॥

भावार्थः-पिछले मन्त्र से (**सुम्नम्**) और (**प्रभरामहे**) इन दोनों पदों की अनुवृत्ति है। जो विद्वानों को प्राप्त होकर प्राणियों के सुख की कामना करते हैं, वे दाता होते हैं॥ २॥

अथ विद्वदीश्वरविषयमाह॥

अब विद्वान् और ईश्वर के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स नो युवेन्द्रो जोहूत्रः सखा शिवो नरामस्तु पाता।
यः शंसन्तं यः शशमानमूती पचन्तं च स्तुवन्तं प्रणेषत्॥ ३॥

सः। नः। युवा। इन्द्रः। जोहूत्रः। सखा। शिवः। नराम्। अस्तु। पाता। यः। शंसन्तम्। यः। शशमानम्। ऊती। पचन्तम्। च। स्तुवन्तम्। च। प्रऽनेषत्॥३॥

पदार्थः-(सः) **(नः)** अस्माकम् **(युवा)** सुखैः संयोजको दुःखैर्वियोजकश्च **(इन्द्रः)** विद्यैश्वर्यप्रदः **(जोहूत्रः)** भृशं दाता **(सखा)** सुहृत् **(शिवः)** मङ्गलकारी **(नराम्)** मनुष्याणाम् **(अस्तु)** **(पाता)** रक्षकः **(यः)** **(शंसन्तम्)** प्रशंसन्तम् **(यः)** **(शशमानम्)** अन्यायमुल्लङ्घमानम् **(ऊती)** ऊत्या रक्षया **(पचन्तम्)** पाकं कुर्वन्तम् **(च)** **(स्तुवन्तम्)** स्तुवन्तम् **(च)** **(प्रणेषत्)** प्रकृष्टं नयं प्राप्नुयात् प्रापयेद्वा॥३॥

अन्वयः- य ऊती शंसन्तं यः शशमानं पचन्तं स्तुवन्तं च प्रणेषत्स युवा जोहूत्रः शिवः सखेन्द्रो नो नरा च पाताऽस्तु॥३॥

भावार्थः-यौ परमेश्वराप्तौ सर्वेषां रक्षकौ स्तस्तौ सर्वेषां सुहृदौ मङ्गलकारिणौ स्तः॥३॥

पदार्थः-(यः) जो **(ऊती)** रक्षा से **(शंसन्तम्)** प्रशंसा करते हुए को **(यः)** जो **(शशमानम्)** अन्याय का उल्लङ्घन करनेवालों को **(पचन्तम्)** पाक करते हुए को **(च)** और **(स्तुवन्तम्)** स्तुति करते हुए को **(प्रणेषत्)** उत्तम न्याय को प्राप्त करावे और आप न्याय को प्राप्त होवे **(सः)** वह **(युवा)** सुखों से संयुक्त और दुःखों से वियुक्त करनेवाला **(जोहूत्रः)** निरन्तर दाता **(शिवः)** मङ्गलकारी **(सखा)** सबका मित्र **(इन्द्रः)** और विद्या वा ऐश्वर्य का देनेवाला विद्वान् वा ईश्वर **(नः)** हम लोगों को और **(नराम्)** सब मनुष्यों का **(च)** भी **(पाता)** रक्षक **(अस्तु)** हो॥३॥

भावार्थः-जो परमेश्वर और आप्त जन सबकी रक्षा करनेवाले हैं, वे सबके मित्र और मङ्गल करनेवाले हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तमु स्तुष इन्द्रं तं गृणीषे यस्मिन्पुरा वावृधुः शाशदुश्च।
स वस्वः कामं पीपरदियानो ब्रह्मण्यतो नूतनस्यायोः॥४॥

तम्। ऊम् इति। स्तुषे। इन्द्रम्। तम्। गृणीषे। यस्मिन्। पुरा। ववृधुः। शाशदुः। च। सः। वस्वः। कामम्। पीपरत्। इयानः। ब्रह्मण्यतः। नूतनस्य। आयोः॥४॥

पदार्थः-(तम्) परमेश्वरं विद्वांसं वा (उ) **(स्तुषे)** प्रशंससि **(इन्द्रम्)** दुःखविच्छेत्तारम् **(तम्)** **(गृणीषे)** स्तौषि **(यस्मिन्)** **(पुरा)** **(वावृधुः)** वर्द्धेरन् **(शाशदुः)** दुष्टान् छिन्द्युः **(च)** **(सः)**

(वस्वः) धनस्य **(कामम्)** **(पीपरत्)** पूरयेत् **(इयानः)** प्राप्नुवन् **(ब्रह्मण्यतः)** धनमिच्छतः **(नूतनस्य)** **(आयोः)** प्राप्तव्यस्य॥४॥

अन्वयः-यो नूतनस्यायोर्ब्रह्मण्यतो वस्वः काममियानः पीपरत् यस्मिन् पुरा वावृधुः शाशदुश्च तमिन्द्रं त्वं स्तुषे तमु गृणीषे सोऽस्माकं पाता भवतु॥४॥

भावार्थः-ये सह सर्वे वर्द्धन्ते दुःखानि छिन्दन्ति तेन व्यवहारं सर्वे कुर्युः॥४॥

पदार्थः-जो जन **(नूतनस्य)** नवीन **(आयोः)** पाने योग्य **(ब्रह्मण्यतः)** धन की इच्छावाले और **(वस्वः)** धन की **(कामम्)** कामना को **(इयानः)** प्राप्त होता हुआ **(पीपरत्)** उसको पूरी करे वा **(यस्मिन्)** जिसमें **(पुरा)** पहिले **(वावृधुः)** शिष्ट जन बढ़ें और **(शाशदुः)** दुष्टों को नष्ट करें **(तम्)** उस परमेश्वर वा विद्वान् की आप **(स्तुषे)** प्रशंसा करते हो और **(तम्, उ)** उसी की **(गृणीषे)** स्तुति करते हो **(सः)** वह हमारी रक्षा करनेवाला हो॥४॥

भावार्थः-जिसके साथ सब बढ़ते और दुःखों को काटते, उसके साथ व्यवहार सब करें॥४॥

अथ सभेशगुणानाह॥

अब सभेश के गुणों को अगले मन्त्र में कहा है॥

सा अङ्गि॒रसा॑मु॒चथा॑ जुजु॒ष्वान् ब्रह्मा॑ तूतो॒दिन्द्रो॑ गा॒तुमि॒ष्णन्।
मु॒ष्णन्नु॒षसः॒ सूर्ये॑ण स्त॒वानश्न॑स्य चिच्छिश्नथत्पू॒र्व्याणि॑॥५॥२५॥

सः। अङ्गि॑रसाम्। उ॒चथा॑। जु॒जु॒ष्वान्। ब्रह्म॑। तू॒तो॒त्। इन्द्रः॑। गा॒तुम्। इ॒ष्णन्। मु॒ष्णन्। उ॒षसः॑। सूर्ये॑ण। स्त॒वान्। अश्न॑स्य। चि॒त्। शि॒श्न॒थ॒त्। पू॒र्व्याणि॑॥५॥

पदार्थः-**(सः)** **(अङ्गिरसाम्)** प्राणिनाम् **(उचथा)** वक्तुमर्हाणि **(जुजुष्वान्)** सेवितवान् **(ब्रह्मा)** धनानि। अत्राकारादेशः। **(तूतोत्)** वर्द्धयेत् **(इन्द्रः)** पुरुषार्थी **(गातुम्)** पृथिवीम् **(इष्णन्)** अभीक्षणमिच्छन् **(मुष्णन्)** चोरयन् **(उषसः)** प्रभातान् **(सूर्येण)** सह **(स्तवान्)** स्तुतीः **(अश्नस्य)** मेघस्य। **अश्न इति मेघनामसु पठितम्।** (निघं०१.१०)। **(चित्)** इव **(शिश्नथत्)** हिंसति। **श्नथतीति हिंसाकर्मासु पठितम्।** (निघ०२.१९)। **(पूर्व्याणि)** पूर्वैः कृतानि॥५॥

अन्वयः-योऽङ्गिरसामुचथा ब्रह्मा जुजुष्वान् गातुमिष्णन् सूर्येणोषसोऽश्नस्य स्तवान् शिश्नथच्चिदिव पूर्व्याणि तूतोत् स इन्द्रोऽस्माकमविता भवतु॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये सूर्य्यवद्वर्द्धकाश्छेदकाश्च भूत्वा राज्यं वर्द्धयेयुस्त उचितां पूर्वैस्सेवितां श्रियं प्राप्नुवन्ति॥५॥

पदार्थ:-जो **(अङ्गिरसाम्)** प्राणियों के **(उचथा)** कहने योग्य **(ब्रह्मा)** धनों को **(जुजुष्वान्)** सेवन किये हुए **(गातुम्)** पृथिवी को **(इष्णन्)** सब ओर से देखता हुआ **(सूर्य्येण)** सूर्य्य के साथ **(उषस:)** प्रभात समयों को **(अश्नस्य)** मेघ की **(स्तवान्)** स्तुतियों को **(शिश्नथत्)** नष्ट करता है **(चित्)** उसके समान **(पूर्व्याणि)** पूर्वाचार्य्यों ने की हुई **(तूतोत्)** स्तुतियों को बढ़ावे **(स:)** वह **(इन्द्र:)** पुरुषार्थी जन हमारा रक्षक हो॥५॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो सूर्य के समान बढ़ाने और छिन्न-भिन्न करनेवाले होकर राज्य को बढ़ाते हैं, वे उचित और अगले सज्जनों की सेवन की हुई लक्ष्मी को प्राप्त होते हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स ह श्रुत इन्द्रो नाम देव ऊर्ध्वो भुवन्मनुषे दुस्मतमः।
अव प्रियमर्शसानस्य साह्वाञ्छिरो भरद्दासस्य स्वधावान्॥६॥

सः। ह। श्रुतः। इन्द्रः। नाम। देवः। ऊर्ध्वः। भुवत्। मनुषे। दुस्मऽतमः। अव। प्रियम्। अर्शसानस्य। साह्वान्। शिरः। भरत्। दासस्य। स्वधाऽवान्॥६॥

पदार्थ:-**(स:)** **(ह)** किल **(श्रुत:)** प्रख्यात: **(इन्द्र:)** सूर्य इव विपश्चित् **(नाम)** **(देव:)** देदीप्यमान: **(ऊर्ध्व:)** ऊर्ध्वं स्थित उत्कृष्ट: **(भुवत्)** भवेत् **(मनुषे)** मनुष्याय **(दस्मतम:)** अतिशयेन दु:खानां क्षेता **(अव)** **(प्रियम्)** कमनीयम् **(अर्शसानस्य)** प्राप्नुवत: **(साह्वान्)** सहनशील: **(शिर:)** शिरोवदुत्तमाङ्गम् **(भरत्)** भरेत् **(दासस्य)** सेवकस्य **(स्वधावान्)** प्रभूतान्नवान्॥६॥

अन्वय:-यश्श्रुतो देवो दस्मतम: साह्वानिन्द्रोऽर्शसानस्य दासस्य स्वधावानिव मनुषे नामोर्ध्वो भुवत्सूर्यो मेघस्य शिर इव प्रियमवभरत् सहास्माकमविता भवतु॥६॥

भावार्थ:-ये सूर्यमेघवत्सर्वेषां सुखस्य साधका विद्वांस: सन्ति तेषां प्रशंसा कुतो न जायते॥६॥

पदार्थ:-जो **(श्रुत:)** प्रख्यात **(देव:)** देदीप्यमान **(दस्मतम:)** अतीव दु:खों का नष्ट करनेवाला **(साह्वान्)** सहनशील **(इन्द्र:)** सूर्य के समान विद्वान् **(अर्शसानस्य)** प्राप्त हुए **(दासस्य)** सेवक के **(स्वधावान्)** समर्थ अन्नवाले के समान **(मनुषे)** मनुष्य के लिये **(नाम)** प्रसिद्ध **(ऊर्ध्व:)** उत्कृष्ट **(भुवत्)** हो और सूर्य जैसे मेघ के **(शिर:)** शिर को, वैसे **(प्रियम्)** मनोहर विषय को **(अव, भरत्)** पूरा करे **(स:, ह)** वही हमारा रक्षक हो॥६॥

भावार्थ:-जो सूर्य और मेघ के समान सबका सुख सिद्ध करनेवाले विद्वान् हैं, उनकी प्रशंसा क्यों न हो॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स वृत्रहेन्द्रः कृष्णयोनीः पुरंदरो दासीरैरयद्वि।

अजनयन्मनवे क्षामपश्च सत्रा शंसं यजमानस्य तूतोत्॥७॥

सः। वृत्रऽहा। इन्द्रः। कृष्णऽयोनीः। पुरम्ऽदरः। दासीः। ऐरयत्। वि। अजनयत्। मनवे। क्षाम्। अपः। च। सत्रा। शंसम्। यजमानस्य। तूतोत्॥७॥

पदार्थः-(**सः**) (**वृत्रहा**) मेघस्य हन्ता (**इन्द्रः**) सूर्य इव योद्धा (**कृष्णयोनीः**) कृष्णा कर्षिका योनिर्यासान्ताः (**पुरन्दरः**) यः पुरं दारयति सः (**दासीः**) सुखस्य दात्रीः (**ऐरयत्**) प्रेरयति (**वि**) (**अजनयत्**) जनयति (**मनवे**) मनुष्याय (**क्षाम्**) भूमिम् (**अपः**) जलानि वा (**च**) (**सत्रा**) सत्येन (**शंसम्**) स्तुतिम् (**यजमानस्य**) दातुः (**तूतोत्**) वर्द्धयेत्॥७॥

अन्वयः-हे विद्वन्! स भवान् यथा पुरन्दरो वृत्रहेन्द्रः सूर्यः कृष्णयोनीर्दासीर्व्यैरयन्मनवे क्षामपश्चाजनयद् यजमानस्य सत्रा शंसं तूतोत्तथा वर्त्तेत॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सूर्यवत्सुखवर्षका न्यायप्रकाशकाः सर्वेषां प्रशंसकानां प्रशंसकाः सन्ति तेऽत्र कथन्न वर्द्धेरन्॥७॥

पदार्थः-हे विद्वान्! (**सः**) सो आप जैसे (**पुरन्दरः**) पुर का विदीर्ण करनेवाला (**वृत्रहा**) मेघहन्ता (**इन्द्रः**) सूर्य (**कृष्णयोनीः**) खींचनेवाली जिनकी योनी उन (**दासीः**) सुख देनेवाली घटाओं को (**व्यैरयत्**) विशेषता से प्रेरणा दे, (**मनवे**) मनुष्य के लिये (**क्षाम्**) भूमि को (**च**) और (**अपः**) जलों को (**अजनयत्**) उत्पन्न करे, (**यजमानस्य**) देनेवाले के (**सत्रा**) सत्य में (**शंसम्**) स्तुति को (**तूतोत्**) बढ़ावे, वैसे वर्त्तो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो सूर्य के समान सुख वर्षाने वा न्याय के प्रकाश करने और सब प्रशंसकों के प्रशंसा करनेवाले हैं, वे यहाँ क्यों न बढ़ें॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तस्मै तवस्यमनु दायि सत्रेन्द्राय देवेभिरर्णसातौ।

प्रति यदस्य वज्रं बाह्वोर्धुर्हत्वी दस्यून् पुर आयसीर्नि तारीत्॥८॥

तस्मै॑। त॒व॒स्य॑म्। अनु॑। दा॒यि॒। स॒त्रा। इन्द्रा॑य। दे॒वेभिः॑। अर्ण॑ऽसातौ। प्रति॑। यत्। अ॒स्य॒। वज्र॑म्। बा॒ह्वोः। धुः। ह॒त्वी। दस्यू॑न्। पुरः॑। आय॑सीः। नि। ता॒री॒त्॥८॥

पदार्थः-(तस्मै) स्तावकाय **(तवस्यम्)** तवसि बले भवम् **(अनु) (दायि)** दीयेत **(सत्रा)** सत्येन **(इन्द्राय)** बह्वैश्वर्यप्रदाय **(देवेभिः) (अर्णसातौ)** उदकस्य प्राप्तौ **(प्रति) (यत्)** यः **(अस्य) (वज्रम्)** शस्त्राऽस्त्रम् **(बाह्वोः) (धुः)** धरेयुः। अत्राऽडभावः। **(हत्वी)** हत्वा। अत्र **स्नात्व्यादय** इतीदं सिध्यति। **(दस्यून्)** भयङ्करान् चोरान् **(पुरः)** नगरीः **(आयसीः)** सुवर्णलोहनिर्मिताः **(नि) (तारीत्)** उल्लङ्घयेत्॥८॥

अन्वयः-यद्यो बाह्वोर्वज्रं धृत्वा दस्यून् हत्वी आयसीः पुरो नि तारीत् स येनाऽस्यार्णसातौ तवस्यमनुदायि तस्मा इन्द्राय ये सत्रा प्रति धुस्ते च देवेभिस्सह सुखं प्राप्नुवन्ति॥८॥

भावार्थः-ये सवलयानि नगराणि निर्माय दस्य्वादीन्निराकृत्य विद्वद्भिः सह राज्यं पालयन्ति, ते सत्यं सुखमश्नुवते॥८॥

पदार्थः-(यत्) जो **(बाह्वोः)** भुजाओं के **(वज्रम्)** शस्त्र और अस्त्र को धारण **(दस्यून्)** और भयङ्कर चोरों को **(हत्वी)** हनन कर **(आयसीः)** सुवर्ण और लोह के काम की **(पुरः)** नगरियों को **(नि, तारीत्)** उल्लङ्घता है वह और जिससे **(अस्य)** इस मेघ के **(अर्णसातौ)** जल की प्राप्ति के निमित्त **(तवस्यम्)** बल में उत्पन्न हुआ पदार्थ **(अनुदायि)** दिया जाय **(तस्मै)** उस प्रस्तुति प्रशंसा करने और **(इन्द्राय)** बहुत ऐश्वर्य के देनेवाले के लिये जो **(सत्रा)** सत्यता से **(प्रति) (धुः)** प्रतीति में धारण करें, वे सब **(देवेभिः)** विद्वानों के साथ सुख पाते हैं॥८॥

भावार्थः-जो परिधियों के सहित नगरियों को बनाय और भयङ्कर चोर आदि को निवारण कर विद्वानों के साथ राज्य की पालना करते हैं, वे सत्य सुख को प्राप्त होते हैं॥८॥

अथ दातृगुणानाह॥

अब देनेवाले के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नू॒नं सा ते॒ प्रति॒ वरं॑ जरि॒त्रे दु॑ही॒यदि॑न्द्र॒ दक्षि॑णा म॒घोनी॑।
शिक्षा॑ स्तो॒तृभ्यो॒ माति॑ धग्भगो॑ नो बृ॒हद् व॑देम वि॒दथे॑ सु॒वीराः॑॥९॥२६॥

नू॒नम्। सा। ते॒। प्रति॑। वर॑म्। ज॒रि॒त्रे। दु॒ही॒यत्। इ॒न्द्र॒। दक्षि॑णा। म॒घोनी॑। शिक्ष॑। स्तो॒तृऽभ्यः॑। मा। अति॑। ध॒क्। भगः॑। नः॒। बृ॒हत्। व॒दे॒म॒। वि॒दथे॑। सु॒वीराः॑॥९॥

पदार्थः-(नूनम्) (सा) वर्द्धिका **(ते)** तव **(प्रति) (वरम्)** अत्युत्तमम् **(जरित्रे)** प्रशंसकाय **(दुहीयत्)** प्रपूरयेत् **(इन्द्र) (दक्षिणा) (मघोनी)** बहुधनादियुक्ता **(शिक्ष)** विद्यां ग्राहय **(स्तोतृभ्यः)**

(मा) (अति, धक्) (भगः) (नः) अस्मान् **(बृहत्) (वदेम) (विदथे)** पदार्थविज्ञाने **(सुवीराः)** सकलविद्याव्यापिनः॥९॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ते तव सा मघोनी दक्षिणा प्रतिवरं जरित्रे स्तोतृभ्यश्च नूनं दुहीयन्नोऽस्मान् माति धक् शिक्ष यया भगो वर्धते तया सुवीराः सन्तो वयं विदथे बृहद्वदेम॥९॥

भावार्थः-ये निरन्तरं दातारोऽप्रतिग्रहीतारः सर्वदा सत्यं शिक्षन्ते कस्यापि हृदयं वृथा न तापयन्ति, ते महान्तो भवन्तीति॥९॥

अत्रेन्द्र विद्युदीश्वरसभेशादिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति विंशतितमं सूक्तं षड्विंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** देनेवाले! **(ते)** आपकी **(सा)** वह **(मघोनी)** बहुत धनादि पदार्थों से युक्त **(दक्षिणा)** देनी **(प्रतिवरम्)** अत्युत्तम सुख **(जरित्रे)** प्रशंसा करनेवाले के लिये **(स्तोतृभ्यः)** और स्तुति करनेवालों के लिये **(नूनम्)** निश्चय कर **(दुहीयत्)** पूरा करे और **(नः)** हम लोगों को **(माति धक्)** मत नष्ट करे और आप हम लोगों को **(शिक्ष)** विद्या ग्रहण कराइये तथा जिससे **(भगः)** ऐश्वर्य बढ़ता है, उससे **(सुवीराः)** सकल विद्याव्यापी हम लोग **(विदथे)** पदार्थविज्ञान में **(बृहत्)** बहुत **(वदेम)** कहें॥९॥

भावार्थः-जो निरन्तर देने और न लेनेवाले सर्वदा सत्य की शिक्षा देते और किसी के हृदय को वृथा नहीं सन्तापते हैं, वे बड़े होते हैं॥९॥

इस सूक्त में इन्द्र, विद्वान्, ईश्वर और सभापति आदि के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह बीसवां सूक्त और छब्बीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

विश्वजिदिति षड्चस्यैकविंशतितमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषि:। इन्द्रो देवता। १, २ स्वराट् त्रिष्टुप्। ३, ६ त्रिष्टुप् छन्द:। धैवत: स्वर:। ४ विराट् जगती। ५ निचृज्जगती छन्द:। निषाद: स्वर:॥

अथ विद्वद्गुणानाह॥

अब छ: ऋचावाले इक्कीसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में विद्वानों के गुणों को कहते हैं॥

विश्वजिते धनजिते स्वर्जिते सत्राजिते नृजित उर्वराजिते।
अश्वजिते गोजिते अब्जिते भरेन्द्राय सोमं यजताय हर्यतम्॥१॥

विश्वऽजिते। धनऽजिते। स्व:ऽजिते। सत्राऽजिते। नृऽजिते। उर्वराऽजिते। अश्वऽजिते। गोऽजिते। अप्ऽजिते। भर। इन्द्राय। सोमम्। यजताय। हर्यतम्॥ १॥

पदार्थ:-(विश्वजिते) यो विश्वं जयति तस्मै **(धनजिते)** यो धनेन जयति तस्मै **(स्वर्जिते)** य: सुखेन जयति तस्मै **(सत्राजिते)** य: सत्येनोत्कर्षति तस्मै **(नृजिते)** यो नृभिर्जयति तस्मै **(उर्वराजिते)** य उर्वरां सर्वफलपुष्पशस्यादिप्रापिकां जयति तस्मै **(अश्वजिते)** योऽश्वैर्जयति तस्मै **(गोजिते)** यो गा जयति तस्मै **(अब्जिते)** योऽप्सु जयति तस्मै **(भर)** धर **(इन्द्राय)** सभासेनेशाय **(सोमम्)** ऐश्वर्यम् **(यजताय)** सत्सङ्गन्त्रे **(हर्यतम्)** कमनीयम्॥१॥

अन्वय:-हे प्रजाजन! त्वं विश्वजिते सत्राजिते स्वर्जिते नृजितेऽश्वजिते गोजित उर्वराजिते धनजितेऽब्जिते यजतायेन्द्राय हर्यतं सोमं भर॥१॥

भावार्थ:-राजप्रजाजनानामिदं समुचितमस्ति ये सर्वदा विजयशीला ऐश्वर्योन्नायका जना न्यायेन प्रजासु वर्त्तेरंस्तान् सदा सत्कुर्यु:॥१॥

पदार्थ:–हे प्रजाजन! आप **(विश्वजिते)** जो विश्व को जीतता वा **(सत्राजिते)** जो सत्य से उत्कर्षता को प्राप्त होता वा **(स्वर्जिते)** जो सुख से जीतता वा **(नृजिते)** जो मनुष्यों से जीतता वा **(अश्वजिते)** जो घोड़ों से जीतता वा **(गोजिते)** जो गौओं को जीतता वा **(उर्वराजिते)** जो सर्व फल, पुष्प शस्यादि पदार्थों की प्राप्ति करनेवाली को जीतता वा **(धनजिते)** जो धन से जीतता **(अब्जिते)** वा जलों में जीतता उसके लिये **(यजताय)** सत्सङ्ग करनेवाले **(इन्द्राय)** सभा और सेनापति के लिये **(हर्यतम्)** मनोहर **(सोमम्)** ऐश्वर्य को **(भर)** धारण करो॥१॥

भावार्थ:-राजा प्रजाजनों को यह अच्छे प्रकार उचित है कि जो सर्वदा विजयशील, ऐश्वर्य की उन्नति करनेवाले जन न्याय से प्रजा में वर्त्तें, उनका सत्कार सर्वदा सब करें॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अभिभुवेऽभिभङ्गाय वन्वतेऽषाळ्हाय सहमानाय वेधसे।

तुविग्रये वह्नये दुष्टरीतवे सत्रासाहे नम इन्द्राय वोचत॥ २॥

अभिऽभुवे। अभिऽभङ्गाय। वन्वते। अषाळ्हाय। सहमानाय। वेधसे। तुविऽग्रये। वह्नये। दुस्तरीतवे। सत्राऽसहे। नमः। इन्द्राय। वोचत॥ २॥

पदार्थः-(**अभिभुवे**) शत्रूणां तिरस्कर्त्रे (**अभिभङ्गाय**) दुष्टानामभितो मर्दकाय (**वन्वते**) सत्याऽसत्ययोर्विभाजकाय (**अषाळ्हाय**) शत्रुभिरसह्यमानाय (**सहमानाय**) शत्रून् सोढुं शीलाय (**वेधसे**) प्रज्ञाय (**तुविग्रये**) वृद्धिनिमित्तोपदेशकाय (**वह्नये**) राज्यभारं वोढे (**दुष्टरीतवे**) शत्रुभिर्दुःखेन तरितुमर्हाय (**सत्रासाहे**) यः सत्रा सत्येन सहते तस्मै (**नमः**) नतिम् (**इन्द्राय**) सर्वशुभलक्षणान्विताय (**वोचत**) वदत। अत्राडभावः॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यूयमभिभुवेऽभिभङ्गायाऽषाह्लाय सहमानाय वन्वते तुविग्रये वह्नये दुष्टरीतवे सत्रासाह इन्द्राय वेधसे नमो वोचत॥ २॥

भावार्थः-येऽन्यायात् पृथग्दुष्टाचाराँस्ताडयन्ति श्रेष्ठाचारसन्ध्यासत्पुरुषान् सत्कुर्वन्ति, ते विवेकिनः सन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! तुम (**अभिभुवे**) शत्रुओं का तिरस्कार करने (**अभिभङ्गाय**) दुष्टों का सब ओर से मर्द्दन करने (**अषाह्लाय**) शत्रुओं से न सहने (**सहमानाय**) शत्रुओं को सहनशील रखने (**वन्वते**) सत्य और असत्य का विभाग करने (**तुविग्रये**) वृद्धि के निमित्तों का उपदेश देने (**वह्नये**) राज्य-भार को चलाने और जो (**दुष्टरीतवे**) शत्रुओं से **[=के]** दुःख से तरनेवाला उसके लिये (**सत्रासाहे**) और सत्य के सहनेवाले (**इन्द्राय**) सर्वशुभलक्षणयुक्त (**वेधसे**) उत्तम ज्ञाता के लिये (**नमः**) नमस्कार (**वोचत**) कहो॥ २॥

भावार्थः-जो अन्याय से अलग दुष्टाचारियों को ताड़ना देते हैं, श्रेष्ठाचार की सन्धि से सत्पुरुषों का सत्कार करते हैं, वे विवेकी हैं॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सत्रासाहो जनभक्षो जनंसहश्च्यवनो युध्मो अनु जोषमुक्षितः।

वृत्रञ्जयः सहुरिर्विक्ष्वारित इन्द्रस्य वोचं प्र कृतानि वीर्या॥३॥

सत्राऽसहः। जनऽभक्षः। जनम्ऽसहः। च्यवनः। युध्मः। अनु। जोषम्। उक्षितः। वृतम्ऽचयः। सहुरिः। विक्षु। आरितः। इन्द्रस्य। वोचम्। प्र। कृतानि। वीर्या॥३॥

पदार्थः-(सत्रासाहः) यः सत्यं सहते **(जनभक्षः)** यो जनैर्भक्षः सेवनीयः **(जनंसहः)** यो जनान् सहते **(च्यवनः)** च्यावयिता **(युध्मः)** योद्धा **(अनु) (जोषम्)** प्रीतिम् **(उक्षितः)** सेवितः **(वृतञ्चयः)** यो वर्त्तते तं चिनोति सः **(सहुरिः)** सहनस्वभावः **(विक्षु)** प्रजासु **(आरितः)** प्राप्तः **(इन्द्रस्य)** ऐश्वर्य्यवतः **(वोचम्)** वदेयम् **(प्र) (कृतानि)** निष्पन्नानि **(वीर्य्या)** पराक्रमयुक्तानि कर्माणि॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा सत्रासाहो जनभक्षो जनं सहश्च्यवनो युध्मो वृतञ्चयः सहुरिरारितो जोषमुक्षितस्सन्नहं विक्षु कृतानि [इन्द्रस्य] वीर्य्या प्रवोचं तथा यूयमनुवदत॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे शमदमयमादिशुभकर्माचारिणो जनाः प्रजायां विद्या वर्द्धयन्ति ते जनैः सेव्या भवन्ति॥३॥

पदार्थः–हे मनुष्यो! जैसे **(सत्रासाहः)** जो सत्य को सहता **(जनभक्षः)** जनों के सेवने योग्य **(जनंसहः)** जनों को सहने **(च्यवनः)** दुष्टों को गिराने **(युध्मः)** दुष्टों से युद्ध करने **(वृतञ्चयः)** और वर्त्तमान पदार्थ को इकट्ठा करनेवाला **(सहुरिः)** सहनशील **(आरितः)** प्राप्त **(जोषम्)** प्रीति को **(उक्षितः)** सेवता हुआ मैं **(विक्षु)** प्रजाओं में **(कृतानि)** सिद्ध हुए **(इन्द्रस्य)** ऐश्वर्यवान् **(वीर्य्या)** पराक्रमयुक्त कर्मों को **(प्र, वोचम्)** अच्छे प्रकार कहूं, वैसे तुम **(अनु)** पीछे कहो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो शम, दम और यमादि शुभ कर्मों का आचरण करनेवाले जन प्रजा में विद्या बढ़ाते हैं, वे जनों के सेवन योग्य होते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अनानुदो वृषभो दोधतो वधो गम्भीर ऋष्वो असमष्टकाव्यः।
रध्रचोदः श्नथनो वीळितस्पृथुरिन्द्रः सुयज्ञ उषसः स्वर्जनत्॥४॥

अननुऽदः। वृषभः। दोधतः। वधः। गम्भीरः। ऋष्वः। असमष्टऽकाव्यः। रध्रऽचोदः। श्नथनः। वीळितः। पृथुः। इन्द्रः। सुऽयज्ञः। उषसः। स्वः। जनत्॥४॥

पदार्थः-(अनानुदः) अप्रेरितः **(वृषभः)** सर्वोत्तमः **(दोधतः)** हिंसकस्य **(वधः)** नाशः **(गम्भीरः)** गम्भीराशयः **(ऋष्वः)** ज्ञाता **(असमष्टकाव्यः)** असमष्टं न सम्यग् व्याप्तं काव्यं कवेः कर्म यस्य सः **(रध्रचोदः)** यो रध्रान् सरोधकान् चुदति प्रेरयति सः **(श्नथनः)** दुष्टानां हिंसकः। अत्र वर्णव्यत्ययेन रस्य नः। **(वीळितः)** विविधैर्गुणैः स्तुतः **(पृथुः)** विस्तीर्णबलः **(इन्द्रः)** सूर्य इव सुशोभमानः **(सुयज्ञः)** शोभना यज्ञा विद्वत्सत्कारादयो यस्य सः **(उषसः)** प्रभातात् **(स्वः)** दिनमिव सुखम् **(जनत्)** जायेत॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथोषसः स्वर्जनत्तथा योऽनानुदो वृषभो गम्भीर ऋष्वोऽसमष्टकाव्यो रध्रचोदः श्नथनो वीळितः पृथुः सुयज्ञ इन्द्रोऽस्ति येन दोधतो वधः क्रियते सर्वेभ्यः सुखं दातुमर्हेत्॥४॥

भावार्थः-ये मनुष्या स्वतो विविधगुणकर्माचरन्तः श्रेष्ठान् सत्कुर्वन्तो दुष्टान् हिंसन्तः सर्वशास्त्रविदो धर्मात्मानो भवेयुस्ते सूर्यवद्विद्याप्रकाशकाः स्युः॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(उषसः)** प्रभात से **(स्वर्जनत्)** जिनके समान सुख का प्रकाश हो, वैसे जो **(अनानुदः)** नहीं प्रेरित **(वृषभः)** सर्वोत्तम **(गम्भीरः)** गम्भीर आशयवाला **(ऋष्वः)** ज्ञाता **(असमष्टकाव्यः)** जिसको अच्छे प्रकार कविताई न व्याप्त हुई, न जिसके मन को रमी **(रध्रचोदः)** जो रुकावटी पदार्थों को प्रेरणा देने और **(श्नथनः)** दुष्टों की हिंसा करनेवाला **(वीळितः)** विविध गुणों से स्तुति किया गया **(पृथुः)** विस्तृत फलयुक्त **(सुयज्ञः)** सुन्दर-सुन्दर जिसके विद्वानों के सत्कार आदि पदार्थ **(इन्द्रः)** जो सूर्य के समान अच्छी शोभावाला विद्वान् है, जिसने **(दोधतः)** हिंसक का **(वधः)** नाश किया, वह सबको सुख देने के योग्य हो॥४॥

भावार्थः-जो मनुष्य अपने से विविध गुण और कर्मों का आचरण, श्रेष्ठों का सत्कार और दुष्टों की हिंसा करते हुए सर्वशास्त्रवेत्ता धर्मात्मा हैं, वे सूर्य के समान प्रकाश करनेवाले हों॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यज्ञेन गातुमप्तुरो विविद्रिरे धियो हिन्वाना उशिजो मनीषिणः।
अभिस्वरा निषदा गा अवस्यव इन्द्रे हिन्वाना द्रविणान्याशत॥५॥

यज्ञेन। गातुम्। अप्ऽतुरः। विविद्रिरे। धियः। हिन्वानाः। उशिजः। मनीषिणः। अभिऽस्वरा। निऽसदा। गाः। अवस्यवः। इन्द्रे। हिन्वानाः। द्रविणानि। आशत॥५॥

पदार्थः-(यज्ञेन) सङ्गत्याख्येन **(गातुम्)** पृथिवीम् **(अप्तुरः)** प्राप्नुवन्तः **(विविद्रिरे)** लभन्ते **(धियः)** प्रज्ञाः **(हिन्वानाः)** वर्द्धयमानाः **(उशिजः)** कमितारः **(मनीषिणः)** मनस ईषिणः **(अभिस्वरा)** अभितः सर्वतः स्वरा वाणी तया। अत्र **सुपां सुलुगिति** डादेशः। **स्वर इति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं०१.११) **(निषदा)** ये नित्यं सभायां सीदन्ति तैः। अत्रापि तृतीयायाः डादेशः। **(गाः)** पृथिवीः **(अवस्यवः)** आत्मनो वो रक्षामिच्छन्तः **(इन्द्रे)** विद्युदादिपदार्थे **(हिन्वानाः)** **(द्रविणानि)** धनानि यशांसि वा **(आशत)** प्राप्नुवन्ति॥५॥

अन्वयः-ये गातुमप्तुरोऽभिस्वरा निषदा गा अवस्यव इन्द्रे हिन्वाना उशिजो धियो हिन्वाना मनीषिणो यज्ञेन विद्यासुशीले विविद्रिरे ते द्रविणान्याशत॥५॥

भावार्थः-नहि कश्चिदपि सत्सङ्गेन योगाभ्यासेन विद्यया प्रज्ञया विना पूर्णां विद्यां धनं च प्राप्तुमर्हति॥५॥

पदार्थः–जो **(गातुम्)** पृथिवी को **(अप्तुरः)** प्राप्त हुए **(अभिस्वरा)** सब ओर की वाणियों और **(निषदा)** नित्य जो सभा में स्थित होते उनसे **(गाः)** पृथिवियों को **(अवस्यवः)** अपनी रक्षारूप माननेवाले **(इन्द्रे)** बिजुली आदि पदार्थ में **(हिन्वानाः)** वृद्धि को प्राप्त होते **(उषिजः)** मनोहर **(धियः)** बुद्धियों को **(हिन्वानाः)** बढ़ाते हुए **(मनीषिणः)** मनीषी जन **(यज्ञेन)** यज्ञ से विद्या और सुन्दर शील को **(विविद्रिरे)** प्राप्त होते हैं, वे **(द्रविणानि)** धन वा यशों को **(आशत)** प्राप्त होते हैं॥५॥

भावार्थः-कोई भी जन सत्सङ्ग, योगाभ्यास, विद्या और उत्तम बुद्धि के विना पूर्ण विद्या और धन पाने को योग्य नहीं होता है॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इन्द्र श्रेष्ठा॑नि द्रवि॑णानि धेहि चित्तिं दक्ष॑स्य सुभगत्वमस्मे।

पोषं॑ रयीणामरि॑ष्टिं तनूनां॑ स्वाद्मानं॑ वाचः सु॑दिनत्वमह्ना॑म्॥६॥२७॥

इन्द्र॑। श्रेष्ठा॑नि। द्रवि॑णानि। धेहि। चित्ति॑म्। दक्ष॑स्य। सुभगऽत्वम्। अस्मे इति॑। पोष॑म्। रयीणाम्। अरि॑ष्टिम्। तनूना॑म्। स्वाद्मान॑म्। वाचः। सुदिनऽत्वम्। अह्ना॑म्॥६॥

पदार्थः-(इन्द्र) सर्वेश्वर इव वर्त्तमान **(श्रेष्ठानि)** धर्म्मजानि **(द्रविणानि)** धनानि **(धेहि)** **(चित्तिम्)** चिन्वन्ति विद्यां यया ताम् **(दक्षस्य)** बलस्य **(सुभगत्वम्)** अत्युत्तमैश्वर्यम् **(अस्मे)** अस्मभ्यम् **(पोषम्)** पुष्टिम् **(रयीणाम्)** धनानाम् **(अरिष्टिम्)** अहिंसाम् **(तनूनाम्)** शरीराणाम्

(स्वाद्मानम्) स्वादिष्ठं भोगम् **(वाचः)** वाण्याः बोधम् **(सुदिनत्वम्)** उत्तमदिनस्य भावम् **(अह्नाम्)** दिनानाम्॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वमीश्वर इवाऽस्मे दक्षस्य चित्तिं सुभगत्वं पोषं रयीणां तनूनामरिष्टिं वाचः स्वाद्मानमह्नां सुदिनत्वं श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। विद्वद्भिर्यथा परमेश्वरेण सर्वाणि वस्तूनि निर्माय सर्वेभ्यो हितानि साधितानि सन्ति तथा सर्वेषां कल्याणाय नित्यं प्रयतितव्यम्॥६॥

अत्र विद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकविंशतितमं सूक्तं सप्तविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सभों के अधिपति के समान वर्त्तमान! [आप] **(अस्मे)** हम लोगों के लिये **(दक्षस्य)** बल की **(चित्तिम्)** उस प्रकृति को जिससे कि विद्या को इकट्ठा करते हैं और **(सुभगत्वम्)** अत्युत्तम ऐश्वर्य **(पोषम्)** पुष्टि तथा **(रयीणाम्)** धन और **(तनूनाम्)** शरीरों की **(अरिष्टिम्)** रक्षा **(वाचः)** वाणी के बोध **(स्वाद्मानम्)** स्वादिष्ठ भोग **(अह्नाम्)** दिनों के **(सुदिनत्वम्)** सुदिनपन और **(श्रेष्ठानि)** धर्मज **(द्रविणानि)** धनों को **(धेहि)** धारण कीजिये॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। विद्वानों को जैसे परमेश्वर ने समस्त वस्तुओं को उत्पन्न कर सबके लिये हितरूप सिद्ध कराई हैं, वैसे सबके कल्याण के लिये नित्य प्रयत्न करना चाहिये॥६॥

इस सूक्त में विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह इक्कीसवां सूक्त और सत्ताईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

त्रिकद्रुकेष्वित्यस्य चतुर्ऋचस्य द्वाविंशतितमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ अष्टिश्छन्दः। मध्यमः स्वरः। २ निचृदतिशक्वरी। ४ भुरिगतिशक्वरी छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ३ स्वराट् शक्वरी छन्दः। धैवतः स्वरः।

अथ सूर्य्यविषयमाह॥

अब चार ऋचावाले बाईसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में सूर्य्य का विषय कहते हैं॥

त्रिकद्रुकेषु महिषो यवाशिरं तुविशुष्मस्तृपत्सोमममपिबद्विष्णुना सुतं यथावशत्। स ईं ममाद महि कर्म कर्तवे महामुरुं सैनं सश्चद्देवो देवं सत्यमिन्द्रं सत्य इन्दुः॥ १॥

त्रिऽकद्रुकेषु। महिषः। यवऽआशिरम्। तुविऽशुष्मः। तृपत्। सोमम्। अपिबत्। विष्णुना। सुतम्। यथा। अवशत्। सः। ईम्। ममाद। महि। कर्म। कर्तवे। महाम्। उरुम्। सः। एनम्। सश्चत्। देवः। देवम्। सत्यम्। इन्द्रम्। सत्यः। इन्दुः॥ १॥

पदार्थः-(त्रिकद्रुकेषु) त्रीणि कद्रुकान्याह्वानानि येषु तेषु **(महिषः)** महान् **(यवाशिरम्)** यो यवानश्नाति तम् **(तुविशुष्मः)** तुवि बहु शुष्मं बलं यस्य सः **(तृपत्)** तृप्यन्। अत्र विकरणव्यत्ययेन शः। **(सोमम्)** रसम् **(अपिबत्)** पिबति **(विष्णुना)** व्यापकेन परमेश्वरेण वायुना वा **(सुतम्)** निष्पादितम् **(यथा)** येन प्रकारेण **(अवशत्)** कामयते **(सः)** **(ईम्)** जलेन **(ममाद)** हृष्येत् **(महि)** महत् **(कर्म)** **(कर्त्तवे)** कर्त्तुम् **(महाम्)** महताम् **(उरुम्)** बहुम् **(सः)** **(एनम्)** **(सश्चत्)** संयोजयति। अत्राडभावः। **(देवः)** सर्वतः प्रकाशमानः **(देवम्)** द्योतमानम् **(सत्यम्)** अविनाशिनम् **(इन्द्रम्)** सर्वलोकधारकं सूर्य्यम् **(सत्यः)** नाशरहितः **(इन्दुः)** चन्द्रः॥१॥

अन्वयः-यो तुविशुष्मो महिषस्तृपत् त्रिकद्रुकेषु यवाशिरं विष्णुना सुतं सोमं यथाऽपिबदवशच्च स ईं महि कर्म कर्त्तवे ममाद यः सत्य इन्दुर्देव एनं महामुरुं सत्यं देवमिन्द्रं सश्चत्स पूज्यो भवति॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यो मनुष्यः जगदीश्वरेण निर्मितेषु लोकेषु विद्याप्रयत्नाभ्यां प्रियं कमनीयं भोगं कर्त्तुं शक्नोति सोऽविनाशिनं परमात्मानमपि वेदितुं वेदयितुं वा शक्नोति॥१॥

पदार्थः-जो **(तुविशुष्मः)** बहुत बलवाला **(महिषः)** बड़ा **(तृपत्)** तृप्त करता हुआ **(त्रिकद्रुकेषु)** जिनमें तीन आह्वान विद्यमान उनमें **(यवाशिरम्)** यवों के भक्षण करनेवाले को और **(विष्णुना)** व्यापक परमेश्वर वा वायु से **(सुतम्)** उत्पादन किये हुए **(सोमम्)** रस को **(यथा)** जैसे **(अपिबत्)** पीता और **(अवशत्)** कामना करता है **(सः)** वह **(ईम्)** जल से **(महि)** बड़े **(कर्म)**

कर्म के **(कर्त्तवे)** करने को **(ममाद)** हर्षित हो। तथा जो **(सत्य:)** नाशरहित **(इन्दु:)** चन्द्रमा **(देव:)** सब ओर से प्रकाशमान **(एनम्)** इस **(महाम्)** महात्माओं के **(उरुम्)** बहुत **(सत्यम्)** अविनाशी **(देवम्)** प्रकाशमान **(इन्द्रम्)** सर्व लोकों के आधाररूप सूर्यलोक को **(सश्चत्)** संयुक्त करता, वह पूज्य होता है॥१॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य जगदीश्वर ने निर्मित किये लोकों में विद्या और उत्तम यन्त्र से प्रिय मनोहर भोग कर सकता है, वह अविनाशी परमात्मा को जान वा जना सकता है॥१॥

अथ विद्युद्विषयमाह॥

अब बिजुली के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अध त्विषीमाँ अभ्योजसा क्रिविं युधाभवदा रोदसी अपृणदस्य मज्मना प्र वावृधे।
अधत्तान्यं जठरे प्रेमरिच्यत सैनं सश्चद्देवो देवं सत्यमिन्द्रं सत्य इन्दुः॥२॥

अध। त्विषिऽमान्। अभि। ओजसा। क्रिविम्। युधा। अभवत्। आ। रोदसी। इति। अपृणत्। अस्य। मज्मना। प्र। ववृधे। अधत्त। अन्यम्। जठरे। प्र। ईम्। अरिच्यत। सः। एनम्। सश्चत्। देवः। देवम्। सत्यम्। इन्द्रम्। सत्यः। इन्दुः॥२॥

पदार्थ:-**(अध)** अथ **(त्विषीमान्)** बहुदीप्तियुक्त: **(अभि)** आभिमुख्ये **(ओजसा)** बलेन **(क्रिविम्)** कूपम् **(युधा)** सम्प्रहारेण **(अभवत्)** भवति **(आ)** समन्तात् **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(अपृणत्)** तर्पयति **(अस्य)** **(मज्मना)** बलेन **(प्र)** **(वावृधे)** वर्द्धते **(अधत्त)** दधाति **(अन्यम्)** भिन्नम् **(जठरे)** आभ्यन्तरे **(प्र)** **(ईम्)** जलम् **(अरिच्यत)** रिच्यतेऽतिरिक्तोऽस्ति **(स:)** परमेश्वर: **(एनम्)** **(सश्चत्)** सश्चति समवयति **(देव:)** **(देवम्)** सुखस्य दातारम् **(सत्यम्)** सत्सु साधु: **(इन्द्रम्)** विद्युतम् **(सत्य:)** सत्सु साधु: **(इन्दु:)** जलवदार्द्रस्वभाव:॥२॥

अन्वय:-यस्त्विषीमानोजसा महानभवद्युधा रोदसी क्रिविमिवापृणदधास्य जगदीश्वरस्य मज्मना प्रवावृधे जठरेऽन्यमधत्त य ईं प्रारिच्यत एनं सत्यं देवमिन्द्रमभ्यासश्चत् स सत्य इन्दुर्देव: परमेश्वरोऽस्ति॥२॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! येनाऽयं सर्वलोकप्रकाशक: कूपवत्सेचको महान् सूर्य्यलोको रचित: स्वस्मिन् धृतो य: सर्वेभ्य: पृथक् व्याप्तश्च नित्य: परमेश्वरो देवोऽस्ति तं नित्यं ध्यायत॥२॥

पदार्थ:-जो **(त्विषीमान्)** बहुत दीप्तियुक्त **(ओजसा)** बल से बड़ा **(अभवत्)** होता है **(युधा)** संप्रहार से **(रोदसी)** द्यावापृथिवी को **(क्रिविम्)** कूप के समान **(अपृणत्)** तृप्त करता है।

(अध) इसके अनन्तर इस जगदीश्वर के **(मज्मना)** बल से **(प्र, वावृधे)** अच्छे प्रकार बढ़ता है **(जठरे)** अपने भीतर **(अन्यम्)** और को **(अधत्त)** धारण करता और जो **(ईम्)** जल के साथ **(प्रारिच्यत)** औरों से अलग है **(एनम्)** इस **(सत्यम्)** सत्य **(देवम्)** सुख के देनेवाले **(इन्द्रम्)** बिजुली रूप अग्नि को **(अभि, आ सश्चत्)** जो प्रत्यक्ष सम्बन्ध करता है **(सः)** वह **(सत्यः)** सत्य **(इन्दुः)** जल के समान आर्द्र स्वभाववाला **(देवः)** प्रकाशमान परमेश्वर है॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जिसने यह सब लोकों का प्रकाश करने और कूप के समान सींचनेवाला बड़ा सूर्यलोक रचा और अपने में धारण किया, जो सबसे अलग व्याप्त भी है, वह नित्य परमेश्वर देव है, उसका नित्य ध्यान करो॥२॥

अथेश्वरविषयमाह॥

अब ईश्वर विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

साकं जातः क्रतुना साकमोजसा ववक्षिथ साकं वृद्धो वीर्यैः सासहिर्मृधो विचर्षणिः।

दाता राधः स्तुवते काम्यं वसु सैनं सश्चद्देवो देवं सत्यमिन्द्रं सत्य इन्दुः॥३॥

साकम्। जातः। क्रतुना। साकम्। ओजसा। ववक्षिथ। साकम्। वृद्धः। वीर्यैः। ससहिः। मृधः। विऽचर्षणिः। दाता। राधः। स्तुवते। काम्यम्। वसु। सः। एनम्। सश्चत्। देवः। देवम्। सत्यम्। इन्द्रम्। सत्यः। इन्दुः॥३॥

पदार्थः-**(साकम्)** सह **(जातः)** प्रसिद्धः **(क्रतुना)** कर्मणा प्रज्ञया वा **(साकम्)** **(ओजसा)** जलेन। **ओज इत्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२)। **(ववक्षिथ)** वहति। अत्र पुरुषव्यत्ययः। **(साकम्)** **(वृद्धः)** **(वीर्यैः)** पराक्रमविज्ञानादिभिः **(सासहिः)** अतिशयेन सोढा **(मृधः)** संग्रामान् **(विचर्षणिः)** विद्याप्रकाशयुक्तो विद्वान् **(दाता)** **(राधः)** धनम् **(स्तुवते)** प्रशंसति **(काम्यम्)** प्रियम् **(वसु)** सुखेषु वासयत्री **(सः)** **(एनम्)** **(सश्चत्)** **(देवः)** सर्वत्र द्योतमानः **(देवम्)** देदीप्यमानम् **(सत्यम्)** नाशरहितम् **(इन्द्रम्)** **(सत्यः)** अविनाशी **(इन्दुः)** परमैश्वर्य्ययुक्तः॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः क्रतुनोजसा साकं जातः वीर्यैः साकं वृद्धः सासहिर्विचर्षणिर्दाता सन्मृधो ववक्षिथ काम्यं वसु राधः स्तुवते स सत्य इन्दुर्देवो जीव एनं सत्यमिन्द्रं देवं परमेश्वरं साकं सश्चदात्मना संयुनक्ति॥३॥

भावार्थः-यस्य ज्ञानादिगुणैरुत्क्षेपणादिभिः कर्मभिः सह नित्यसम्बन्धः यो विद्यया ज्येष्ठोऽविद्यया कनिष्ठश्च सुखं कामयमानोऽनादिरनुत्पन्नोऽमृतोऽल्पऽज्ञो जीवात्मास्ति तं यः शुभाऽशुभकर्मफलैर्युनक्ति स

परमेश्वरोऽखिलजगतो मध्ये व्याप्तस्सन् सर्वं रक्षति जीवेन सहेशस्य ईश्वरेण सह जीवस्य व्याप्यव्यापकसेव्यसेवकादिलक्षण: सम्बन्धोऽस्तीति वेद्य:॥३॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो **(क्रतुना)** कर्म वा प्रज्ञा और **(ओजसा)** जल के **(साकम्)** साथ **(जात:)** प्रसिद्ध **(वीर्यै:)** पराक्रम वा विज्ञानादि पदार्थों के **(साकम्)** साथ **(वृद्ध:)** बढ़ा **(सासहि:)** अत्यन्त सहनेवाला **(विचर्षणि:)** विद्या के प्रकाश से युक्त विद्वान् **(दाता)** दानशील होता हुआ **(मृध:)** संग्रामों को **(ववक्षिथ)** प्राप्त करता है **(काम्यम्)** प्रिय **(वसु)** सुखों को वसानेवाले **(राध:)** धन की **(स्तुवते)** प्रशंसा करता **(स:)** वह **(सत्य:)** अविनाशी **(इन्दु:)** परमैश्वर्ययुक्त **(देव:)** सर्वत्र प्रकाशमान जीव **(एनम्)** इस **(सत्यम्)** सत्य **(इन्द्रम्)** परमैश्वर्ययुक्त **(देवम्)** देदीप्यमान परमेश्वर को **(साकम्)** साथ **(सश्चत्)** सम्बन्ध करता अर्थात् अपनी आत्मा से संयुक्त करता है॥३॥

भावार्थ:-जिसके ज्ञानादि गुणों और उत्क्षेपणादि कर्मों के साथ नित्य सम्बन्ध है। जो विद्या से ज्येष्ठ और अविद्या से कनिष्ठ एवं सुख की कामना करता हुआ अनादि, अनुत्पन्न, अमृत, अल्पज्ञ, जीवात्मा है, उसको जो शुभाशुभ कर्मफलों के साथ युक्त करता वह परमेश्वर अखिल जगत् के बीच व्याप्त होता हुआ सबकी रक्षा करता। जीव के साथ ईश का ईश्वर के साथ जीव का व्याप्य-व्यापक, सेव्य-सेवकादि लक्षण सम्बन्ध है, यह जानना चाहिये॥३॥

अथ जीवविषयमाह॥

अब जीव विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तव॒ त्यन्नर्यं॑ नृ॒तोऽप॑ इन्द्र प्रथ॒मं पू॒र्व्यं दि॒वि प्र॒वाच्यं॑ कृ॒तम्।
यद्दे॒वस्य॒ शव॑सा॒ प्रारि॑णा॒ असुं॑ रि॒णन्न॒पः।
भुव॒द्विश्व॑म॒भ्यादे॑व॒मोज॑सा वि॒दादूर्जं॑ श॒तक्र॑तुर्वि॒दादिष॑म्॥४॥२८॥२॥

तव॑। त्यत्। नर्य॑म्। नृ॒तो॒ इति॑। अप॑:। इन्द्र॒। प्र॒थ॒मम्। पू॒र्व्य॑म्। दि॒वि। प्र॒ऽवाच्य॑म्। कृ॒तम्। यत्। दे॒वस्य॑। शव॑सा। प्र। अरि॑णा:। असु॑म्। रि॒णन्। अ॒प:। भुव॑त्। विश्व॑म्। अ॒भि। अदे॑वम्। ओज॑सा। वि॒दात्। ऊर्ज॑म्। श॒तऽक्र॑तु:। वि॒दात्। इष॑म्॥४॥

पदार्थ:-**(तव)** जीवस्य **(त्यत्)** तत् **(नर्यम्)** नृषु साधु **(नृतो)** सर्वेषां नर्त्तयित: **(अप:)** प्राणान् **(इन्द्र)** इन्द्रियाद्यैश्वर्ययुक्त भोजक **(प्रथमम्)** आदिमम् **(पूर्व्यम्)** पूर्वै: कृतम् **(दिवि)** प्रकाशमये जगदीश्वरे **(प्रवाच्यम्)** प्रवक्तुं योग्यम् **(कृतम्)** निष्पन्नम् **(यत्)** य: **(देवस्य)** सर्वस्य

प्रकाशकस्य **(शवसा)** बलेन **(प्र) (अरिणाः)** प्राप्नोसि **(असुम्)** प्राणम् **(रिणन्)** प्राप्नुवन् **(अपः)** **(भुवत्)** भवेत् **(विश्वम्)** सर्वम् **(अभि) (अदेवम्)** अविद्यमानो देवः प्रकाशो यस्मिँस्तम्। अत्रा**न्येषामपि दृश्यत** इत्यकारस्य दीर्घत्वम्। **(ओजसा)** पराक्रमेण **(विदात्)** प्राप्नुयात् **(ऊर्जम्)** पराक्रमम् **(शतक्रतुः)** असंख्यप्रज्ञः **(विदात्)** प्राप्नुयात् **(इषम्)** अन्नम्॥४॥

अन्वयः-हे नृतो इन्द्र! यद्यस्त्वं त्यत्प्रथमं पूर्व्यं प्रवाच्यं कृतं नर्य्यं दिव्यपश्च देवस्य शवसा प्रारिणा भवानसुमपो रिणन्नोजसाऽदेवं विश्वमभिविदाच्छतक्रतुर्भवानूर्जमिषं चाविदात्तस्य तव सुखं भुवत्॥४॥

भावार्थः-हे जीवा यस्य जगदीश्वरस्य निबन्धेन यूयं शरीराणीन्द्रियाणि प्राणान् प्राप्तास्त सर्वसामर्थ्येनाहर्निशं ध्यायतेति॥४॥

अत्र सूर्य्यविद्युदीश्वरजीवगुणकर्मवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वाविंशं सूक्तमष्टाविंशो वर्गो द्वितीयोऽनुवाकश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(नृतो)** सबके नचानेवाले **(इन्द्र)** इन्द्रियादि ऐश्वर्य्ययुक्त वा उसका भोक्ता! **(यत्)** जो तू **(त्यत्)** वह **(प्रथमम्)** प्रथम **(पूर्व्यम्)** पूर्वाचार्य्यों ने किया **(प्रवाच्यम्)** उत्तमता से कहने योग्य **(कृतम्)** प्रसिद्ध **(नर्य्यम्)** मनुष्यों में सिद्ध पदार्थ उसको और **(दिवि)** प्रकाशमय परमेश्वर में **(अपः)** प्राणों को **(देवस्य)** सबके प्रकाश करनेवाले के **(शवसा)** बल से **(प्रारिणाः)** प्राप्त होता और **(असुम्)** प्राण और **(अपः)** जलों को **(रिणन्)** प्राप्त होता हुआ **(ओजसा)** बल से **(अदेवम्)** जिसमें प्रकाश नहीं विद्यमान उस **(विश्वम्)** समस्त वस्तुमात्र को **(अभि, विदात्)** प्राप्त हो, **(शतक्रतुः)** असंख्य प्रज्ञायुक्त आप **(ऊर्जम्)** पराक्रम और **(इषम्)** अन्न को **(विदात्)** प्राप्त हो, उन **(तव)** आपके सुख **(भुवत्)** हो॥४॥

भावार्थः-हे जीवो! जिस जगदीश्वर के निबन्ध से तुम शरीर, इन्द्रियों और प्राणों को प्राप्त हुए उसको सर्व सामर्थ्य से दिन-रात ध्यावो॥४॥

इस सूक्त में सूर्य, विद्युत्, ईश्वर और जीवों के गुण कर्मों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह बाईसवां सूक्त और अट्ठाईसवां वर्ग और दूसरा अनुवाक समाप्त हुआ॥

गणानामित्येकोनविंशत्यृचस्य त्रयोविंशतितमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। १, ५, ९, ११, १७, १९ ब्रह्मणस्पतिः। २-४, ६-८, १०, १२-१६, १८ बृहस्पतिश्च देवता। १, ४, ५, १०-१२ जगती। २, ७-९, १३, १४, विराट् जगती। ३, ६, १६, १८ निचृज्जगती छन्दः। निषादः स्वरः। १५, १७ भुरिक् त्रिष्टुप्। १९ निचृत् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथेश्वरविषयमाह॥

अब उन्नीस मन्त्रवाले तेईसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में परमेश्वर का वर्णन करते हैं॥

गणानां त्वा गणपतिं हवामहे कविं कवीनामुपमश्रवस्तमम्।
ज्येष्ठराजं ब्रह्मणां ब्रह्मणस्पत आ नः शृण्वन्नूतिभिः सीद सादनम्॥१॥

गणानाम्। त्वा। गणऽपतिम्। हवामहे। कविम्। कवीनाम्। उपमश्रवःऽतमम्। ज्येष्ठऽराजम्। ब्रह्मणाम्। ब्रह्मणः। पते। आ। नः। शृण्वन्। ऊतिऽभिः। सीद। सदनम्॥१॥

पदार्थः-(गणानाम्) गणनीयानां मुख्यानाम् **(त्वा)** त्वाम् **(गणपतिम्)** मुख्यानां स्वामिनम् **(हवामहे)** स्वीकुर्महे **(कविम्)** सर्वज्ञम् **(कवीनाम्)** विपश्चिताम् **(उपमश्रवस्तमम्)** उपमीयते येन तच्छ्रवस्तदतिशयितम् **(ज्येष्ठराजम्)** यो ज्येष्ठेषु राजते तम् **(ब्रह्मणाम्)** महतां धनानाम् **(ब्रह्मणः)** धनस्य **(पते)** स्वामिन् **(आ)** **(नः)** अस्माकम् **(शृण्वन्)** **(ऊतिभिः)** रक्षाभिः **(सीद)** तिष्ठ **(सादनम्)** सीदन्ति यस्मिँस्तत्॥१॥

अन्वयः-हे ब्रह्मणां ब्रह्मणस्पते! वयं गणानां गणपतिं कवीनां कविमुपमश्रवस्तमं ज्येष्ठराजं त्वा परमेश्वरमाहवामहे त्वमूतिभिश्शृण्वन्नः सादनं सीद॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा वयं सर्वेषामधिपतिं सर्वज्ञं सर्वराजमन्तर्यामिनं परमेश्वरमुपास्महे तथा यूयमप्युपाध्वम्॥१॥

पदार्थः-हे **(ब्रह्मणाम्)** बड़े-बड़े धनों में **(ब्रह्मणस्पते)** धन के स्वामी! हम लोग **(गणानाम्)** गणनीय मुख्य पदार्थों में **(गणपतिम्)** मुख्य पदार्थों के स्वामी **(कवीनाम्)** उत्तम बुद्धिवालों में **(कविम्)** सर्वज्ञ और **(उपमश्रवस्तमम्)** उपमा जिससे दी जाती ऐसे अत्यन्त श्रवणरूप **(ज्येष्ठराजम्)** ज्येष्ठ अर्थात् अत्यन्त प्रशंसित पदार्थों में प्रकाशमान **(त्वा)** आप परमेश्वर को **(आ, हवामहे)** अच्छे प्रकार स्वीकार करते हैं, आप **(ऊतिभिः)** रक्षाओं से **(शृण्वन्)** सुनते हुए **(नः)** हम लोगों के **(सादनम्)** उस स्थान को कि जिसमें स्थिर होते हैं **(सीद)** स्थिर हूजिये॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे हम लोग सबके अधिपति, सर्वज्ञ, सर्वराज, अन्तर्यामि परमेश्वर की उपासना करते हैं, वैसे तुम भी उपासना करो॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

देवाश्चित्ते असुर्य प्रचेतसो बृहस्पते यज्ञियं भागमानशुः।
उस्राइव सूर्यो ज्योतिषा महो विश्वेषामिज्जनिता ब्रह्मणामसि॥२॥

देवाः। चित्। ते। असुर्य। प्रऽचेतसः। बृहस्पते। यज्ञियम्। भागम्। आनशुः। उस्राःऽइव। सूर्यः। ज्योतिषा। महः। विश्वेषाम्। इत्। जनिता। ब्रह्मणाम्। असि॥२॥

पदार्थः-(**देवाः**) विद्वांसः (**चित्**) अपि (**ते**) तव (**असुर्य**) असुरेषु प्रवासरहितेषु साधो (**प्रचेतसः**) प्रकृष्टं चेतो ज्ञानं यस्य तस्य (**बृहस्पते**) बृहत्या वाचः पालकः (**यज्ञियम्**) यज्ञसम्बन्धिनम् (**भागम्**) (**आनशुः**) प्राप्नुवन्ति (**उस्राइव**) किरणानिव (**सूर्य्यः**) सविता (**ज्योतिषा**) प्रकाशेन (**महः**) महताम् (**विश्वेषाम्**) सर्वेषां लोकानाम् (**इत्**) एव (**जनिता**) उत्पादकः (**ब्रह्मणाम्**) धनानाम् (**असि**)॥२॥

अन्वयः-हे असुर्य्य बृहस्पते! यस्य प्रचेतसस्ते यज्ञियं भागं सूर्य्यो ज्योतिषोस्राइव देवाश्चिदानशुर्यस्त्वं महो विश्वेषां ब्रह्मणां जनितेदसि सोऽस्माभिः सततं सेवनीयः॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्याः! यूयं प्राणस्य प्राणः सूर्य्यवत्स्वप्रकाशः महतां महान् परमेश्वरोऽस्ति तमेव भजत॥२॥

पदार्थः-हे (**असुर्य्य**) प्रवास रहितों में साधु (**बृहस्पते**) बड़ी वाणी के पति! जिस (**प्रचेतसः**) प्रकृष्ट ज्ञानवाले (**ते**) आपके (**यज्ञियम्**) यज्ञसम्बन्धि (**भागम्**) भाग को (**सूर्य्यः**) सूर्य्य (**ज्योतिषा**) प्रकाश से (**उस्राइव**) किरणों के समान (**देवाः**) विद्वान् जन (**चित्**) निश्चय से (**आनशुः**) प्राप्त होते हैं, जो आप (**महः**) महात्मा जन (**विश्वेषाम्**) समस्त लोक और (**ब्रह्मणाम्**) धनों के (**जनिता**) उत्पादन करनेवाले (**इत्**) ही (**असि**) हैं सो हम लोगों को सदा सेवन करने योग्य हैं॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! तुम जो प्राण का प्राण, सूर्य्य के समान आप ही प्रकाशमान और महात्माओं में महात्मा परमेश्वर है, उसी को सेओ॥२॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ विबाध्या परिरापस्तमांसि च ज्योतिष्मन्तं रथमृतस्य तिष्ठसि।
बृहस्पते भीममभित्रदम्भनं रक्षोहणं गोत्रभिदं स्वर्विदम्॥ ३॥

आ। विऽबाध्य। परिऽरपः। तमांसि। च। ज्योतिष्मन्तम्। रथम्। ऋतस्य। तिष्ठसि। बृहस्पते। भीमम्। अमित्रऽदम्भनम्। रक्षःऽहनम्। गोत्रऽभिदम्। स्वःऽविदम्॥ ३॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**विबाध्य**) निःसार्य्य (**परिरापः**) सर्वतः पापात्मकं कर्म्म (**तमांसि**) रात्रीः (**च**) (**ज्योतिष्मन्तम्**) बहुप्रकाशम् (**रथम्**) रमणीयस्वरूपम् (**ऋतस्य**) सत्यस्य कारणस्य मध्ये (**तिष्ठसि**) (**बृहस्पते**) महतां पालक (**भीमम्**) भयङ्करम् (**अमित्रदम्भनम्**) शत्रुहिंसनम् (**रक्षोहणम्**) रक्षसां दुष्टानां हन्तारम् (**गोत्रभिदम्**) मेघस्य भेत्तारम् (**स्वर्विदम्**) स्वरुदकं विन्दन्ति येन तम्॥ ३॥

अन्वयः-हे बृहस्पते विद्वन्! यथा सूर्य्यः परिरापस्तमांसि च विबाध्य प्रवर्त्तते तथार्त्तस्य मध्ये वर्त्तमानं भीममभित्रदम्भनं रक्षोहणं गोत्रभिदं स्वर्विदं ज्योतिष्मन्तं रथमातिष्ठसि स त्वं सुखमाप्नोसि॥ ३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सूर्य्यवद्विद्याप्रकाशेनाऽविद्याऽन्धकारं निवर्त्य कारणमारभ्य कार्य्यं जगत् यथावज्जानन्ति ते विद्वांसो भवन्ति॥ ३॥

पदार्थः-हे (**बृहस्पते**) बड़ों की रक्षा करनेवाले विद्वान्! जैसे सूर्य्य (**परिरापः**) सब ओर से पाप भरे हुए कर्म्म (**च**) और (**तमांसि**) रात्रियों को (**विबाध्य**) निकाल के प्रवृत्त होता, वैसे (**ऋतस्य**) सत्य कारण के बीच वर्तमान (**भीमम्**) भयङ्कर (**अमित्रदम्भनम्**) शत्रुहिंसन और (**रक्षोहणम्**) दुष्टों के मारने (**गोत्रभिदम्**) और मेघ के छिन्न-भिन्न करनेवाले (**स्वर्विदम्**) जिससे उदक को प्राप्त होते (**ज्योतिष्मन्तम्**) जो बहुत प्रकाशमान (**रथम्**) रमणीयस्वरूप उसको (**आ, तिष्ठसि**) अच्छे प्रकार स्थित होते हो, सो आप सुख को प्राप्त होते हो॥ ३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो सूर्य्य के समान विद्याप्रकाश से अविद्यान्धकार को निकाल कर कारण को लेकर कार्य्यजगत् को यथावत् जानते हैं, वे विद्वान् होते हैं॥ ३॥

अथ विद्वदीश्वरविषयमाह॥

अब विद्वान् और ईश्वर के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सुनीतिभिर्नयसि त्रायसे जनं यस्तुभ्यं दाशान्न तमंहो अश्नवत्।
ब्रह्मद्विषस्तपनो मन्युमीरसि बृहस्पते महि तत्ते महित्वनम्॥ ४॥

सुनीतिऽभिः। नयसि। त्रायसे। जनम्। यः। तुभ्यम्। दाशात्। न। तम्। अंहः। अश्नवत्। ब्रह्मऽद्विषः। तपनः। मन्युऽमीः। असि। बृहस्पते। महि। तत्। ते। महिऽत्वनम्॥४॥

पदार्थः-(सुनीतिभिः) सुष्ठु धर्म्मैर्न्यायमार्गैः **(नयसि) (त्रायसे) (जनम्)** जिज्ञासुं मनुष्यम् **(यः) (तुभ्यम्) (दाशात्)** ददति **(न)** निषेधे **(तम्) (अंहः)** पापम् **(अश्नवत्)** प्राप्नोति **(ब्रह्मद्विषः)** वेदेश्वरविरोधिनः **(तपनः)** तापकृत् **(मन्युमीः)** यो मन्युं मिनोति सः **(असि)** भवसि **(बृहस्पते)** बृहतां पालकेश्वर विद्वन् वा **(महि)** महत् **(तत्) (ते)** तव **(महित्वनम्)** महिमा॥४॥

अन्वयः-हे बृहस्पते! त्वं सुनीतिभिर्यं जनं नयसि त्रायसे यस्तुभ्यमात्मा दाशात्तमंहो नाश्नवद् यस्त्वं ब्रह्मद्विष उपरि तपनो मन्युमीरसि तस्य ते तव तन्महित्वनं वयं प्रशंसेम॥४॥

भावार्थः-ये मनुष्या सत्यभावेन जगदीश्वरस्याप्तस्य विदुषो वा [सम्बन्धे] स्वात्मानं चालयन्ति तान् जगदीश्वरो धार्मिको विद्वान् वा पापाचरणान्निवर्त्य शुभगुणकर्मस्वभावैर्युक्तान् कृत्वा पवित्रान् जनयति। ये च वेदेश्वरद्विषः पापाचारास्तानधोगतिं नयति। अयमेवानयोरुपासनासङ्गाभ्यां लाभो जायते॥४॥

पदार्थः–हे **(बृहस्पते)** बड़ों की पालना करनेवाले ईश्वर वा विद्वान्! आप **(सुनीतिभिः)** उत्तम धर्मवाले न्याय मार्गों से जिस **(जनम्)** जन को **(नयसि)** पहुँचाते हो और **(त्रायसे)** रक्षा करते हो **(यः)** जो **(तुभ्यम्)** तुम्हारे लिये आत्मा **(दाशात्)** देता है **(तम्)** उसको **(अंहः)** पाप **(न)** नहीं **(अश्नवत्)** प्राप्त होता, जो तुम **(ब्रह्मद्विषः)** वेद और ईश्वर के विरोधियों पर **(तपनः)** ताप करनेवाली **(मन्युमीः)** क्रोध का मारनेवाले **(असि)** हैं **(ते)** आपके **(तत्)** उस **(महित्वनम्)** बड़प्पन की हम लोग प्रशंसा करें॥४॥

भावार्थः-जो मनुष्य सत्यभाव से जगदीश्वर वा आप्त विद्वान् के सम्बन्ध में अपने आत्मा को चलाते हैं, उनको जगदीश्वर वा धार्मिक विद्वान् पापाचरण से निवृत्त कर शुभ गुण, कर्म, स्वभावों से युक्त कर पवित्र उत्पन्न करता है। और जो वेद वा ईश्वर के विरोधी पापाचारी हैं, उनको अधोगति को पहुंचाता है, यही इन दोनों की उपासना और सङ्ग से लाभ होता है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

न तमंहो न दुरितं कुतश्चन नारातयस्तितिरुर्न द्वयाविनः।
विश्वा इदस्माद् ध्वरसो वि बाधसे यं सुगोपा रक्षसि ब्रह्मणस्पते॥५॥२९॥

न। तम्। अंहः। न। दुःऽइतम्। कुतः। चन। न। अरातयः। तितिरुः। न। द्वयाविनः। विश्वाः। इत्। अस्मात्। ध्वरसः। वि। बाधसे। यम्। सुऽगोपाः। रक्षसि। ब्रह्मणः। पते॥५॥

पदार्थः-(न) (तम्) (अंहः) अपराधः **(न) (दुरितम्)** दुष्टाचरणम् **(कुतः)** कस्मात् **(चन)** अपि **(न) (अरातयः)** शत्रवः **(तितिरुः)** तरेयुः **(न) (द्वयाविनः)** उभयपक्षाश्रिताः **(विश्वाः)** सर्वाः **(इत्)** एव **(अस्मात्) (ध्वरसः)** हिंसाः **(वि) (बाधसे)** निवारयसि **(यम्) (सुगोपाः)** सुष्ठु रक्षकः **(रक्षसि) (ब्रह्मणः)** बृहतः **(पते)** पालक॥५॥

अन्वयः-हे ब्रह्मणस्पते सार्वभौम राजन् वा! सुगोपास्त्वं यं रक्षस्यस्माद्विश्वा ध्वरसो विबाधसे तमित्कुतश्चनांऽहो न दुरितं नारातयो न द्वयाविनस्तितिरुः॥५॥

भावार्थः-ये परमेश्वराऽऽज्ञामाप्तविदुषां सङ्गं स्वात्मपवित्रतामाचरन्ति ते सर्वस्मात् पापाचरणाद् वियुज्य धार्मिका भूत्वा सततं सुखमश्नुवते॥५॥

पदार्थः-हे **(ब्रह्मणस्पते)** बड़ों के पालना करनेवाले वा चक्रवर्ती सर्व भूमिपति राजन्! जो **(सुगोपाः)** सुन्दर रक्षा करनेवाले आप **(यम्)** जिसकी **(रक्षसि)** रक्षा करते **(अस्मात्)** इससे **(विश्वाः)** सब **(ध्वरसः)** हिंसाओं को **(वि, बाधसे)** निवृत्त करते हो **(इत्)** उसी को **(कुतश्चन)** कहीं से भी **(अंहः)** अपराध **(न)** न **(दुरितम्)** दुष्टाचार **(न)** न **(अरातयः)** शत्रुजन **(न)** न **(द्वयाविनः)** दोनों पक्षों में आश्रित जन **(तितिरुः)** तरें॥५॥

भावार्थः-जो परमेश्वर की आज्ञा वा आप्त विद्वानों के सङ्ग का वा अपनी आत्मा की पवित्रता का आचरण करते हैं, वे सब पाप आचरण से अलग हो और धार्मिक होकर निरन्तर सुख को व्याप्त होते हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वं नो गोपाः पथिकृद्विचक्षणस्तव व्रताय मतिभिर्जरामहे।
बृहस्पते यो नो अभि ह्वरो दुधे स्वा तं मर्मर्तु दुच्छुना हरस्वती॥६॥

त्वम्। नः। गोपाः। पथिऽकृत्। विऽचक्षणः। तव। व्रताय। मतिऽभिः। जरामहे। बृहस्पते। यः। नः। अभि। ह्वरः। दुधे। स्वा। तम्। मर्मर्तु। दुच्छुना। हरस्वती॥६॥

पदार्थः-(त्वम्) (नः) अस्माकम् **(गोपाः)** रक्षकः **(पथिकृत्)** सकलसुकृतमार्गप्रचारकः **(विचक्षणः)** यो विविधान् सत्योपदेशान् चष्टे **(तव) (व्रताय)** शीलाय **(मतिभिः)** मेधाभिः सह

(जरामहे) स्तूमहे **(बृहस्पते)** बृहत्सत्यप्रचारक **(यः)** **(नः)** अस्माकम् **(अभि)** **(ह्वरः)** क्रोधः। **ह्वर इति क्रोधनामसु पठितम्।** (निघं०२.१३)। **(दधे)** दधाति **(स्वा)** स्वकीया **(तम्)** **(मर्मर्त्तु)** भृशं प्राप्नोतु **(दुच्छुना)** दुष्टेन शुनेव **(हरस्वती)** बहुहरणशीला सेना॥६॥

अन्वयः-हे बृहस्पते! यो नोऽस्माकमुपरि ह्वरः क्रियते स दुच्छुनेव तं मर्म्मर्त्तु या स्वा हरस्वती तमभि दधे दधातु तया यो नो गोपाः पथिकृद्विचक्षणस्त्वमसि तदस्य तव व्रताय मतिभिः सह वयं जरामहे॥६॥

भावार्थः-येषां मार्गप्रकाशक उपदेशकः परमात्मा विद्वान् भवति ये सत्पुरुषसङ्गप्रिया वर्त्तन्ते तान् क्रोधाद्या दुर्गुणा नाप्नुवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे **(बृहस्पते)** बहुत सत्य का प्रचार करनेवाले! **(यः)** जो **(नः)** हम लोगों के ऊपर **(ह्वरः)** क्रोध किया जाता वह **(दुच्छुना)** दुष्ट कुत्ते से जैसे वैसे **(तम्)** उसको **(मर्मर्त्तु)** निरन्तर प्राप्त हो जो **(स्वा)** अपनी **(हरस्वती)** बहुतों को हरने का शील रखनेवाली सेना उस विषय को **(अभि, दधे)** सब ओर से धारण करे, उस सेना से जो **(नः)** हम लोगों के **(गोपाः)** रक्षा करने **(पथिकृत्)** सकल सुकृत मार्ग का प्रचार करने वा **(विचक्षणः)** विविध सत्योपदेश करनेवाले **(त्वम्)** आप हैं, उन **(तव)** आपके **(व्रताय)** शील के लिये **(मतिभिः)** मेधाओं के साथ हम लोग **(जरामहे)** स्तुति करते हैं॥६॥

भावार्थः-जिनका मार्ग प्रकाश करने और उपदेश करनेवाला परमात्मा विद्वान् होता है, जो सत्पुरुषों के सङ्ग प्रीति करनेवाले वर्त्तमान हैं, उनको क्रोध आदि दुर्गुण नहीं प्राप्त होते हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उत वा यो नो मर्चयादनागसोऽरातीवा मर्तः सानुको वृकः।
बृहस्पते अप तं वर्तया पथः सुगं नो अस्यै देववीतये कृधि॥७॥

उत। वा। यः। नः। मर्चयात्। अनागसः। अरातिऽवा। मर्तः। सानुकः। वृकः। बृहस्पते। अप। तम्। वर्तय। पथः। सुऽगम्। नः। अस्यै। देवऽवीतये। कृधि॥७॥

पदार्थः-**(उत)** अपि **(वा)** पक्षान्तरे **(यः)** जगदीश्वरो विद्वान् वा **(नः)** अस्मान् **(मर्चयात्)** सुमार्गे नयेत् **(अनागसः)** अनपराधिनः **(अरातीवा)** योऽरातीन् शत्रून् वनति संभजति **(मर्त्तः)** मनुष्यः **(सानुकः)** सानुगादिः **(वृकः)** स्तेनः **(बृहस्पते)** बृहतः पापाद्वियोजकः **(अप)** **(तम्)**

(वर्त्तय) दूरीकुरु। अत्रा**न्येषामपी**ति दीर्घः। **(पथः)** मार्गात् **(सुगम्)** सुष्ठु गच्छन्ति यस्मिन् मार्गे तम् **(नः)** अस्माकम् **(अस्यै)** प्रत्यक्षायै **(देववीतये)** देवेषु दिव्यगुणेषु व्याप्तये **(कृधि)** कुरु॥७॥

अन्वयः-हे बृहस्पते! यो नोऽनागसो पथो मर्चयादुत वा योऽरातीवा सानुको वृको मर्त्तो भवेत् तं पथोऽपवर्त्तय नोऽस्यै देववीतये सुगं कृधि॥७॥

भावार्थः-हे परमेश्वर! येऽस्मान् सुमार्गेण सुखं प्रापयन्ति तान् प्रापय। ये च दुष्पथं नयन्ति तान् वियोजय। कृपया शुद्धं सरलं धर्म्यं मार्गञ्च प्रापय॥७॥

पदार्थः-हे **(बृहस्पते)** बड़े पाप वियोग करनेवाले! **(यः)** जो **(नः)** हम लोगों को **(अनागसः)** अनपराधी **(पथः)** मार्ग से **(मर्चयात्)** जो सुमार्गस्थान उसमें प्राप्त करें **(उत वा)** अथवा जो **(अरातीवा)** शत्रुओं को अच्छे प्रकार सेवन करता **(सानुकः)** और अनुगामी के साथ वर्त्तमान **(वृकः)** चोर **(मर्त्तः)** मनुष्य हो **(तम्)** उसको उस मार्ग से **(अप, वर्त्तय)** दूर करो **(नः)** हमारी **(अस्यै)** इस **(देववीतये)** दिव्य गुणों में व्याप्ति के लिये **(सुगम्)** सुगम मार्ग **(कृधि)** करो॥७॥

भावार्थः-हे परमेश्वर! जो हम लोगों को सुमार्ग से सुख को प्राप्त कराते उनको पहुँचाइये, और जो दुष्पथ को पहुंचाते हैं, उनको अलग कीजिये, तथा कृपा से शुद्ध सरल धर्मयुक्त मार्ग को प्राप्त कीजिये॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्रातारं त्वा तनूनां हवामहेऽवस्पर्तरधिवक्तारमस्मयुम्।
बृहस्पते देवनिदो नि बर्हय मा दुरेवा उत्तरं सुम्नमुन्नशन्॥८॥

त्रातारम्। त्वा। तनूनाम्। हवामहे। अवऽस्पर्तः। अधिऽवक्तारम्। अस्मऽयुम्। बृहस्पते। देवऽनिदः। नि। बर्हय। मा। दुःऽएवाः। उत्ऽतरम्। सुम्नम्। उत्। नशन्॥८॥

पदार्थः-**(त्रातारम्)** रक्षितारम् **(त्वा)** त्वां जगदीश्वरं सभेशं वा **(तनूनाम्)** विस्तृतसुखसाधकानां शरीरादीनां पदार्थानां वा **(हवामहे)** स्वीकुर्महे **(अवस्पर्त्तः)** अवसा रक्षणेन दुःखात्पारकर्त्तः **(अधिवक्तारम्)** सर्वेषामुपर्युपदेशकम् **(अस्मयुम्)** अस्मान् कामयमानम् **(बृहस्पते)** बृहतां रक्षक **(देवनिदः)** ये देवान् विदुषो दिव्यगुणान् वा निन्दन्ति तान् **(नि)** **(बर्हय)**

नितरामुत्पाटय **(मा)** **(दुरेवाः)** दुराचरणाः **(उत्तरम्)** अर्वाक्कालीनम् **(सुम्नम्)** सुखम् **(उत्)** **(नशन्)** नाशयेयुः॥८॥

अन्वयः-हे अवस्पर्त्तर्बृहस्पते! वयं यं तनूनां त्रातारमस्मयुमधिवक्तारं त्वा त्वां हवामहे स त्वं देवनिदो निबर्हय यतो दुरेवा उत्तरं सुम्नं मोन्नशन्॥८॥

भावार्थः-ये स्वेषामुपदेष्टारं रक्षितारञ्च परमात्मानमाप्तं कुर्वन्ति ते सर्वतो वर्द्धन्ते। ये विद्वदीश्वरवेदनिन्दका भविष्यदानन्दविच्छेदका भवेयुस्तान् सर्वतो निवारयेयुः॥८॥

पदार्थः–हे **(अवस्पर्त्तः)** रक्षा कर दुःख से पार करने और **(बृहस्पते)** बड़ों की रक्षा करनेवाले! हम लोग जिस **(तनूनाम्)** विस्तृत सुख साधक शरीरादिकों वा अन्य पदार्थों के **(त्रातारम्)** रक्षा करने वा **(अस्मयुम्)** हम लोगों की कामना करने वा **(अधिवक्तारम्)** सबके ऊपर उपदेश करनेवाले **(त्वा)** आप जगदीश्वर वा सभापति को **(हवामहे)** स्वीकार करते हैं, सो आप **(देवनिदः)** जो विद्वान् वा दिव्य गुणों की निन्दा करते उनको **(नि, बर्हय)** निरन्तर छिन्न-भिन्न करो। जिससे **(दुरेवाः)** दुष्टाचरण करनेवाले **(उत्तरम्)** उसके उपरान्त **(सुम्नम्)** सुख को **(मा)** मत **(उत्, नशन्)** नष्ट करावें॥८॥

भावार्थः-जो अपना उपदेश करने और रक्षा करनेवाला परमात्मा वा आप्त विद्वान् मानते हैं, वे सब ओर से बढ़ते हैं। जो विद्वान्, ईश्वर और वेद की निन्दा, भविष्यत् का आनन्द नष्ट करनेवाले हों, उनको सब ओर से निवृत्त करावें॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वया॑ व॒यं सु॒वृधा॑ ब्रह्मणस्पते स्पा॒र्हा वसु॑ मनु॒ष्या द॑दीमहि।
या नो॑ दू॒रे त॒ळितो॒ या अरा॑तयो॒ऽभि सन्ति॑ ज॒म्भया॒ ता अ॑न॒प्नसः॑॥९॥

त्वया॑। व॒यम्। सु॒ऽवृधा॑। ब्र॒ह्म॒णः॒। प॒ते॒। स्पा॒र्हा। वसु॑। म॒नु॒ष्या॑ः। आ। द॒दी॒म॒हि॒। याः। नः॒। दू॒रे। त॒ळितः॑। याः। अरा॑तयः। अ॒भि। सन्ति॑। ज॒म्भय॑। ताः। अ॒न॒प्नसः॑॥९॥

पदार्थः-**(त्वया)** सह **(वयम्)** **(सुवृधा)** यः सुष्ठु वर्द्धयति तेन **(ब्रह्मणः)** ब्रह्माण्डस्य राज्यस्य वा **(पते)** पालक **(स्पार्हा)** अभिकाङ्क्षितुमर्हेण **(वसु)** विज्ञानं धनं वा **(मनुष्याः)** मननशीलाः **(ददीमहि)** दद्याम **(याः)** **(नः)** अस्माकम् **(दूरे)** **(तळितः)** विद्युतः **(याः)** **(अरातयः)** अदानरीतयः **(अभि)** सर्वतः **(सन्ति)** **(जम्भय)** विनाशय। अत्राऽ**न्येषामपी**ति दीर्घः। **(ताः)** **(अनप्नसः)** अविद्यमानमप्नः कर्म्म यासान्ताः क्रियाः॥९॥

अन्वयः-हे ब्रह्मणस्पते शिक्षक! स्पार्हा सुवृधा त्वया सह वयं मनुष्या वसु ददीमहि। नो दूरे यास्तळितो याश्चानप्नसोऽरातयः सन्ति ता अभि जम्भय॥९॥

भावार्थः-यदि विदुषामुपदेशं न गृह्णीयुस्तर्हि मानवा दानशीला न भवेयुः। येऽकर्मठाः कृपणाः पुरुषाः स्त्रियश्च सन्ति ता विद्युद्वत् पुरुषार्थनीयाः॥९॥

पदार्थः-**(ब्रह्मणः)** ब्रह्माण्ड व राज्य की **(पते)** पालना करनेवाले शिक्षक! **(स्पार्हा)** अभिकांक्षा के योग्य **(सुवृधा)** जो सुन्दर बढ़ावा देते उन **(त्वया)** तुम्हारे साथ **(वयम्)** हम **(मनुष्याः)** मनुष्य **(वसु)** विज्ञान वा धन **(ददीमहि)** देवें **(नः)** हमारे **(दूरे)** दूर [वा समीप] देश में **(याः)** जो **(तळितः)** बिजुली[५] और **(याः)** जो **(अनप्नसः)** अविद्यमान कर्मवाली क्रिया **(अरातयः)** न देने की रीतियां **(सन्ति)** हैं **(ताः)** उनको **(अभि, जम्भय)** सब ओर से विनाशिये॥९॥

भावार्थः-यदि विद्वानों के उपदेश को न ग्रहण करें तो मनुष्य दानशील न हों, जो अकर्मठ अर्थात् कर्म नहीं करते कृपण पुरुष और स्त्रीजन हैं, वे बिजुली के समान पुरुषार्थयुक्त करने चाहिये॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वया॑ व॒यमु॑त्त॒मं धी॑महे॒ वयो॒ बृह॑स्पते॒ पप्रि॑णा॒ सस्नि॑ना यु॒जा।

मा नो॑ दुः॒शंसो॑ अभिदि॒प्सुरी॑शत॒ प्र सु॒शंसा॑ म॒तिभि॑स्तारिषीमहि॥१०॥३०॥

त्वया॑। व॒यम्। उ॒त्ऽत॒मम्। धी॒म॒हे॒। वयः॑। बृह॑स्पते। पप्रि॑णा। सस्नि॑ना। यु॒जा। मा। नः॒। दुः॒ऽशंसः॑। अ॒भि॒ऽदि॒प्सुः। ईश॒त। प्र। सु॒ऽशंसाः॑। म॒तिऽभिः॑। ता॒रि॒षी॒म॒हि॒॥१०॥

पदार्थः-**(त्वया)** **(वयम्)** **(उत्तमम्)** श्रेष्ठम् **(धीमहे)** दधीमहि। अत्र **छन्दस्युभयथे**त्यार्द्धधातुकत्वं **बहुलं छन्दसी**ति शपो लोपश्च। **(वयः)** जीवनम् **(बृहस्पते)** विद्वन् **(पप्रिणा)** परिपूर्णेन **(सस्निना)** शुचिना **(युजा)** युक्तेन **(मा)** **(नः)** अस्माकम् **(दुःशंसः)** दुष्टः शंसो यस्य स चोरः **(अभिदिप्सुः)** अभितो दम्भमिच्छुः **(ईशत)** समर्थो भवेत् **(प्र)** **(सुशंसाः)**

---

५. (= हिंसक क्रियाएँ ॥ सं.॥

शोभना: शंस: स्तुतिर्येषान्ते **(मतिभि:)** प्रज्ञाभि: **(तारिषीमहि)** तरेम। अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम्॥१०॥

अन्वय:-हे बृहस्पते! पप्रिणा सस्निना युजा त्वया सह वर्त्तमाना वयमुत्तमं वयो धीमहि यतो नोऽभिदिप्सुर्दु:शंसो नोऽस्मान्मेशत मतिभि: सह वर्त्तमाना: सुशंसा वयं प्रतारिषीमहि॥१०॥

भावार्थ:-ये पूर्णविद्यानां योगिनां शुद्धात्मनां सङ्गं कुर्वन्ति ते दीर्घजीविनो भवन्ति, ये विद्वत्सहचरिता भवन्ति तेभ्यो दु:खं दातुं केऽपि न शक्नुवन्ति॥१०॥

पदार्थ:–हे **(बृहस्पते)** विद्वान्! **(पप्रिणा)** परिपूर्ण **(सस्निना)** शुद्ध पवित्र पदार्थ **(युजा)** युक्त **(त्वया)** तुम्हारे साथ वर्त्तमान **(वयम्)** हम लोग **(उत्तमम्)** श्रेष्ठ **(वय:)** जीवन को **(धीमहे)** धारण करें जिससे **(अभिदिप्सु:)** सब ओर से कपट की इच्छा करनेवाला **(दुशंस:)** जिसकी दुष्ट कहावत प्रसिद्ध वह चोर **(न:)** हम लोगों का **(मा, ईशत)** ईश्वर न हो और **(मतिभि:)** प्रज्ञाओं के साथ वर्त्तमान **(सुशंसा)** जिनकी सुन्दर स्तुति ऐसे हम लोग **(प्र, तारिषीमहि)** उत्तमता से तरें, सर्व विषयों के पार पहुँचें॥१०॥

भावार्थ:-जो पूर्ण विद्यावाले योगी शुद्धात्मा जनों का सङ्ग करते हैं, वे दीर्घजीवी होते हैं। जो विद्वानों के सहचारी होते हैं, उनके लिये दु:ख देने को कोई भी समर्थ नहीं हो सकते हैं॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अनानुदो वृषभो जग्मिराहवं निष्टप्ता शत्रुं पृतनासु सासहि:।
असि सत्य ऋणया: ब्रह्मणस्पत उग्रस्य चिद्दमिता वीळुहर्षिण:॥११॥

अनानुऽद:। वृषभ:। जग्मि:। आऽहवम्। नि:ऽतप्ता। शत्रुम्। पृतनासु। ससहि:। असि। सत्य:। ऋणऽया:। ब्रह्मण:। पते। उग्रस्य। चित्। दमिता। वीळुऽहर्षिण:॥११॥

पदार्थ:-(अनानुद:) येऽनुददति तेऽनुदा न विद्यन्तेऽनुदा यस्य स: **(वृषभ:)** श्रेष्ठ: **(जग्मि:)** गन्ता **(आहवम्)** संग्रामम् **(निष्टप्ता)** नितरां सन्तापप्रद: **(शत्रुम्)** शातयितारम् **(पृतनासु)** वीराणां सेनासु **(सासहि:)** भृशं सोढा **(असि)** **(सत्य:)** सत्सु साधु: **(ऋणया:)** य ऋणं याति प्राप्नोति स: **(ब्रह्मण:)** वेदस्य **(पते)** पालयित: **(उग्रस्य)** तीव्रस्य **(चित्)** अपि **(दमिता)** दमनकर्त्ता **(वीळुहर्षिण:)** बलेन बहु हर्षो विद्यते यस्य तस्य॥११॥

अन्वय:-हे ब्रह्मणस्पते! त्वं यतोऽनानुदो वृषभ आहवं जग्मि: पृतनासु शत्रुं निष्टप्ता सासहिर्ऋणया: सत्यो वीळुहर्षिण उग्रस्य चिद्दमितासि तस्मात् प्रशस्यो भवसि॥११॥

भावार्थ:-ये दातव्यं तत्क्षणं ददति गन्तव्यं गच्छन्ति प्राप्तव्यं प्राप्नुवन्ति दण्डनीयं दण्डयन्ति, ते सत्यं ग्रहीतुं शक्नुवन्ति॥११॥

पदार्थ:-हे **(ब्रह्मणस्पते)** वेद के पालनेवाले! आप जिससे **(अनानुद:)** अनानुद अर्थात् जो पीछे देते हैं, वे जिसके नहीं विद्यमान वह **(वृषभ:)** श्रेष्ठ जन **(आहवम्)** संग्राम को **(जग्मि:)** जानेवाले **(पृतनासु)** वीरों की सेनाओं में **(शत्रुम्)** काटने, दु:ख देनेवाले वैरी को **(निष्टप्ता)** निरन्तर सन्ताप देने **(सासहि:)** निरन्तर सहने **(ऋणया:)** और ऋण को प्राप्त होनेवाले **(सत्य:)** सज्जनों में साधु **(वीळुहर्षिण:)** जिसको बल से बहुत हर्ष विद्यमान **(उग्रस्य)** तीव्र को **(चित्)** ही **(दमिता)** दमन करनेवाले **(असि)** हैं, उससे प्रशंसनीय होते हैं॥११॥

भावार्थ:-जो देने योग्य पदार्थ को शीघ्र देते, जाने योग्य स्थान को जाते, पाने योग्य पदार्थ को पाते और दण्ड देने योग्य को दण्ड देते हैं, वे सत्य ग्रहण कर सकते हैं॥११॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राज विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अदेवेन मनसा यो रिषण्यति शासामुग्रो मन्यमानो जिघांसति।
बृहस्पते मा प्रणक्तस्य नो वधो नि कर्म मन्युं दुरेवस्य शर्धत:॥१२॥

अदेवेन। मनसा। य:। रिषण्यति। शासाम्। उग्र:। मन्यमान:। जिघांसति। बृहस्पते। मा। प्रणक्। तस्य। न:। वध:। नि। कर्म। मन्युम्। दु:ऽएवस्य। शर्धत:॥१२॥

पदार्थ:-(अदेवेन) अशुद्धेन **(मनसा)** **(य:)** **(रिषण्यति)** आत्मना हिंसितुमिच्छति **(शासाम्)** शासनकर्त्रीणाम् **(उग्र:)** भयङ्कर: **(मन्यमान:)** अभिमानी **(जिघांसति)** हिंसितुमिच्छति **(बृहस्पते)** बृहतो राज्यस्य पालक **(मा)** **(प्रणक्)** नष्टो भवेत् **(तस्य)** **(न:)** अस्माकम् **(वध:)** **(नि)** **(कर्म)** **(मन्युम्)** क्रोधम् **(दुरेवस्य)** दु:खेन प्राप्तुं योग्यस्य **(शर्द्धत:)** बलवत:॥१२॥

अन्वय:-हे बृहस्पते! य: शासामुग्रो मन्यमानो देवेन मनसा रिषण्यति जिघांसति तस्य मन्युं शर्द्धतो दुरेवस्य वधो मा प्रणक् नोऽस्माकं कर्म मा नि प्रणक्॥१२॥

भावार्थ:-ये राज्यं शासन्ति ते दुर्बुद्धीन् हिंसकान् वशं नयेयु:। यदि वशं न गच्छेयुस्तर्ह्येतान् प्रसह्य हन्युर्येन न्यायप्रणाशो न स्यात्॥१२॥

पदार्थ:-हे **(बृहस्पते)** बड़े राज्य के पालनेवाले! **(य:)** जो **(शासाम्)** शासना करनेवालियों का **(उग्र:)** भयङ्कर **(मन्यमान:)** अभिमानी **(अदेवेन)** अशुद्ध **(मनसा)** मन से **(रिषण्यति)** हिंसा

करने को अपने से चाहता है वा **(जिघांसति)** साधारण मारने की इच्छा करता है **(तस्य)** उसके **(मन्युम्)** क्रोध को **(शर्द्धतः)** बलवत्ता से सहते हुए **(दुरेवस्य)** दुःख से प्राप्त होने योग्य का **(वधः)** नाश **(मा)** मत **(प्रणक्)** नष्ट हो **(नः)** हमारा **(कर्म)** कर्म **(नि)** मत निरन्तर नष्ट हो॥१२॥

भावार्थः-जो राज्यशासन करते हैं वे निर्बुद्धि हिंसकों को वश करें। यदि वश में न आवें तो इनको बलात्कार **[**पूर्वक**]** मारें, जिससे न्याय का प्रणाश न हो॥१२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

भरे॑षु हव्यो॒ नम॑सोप॒सद्यो॒ गन्ता॒ वाजे॑षु सनि॑ता॒ धनं॑धनम्।
विश्वा॒ इद॒र्यो अ॑भिदिप्स्वो॒३॑ मृधो॒ बृह॒स्पति॒र्वि व॑वर्हा॒ रथाँ॑ इव॥१३॥

भरे॑षु। हव्यः॑। नम॑सा। उ॒प॒ऽसद्यः॑। गन्ता॑। वाजे॑षु। स॒नि॑ता। धन॑म्ऽधनम्। विश्वाः॑। इत्। अ॒र्यः। अ॒भि॒ऽदि॒प्स्वः॑। मृधः॑। बृह॒स्पतिः॑। वि। व॒व॒र्ह॒। रथा॑न्ऽइव॥१३॥

पदार्थः-**(भरेषु)** पोषणेषु **(हव्यः)** आदातुमर्हः **(नमसा)** सत्कारेण **(उपसद्यः)** प्राप्तुं योग्यः **(गन्ता)** **(वाजेषु)** संग्रामेषु **(सनिता)** विभाजकः **(धनंधनम्)** **(विश्वाः)** सर्वाः **(इत्)** एव **(अर्य्यः)** स्वामी **(अभिदिप्स्वः)** अभितो दिप्सवो दम्भितुमिच्छवो यासु ताः **(मृधः)** संग्रामान् **(बृहस्पतिः)** पूज्यपालकः **(वि)** **(ववर्ह)** वर्द्धयति **(रथानिव)**॥१३॥

अन्वयः-यो हव्यो नमसोपसद्यो गन्ता सनिता बृहस्पतिरर्य्यो भरेषु वाजेषु धनंधनं ववर्ह रथानिव विश्वा इदभिदिप्स्वो मृधो विववर्ह स इद्राज्यं कर्त्तुमर्हति॥१३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये गुणकर्मस्वभावैर्विजयमाना विमानादियानवत् सद्य ऐश्वर्यं प्राप्य सर्वेषु सत्कर्मसु विभज्य धनादिपदार्थान् प्रददति, ते न्यायाधीशा भवितुमर्हन्ति॥१३॥

पदार्थः–जो **(हव्यः)** ग्रहण करने और **(नमसा)** सत्कार से **(उपसद्यः)** प्राप्त होने योग्य तथा **(गन्ता)** गमन करने **(सनिता)** विभाग करने **(बृहस्पतिः)** और पूज्यों की रक्षा करनेवाला **(अर्य्यः)** स्वामी **(भरेषु)** पुष्टियों और **(वाजेषु)** संग्रामों में **(धनंधनम्)** धन-धन को बढ़ाता वा **(रथानिव)** रथों के समान **(विश्वाः)** समस्त **(इत्)** उन्हीं क्रियाओं को कि **(अभिदिप्स्वः)** जिनमें दम्भ की इच्छा करनेवाले विद्यमान तथा **(मृधः)** संग्रामों को **(वि, ववर्ह)** नहीं बढ़ाता है, वह राज्य करने को योग्य होता है॥१३॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो गुण, कर्म और स्वभावों से विजय को प्राप्त होते हुए विमानादि यानों के तुल्य शीघ्र ऐश्वर्य को प्राप्त होकर समस्त सत्कर्मों में विभाग कर धनादि पदार्थों को देते हैं, वे न्यायाधीश होने के योग्य हैं॥१३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तेजिष्ठया तपनी रक्षसस्तप ये त्वा निदे दधिरे दृष्टवीर्यम्।
आविस्तत्कृष्व यदसत्त उक्थ्यं१ बृहस्पते वि परिरापो अर्दय॥१४॥

तेजिष्ठया। तपनी। रक्षसः। तप। ये। त्वा। निदे। दधिरे। दृष्टऽवीर्यम्। आविः। तत्। कृष्व। यत्। असत्। ते। उक्थ्यम्। बृहस्पते। वि। परिऽरपः। अर्दय॥१४॥

पदार्थ:-(**तेजिष्ठया**) अतिशयेन तेजस्विन्या (**तपनी**) सन्तापिनी (**रक्षसः**) दुष्टान् (**तप**) सन्तापय (**ये**) (**त्वा**) त्वाम् (**निदे**) निन्दायै (**दधिरे**) (**दृष्टवीर्य्यम्**) दृष्टं सम्प्रेक्षितं वीर्य्यं यस्य तम् (**आविः**) प्राकट्ये (**तत्**) (**कृष्व**) कुरुष्व (**यत्**) (**असत्**) भवेत् (**ते**) तव (**उक्थ्यम्**) वक्तुं योग्यम् (**बृहस्पते**) बृहतां पालक (**वि**) (**परिरापः**) परितो रपः पापं यस्य तम् (**अर्दय**) नाशय॥१४॥

अन्वयः-हे बृहस्पते! ये दृष्टवीर्यं त्वा निदे दधिरे तान् रक्षसो या तपन्यस्ति तया तेजिष्ठया त्वं तप यत्ते तवोक्थ्यमसत्तदाविष्कृष्व परिरापो व्यर्दय॥१४॥

भावार्थ:-मनुष्यैर्निन्दकान् सर्वथा निवार्य स्तावकान् प्रसार्य सत्यविद्याः प्रकटीकार्याः॥१४॥

पदार्थ:-हे (**बृहस्पते**) बड़ों की पालना करनेवाले! (**ये**) जो (**दृष्टवीर्यम्**) देखा है पराक्रम जिसका ऐसे (**त्वा**) तुझको (**निदे**) निन्दा के लिये (**दधिरे**) धारण करते, उन (**रक्षसः**) राक्षसों को जो (**तपनी**) तपानेवाली है, उस (**तेजिष्ठया**) अतीव तेजस्विनी से आप (**तप**) प्रताप दिखाओ (**यत्**) जो (**ते**) आपका (**उक्थ्यम्**) कहने योग्य प्रस्ताव (**असत्**) हो (**तत्**) उसको (**आविष्कृष्व**) प्रकट कीजिये (**परिराप:**) और सब ओर से पाप जिसके विद्यमान उसको (**वि, अर्दय**) विशेषता से नाशिये॥१४॥

भावार्थ:-मनुष्यों को चाहिये कि निन्दकों को सर्वथा निवारि और स्तुति करनेवालों को बढ़ाय सत्य विद्याओं को प्रकाश करें॥१४॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

बृहस्पते अति यदर्यो अर्हाद् द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु।
यद्दीदयच्छवस ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्॥१५॥३१॥

बृहस्पते। अति। यत्। अर्यः। अर्हात्। द्युऽमत्। विऽभाति। क्रतुऽमत्। जनेषु। यत्। दीदयत्। शवसा। ऋतऽप्रजात। तत्। अस्मासु। द्रविणम्। धेहि। चित्रम्॥१५॥

पदार्थः-(**बृहस्पते**) बृहतां पते (**अति**) (**यत्**) (**अर्य्यः**) ईश्वरः (**अर्हात्**) योग्यात् (**द्युमत्**) प्रकाशवत् (**विभाति**) प्रकाशते (**क्रतुमत्**) प्रशंसितप्रज्ञायुक्तम् (**जनेषु**) (**यत्**) (**दीदयत्**) प्रकाशकम् (**शवसा**) बलेन (**ऋतप्रजात**) ऋते सत्याचरणे प्रकट (**तत्**) (**अस्मासु**) (**द्रविणम्**) धनम् (**धेहि**) (**चित्रम्**) अद्भुतम्॥१५॥

अन्वयः-हे ऋतप्रजात बृहस्पते विद्वन्! यदर्य ईश्वरो जनेष्वर्हाद् द्युमत्क्रतुमच्छवसा यद्दीदयदतिविभाति तच्चित्रं द्रविणमस्मासु धेहि॥१५॥

भावार्थः-मनुष्यैर्यद्यदीश्वरेण वेदद्वारा सत्यं प्रकाश्यते तत्तत्सर्वं प्रकाशनीयम्, यद्यत्स्वार्थमेषितव्यं तत्तदन्येभ्योऽप्येष्टव्यम्॥१५॥

पदार्थः-हे (**ऋतप्रजात**) सत्याचरण में प्रकट (**बृहस्पते**) बड़ों के पालनेवाले विद्वान्! (**यत्**) जो (**अर्यः**) ईश्वर (**जनेषु**) मनुष्यों में (**अर्हात्**) योग्य व्यवहार से (**द्युमत्**) प्रकाशवान् (**क्रतुमत्**) प्रशंसित प्रज्ञायुक्त वा (**शवसा**) बल से (**यत्**) जो (**दीदयत्**) प्रकाशकर्त्ता (**अति, विभाति**) अतीव प्रकाशित होता है (**तत्**) उस (**चित्रम्**) अद्भुत (**द्रविणम्**) धन को (**अस्मासु**) हम लोगों में (**धेहि**) स्थापन कीजिये॥१५॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि जो-जो ईश्वर ने वेदद्वारा सत्य का प्रकाश किया वह-वह सब प्रकाश करें, और जो-जो स्वार्थ चाहें वह-वह सबके लिये चाहें॥१५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

मा नः स्तेनेभ्यो ये अभि द्रुहस्पदे निरामिणो रिपवोऽन्नेषु जागृधुः।
आ देवानामोहते वि व्रयो हृदि बृहस्पते न परः साम्नो विदुः॥१६॥

मा। नः। स्तेनेभ्यः। ये। अभि। द्रुहः। पदे। निराऽमिणः। रिपवः। अन्नेषु। जगृधुः। आ। देवानाम्। ओहते। वि। व्रयः। हृदि। बृहस्पते। न। परः। साम्नः। विदुः॥१६॥

पदार्थः-(**मा**) (**नः**) अस्माकम् (**स्तेनेभ्यः**) चोरेभ्यः (**ये**) (**अभि**) (**द्रुहः**) द्रोग्धारः (**पदे**) प्राप्तव्ये (**निरामिणः**) नित्यं रन्तुं शीलाः (**रिपवः**) शत्रवः (**अन्नेषु**) (**जागृधुः**) अभिकाङ्क्षेयुः (**आ**) (**देवानाम्**) विदुषाम् (**ओहते**) वितर्कयुक्ताय (**वि**) (**व्रयः**) वर्जनीयाः। **अयं बहुलमेतन्निदर्शनमिति** व्रीधातुर्ग्राह्यः। (**हृदि**) (**बृहस्पते**) चोरादिनिवारक (**न**) (**परः**) (**साम्नः**) सन्धेः (**विदुः**) जानीयुः॥१६॥

अन्वयः-हे बृहस्पते! येऽभिद्रुहो रिपवो पदे निरामिणोऽन्नेषु जागृधुस्तेभ्यः स्तेनेभ्यो नोऽस्माकं भयम्मास्तु। ये व्रयो देवानामोहते हृदि साम्नो विविदुस्तान् परस्त्वं न प्राप्नुयाः॥१६॥

भावार्थः-ये स्तेना द्रोहेण परपदार्थानिच्छन्ति ते किमपि धर्मन्न जानन्ति॥१६॥

पदार्थः-हे (**बृहस्पते**) चोर आदि के निवारनेवाले! (**ये**) जो (**अभिद्रुहः**) सब ओर से द्रोह करनेवाले (**रिपवः**) शत्रुजन (**पदे**) पाने योग्य स्थान में (**निरामिणः**) नित्य रमण करनेवाले (**अन्नेषु**) अन्नादि पदार्थों के निमित्त (**जागृधुः**) सब ओर से कांक्षा करें उन (**स्तेनेभ्यः**) चोरों से (**नः**) हमको भय (**मा**) न हो। जो (**व्रयः**) वर्जने योग्य जन (**देवानाम्**) विद्वानों के बीच (**आ, ओहते**) वितर्कयुक्त के लिये (**हृदि**) मन में (**साम्नः**) सन्धि से (**विविदुः**) जाने, उनको (**परः**) अत्यन्त श्रेष्ठ तू (**न**) न प्राप्त हो॥१६॥

भावार्थः-जो चोर द्रोह से पराये पदार्थों की चाहना करते हैं, वे कुछ भी धर्म नहीं जानते हैं॥१६॥

अथेश्वरविषयमाह॥

अब ईश्वर विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

विश्वेभ्यो हि त्वा भुवनेभ्यस्परि त्वष्टाजनत्साम्नःसाम्नः कविः।
स ऋणचिदृणया ब्रह्मणस्पतिर्द्रुहो हन्ता मह ऋतस्य धर्तरि॥१७॥

विश्वेभ्यः। हि। त्वा। भुवनेभ्यः। परि। त्वष्टा। अजनत्। साम्नःऽसाम्नः। कविः। सः। ऋणऽचित्। ऋणऽयाः। ब्रह्मणः। पतिः। द्रुहः। हन्ता। महः। ऋतस्य। धर्तरि॥१७॥

पदार्थः-(**विश्वेभ्यः**) सर्वेभ्यः (**हि**) खलु (**त्वा**) त्वाम् (**भुवनेभ्यः**) लोकेभ्यः (**परि**) सर्वतः (**त्वष्टा**) निर्माता (**अजनत्**) जनयति (**साम्नःसाम्नः**) सामवेदस्य सामवेदस्य मध्ये (**कविः**) सर्वज्ञः (**सः**) (**ऋणचित्**) य ऋणं चिनोति सः (**ऋणया**) य ऋणं याति प्राप्नोति सः (**ब्रह्मणः**) ब्रह्माण्डस्य

(पतिः) पालकः **(द्रुहः)** द्वेष्टुः **(हन्ता)** नाशकः **(महः)** महतः **(ऋतस्य)** सत्यस्य कारणस्य **(धर्त्तरि)**॥१७॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यः साम्नःसाम्नः कविस्त्वष्टा विश्वेभ्यो हि भुवनेभ्यो यं त्वा पर्यजनत्स ब्रह्मणस्पतिरस्ति तस्य मह ऋतस्य धर्त्तरि जगदीश्वरे स्थित ऋणचिदृणयास्त्वं द्रुहो हन्ता भव॥१७॥

भावार्थः-हे जीव! यः सर्वज्ञः सृष्टिकर्त्ता सकलभुवनैकस्वामी सर्वधर्त्ता जगदीश्वरोऽस्ति, तदाऽऽज्ञायां स्थित्वा द्रोहादिकं दूरतः परिहरेत्॥१७॥

पदार्थः–हे विद्वान्! जो **(साम्नःसाम्नः)** सामवेद सामवेदमात्र के बीच **(कविः)** सर्वज्ञ **(त्वष्टा)** पदार्थों का निर्माण करनेवाला **(विश्वेभ्यः)** सभी **(भुवनेभ्यः)** लोकों से जिन **(त्वा)** आपको **(पर्यजनत्)** सब प्रकार प्रकट करता है **(सः)** वह **(ब्रह्मणस्पतिः)** ब्रह्माण्ड की पालना करनेवाला है, उस **(महः)** महान् **(ऋतस्य)** सत्य कारण के **(धर्त्तरि)** धारण करनेवाले जगदीश्वर में स्थित **(ऋणचित्)** ऋण को इकट्ठा करने और **(ऋणयाः)** ऋण को प्राप्त होनेवाले आप **(द्रुहः)** द्रोह करनेवाले के **(हन्ता)** नाशक हूजिये॥१७॥

भावार्थः-हे जीव! जो सर्वज्ञ सृष्टिकर्त्ता सकल भुवनों का एक स्वामी और सबका धारण करनेवाला जगदीश्वर है, उसकी आज्ञा में स्थित द्रोहादिकों को दूर से दूर करें॥१७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तव॑ श्रि॒ये व्य॑जिहीत॒ पर्व॑तो॒ गवां॑ गो॒त्रमु॒दसृ॑जो॒ यद॑ङ्गिरः।

इन्द्रे॑ण यु॒जा तम॑सा॒ परी॑वृतं॒ बृह॑स्पते॒ निर॒पामौ॑ब्जो अर्ण॒वम्॥१८॥

तव॑। श्रि॒ये। वि। अ॒जि॒ही॒त॒। पर्व॑तः। गवा॑म्। गो॒त्रम्। उ॒त्ऽअसृ॑जः। यत्। अ॒ङ्गि॒रः। इन्द्रे॑ण। यु॒जा। तम॑सा। परि॑ऽवृतम्। बृह॑स्पते। निः। अ॒पाम्। औ॒ब्जः। अ॒र्ण॒वम्॥१८॥

पदार्थः-**(तव)** **(श्रिये)** **(वि)** **(अजिहीत)** प्राप्नोति **(पर्वतः)** मेघः **(गवाम्)** किरणानाम् **(गोत्रम्)** कुलम् **(उदसृजः)** उत्सृजति त्यजति **(यत्)** **(अङ्गिरः)** प्राणप्रिय **(इन्द्रेण)** सूर्येण **(युजा)** युक्तेन **(तमसा)** अन्धकारेण **(परीवृतम्)** सर्वत आवृतम् **(बृहस्पते)** **(निः)** **(अपाम्)** जलानाम् **(औब्जः)** आर्जवे भव **(अर्णवम्)** समुद्रम्॥१८॥

अन्वयः-हे अङ्गिरो बृहस्पते! तव श्रिये पर्वतो गवां यद्गोत्रं व्यजिहीतोदसृजः स त्वमिन्द्रेण युजा तमसा परीवृतमपामौब्जोऽर्णवं निर्जनय॥१८॥

भावार्थ:-येन जगदीश्वरेण सूर्य्यादिकं जगन्निर्माय परस्परं सम्बद्धं कृतं तम्प्राणप्रियं विजानीत्॥१८॥

पदार्थ:-हे **(अङ्गिर:)** प्राणप्रिय **(बृहस्पते)** बड़ों की पालना करनेवाले! **(तव)** आपकी **(श्रिये)** लक्ष्मी के लिये **(पर्वत:)** मेघ **(गवाम्)** सूर्यमण्डल की किरणों के **(यत्)** जो **(गोत्रम्)** कुल को **(वि, अजिहीत)** विशेषता से प्राप्त होता वा **(उदसृज:)** किसी पदार्थ का त्याग करता सो आप **(इन्द्रेण)** सूर्य से **(युजा)** युक्त **(तमसा)** अन्धकार से **(परीवृतम्)** सब प्रकार ढपा हुआ अग्नि जैसे हो, वैसे **(अपाम्)** जलों के बीच **(औब्ज:)** कोमलपन में प्रसिद्ध हूजिये तथा **(अर्णवम्)** समुद्र को **(नि:)** निरन्तर प्रकट कीजिये॥१८॥

भावार्थ:-जिस ईश्वर ने सूर्यादिक जगत् का निर्माण कर परस्पर सम्बन्ध किया, उसको प्राणप्रिय जानो॥१८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ब्रह्मणस्पते त्वमस्य यन्ता सूक्तस्य बोधि तनयं च जिन्व।

विश्वं तद्भद्रं यदवन्ति देवा बृहद्वदेम विदथे सुवीरा:॥१९॥३२॥६॥

ब्रह्मण:। पते। त्वम्। अस्य। यन्ता। सुऽउक्तस्य। बोधि। तनयम्। च। जिन्व। विश्वम्। तत्। भद्रम्। यत्। अवन्ति। देवा:। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीरा:॥१९॥

पदार्थ:-**(ब्रह्मण:)** ब्रह्माण्डस्य **(पते)** पालक **(त्वम्)** **(अस्य)** **(यन्ता)** नियन्ता **(सूक्तस्य)** य: सुष्ठूच्यते तस्य **(बोधि)** बुध्यस्व **(तनयम्)** सन्तानमिव **(च)** **(जिन्व)** प्रीणीहि **(विश्वम्)** सर्वम् **(तत्)** **(भद्रम्)** कल्याणकरम् **(यत्)** **(अवन्ति)** रक्षन्ति **(देवा:)** विद्वांस: **(बृहत्)** **(वदेम)** **(विदथे)** **(सुवीरा:)**॥१९॥

अन्वय:-हे ब्रह्मणस्पते! त्वमस्य सूक्तस्य यन्ता सँस्तनयं बोधि। एतत् विश्वं च जिन्व देवा यद्भद्रमवन्ति तद्बृहद्विदथे सुवीरा वयं वदेम॥१९॥

भावार्थ:-ईश्वरेण यद्रक्षितव्यमुक्तं तत्संरक्ष्य मनुष्यैर्बृहत्सुखं प्राप्तव्यम्। यथेश्वरोऽखिलं जगन्नियतं रक्षति तथा विद्वद्भिरपि सर्वं संरक्ष्यम्॥१९॥

अस्मिन् सूक्ते ईश्वरादिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रयोविंशं सूक्तं द्वात्रिंशो वर्ग: षष्ठाऽध्यायश्च समाप्त:॥

पदार्थः–हे **(ब्रह्मणस्पते)** ब्रह्माण्ड की पालना करनेहारे! **(त्वम्)** आप **(अस्य)** जो यह **(सूक्तस्य)** सुन्दरता से कहा जाता इसके **(यन्ता)** नियन्ता होते हुए **(तनयम्)** सन्तान के समान **(बोधि)** जानो **(च)** और इस **(विश्वम्)** सबको **(जिन्व)** प्रसन्न करो। तथा **(देवाः)** विद्वान् जन **(यत्)** जिस **(भद्रम्)** कल्याण करनेवाले की **(अवन्ति)** रक्षा करते हैं **(तत्)** उस **(बृहत्)** बहुत **(विदथे)** संग्राम में **(सुवीराः)** अच्छे वीरोंवाले हम लोग **(वदेम)** कहें॥१९॥

भावार्थः-ईश्वर ने जो रक्षितव्य कहा है, उसकी अच्छे प्रकार रक्षा कर मनुष्यों को बहुत सुख पाना चाहिये। जैसे ईश्वर समस्त जगत् की नियमपूर्वक रक्षा करता है, वैसे विद्वानों को भी सबकी रक्षा करनी चाहिये॥१९॥

इस सूक्त में ईश्वरादि के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह तेईसवां सूक्त और बत्तीसवां वर्ग तथा छठा अध्याय समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ द्वितीयाष्टके सप्तमाध्यायारम्भः॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद्भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥ ऋ०५.८२.५॥

सेमामिति चतुर्विंशतितमस्य षोडशर्चस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। १-११, १३-१६ ब्रह्मणस्पतिः। १२ ब्रह्मणस्पतिरिन्द्रश्च देवते। १, ७, ९, ११ निचृज्जगती। १३ भुरिक् जगती। ४, ६, ८ जगती। १० स्वराड् जगती छन्दः। निषादः स्वरः। २, ३ त्रिष्टुप्। ४, ५ स्वराट् त्रिष्टुप्। १२, १६ निचृत् त्रिष्टुप्। १५ भुरिक् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

अब द्वितीयाष्टक के सातवें अध्याय का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् लोग क्या करें, इस विषय को कहा है॥

सेमाम॑विड्ढि प्रभृ॑तिं॒ य ईशि॑षे॒ऽया वि॑धेम॒ नव॑या म॒हा गि॒रा।
यथा॑ नो मी॒ड्ढ्वान् स्तव॑ते॒ सखा॒ तव॒ बृह॑स्पते॒ सीष॑धः सोत नो॑ म॒तिम्॥१॥

सः। इ॒माम्। अ॒वि॒ड्ढि। प्र॒ऽभृ॑तिम्। यः। ईशि॑षे। अ॒या। वि॒धेम॒। नव॑या। म॒हा। गि॒रा। यथा॑। नः। मी॒ड्ढ्वान्। स्तव॑ते। सखा॑। तव॑। बृह॑स्पते। सीष॑धः। सः। उ॒त। नः। म॒तिम्॥१॥

पदार्थः-**(सः)** **(इमाम्)** **(अविड्ढि)** प्राप्नुहि **(प्रभृतिम्)** प्रकृष्टां धारणां पोषणं वा **(यः)** **(ईशिषे)** ईशनं करोषि **(अया)** अनया। अत्र **छान्दसो वर्णलोप** इति न लोपः। **(विधेम)** प्राप्नुयाम **(नवया)** नवीनया **(महा)** महत्या **(गिरा)** वाण्या **(यथा)** **(नः)** अस्मान् **(मीढ्वान्)** विद्यायाः सेचकः **(स्तवते)** प्रशंसति **(सखा)** सुहृत् **(तव)** **(बृहस्पते)** बृहत्या वाचः स्वामिन् **(सीषधः)** साधय **(सः)** **(उत)** **(नः)** अस्मभ्यम् **(मतिम्)** प्रज्ञाम्॥१॥

अन्वयः-हे बृहस्पते विद्वन्नध्यापक! यस्त्वमया नवया महा गिरेमां प्रभृतिं कर्त्तुमीशिषे स त्वमिमामविड्ढि। यथा तव मीढ्वान् सखा नः स्तवते यथा च स त्वं नो मतिमुत सीषधस्तथा च वयं विधेम॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये विद्यामुन्निनीषन्ति त आदौ वेदादिशास्त्राणि स्वयमधीत्यान्यान् प्रयत्नेनाध्यापयेयुः एवं कृत्वा पदार्थविज्ञानारूढां प्रज्ञामाप्नुयुश्च॥१॥

पदार्थः-हे **(बृहस्पते)** अध्यापक वेदरूप वाणी के शिक्षक विद्वान्! **(यः)** जो आप **(अया)** इस **(नवया)** नवीन **(महा)** महती **(गिरा)** उपदेशरूप वाणी से **(इमाम्)** इस **(प्रभृतिम्)** धारण वा पोषण रूप क्रिया के करने को **(ईशिषे)** समर्थ हो **(सः)** सो आप इस उक्त क्रिया को **(अविड्ढि)** प्राप्त हूजिये। **(यथा)** जैसे **(तव)** आपका **(मीढ्वान्)** विद्या का प्रवर्त्तक **(सखा)** मित्र **(नः)** हमारी **(स्तवते)** प्रशंसा करता और जैसे **(सः)** वह आप **(नः)** हमारे लिये **(मतिम्)** बुद्धि को **(उत)** भी **(सीषधः)** सिद्ध करो, वैसे आपको आपके मित्र को हम लोग **(विधेम)** प्राप्त हों॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो लोग विद्या की उन्नति करना चाहें, वे प्रथम वेदादि शास्त्रों को स्वयं पढ़ के दूसरों को प्रयत्न के साथ पढ़ावें और पद-पदा के पदार्थविज्ञान में आरूढ़ बुद्धि को प्राप्त हों॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यो नन्त्वान्यनमन्न्योजसोतादर्दर्मन्युना शम्बराणि वि।
प्राच्यावयदच्युता ब्रह्मणस्पतिरा चाविशद्वसुमन्तं वि पर्वतम्॥२॥

यः। नन्त्वानि। अनमत्। नि। ओजसा। उत। अदर्दः। मन्युना। शम्बराणि। वि। प्र। अच्यवयत्। अच्युता। ब्रह्मणः। पतिः। आ। च। अविशत्। वसुऽमन्तम्। वि। पर्वतम्॥२॥

पदार्थः-**(यः)** विद्वान् **(नन्त्वानि)** नमनीयानि नमस्कारार्हाणि **(अनमत्)** नमतु **(नि)** नितराम् **(ओजसा)** बलेन **(उत)** अपि **(अदर्दः)** पुनः पुनर्भृशं विदारयति **(मन्युना)** क्रोधेन **(शम्बराणि)** शम्बरस्य मेघस्य सम्बन्धानि अभ्राणि **(वि)** **(प्र)** **(अच्यावयत्)** निपातयति **(अच्युता)** नाशरहितानि **(ब्रह्मणस्पतिः)** बृहत्या प्रजायाः पालकः **(आ)** **(च)** **(अविशत्)** आविशति **(वसुमन्तम्)** प्रशस्तधनप्रापकः देशम् **(वि)** **(पर्वतम्)** मेघम्॥२॥

अन्वयः-यो ब्रह्मणस्पती राजसेनाधीशो नन्त्वानि न्यनमद् यथा सूर्य्योऽच्युता शम्बराणि व्यदर्दः उतापि पर्वतं प्राच्यावयत् तथौजसा मन्युना शत्रुं प्राच्यावयेद्विदृणियाद्वा वसुमन्तं च व्याविशत्॥२॥

भावार्थः-ये विद्वांसो राजजनाः सत्कर्मिणः सत्कुर्वन्ति दुष्कर्मिणो दण्डयन्ति ते सूर्य्यवत्पृथिव्यां राजन्ते॥२॥

पदार्थः-**(यः)** जो **(ब्रह्मणस्पतिः)** बड़ी प्रजा का रक्षक राजसेना का अध्यक्ष **(नन्त्वानि)** नमने योग्य को **(नि, अनमत्)** निरन्तर नमे, जैसे सूर्य्य **(अच्युता)** नाशरहित **(शम्बराणि)** मेघ सम्बन्धी बादलों को **(व्यदर्दः)** विशेष कर बार-बार विदीर्ण करता **(उत)** और **(पर्वतम्)** मेघ को

(प्राच्यावयत्) गिराता है वह वैसे **(ओजसा)** बल से तथा **(मन्युना)** क्रोध से शत्रु को गिरावे वा विदीर्ण करे **(च)** और **(वसुमन्तम्)** उत्तम धन को पहुंचानेहारे देश को **(वि, आ, अविशत्)** अच्छे प्रकार विशेष कर प्राप्त होवे॥२॥

भावार्थ:-जो राजा और राजजन विद्वान् सत्कर्मी लोगों को सत्कार करते और दुष्ट कर्मवालों को दण्ड देते हैं, वे सूर्य के तुल्य पृथिवी पर सुशोभित होते हैं॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तद्देवानां देवतमाय कर्त्वमश्रथ्नन् दृळहाव्रदन्त वीळिता।
उद्गा आजदभिनद् ब्रह्मणा वलमगूहत्तमो व्यचक्षयत्स्वः॥ ३॥

तत्। देवानाम्। देवऽतमाय। कर्त्वम्। अश्रथ्नन्। दृळहा। अव्रदन्त। वीळिता। उत्। गाः। आजत्। अभिनत्। ब्रह्मणा। वलम्। अगूहत्। तमः। वि। अचक्षयत्। स्वर्रिति स्वः॥३॥

पदार्थ:-**(तत्)** **(देवानाम्)** देदीप्यमानानां लोकानाम् **(देवतमाय)** अतिशयेन प्रकाशयुक्ताय **(कर्त्वम्)** कर्त्तव्यम् **(अश्रथ्नन्)** विमुक्तानि भवन्ति **(दृळहा)** दृढानि **(अव्रदन्त)** मृदूनि भवन्ति **(वीळिता)** प्रशंसितानि **(उत्)** **(गाः)** किरणान् **(आजत्)** अजति प्रक्षिपति **(अभिनत्)** विदृणाति **(ब्रह्मणा)** बृहता बलेन **(बलम्)** आवरकं मेघम् **(अगूहत्)** संवृणोति **(तमः)** अन्धकारम् **(वि)** **(अचक्षयत्)** दर्शयति **(स्वः)** अन्तरिक्षस्थान् पदार्थान्॥३॥

अन्वय:-हे विद्वन्! यथा देवानां देवतमाय सूर्याय तत्कर्त्वं कर्मास्ति यथायं सूर्यो गा उदाजद् ब्रह्मणा बलमभिनद् यत्तमोऽगूहत् प्रकाशमगूहत् तद्यो व्यभिनत् स्वर्व्यचक्षयद् यस्य प्रतापेनोक्तानि वस्तूनि दृढा वीळिता अव्रदन्ताश्रथ्नन् तथा त्वं वर्त्तस्व॥३॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सूर्यवद्विद्याप्रकाशकर्माणोऽविद्यान्धकारनिवारकाः प्रमादिनो दुष्टान् शिथिलीकुर्वन्ती विद्वत्तमत्वं गृह्णन्ति ते जगदुपकारकाः सन्ति॥३॥

पदार्थ:-हे विद्वन्! जैसे **(देवानाम्)** प्रकाशमान लोकों में **(देवतमाय)** अत्यन्त प्रकाशयुक्त सूर्य के लिये **(तत्)** वह **(कर्त्वम्)** कर्त्तव्य कर्म है जैसे यह सूर्य **(गाः)** किरणों को **(उत्, आजत्)** उत्कृष्टता से फेंकता **(ब्रह्मणा)** बड़े बल से **(बलम्)** आवरणकर्त्ता मेघ को **(अभिनत्)** विदीर्ण करता और जो **(तमः)** अन्धकार **(अगूहत्)** प्रकाश का आवरण करता उसको जो विदीर्ण करता और **(स्वः)** अन्तरिक्षस्थ सब पदार्थों को **(व्यचक्षयत्)** विशेष कर दर्शाता है और जिसके प्रताप से

उक्त सब वस्तु **(दृढा)** दृढ **(वीळिता)** प्रशस्त **(अव्रदन्त)** कोमल होते तथा **(अश्रथ्नन्)** विमुक्त होते हैं, वैसे आप वर्त्ताव कीजिये॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो सूर्य के तुल्य विद्याप्रकाश कर्मवाले, अविद्यारूप अन्धकार के निवारक, प्रमादी दुष्टों को शिथिल करते हुए श्रेष्ठ विद्वत्ता को ग्रहण करते हैं, वे जगत् के उपकारक होते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अश्मास्यमवतं ब्रह्मणस्पतिर्मधुधारमभि यमोजसातृणत्।
तमेव विश्वे पपिरे स्वर्दृशो बहु साकं सिसिचुरुत्समुद्रिणम्॥४॥

अश्मऽआस्यम्। अवतम्। ब्रह्मणः। पतिः। मधुऽधारम्। अभि। यम्। ओजसा। अतृणत। तम्। एव। विश्वे। पपिरे। स्वःऽदृशः। बहु। साकम्। सिसिचुः। उत्सम्। उद्रिणम्॥४॥

पदार्थः-(अश्मास्यम्) अश्मनो मेघस्य मुख्यभागम् **(अवतम्)** अधोगामिनम् **(ब्रह्मणः)** बृहतः **(पतिः)** रक्षकः **(मधुधारम्)** मधुराणां रसानां धर्त्तारम् **(अभि) (यम्) (ओजसा)** बलेन **(अतृणत्)** हिनस्ति **(तम्) (एव) (विश्वे)** सर्वे **(पपिरे)** पिबन्ति **(स्वर्दृशः)** स्वः सुखं पश्यन्ति येभ्यस्ते **(बहु) (साकम्)** सह **(सिसिचुः)** सिञ्चन्ति **(उत्सम्)** कूपमिव **(उद्रिणम्)** उदकवन्तम्॥४॥

अन्वयः-यो विद्वान् ब्रह्मणस्पतिर्यथा सूर्य्य ओजसा यमवतं मधुधारमश्मास्यमभ्यतृणत्तमेव विश्वे स्वर्दृशः साकमुद्रिणमुत्समिव बहु पपिरे सिसिचुश्च तथाऽनुतिष्ठेत्॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या मेघवत्कूपवच्च सर्वान् शुभशिक्षया प्रीणन्ति सर्वेषामैकमत्यं सम्पादयन्ति च ते मिलित्वा सर्वान्नुन्नेतुं शक्नुवन्ति॥४॥

पदार्थः–जो विद्वान् **(ब्रह्मणः)** बड़ों का **(पतिः)** रक्षक सज्जन जैसे सूर्य्य **(ओजसा)** बल के साथ **(यम्)** जिस **(अवतम्)** नीचे को गिरनेहारे **(मधुधारम्)** मधुर रसों के धारक **(अश्मास्यम्)** मेघ के मुख्य भाग को **(अभि, अतृणत्)** सब ओर से काटता है **(तमेव)** उसी को **(विश्वे)** सब **(स्वर्दृशः)** सुख प्राप्ति के हेतु शिक्षक लोग **(साकम्)** साथ मिल के **(उद्रिणम्)** बलयुक्त **(उत्सम्)** कूप के तुल्य **(बहु)** अधिकतर **(पपिरे)** पियें और **(सिसिचुः)** सीचें, वैसे अनुष्ठान करें॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य मेघ और कूप के तुल्य सबको शुभ शिक्षा से तृप्त करते और सबको एकमत करते हैं, वे मिल कर सबकी उन्नति कर सकते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सना ता का चित् भुवना भवीत्वा माद्भिः शरद्भिर्दुरो वरन्त वः।
अयतन्ता चरतो अन्यदन्यदिद् या चकार वयुना ब्रह्मणस्पतिः॥५॥१॥

सना। ता। का। चित्। भुवना। भवीत्वा। मात्ऽभिः। शरत्ऽभिः। दुरः। वरन्त। वः। अयतन्ता। चरतः। अन्यत्ऽअन्यत्। इत्। या। चकार। वयुना। ब्रह्मणः। पतिः॥५॥

पदार्थः-(**सना**) सनातनानि (**ता**) तानि (**का**) कानि (**चित्**) अपि (**भुवना**) भुवनानि (**भवीत्वा**) भव्यानि (**माद्भिः**) मासैः (**शरद्भिः**) शरदाद्यृतुभिः (**दुरः**) द्वाराणि (**वरन्त**) वरयन्ति (**वः**) युष्मान् (**अयतन्ता**) प्रयत्नरहितौ (**चरतः**) कुरुतः (**अन्यदन्यत्**) भिन्नं भिन्नम् (**इत्**) एव (**या**) यानि (**चकार**) (**वयुना**) प्रज्ञानानि (**ब्रह्मणः**) विद्याधनस्य (**पतिः**) पालकः॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा सूर्य्यस्य किरणा माद्भिः शरद्भिर्या यानि सना का चिद्भुवना भवीत्वा सन्ति ता दुरो वरन्त तथा यो ब्रह्मणस्पतिर्वो वयुना चकार स युष्माभिः सेव्यः। यावयतन्ताऽध्यापकाऽध्येतारावलसावन्यदन्यदिदेव चरतः कुरुतस्तौ न सत्कर्त्तव्यौ॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्यो मासानृतून् विभज्य मूर्त्तानां द्रव्याणां यथावत्स्वरूपं दर्शयति तथा ये विद्वांसो पृथिवीमारभ्येश्वरपर्यन्तान् पदार्थान् यथावत् शिक्षया दर्शयेयुस्ते लोके पूजनीयाः स्युर्ये चाऽविद्यायुक्ताऽलसा कापट्यादिना दूषिता दुष्टोपदेशं कुर्वन्ति वा निष्पुरुषार्थास्तिष्ठन्ति ते केनचित्कदाचिन्नैव सेवनीयाः॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे सूर्य्य के किरण (**माद्भिः**) महीनों और (**शरद्भिः**) शरत् आदि ऋतुओं के विभाग से (**या**) जो (**सना**) सनातन (**का, चित्**) कोई (**भवीत्वा**) होनेवाले (**भुवना**) लोक हैं (**ता**) उनको और (**दुरः**) द्वारों को (**वरन्त**) विवृत करते प्रकाशित करते हैं तथा जो (**ब्रह्मणस्पतिः**) विद्या और धन का पालक पुरुष (**वः**) तुमको (**वयुना**) विज्ञानयुक्त (**चकार**) करता है, वह तुमको सेवने योग्य है। जो (**अयतन्ता**) प्रयत्नरहित आलसी पढ़ने-पढ़ानेवाले (**अन्यदन्यत्**) अन्य-अन्य विरुद्ध (**इत्**) ही (**चरतः**) करते हैं, उनका सत्कार कभी न करना चाहिये॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य महीनों और ऋतुओं को विभक्त कर मूर्त्त द्रव्यों का यथावत्स्वरूप दिखाता है, वैसे जो विद्वान् पृथिवी से ले के ईश्वर पर्यन्त पदार्थों को

यथावत् शिक्षा से दिखावें वे लोक में पूजनीय होवें और जो अविद्यायुक्त आलसी लोग कपट आदि से दूषित दुष्ट उपदेश करते वा निकम्में बैठे रहते हैं, वे किसी को कभी सेवने योग्य नहीं हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अभिनक्षन्तो अभि ये तमानशुर्निधिं पणीनां परमं गुहा हितम्।
ते विद्वांसः प्रतिचक्ष्यानृता पुनर्यत उ आयन्तदुदीयुराविशम्॥६॥

अभिऽनक्षन्तः। अभि। ये। तम्। आनशुः। निऽधिम्। पणीनाम्। परमम्। गुहा। हितम। ते। विद्वांसः। प्रतिऽचक्ष्य। अनृता। पुनः। यतः। ऊम् इति। आयन्। तत्। उत्। ईयुः। आऽविशम्॥६॥

पदार्थः-(अभिनक्षन्तः) अभितो जानन्तः **(अभि) (ये) (तम्) (आनशुः)** अश्नुवन्ति प्राप्नुवन्ति **(निधिम्)** विद्याकोशम् **(पणीनाम्)** व्यवहारनिष्ठानां प्रशंसनीयानां नृणाम् **(परमम्)** उत्कृष्टम् **(गुहा)** बुद्धौ **(हितम्)** स्थितम् **(ते)** विद्वांसः **(प्रतिचक्ष्य)** प्रत्यक्षेण प्रत्याख्यानाय **(अनृता)** मिथ्याभाषणादिकर्माणि **(पुनः) (यतः) (उ)** वितर्के **(आयन्)** प्राप्नुवन्ति **(तत्) (उत्) (ईयुः)** प्राप्नुयुः **(आविशम्)** आविशन्ति यस्मिँस्तम्॥६॥

अन्वयः-येऽभिनक्षन्तो विद्वांसस्तं गुहा हितं परमं पणीनां निधिमभ्यानशुस्तेऽन्येषामनृता प्रतिचक्ष्य पुनरु यत आविशमायन् तदुदीयुरुपदिशन्तु॥६॥

भावार्थः-ये यथार्थं विज्ञानं प्राप्याधर्माचरणात्पृथग्वर्त्तित्वाऽन्यान् पापाचरणात् पृथक् कृत्य पुनः [पुनः] धर्मविद्याशरीरात्मपुष्टिषु प्रवेशयन्ति तेऽत्यन्तमानन्दं प्राप्याऽन्यानानन्दयितुं शक्नुवन्ति॥६॥

पदार्थः-(ये) जो **(अभिनक्षन्तः)** सब ओर से जानते हुए **(विद्वांसः)** विद्वान् लोग **(तम्)** उस **(गुहा)** बुद्धि में **(हितम्)** स्थित **(परमम्)** उत्तम **(पणीनाम्)** व्यवहारवान् प्रशंसनीय मनुष्यों के **(निधिम्)** विद्यारूप कोश को **(अभ्यानशुः)** सब ओर से प्राप्त होते हैं **(ते)** वे औरों के **(अनृता)** मिथ्याभाषणादि कर्मों को **(प्रतिचक्ष्य)** प्रत्यक्ष खण्डन कर **(पुनः) (यतः) (उ)** फिर भी **(आविशम्)** जिसमें आवेश करते उस ज्ञान को **(आयन्)** प्राप्त होते **(तत्)** उसका **(उदीयुः)** उदय करें अर्थात् उपदेश करें॥६॥

भावार्थः-जो यथार्थ विज्ञान को पाकर अधर्माचरण से पृथक् रह कर अन्यों को पापाचरण से पृथक् कर फिर-फिर धर्म, विद्या, शरीर, आत्मा की पुष्टि में प्रवेश कराते, वे अत्यन्त आनन्द को पाकर औरों को आनन्दित करने को समर्थ होते हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ऋतावा॑नः प्रति॒क्ष्यानृ॑ता पु॒नरात॒ आ त॑स्थुः क॒वयो॑ म॒हस्प॒थः।

ते बा॒हुभ्यां॑ धमि॒तम॒ग्निम॒श्मनि॒ नकिः षो अ॒स्त्यर॑णो ज॒हुर्हि तम्॥७॥

ऋत॑ऽवा॑नः। प्र॒ति॒ऽचक्ष्य॑। अनृ॑ता। पुन॑ः। आ। अत॑ः। आ। त॒स्थुः। क॒वय॑ः। म॒हः। प॒थः। ते। बा॒हुऽभ्या॑म्। ध॒मि॒तम्। अ॒ग्निम्। अश्म॑नि। न॒किः। सः। अ॒स्ति॒। अर॑णः। ज॒हुः। हि। तम्॥७॥

पदार्थः-(**ऋतावानः**) यः ऋतानि सत्याचरणानि वनन्ति संभजन्ति ते (**प्रतिचक्ष्य**) निषेध्य (**अनृता**) अधर्म्यव्यवहारान् (**पुनः**) (**आ**) (**अतः**) हेतोः (**आ**) (**तस्थुः**) समन्तात् तिष्ठन्ति (**कवयः**) प्राज्ञाः (**महः**) महतो धर्म्यान् (**पथः**) मार्गान् (**ते**) (**बाहुभ्याम्**) (**धमितम्**) प्रज्वलितम् (**अग्निम्**) (**अश्मनि**) पाषाणे (**नकिः**) निषेधे (**सः**) (**अस्ति**) (**अरणः**) विज्ञाता (**जहुः**) त्यजन्ति (**हि**) खलु (**तम्**)॥७॥

अन्वयः-य ऋतावानः कवयो महस्पथ आतस्थुस्तेऽतः पुनरनृता प्रतिचक्ष्यैतान्याजहुः। योऽरणो बाहुभ्यामश्मनि धमितमग्निं त्यजन्नकिरस्ति हि खलु तं बोधं प्राप्नोति॥७॥

भावार्थः-येऽविद्याऽधर्माचरणं प्रत्याख्याय सन्मार्गं सेवन्ते कराभ्यां धमनेन काष्ठादिस्थमग्निमुत्पाद्य कार्य्याणि साध्नुवन्ति तेऽभीष्टं प्राप्नुवन्ति॥७॥

पदार्थः-जो (**ऋतावानः**) सत्य आचरणों का सेवन करनेहारे (**कवयः**) पण्डित लोग (**महः**) बड़े धर्मयुक्त (**पथः**) मार्गों पर (**आ, तस्थुः**) अच्छे प्रकार स्थित होते (**ते**) वे (**अतः**) इस कारण से (**पुनः**) वार-वार (**अनृता**) अधर्मयुक्त व्यवहारों को (**प्रतिचक्ष्य**) खण्डित कर इनको (**आ, जहुः**) सब प्रकार छोड़ते हैं। जो (**अरणः**) विज्ञानी (**बाहुभ्याम्**) हाथों से (**अश्मनि**) पत्थर पर (**धमितम्**) प्रज्वलित किये (**अग्निम्**) अग्नि का त्याग (**नकिः**) नहीं (**अस्ति**) करता अर्थात् ग्रहण करता है (**सः, हि**) वही (**तम्**) उस बोध को प्राप्त होता है॥७॥

भावार्थः-जो अविद्या और अधर्माचरण का खण्डन कर श्रेष्ठ मार्ग का सेवन करते हैं, वे हाथों से धौंकने से काष्ठादिस्थ अग्नि को उत्पन्न कर कार्य्यों को सिद्ध करते और अभीष्ट को प्राप्त होते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ऋ॒तज्ये॑न क्षि॒प्रेण॒ ब्रह्म॑ण॒स्पति॒र्यत्र॒ वष्टि॒ प्र तद॑श्नोति॒ धन्व॑ना।

तस्य॑ सा॒ध्वीरिष॑वो॒ याभि॒रस्य॑ति नृ॒चक्ष॑सो दृ॒शये॒ कर्ण॑योनयः॥८॥

ऋ॒तऽज्ये॑न। क्षि॒प्रेण॑। ब्रह्म॑णः। पतिः॑। यत्र॑। वष्टि॑। प्र। तत्। अ॒श्नो॒ति॒। धन्व॑ना। तस्य॑। सा॒ध्वीः॑। इष॑वः। याभिः॑। अस्य॑ति। नृ॒ऽचक्ष॑सः। दृ॒शये॑। कर्ण॑ऽयोनयः॥८॥

पदार्थः-(ऋतज्येन) ऋता सत्या ज्या यस्मिँस्तेन **(क्षिप्रेण)** क्षिप्रकारिणा **(ब्रह्मणः)** धनस्य **(पतिः)** पालकः **(यत्र)** यस्मिन् समये **(वष्टि)** कामयते **(प्र) (तत्) (अश्नोति)** प्राप्नोति **(धन्वना)** धनुषा **(तस्य) (साध्वीः)** श्रेष्ठाः **(इषवः)** बाणाः **(याभिः) (अस्यति)** शत्रून् प्रक्षिपति **(नृचक्षसः)** नृभिर्द्रष्टव्याः **(दृशये)** दर्शनाय **(कर्णयोनयः)** कर्णः श्रोत्रं योनिर्येषान्ते॥८॥

अन्वयः-यत्र ब्रह्मणस्पतिर्ऋतज्येन क्षिप्रेण धन्वना यत्प्र वष्टि तदश्नोति तस्य साध्वीरिषवः स्युः। याभिः शत्रूनस्यति ताभिर्दृशये कर्णयोनयो नृचक्षसस्सन्ति ताँस्तत्राश्नोति॥८॥

भावार्थः-यथा वीरा धनुरादिशस्त्रेणाग्नेयाद्यस्त्रेण च शत्रून् पराजयन्ते तथा धर्मात्मा दोषान् विजयते॥८॥

पदार्थः-(यत्र) जहाँ **(ब्रह्मणः)** धन का **(पतिः)** स्वामी **(ऋतज्येन)** ठीक-ठीक प्रत्यञ्चावाले **(क्षिप्रेण)** शीघ्रकारी **(धन्वना)** धनुष् से जिसको **(प्र, वष्टि)** अच्छे प्रकार चाहता **(तत्)** उनको **(अश्नोति)** प्राप्त होता **(तस्य)** उसके **(साध्वीः)** श्रेष्ठ **(इषवः)** बाण होवें **(याभिः)** जिनसे शत्रुओं को **(अस्यति)** हठावे दूर करे उनसे **(दृशये)** देखने अर्थात् जानने के लिये **(कर्णयोनयः)** कान आदि कारणवाले **(नृचक्षसः)** मनुष्यों को देखने योग्य विषय हैं, उनको वहाँ प्राप्त होता है॥८॥

भावार्थः-जैसे वीर पुरुष धनुष् आदि शस्त्र और आग्नेयादि अस्त्र से शत्रुओं को पराजित करते हैं, वैसे धर्मात्मा दोषों को जीत लेता है॥८॥

पुना राजपुरुषाः कीदृशाः स्युरित्याह॥

फिर राजपुरुष कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स सं॒नयः॒ स वि॑न॒यः पु॒रोहि॑तः॒ स सुष्टु॑तः॒ स यु॒धि ब्रह्म॑ण॒स्पतिः॑।
चा॒क्ष्मो यद्वाजं॒ भर॑ते म॒ती धनादित्सूर्य॑स्तपति तप्य॒तुर्वृथा॑॥९॥

सः। स॒म्ऽन॒यः। सः। वि॒ऽन॒यः। पु॒रःऽहि॑तः। सः। सुऽस्तु॑तः। सः। यु॒धि। ब्रह्म॑णः। पतिः॑। चा॒क्ष्मः। यत्। वाज॑म्। भर॑ते। म॒ती। धना॑। आत्। इत्। सूर्यः॑। त॒प॒ति॒। त॒प्य॒तुः। वृथा॑॥९॥

पदार्थः-(सः) (संनयः) सम्यग् नयो नीतिर्यस्य सः **(सः) (विनयः)** विविधो नयो यस्य **(सः) (पुरोहितः)** पुर एनं विद्वांसो दधति सः **(सः) (सुष्टुतः)** सुष्ठु स्तुतः प्रशंसितः **(सः) (युधि)**

युद्धे **(ब्रह्मणः)** धनस्य **(पतिः)** रक्षकः **(चाक्ष्मः)** व्यक्तवाक् **(यत्)** यतः **(वाजम्)** अन्नादिसामग्रीयुक्तपदार्थसमूहम् **(भरते)** धरति **(मती)** मत्या विज्ञानेन **(धना)** धनानि **(आत्)** नैरन्तर्ये **(इत्)** एव **(सूर्य्यः)** सवितेव **(तपति)** **(तप्यतुः)** दुष्टानां परितापकः **(वृथा)** मिथ्यैव परपीडने वर्त्तमानानाम्॥९॥

अन्वयः-स संनयः स विनयः स पुरोहितः स सुष्टुतश्चाक्ष्मः स ब्रह्मणस्पतिर्वृथा वर्त्तमानानां तप्यतुर्मती युधि धना यद्वाजं चाद्भरते तस्य युधि सूर्य्य इवेत्तपति प्रतापयुक्तो भवति॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये विनयादियुक्ताः प्रशंसितगुणकर्मस्वभावा दुष्टतानिरोधकाः सत्यताप्रवर्त्तकाः सन्ति, ते धर्म्येण राज्यं रक्षितुं शक्नुवन्ति॥९॥

पदार्थः-**(सः)** वह **(संनयः)** सम्यक् नीतिवाला **(सः)** वह **(विनयः)** विविध प्रकार की नम्रतावाला **(सः)** वह **(पुरोहितः)** आगे जिसको विद्वान् लोग धारण करते **(सः)** वह **(सुष्टुतः)** अच्छे प्रकार प्रशंसित **(चाक्ष्मः)** स्पष्टवक्ता **(सः)** वही **(ब्रह्मणः)** धन का **(पतिः)** स्वामी **(वृथा)** निष्प्रयोजन दूसरों को पीड़ा देनेहारे दुष्टों को **(तप्यतुः)** दुःख देनेवाला विद्वान् वीर पुरुष **(मती)** विज्ञान से **(धना)** धनों और **(यत्)** जिस कारण **(वाजम्)** अन्नादि सामग्रीयुक्त पदार्थों का **(आत्)** निरन्तर **(भरते)** धारण-पोषण करता है, इससे **(युधि)** युद्ध में **(सूर्य्यः)** सूर्य के तुल्य **(इत्)** ही **(तपति)** [दुष्टों को संताप देता है, वह] प्रतापयुक्त होता है॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो विनय आदि से युक्त प्रशंसित गुण-कर्म-स्वभाववाले दुष्टता के निरोधक और सत्यता के प्रवर्त्तक हैं, वे धर्मयुक्त व्यवहार से राज्य की रक्षा करने को समर्थ होते हैं॥९॥

पुना राजप्रजे किं कुर्य्यातामित्याह॥

फिर राजा और प्रजा क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

विभु प्रभु प्रथमं मेहनावतो बृहस्पतेः सुविदत्राणि राध्या।

इमा सातानि वेन्यस्य वाजिनो येन जना उभये भुञ्जते विशः॥१०॥२॥

विऽभु। प्रऽभु। प्रथमम्। मेहनाऽवतः। बृहस्पतेः। सुऽविदत्राणि। राध्या। इमा। सातानि। वेन्यस्य। वाजिनः। येन। जनाः। उभये। भुञ्जते। विशः॥१०॥

पदार्थः-**(विभु)** व्यापकम् **(प्रभु)** समर्थम् **(प्रथमम्)** प्रख्यातम् **(मेहनावतः)** प्रशस्तानि मेहनानि वर्षणानि यस्यास्ति तस्य **(बृहस्पतेः)** बृहतः पालकस्य सूर्य्यस्येव **(सुविदत्राणि)**

शोभनानि विदत्राणि विज्ञानानि येभ्यस्तानि **(राध्या)** सुखानि साधयितुमर्हाणि **(इमा)** इमानि **(सातानि)** विभज्य दातुमर्हाणि **(वेन्यस्य)** कमितुं योग्यस्य **(वाजिनः)** गन्तुं योग्यस्य **(येन)** **(जनाः)** प्रसिद्धाः पुरुषाः **(उभये)** विद्वांसोऽविद्वांसश्च **(भुञ्जते)** **(विशः)** धनानि॥१०॥

अन्वयः-येन उभये जना विशो भुञ्जते तत्प्रथमं विभु प्रभूपासितं सिद्धिकारि भवति तस्य मेहनावतो वाजिनो वेन्यस्य बृहस्पतेः सातानि राध्या सुविदत्राणीमा निमित्तानि सर्वैर्ग्राह्याणि॥१०॥

भावार्थः-राजप्रजाजनैः सर्वव्यापकं सर्वशक्तिमद्विस्तीर्णसुखप्रदं ब्रह्मोपास्य सर्वेषां मनुष्यादिप्राणिनां सुखसाधकानि वस्तूनि संगृह्य राजप्रजयोः सुखानि साधनीयानि॥१०॥

पदार्थः-**(येन)** जिसके आश्रय से **(उभये)** विद्वान्-अविद्वान् दोनों **(जनाः)** प्रसिद्ध पुरुष **(विशः)** धनों को **(भुञ्जते)** प्राप्त होते वह **(प्रथमम्)** विख्यात **(विभु)** व्यापक **(प्रभु)** समर्थ उपासना किया हुआ सिद्धिकारी होता है, उसके **(मेहनावतः)** प्रशस्त वर्षाओं के निमित्त **(वाजिनः)** प्राप्त होने वा **(वेन्यस्य)** चाहने **(बृहस्पतेः)** सबके रक्षक सूर्य के तुल्य प्रकाशयुक्त परमेश्वर के **(सातानि)** विभाग कर देने और **(राध्या)** सुखों को सिद्ध करने योग्य **(सुविदत्राणि)** सुन्दर विज्ञानों के **(इमा)** ये निमित्त सब लोगों को ग्रहण करने योग्य हैं॥१०॥

भावार्थः-राजजन और प्रजाजनों को योग्य है कि सर्वव्यापक शक्तिमान् विस्तीर्ण सुख देनेवाले ब्रह्म की उपासना कर सब मनुष्यादि प्राणियों के सुख साधक वस्तुओं को संग्रह करके राजप्रजा के सुखों को सिद्ध करें॥१९॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों का क्या कर्त्तव्य है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

योऽव॑रे वृ॒जने॑ वि॒श्वथा॑ वि॒भुर्म॒हामु॑ र॒ण्वः शव॑सा व॒वक्षि॑थ।
स दे॒वो दे॒वान् प्रति॑ पप्रथे पृ॒थु विश्वेदु॒ ता प॑रि॒भूर्ब्रह्म॑ण॒स्पति॑ः॥११॥

यः। अव॑रे। वृ॒जने॑। वि॒श्वऽथा॑। वि॒ऽभुः। म॒हाम्। ऊँ॒ इति॑। र॒ण्वः। शव॑सा। व॒वक्षि॑थ। सः। दे॒वः। दे॒वान्। प्रति॑। प॒प्र॒थे। पृ॒थु। विश्वा॑। इ॒त्। ऊँ॒ इति॑। ता। प॒रि॒ऽभूः। ब्रह्म॑णः। पति॑ः॥११॥

पदार्थः-**(यः)** जगदीश्वरः **(अवरे)** अर्वाचीने **(वृजने)** अनित्ये कार्ये जगति **(विश्वथा)** विश्वस्मिन् **(विभुः)** व्यापकः **(महाम्)** महान्तं संसारम् (उ) वितर्के **(रण्वः)** रमयिता **(शवसा)** बलेन **(ववक्षिथ)** वोढुं प्राप्तुमिच्छथ **(सः)** **(देवः)** दिव्यस्वरूपः **(देवान्)** विदुषो वस्वादीन् वा **(प्रति)** **(पप्रथे)** प्रख्याति **(पृथु)** विस्तीर्णानि **(विश्वा)** विश्वानि जगन्ति **(इत्)** (उ) वितर्के **(ता)** तानि **(परिभूः)** परितः सर्वतो भवतीति **(ब्रह्मणः)** ब्रह्माण्डस्य **(पतिः)** पालकः॥११॥

अन्वयः-यो विश्वथाऽवरे वृजने रण्वो विभुः परिभूर्ब्रह्मणस्पतिरस्ति स देवो शवसा महामु देवान् प्रति पप्रथे। पृथु विश्वा ता तानि पप्रथे तमिदु यूयं ववक्षिथ॥११॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः परमात्मा परावरे कार्य्यकारणाख्ये जगति परिपूर्य्य सर्वं विस्तृणाति सर्वेभ्यः सर्वाणि सुखसाधकानि ददाति स एवोपासनीयो मन्तव्यश्च॥११॥

पदार्थः-(**यः**) जो (**विश्वथा**) सब (**अवरे**) कार्य्यरूप (**वृजने**) अनित्य जगत् में (**रण्वः**) रमण करानेहारा (**विभुः**) व्यापक (**परिभूः**) सब ओर प्रसिद्ध होनेवाला (**ब्रह्मणस्पतिः**) ब्रह्माण्ड का रक्षक है (**सः**) वह (**देवः**) दिव्यस्वरूप ईश्वर (**शवसा**) बल से (**उ**) वितर्क रूप (**महाम्**) महान् संसार को और (**देवान्**) विद्वानों वा वसु आदि को (**प्रति, पप्रथे**) प्रीति के साथ प्रख्यात करता और (**पृथु**) विस्तीर्ण (**ता**) उन (**विश्वा**) समस्त जङ्गम प्राणियों को विस्तृत करता (**इत्, उ**) उसी को तुम लोग (**ववक्षिथ**) प्राप्त होने की इच्छा करो॥११॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो परमात्मा अगले-पिछले कार्य्य कारणरूप जगत् में परिपूर्ण होके सबका विस्तार करता, सबके लिये सब सुखों के साधनों को देता, वही सबको उपासना करने और मनने योग्य है॥११॥

पुना राजप्रजाविषयमाह॥

अब राजप्रजा विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

विश्वं सत्यं मघवाना युवोरिदापश्चन प्र मिनन्ति व्रतं वाम्।

अच्छेन्द्राब्रह्मणस्पती हविर्नोऽन्नं युजेव वाजिना जिगातम्॥१२॥

विश्वम्। सत्यम्। मघऽवाना। युवोः। इत्। आपः। चन। प्र। मिनन्ति। व्रतम्। वाम्। अच्छ। इन्द्राब्रह्मणस्पती इति। हविः। नः। अन्नम्। युजाऽइव। वाजिना। जिगातम्॥१२॥

पदार्थः-(**विश्वम्**) सर्वम् (**सत्यम्**) अविनाशिनम् (**मघवाना**) पूजितधनवन्तौ (**युवोः**) युवयोः (**इत्**) (**आपः**) प्राणाः। असोर्जस्। (**चन**) (**प्र**) (**मिनन्ति**) हिंसन्ति (**व्रतम्**) (**वाम्**) युवयोः (**अच्छा**) (**इन्द्राब्रह्मणस्पती**) राजधनपालकौ (**हविः**) अत्तुमर्हम् (**नः**) अस्माकम् (**अन्नम्**) अत्तव्यम् (**युजेव**) यथासंयुक्तौ (**वाजिना**) वेगवन्तावश्वौ (**जिगातम्**) प्राप्नुतम्। **जिगातीति गतिकर्मासु पठितम्।** (निघं०२.१४)॥१२॥

अन्वयः-हे मघवानेन्द्राब्रह्मणस्पती! ये युवोरापः सत्यं विश्वं प्रमिनन्ति वां व्रतं प्रमिनन्ति तान् विनाश्य वाजिना युजेव नो हविरन्नं चनाच्छेज्जिगातम्॥१२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा सुशिक्षितौ युक्तावश्वौ रथं वोढा शत्रून् पराजयतस्तथा राज्यैश्वर्य्यप्राप्तौ प्रजाराजजनौ सत्यचारविरोधिनो निवार्य्य प्राणाभयदानं युवां दद्यातम्॥१२॥

पदार्थः-हे **(मघवाना)** प्रशस्त धनवाले **(इन्द्राब्रह्मणस्पती)** राज्य और धन के रक्षक लोगो! जो **(युवोः)** तुम्हारे **(आपः)** प्राणों **(सत्यम्)** अविनाशी धर्म को **(विश्वम्)** सब जगत् को **(प्रमिनन्ति)** नष्ट-भ्रष्ट करते **(वाम्)** तुम्हारे नियम को तोड़ते हैं, उनको नष्ट कर **(वाजिना)** दो घोड़े वेगवाले **(युजेव)** जैसे संयुक्त हों, वैसे **(नः)** हमारे **(हविः)** भोजन के योग्य **(अन्नम्)** अन्न को **[(चन) (अच्छा) (इत्)]** **(जिगातम्)** प्राप्त होओ॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे सुशिक्षित युक्त किये घोड़े रथ को पहुंचा कर शत्रुओं को पराजित कराते, वैसे राज्यैश्वर्य को प्राप्त हुए राज प्रजाजन सत्याचरण के विरोधियों को निवृत्त कर प्राण के अभयरूप दान को तुम लोग देओ॥१२॥

पुना राजजनाः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर राजपुरुष क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उताशिष्ठा अनु शृण्वन्ति वह्नयः सभेयो विप्रो भरते मती धना।
वीळुद्वेषा अनु वशा ऋणमादुदिः स ह वाजी समिथे ब्रह्मणस्पतिः॥१३॥

उत। आशिष्ठाः। अनु। शृण्वन्ति। वह्नयः। सभेयः। विप्रः। भरते। मती। धना। वीळुऽद्वेषाः। अनु। वशा। ऋणम्। आऽदुदिः। सः। ह। वाजी। सम्ऽइथे। ब्रह्मणः। पतिः॥१३॥

पदार्थः-**(उत)** **(आशिष्ठाः)** अतिशयेनाशुगामिनः **(अनु)** **(शृण्वन्ति)** **(वह्नयः)** वोढारोऽश्वाः **(सभेयः)** सभायां साधुः **(विप्रः)** मेधावी **(भरते)** धरति **(मती)** मत्या प्रज्ञया **(धना)** धनानि **(वीळुद्वेषाः)** दृढद्वेषाः **(अनु)** **(वशा)** कमनीयानि **(ऋणम्)** **(आददिः)** आदाता **(सः)** **(ह)** किल **(वाजी)** प्रशस्तविज्ञानः **(समिथे)** संग्रामे **(ब्रह्मणः)** राज्यधनस्य **(पतिः)** पालकः॥१३॥

अन्वयः-य आशिष्ठा वह्नय इव वीळुद्वेषाः सन्तिताननुशृण्वन्ति तैः सह समिथे सभेयो विप्रो मती मत्या वशा धना हाऽनु भरते उतापि स वाजी ब्रह्मणस्पतिर्ऋणमाददिस्स्यात्॥१३॥

भावार्थः-वह्निरित्यश्वस्य गौणिकं नाम। यथा वह्नयो वोढारः सन्ति तथैवाश्वा भवन्ति राजपुरुषा यान् दुष्टाचारान् शृणुयुस्तान् वशीकृत्य सर्वप्रियं साध्नुयुः॥१३॥

पदार्थः-जो **(आशिष्ठाः)** अति शीघ्रगामी **(वह्नयः)** पहुंचानेवाले घोड़ों के तुल्य **(वीळुद्वेषाः)** दुर्गुणों से दृढ़ द्वेषकारी हैं, उनको **(अनु, शृण्वन्ति)** अनुक्रम से सुनते हैं, उनके साथ **(समिथे)** संग्राम में **(सभेयः)** सभा में कुशल **(विप्रः)** बुद्धिमान् जन **(मती)** बुद्धिबल से **(वशा)**

कामना करने योग्य सुन्दर **(धना)** धनों को **(ह)** ही **(अनु, भरते)** अनुकूल धारण करता **(उत)** और **(स:)** वह **(वाजी)** प्रशस्तज्ञानी **(ब्रह्मणस्पति:)** राज्य के धन का रक्षक **(ऋणम्)** ऋण अर्थात् कर रूप धन का **(आददि:)** ग्रहण करनेवाला हो॥१३॥

भावार्थ:-वह्नि यह घोड़े का गौण नाम है। जैसे अग्नि पहुँचानेवाले होते हैं, वैसे ही घोड़े भी होते हैं। राजपुरुष जिन दुष्टाचारियों को सुनें, उनको वश में करके सबका प्रिय सिद्ध किया करें॥१३॥

पुनरध्यापका: कीदृशा: स्युरित्याह॥

फिर अध्यापक लोग कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ब्रह्मणस्पतेरभवद्यथावशं सत्यो मन्युर्महि कर्मा करिष्यत:।
यो गा उदाजत्स दिवे वि चाभजन् महीव रीति: शवसासरत्पृथक्॥१४॥

ब्रह्मण:। पते:। अभवत्। यथाऽवशम्। सत्य:। मन्यु:। महि। कर्म। करिष्यत:। य:। गा:। उत्ऽआजत्। स:। दिवे। वि। च। अभजत्। महीऽइव। रीति:। शवसा। असरत्। पृथक्॥१४॥

पदार्थ:-(ब्रह्मण:) धनस्य **(पते:)** पत्यु:। अत्र **षष्ठीयुक्तश्छन्दसि** वेति पतिशब्दस्य घि संज्ञा। **(अभवत्)** भवेत् **(यथावशम्)** वशमनतिक्रम्य यथास्यात्तथा **(सत्य:)** सत्सु साधु: **(मन्यु:)** क्रोध: **(महि)** महत् **(कर्म)**। अत्र **संहितायामिति** दीर्घ:। **(करिष्यत:) (य:) (गा:)** किरणान् **(उदाजत्)** ऊर्ध्वमधो गमयति **(स:) (दिवे) (वि) (च) (अभजत्)** भजेत् **(महीव)** यथा पूज्या महती **(रीति:)** श्रेष्ठा नीति: **(शवसा)** बलेन **(असरत्)** सरेत् प्राप्नुयात् **(पृथक्)**॥१४॥

अन्वय:-यो महि कर्म करिष्यतो ब्रह्मणस्पते: सकाशाद्यथावशं सत्यो मन्युरभवत्स यथा दिवे सूर्यो गा उदाजत् तथा धर्मं प्रकाशयति या महीव रीति: शवसा पृथगसरत्तां च व्यभजत्॥१४॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कार:। ये पुरुषार्थिनोऽध्यापका: सुशिक्षां प्राप्य सत्योपरि प्रीतिमसत्ये क्रोधं ददति ते महतीं सुशीलतां प्राप्य यथेष्टं कार्यं प्राप्नुवन्ति॥१४॥

पदार्थ:-(य:) जो **(महि)** बड़े **(कर्म)** काम को **(करिष्यत:)** करनेवाले **(ब्रह्मणस्पते:)** धन के स्वामी के समीप से **(यथावशम्)** वश के अनुकूल विचारपूर्वक **(सत्य:)** श्रेष्ठ, अधर्म त्यागार्थ ही **(मन्यु:)** क्रोध **(अभवत्)** होवे **(स:)** वह जैसे **(दिवे)** प्रकाश के लिये सूर्य **(गा:)** किरणों को **(उत्, आजत्)** ऊपर-नीचे पहुँचाता है, वैसे धर्म के प्रकाश के लिये होता है। जो **(महीव)** जैसे श्रेष्ठ माननीय **(रीति:)** उत्तम रीति-नीति **(शवसा)** बल के साथ **(पृथक्)** अलग-अलग **(असरत्)**

प्राप्त होवे, उसको **(च)** भी **(वि, अभजत्)** वह उक्त क्रोध का विभाग करे वा विशेष कर सेवे॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो पुरुषार्थी अध्यापक लोग अच्छी शिक्षा को पाकर सत्य में प्रीति और असत्य पर क्रोध को धारण करते, वे बड़ी सुशीलता को प्राप्त होके यथेष्ट कार्य्य को प्राप्त होते हैं॥१४॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ब्रह्मणस्पते सुयमस्य विश्वहा रायः स्याम रथ्यो३ वयस्वतः।
वीरेषु वीराँ उप पृङ्धि नस्त्वं यदीशानो ब्रह्मणा वेषि मे हवम्॥१५॥

ब्रह्मणः। पते। सुऽयमस्य। विश्वहा। रायः। स्याम। रथ्यः। वयस्वतः। वीरेषु। वीरान्। उप। पृङ्धि। नः। त्वम्। यत्। ईशानः। ब्रह्मणा। वेषि। मे। हवम्॥१५॥

पदार्थः-**(ब्रह्मणः)** धनस्य **(पते)** पालयितः **(सुयमस्य)** शोभना यमा यस्मात्तस्य **(विश्वहा)** विश्वं हन्ति जानाति प्राप्नोति वा सः **(रायः)** धनस्य **(स्याम)** भवेम **(रथ्यः)** रथेषु साधुः **(वयस्वतः)** प्रशस्तं वयो जीवनं विद्यते यस्मिँस्तस्य **(वीरेषु)** सुभटेषु **(वीरान्)** शूरान् **(उप)** **(पृङ्धि)** सम्बधान् **(नः)** अस्मान् **(त्वम्)** **(यत्)** यम् **(ईशानः)** समर्थः **(ब्रह्मणा)** वेदेन **(वेषि)** प्राप्नोषि **(मे)** मम **(हवम्)** आह्वानम्॥१५॥

अन्वयः-हे ब्रह्मणस्पते! रथ्यो विश्वहेशानस्त्वं ब्रह्मणा मे यद्धवं वेषि तेन नोऽस्मान् सुयमस्य वयस्वतो रायो वीरेषु नोऽस्मान् वीरानुपपृङ्धि यतो वयमभीष्टसिद्धाः स्याम॥१५॥

भावार्थः-ये सुसंयताः स्युस्ते चिरं जीवेयुः। ये ब्रह्मचर्यं पालयेयुस्त आत्मशरीराभ्यां सुवीरा जायन्ते॥१५॥

पदार्थः–हे **(ब्रह्मणः)** धन के **(पते)** रक्षक **(रथ्यः)** रथ क्रिया में प्रवीण **(विश्वहा)** सबको जानने वा प्राप्त होनेवाले **(त्वम्)** आप **(ब्रह्मणा)** वेद से **(मे)** मेरे **(यत्)** जिस **(हवम्)** आह्वान बुलाने को **(वेषि)** प्राप्त होते हो, उस आह्वान से **(नः)** हमको **(सुयमस्य)** सुन्दर संयम हों जिससे उस और **(वयस्वतः)** जिसके होने में अच्छा जीवन व्यतीत हो, उस **(रायः)** धन के रक्षक **(वीरेषु)** और सिपाहियों में हम **(वीरान्)** वीर लोगों से **(उप, पृङ्धि)** समीप सम्बन्ध कीजिये, जिससे हम लोग अभीष्ट कार्य सिद्ध करनेवाले **(स्याम)** हों॥१५॥

भावार्थः-जो लोग सुन्दर संयमवाले हों, वे बहुत काल जीवें। जो ब्रह्मचर्य्य का पालन करें, वे आत्मा और शरीर से अच्छे वीर होते हैं॥१५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ब्रह्मणस्पते त्वमस्य यन्ता सूक्तस्य बोधि तनयं च जिन्व।
विश्वं तद्भद्रं यदवन्ति देवा बृहद्वदेम विदथे सुवीराः॥१६॥३॥

ब्रह्मणः। पते। त्वम्। अस्य। यन्ता। सुऽउक्तस्य। बोधि। तनयम्। च। जिन्व। विश्वम्। तत्। भद्रम्। यत्। अवन्ति। देवाः। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीराः॥१६॥

पदार्थः-(**ब्रह्मणः**) (**पते**) धनस्य पालक (**त्वम्**) (**अस्य**) (**यन्ता**) नियन्ता (**सूक्तस्य**) सुष्ठूक्तस्यार्थम् (**बोधि**) जानीहि (**तनयम्**) औरसं विद्यार्थिनं वा (**च**) (**जिन्व**) सुखय (**विश्वम्**) जगत् (**तत्**) (**भद्रम्**) भन्दनीयं कल्याणयुक्तम् (**यत्**) (**अवन्ति**) रक्षन्ति (**देवाः**) विद्वांसः (**बृहत्**) महत् (**वदेम**) (**विदथे**) विज्ञातव्ये संग्रामादिव्यवहारे (**सुवीराः**)॥१६॥

अन्वयः-हे ब्रह्मणस्पते! त्वमस्य सूक्तस्यार्थं बोधि तनयं जिन्व राज्यस्य च यन्ता भव यतो देवा यद्विश्वमवन्ति तद्बृहद्भद्रं विदथे सुवीरा वयं वदेम॥१६॥

भावार्थः-सर्वैर्मनुष्यै सुनियमेन वेदार्थान् विज्ञाय पूर्णयुवावस्थायां स्वयंवरं विवाहं विधाय धर्मेणापत्यान्युत्पाद्य संपाल्य यथावद् ब्रह्मचर्य्येण सुशिक्ष्य विदुषः कृत्वा सुखं वर्द्धनीयमिति॥१६॥

अत्र विद्वदीश्वरगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति बोध्यम्॥

इति चतुर्विंशतितमं सूक्तं तृतीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**ब्रह्मणस्पते**) धन के पालक विद्वान्! (**त्वम्**) तू (**अस्य**) इस (**सूक्तस्य**) सूक्त अर्थात् अच्छे प्रकार कहे वाक्य के अर्थ को (**बोधि**) जान (**तनयम्**) औरस पुत्र वा विद्यार्थी जन को (**जिन्व**) सुखी कर (**च**) और राज्य का (**यन्ता**) नियमकर्त्ता हो, जिससे (**देवाः**) विद्वान् लोग (**यत्**) जिस (**विश्वम्**) जगत् की (**अवन्ति**) रक्षा करते हैं (**तत्**) उसको (**बृहत्**) बड़ा (**भद्रम्**) कल्याणयुक्त (**विदथे**) जानने योग्य संग्रामादि व्यवहार में (**सुवीराः**) सुन्दर वीरोंवाले हम लोग (**वदेम**) उपदेश करें॥१६॥

भावार्थः-सब मनुष्यों को उचित है कि सुन्दर नियम से वेद के अर्थों को जान पूर्ण युवावस्था में स्वयवरं विवाह कर धर्म से सन्तानों की उत्पत्ति और रक्षा कर यथावत् ब्रह्मचर्य के साथ सुन्दर शिक्षा दे और विद्वान् करके सुख बढ़ावें॥१६॥

इस सूक्त में विद्वान् और ईश्वर के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानो॥

यह चौबीसवां सूक्त और तीसरा वर्ग समाप्त हुआ॥

इन्धान इति पञ्चर्चस्य पञ्चविंशतितमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। ब्रह्मणस्पतिर्देवता। १, २ जगती। ३ निचृज्जगती। ४, ५ विराड् जगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथ विद्युद्वर्णनमाह॥

अब पच्चीसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके आदि में बिजुली का वर्णन करते हैं॥

इन्धा॑नो अ॒ग्निं व॑नवद्वनुष्य॒तः कृ॒तब्र॑ह्मा शूशुवद्रा॒तह॑व्य॒ इत्।
जा॒तेन॑ जा॒तमति॒ स प्र स॑र्सृते॒ यंयं॒ युजं॑ कृणु॒ते ब्रह्म॑ण॒स्पति॑ः॥ १॥

इन्धा॑नः। अ॒ग्निम्। व॒न॒व॒त्। व॒नु॒ष्य॒तः। कृ॒तऽब्र॑ह्मा। शू॒शु॒व॒त्। रा॒तऽह॑व्यः। इत्। जा॒तेन॑। जा॒तम्। अति॑। सः। प्र। स॒र्सृ॒ते॒। यम्ऽय॑म्। युज॑म्। कृ॒णु॒ते। ब्रह्म॑णः। पति॑ः॥ १॥

पदार्थः-(इन्धानः) प्रदीप्तः **(अग्निम्)** विद्युतम् **(वनवत्)** वनेन तुल्यम् **(वनुष्यतः)** हिंसन्तम्। अत्र विभक्तिव्यत्ययः। **वनुष्यतिर्हन्तिकर्मेति**[६] (निरु० ५.२) निरुक्ते। **(कृतब्रह्मा)** कृतानि ब्रह्माणि धनानि येन सः **(शूशुवत्)** विजानाति। अत्राडभावो लडर्थे लुङ् च। **(रातहव्यः)** रातानि दत्तानि हव्यानि येन सः **(इत्)** एव **(जातेन)** उत्पन्नेन जगता सह **(जातम्)** उत्पन्नं पदार्थम् **(अति)** **(सः)** **(प्र)** **(सर्सृते)** भृशं सरति गच्छति **(यंयम्)** **(युजम्)** युक्तम् **(कृणुते)** **(ब्रह्मणः)** धनस्य **(पतिः)** पालकः॥ १॥

अन्वयः-यः कृतब्रह्मेन्धानो रातहव्यो ब्रह्मणस्पतिर्जातेन जातमति सर्सृते यंयं युजं प्र कृणुते स इद्वनवद्वनुष्यतोऽग्निं प्र शूशुवत्॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा किरणा वायुना सह सर्प्पन्ति तथैव विद्युदग्निः सर्वैः पदार्थैः सह सर्प्पति ता यत्र यत्र प्रयुञ्जीत तत्र तत्र महत्कार्यं साध्नोति॥ १॥

पदार्थः-जो **(कृतब्रह्मा)** धनों को उत्पन्न करनेवाला **(इन्धानः)** तेजस्वी **(रातहव्यः)** होम के योग्य पदार्थों का दाता **(ब्रह्मणः)** धन का **(पतिः)** रक्षक स्वामी **(जातेन)** उत्पन्न हुए जगत् के साथ **(जातम्)** उत्पन्न पदार्थ को **(अति, सर्सृते)** अत्यन्त शीघ्र प्राप्त होता **(यंयम्)** जिस-जिस को **(युजम्)** कार्य्यों में युक्त **(कृणुते** करता **(सः, इत्)** वही **(वनवत्)** वन को जैसे वैसे **(वनुष्यतः)** जलाते नष्ट करते हुए **(अग्निम्)** विद्युत् अग्नि को **(प्र, शूशुवत्)** अच्छे प्रकार जानता है॥ १॥

---

६. वनुष्यति ऋध्यतिकर्मा-निघण्टु २.१२॥ सं.

भावार्थ:-इसमें उपमालङ्कार है। जैसे किरण वायु के साथ चलती हैं, वैसे ही विद्युत् अग्नि सब पदार्थों के साथ चलता है। उसको मनुष्य जहाँ-जहाँ प्रयुक्त करें, वहाँ-वहाँ बड़े काम को सिद्ध करता है॥१॥

को मनुष्यो विद्यां वर्द्धयितुं शक्नोति॥

कौन मनुष्य विद्या-वृद्धि कर सकता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वी॒रेभि॑र्वी॒रान् व॑नवद्वनुष्य॒तो गोभी॑ र॒यिं प॑प्रथ॒द्बोध॑ति॒ त्मना॑।

तो॒कं च॒ तस्य॒ तन॑यं च वर्ध॑ते॒ यंयं॑ यु॒जं॑ कृणु॒ते ब्रह्म॑ण॒स्पति॑:॥२॥

वी॒रेभि॑:। वी॒रान्। व॒न॒व॒त्। व॒नु॒ष्य॒त:। गोभि॑:। र॒यिम्। प॒प्र॒थ॒त्। बोध॑ति। त्मना॑। तो॒कम्। च॒। तस्य॑। तन॑यम्। च॒। व॒र्ध॑ते॒। यम्ऽय॑म्। यु॒जम्। कृ॒णु॒ते। ब्रह्म॑ण:। पति॑:॥२॥

पदार्थ:-**(वीरेभि:)** **(वीरान्)** शरीरात्मबलयुक्तान् **(वनवत्)** वनेन जङ्गलेन तुल्यम् **(वनुष्यत:)** याचमानस्य **(गोभि:)** इन्द्रियै: **(रयिम्)** श्रियम् **(पप्रथत्)** प्रख्यापयति **(बोधति)** विजानाति **(त्मना)** आत्मना अन्त:करणेन **(तोकम्)** अल्पमपत्यम् **(च)** **(तस्य)** **(तनयम्)** पौत्रम् **(च)** **(वर्द्धते)** **(यंयम्)** **(युजम्)** युक्तम् **(कृणुते)** **(ब्रह्मण:)** अन्नस्य **(पति:)** पालक:॥२॥

अन्वय:-यो ब्रह्मणस्पतिर्वनुष्यतो वीरेभिर्वीरान् गोभिर्वनवद्रयिं पप्रथत् त्मना पदार्थविज्ञानं बोधति तस्य तोकमैश्वर्यं तनयञ्च वर्द्धते स यंयं युजं कृणुते स स त्मना आत्मना प्रथते॥२॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कार:। यथा धनं याचमानो मनो युङ्क्ते तथा पुत्रपौत्रादिपालने चित्तं ददाति येन पदार्थेन सह यस्य पदार्थस्य योगस्य योग्यतास्ति तं प्रत्यहं करोति स बहूनुत्तमान् मनुष्यान् प्राप्य विद्यावृद्धिं कर्त्तुं शक्नोति॥२॥

पदार्थ:-जो **(ब्रह्मणस्पति:)** अन्न का रक्षक विद्वान् जन **(वनुष्यत:)** याचक मनुष्य के **(वीरेभि:)** वीर पुरुषों के साथ **(वीरान्)** शरीरात्मबलयुक्त को और **(गोभि:)** इन्द्रियों से **(वनवत्)** वन जङ्गल से जैसे वैसे **(रयिम्)** शोभा को **(पप्रथत्)** प्रख्यात प्रसिद्ध करता है **(त्मना)** अन्त:करण से पदार्थ विज्ञान को **(बोधति)** जानता है **(तस्य)** उसका **(तोकम्)** छोटा बालक **(च)** और ऐश्वर्य **(च)** तथा **(तनयम्)** पौत्र आदि **(वर्द्धते)** **[**विद्या की**]** वृद्धि को प्राप्त होता वह **(यंयम्)** जिस-जिस को **(युजम्)** शुभगुणयुक्त **(कृणुते)** करता है, वह-वह अपने स्वरूप से प्रख्यात होता है॥२॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे धन की याचना करता हुआ पुरुष मन को युक्त करता, वैसे पुत्रादि के पालन में चित्त देता है। जिस पदार्थ के साथ जिसके योग की योग्यता होती,

उसको उसके साथ प्रतिदिन युक्त करता है, वह बहुत उत्तम मनुष्यों को प्राप्त हो के विद्या की वृद्धि कर सकता है॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सिन्धुर्न क्षोदः शिमीवाँ ऋघायतो वृषेव वध्रींरभि वष्ट्योजसा।
अग्नेरिव प्रसितिर्नाह वर्तवे यंयं युजं कृणुते ब्रह्मणस्पतिः॥३॥

सिन्धुः। नः। क्षोदः। शिमीऽवान्। ऋघायतः। वृषाऽइव। वध्रीन्। अभि। वष्टि। ओजसा। अग्नेःऽइव। प्रऽसितिः। न। अह। वर्तवे। यम्ऽयम्। युजम्। कृणुते। ब्रह्मणः। पतिः॥३॥

पदार्थः-(सिन्धुः) समुद्रः **(न)** इव **(क्षोदः)** जलम्। **क्षोद इत्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२)। **(शिमीवान्)** प्रशस्तकर्मयुक्तः **(ऋघायतः)** ऋतं सत्यं हिंसतः। अत्र हन् धातोश्**छान्दसो वर्णलोप** इति त लोपो बाहुलकादौणादिको ङण् प्रत्ययः। **(वृषेव)** यथा बलिष्ठो वृषभः **(वध्रीन्)** वृद्धान् वृषभान् **(अभि)** आभिमुख्ये **(वष्टि)** कामयते **(ओजसा)** बलेन **(अग्नेरिव)** **(प्रसितिः)** बन्धनम् **(न)** निषेधे **(अह)** **(वर्तवे)** **(यंयम्)** **(युजम्)** **(कृणुते)** **(ब्रह्मणः)** **(पतिः)**॥३॥

अन्वयः-यः शिमीवान् ब्रह्मणस्पतिः क्षोदः सिन्धुर्न वध्रीनभि वृषेवौजसा ऋघायतो नाशं करोति सत्यं वष्टि। अग्नेरिव प्रसितिर्वर्त्तवे नाह भवति यंयं युजं कृणुते स तं तं सुखिनं करोति॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः पुरुषार्थिनः सन्ति समुद्रवद्गम्भीरा धनाढ्या वृषभवद्बलिष्ठा अग्निवच्छत्रुदाहकाः सत्यकामाः स्युस्ते सर्वा शिल्पविद्यां साद्धुं शक्नुवन्ति॥३॥

पदार्थः-जो **(शिमीवान्)** प्रशस्त कर्मयुक्त **(ब्रह्मणस्पतिः)** वेद का रक्षक विद्वान् पुरुष **(क्षोदः)** जल को **(सिन्धुः, न)** समुद्र जैसे अपने में लय करता **(वध्रीन्)** वा साधारण बैलों को **(अभि)** सम्मुख होके जैसे **(वृषेव)** अति बलवान् बैल मारता, वैसे **(ओजसा)** बल से **(ऋघायतः)** सत्य धर्म के नाशक शत्रुओं का नाश करता, सत्य को **(वष्टि)** चाहता और **(अग्नेरिव)** अग्नि से जैसे **(प्रसितिः)** बन्धन **(वर्त्तवे)** वर्त्तने के अर्थ **(न, अह)** नहीं रहता अर्थात् स्वाधीनता होती है, वैसे **(यंयम्)** जिस-जिस को **(युजम्)** शुभ गुणयुक्त **(कृणुते)** करता है, वह उस-उस को सुखी करता है॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य पुरुषार्थी, समुद्र के तुल्य गम्भीर, धनाढ्य, वृषभ के तुल्य बलवान्, अग्नि के तुल्य शत्रुओं के जलानेवाले, सत्यकामनायुक्त होते हैं, वे समस्त शिल्पविद्या को सिद्ध कर सकते हैं॥३॥

अथ के विजयिनो भवन्तीत्याह॥

अब कौन विजयी होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तस्मा॑ अर्षन्ति दि॒व्या अ॑स॒श्चत॒: स सत्व॑भिः प्रथ॒मो गोषु॑ गच्छति।
अनि॑भृष्टतविषिर्ह॒न्त्योज॑सा॒ यंयं॒ युजं॑ कृणु॒ते ब्रह्म॑ण॒स्पति॑ः॥४॥

तस्मै॑। अ॒र्ष॒न्ति॒। दि॒व्याः। अ॒स॒श्चत॑ः। सः। सत्व॑ऽभिः। प्र॒थ॒मः। गोषु॑। ग॒च्छ॒ति॒। अनि॑भृष्टऽतविषिः। ह॒न्ति॒। ओज॑सा। यम्ऽय॑म्। यु॒ज॑म्। कृ॒णु॒ते। ब्रह्म॑णः। पति॑ः॥४॥

पदार्थः-(**तस्मै**) (**अर्षन्ति**) प्राप्नुवन्ति। अत्र विकरणव्यत्ययेन शप्। (**दिव्याः**) शुद्धाः (**असश्चतः**) असज्यमानाः (**सः**) (**सत्वभिः**) पदार्थैः सह (**प्रथमः**) (**गोषु**) पृथिवीषु (**गच्छति**) (**अनिभृष्टतविषिः**) न नितरां भृष्टा तविषी सेना यस्य सः (**हन्ति**) (**ओजसा**) पराक्रमेण (**यंयम्**) (**युजम्**) (**कृणुते**) (**ब्रह्मणः**) (**पतिः**)॥४॥

अन्वयः-यः प्रथमोऽनिभृष्टतविषिर्ब्रह्मणस्पतिः सत्वभिस्सह गोषु गच्छत्योजसा शत्रून् हन्ति स यंयं युजं कृणुते तस्मै दिव्या असश्चतो भद्रा वीरा अर्षन्ति प्राप्नुवन्ति॥४॥

भावार्थः-त एव विजयिनः सन्ति ये सर्वैर्बलैस्साधनोपसाधनैर्विद्यया च युक्ता भवन्ति॥४॥

पदार्थः-जो (**प्रथमः**) मुख्य (**अनिभृष्टतविषिः**) जिसकी सेना निरन्तर भ्रष्ट नहीं होती वह (**ब्रह्मणस्पतिः**) ब्राह्मणादि वर्णव्यवस्था का रक्षक (**सत्वभिः**) पदार्थों के साथ (**गोषु**) पृथिवी में (**गच्छति**) जाता है (**ओजसा**) बल-पराक्रम से शत्रुओं को (**हन्ति**) मारता (**सः**) वह (**यंयम्**) जिस-जिस को (**युजम्**) कार्य में नियुक्त (**कृणुते**) करता (**तस्मै**) उसके लिये (**दिव्याः**) शुद्ध (**असश्चतः**) जो किसी व्यसन में आसक्त नहीं ऐसे कल्याणकारी वीर पुरुष (**अर्षन्ति**) प्राप्त होते हैं॥४॥

भावार्थः-वे ही लोग विजयी होते हैं, जो सब बलों और साधन-उपसाधनों से तथा विद्या से युक्त होते हैं॥४॥

अथ के मनुष्याः कार्य्याणि साध्नुवन्तीत्याह॥

अब कौन मनुष्य कार्यों को सिद्ध करते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तस्मा॒ इद्विश्वे॑ धुनयन्त॒ सिन्ध॒वोऽच्छि॑द्रा॒ शर्म॑ दधिरे पु॒रूणि॑।

देवानां सुम्ने सुभगः स एधते यंयं युजं कृणुते ब्रह्मणस्पतिः॥५॥४॥

तस्मै। इत्। विश्वे। धुनयन्त। सिन्धवः। अच्छिद्रा। शर्म। दधिरे। पुरूणि। देवानाम्। सुम्ने। सुऽभगः। सः। एधते। यम्ऽयम्। युजम्। कृणुते। ब्रह्मणः। पतिः॥५॥

पदार्थः-(तस्मै) (इत्) एव **(विश्वे)** सर्वे **(धुनयन्त)** धुनयन्ति कम्पयन्ति। अत्राडभावः। **(सिन्धवः)** समुद्रादयः। **(अच्छिद्रा)** छिद्ररहितानि **(शर्म)** शर्माणि गृहाणि **(दधिरे)** दधति **(पुरूणि)** बहूनि **(देवानाम्) (सुम्ने)** सुखे **(सुभगः)** शोभनमैश्वर्य: **(सः) (एधते) (यंयम्) (युजम्) (कृणुते) (ब्रह्मणः) (पतिः)**॥५॥

अन्वयः-यो ब्रह्मणस्पतिर्देवानां सुम्ने सुभगः सन् यंयं युजं कृणुते स एधते तस्मा इद्विश्वे सिन्धवोऽच्छिद्रा पुरूणि शर्म दधिरे धुनयन्त॥५॥

भावार्थः-ये मनुष्या विद्वत्सङ्गप्रियाः पदार्थसम्भोगविभागकारिणो रसायनविद्यायुक्ताः स्युस्ते सर्वेभ्यः पदार्थेभ्यो बहूनि कार्याणि साधयितुं शक्नुवन्तीति॥५॥

अत्र विद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

[इति पञ्चविंशतितमं सूक्तं चतुर्थो वर्गश्च समाप्तः॥]

पदार्थः-जो **(ब्रह्मणः)** वेदविद्या का **(पतिः)** रक्षक प्रचारक विद्वान् मनुष्य **(देवानाम्)** विद्वानों के **(सुम्ने)** सुख में **(सुभगः)** सुन्दर ऐश्वर्यवाला प्रफुल्लित होता हुआ **(यंयम्)** जिस-जिस को **(युजम्)** शुभ कर्मयुक्त **(कृणुते)** करता है **(सः)** वह **(एधते)** उन्नति को प्राप्त होता **(तस्मै, इत्)** उसी के लिये **(विश्वे)** सब **(सिन्धवः)** समुद्रादि जलाशय **(अच्छिद्रा)** छेद-भेद रहित **(पुरूणि)** बहुत **(शर्म)** सुखदायी निवासस्थानों को **(दधिरे)** धारण करते तथा **(धुनयन्त)** सर्वत्र चलाते हैं अर्थात् यानादि द्वारा सर्वत्र निवास पाता है॥५॥

भावार्थः-जो मनुष्य विद्वानों के सङ्ग में प्रीति रखने, पदार्थों का संयोग-विभाग करनेवाले रसायनविद्या में उद्योगी होवें, वे सब पदार्थों से बहुत कार्य सिद्ध कर सकते हैं॥५॥

इस सूक्त में विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त में कहे अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह पच्चीसवां सूक्त और चौथा वर्ग समाप्त हुआ॥

ऋजुरिति चतुर्ऋचस्य षड्विंशतितमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। ब्रह्मणस्पतिर्देवता। १, ३ जगती २, ४ निचृज्जगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथ विदुषां किं कार्यमस्तीत्याह॥

अब इस दूसरे मण्डल के छब्बीसवें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में विद्वानों को क्या कर्त्तव्य है, इस विषय को कहते हैं॥

ऋजुरिच्छंसो वनवद्वनुष्यतो देवयन्निददेवयन्तमभ्यसत्।
सुप्रावीरिद्वनवत्पृत्सु दुष्टरं यज्वेदयज्योर्वि भजाति भोजनम्॥१॥

ऋजुः। इत्। शंसः। वनवत्। वनुष्यतः। देवऽयन्। इत्। अदेवऽयन्तम्। अभि। असत्। सुप्रऽअवीः। इत्। वनवत्। पृत्ऽसु। दुस्तरम्। यज्वा। इत्। अयज्योः। वि। भजाति। भोजनम्॥१॥

पदार्थः-(ऋजुः) सरलः **(इत्)** एव **(शंसः)** स्तुत्यः **(वनवत्)** किरणवत् **(वनुष्यतः)** हिंसतः **(देवयन्)** आत्मानं देवमिच्छन् **(इत्) (अदेवयन्तम्)** आत्मानं देवमिच्छन्तम् **(अभि) (असत्)** स्यात् **(सुप्रावीः)** सुष्ठु रक्षकः **(इत्) (वनवत्) (पृत्सु)** संग्रामेषु **(दुष्टरम्)** दुःखेनोल्लङ्घयितुं योग्यम् **(यज्वा)** सङ्गन्ता **(इत्) (अयज्योः)** असङ्गन्तुः **(वि) (भजाति)** विभजत् **(भोजनम्)**॥१॥

अन्वयः-यो यज्वाऽयज्योरिद्भोजनं विभजाति स इत्सुप्रावीः सन् पृत्सु वनवद्दुष्टरं विभजाति यो देवयन्नदेवयन्तमिदभ्यसत्स वनवच्छंसो वनुष्यत इदृजुः स्यात्॥१॥

भावार्थः-ये मनुष्याः पाण्डित्यमिच्छन्तो मौर्ख्यं जहन्तः शत्रून् विजयमाना भोग्यान् पदार्थान् विभजेयुस्ते दुःखानि वर्जयेयुः॥१॥

पदार्थः-जो **(यज्वा)** मिलनसार जन **(अयज्योः)** विरोधी के **(इत्)** ही **(भोजनम्)** भोग्य पदार्थ को **(वि, भजाति)** पृथक् करता है, वह **(इत्)** ही **(सुप्रावीः)** सुन्दर रक्षक हुआ **(पृत्सु)** संग्रामों में **(वनवत्)** वन के तुल्य **(दुष्टरम्)** दुःख से उल्लङ्घन करने योग्य शत्रुदल को छिन्न-भिन्न करता है। जो **(देवयन्)** अपने को विद्वान् मानता हुआ **(अदेवयन्तम्)** मूर्ख का सा आचरण करते हुए को **(इत्)** ही **(अभि, असत्)** सम्मुख प्राप्त हो, वह **(वनवत्)** किरणों के तुल्य **(शंसः)** स्तुति करने योग्य **(वनुष्यतः)** हिंसा करनेवाले से **(इत्)** ही **(ऋजुः)** सरल कोमल स्वभाव होवे॥१॥

भावार्थः-जो मनुष्य पण्डिताई को चाहते, मूर्खता को छोड़ते और शत्रुओं को जीतते हुए भोग्य पदार्थों को विशेष कर सेवन करते हैं, वे दुःखों को छोड़ देते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यजस्व वीर प्र विहि मनायतो भद्रं मनः कृणुष्व वृत्रतूर्ये।

हविष्कृणुष्व सुभगो यथाससि ब्रह्मणस्पतेरव आ वृणीमहे॥ २॥

यजस्व। वीर। प्र। विहि। मनायतः। भद्रम्। मनः। कृणुष्व। वृत्रऽतूर्ये। हविः। कृणुष्व। सुऽभगः। यथा। अससि। ब्रह्मणः। पतेः। अवः। आ। वृणीमहे॥ २॥

पदार्थः-(यजस्व) सङ्गच्छस्व **(वीर)** शुभगुणेषु व्यापनशील **(प्र) (विहि)** प्राप्नुहि। अत्र वर्णव्यत्ययेन ह्रस्वम्। **(मनायतः)** आत्मनो मन आचरतः **(भद्रम्)** कल्याणकरम् **(मनः) (कृणुष्व) (वृत्रतूर्य्ये)** शत्रुबधे **(हविः)** दानम् **(कृणुष्व) (सुभगः)** शोभनैश्वर्यः **(यथा) (अससि)** स्याः **(ब्रह्मणः) (पतेः) (अवः)** रक्षणम् **(आ) (वृणीमहे)**॥ २॥

अन्वयः-हे वीर! त्वं ब्रह्मणस्पतेर्मनायतो जनाद्विद्याः प्र विहि धर्मं यजस्व भद्रं मनः कृणुष्व सुभगः सन् वृत्रतूर्ये हविः कृणुष्व यथा त्वमससि तथा वयमव आ वृणीमहे॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः स्वकीयानि मनांसि कल्याणतमे मार्गे प्रवर्त्य सर्वाणि कार्य्याणि साध्नुवन्ति ते कृतकृत्या भवन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे **(वीर)** शुभगुणों में व्याप्त होनेवाले विद्यार्थी जन! तू **(ब्रह्मणः)** वेदादि शास्त्रों की **(पतेः)** पालना करनेवाले **(मनायतः)** अपने को मनन विचार का आचरण करनेवाले जन से विद्याओं को **(प्र, विहि)** अच्छे प्रकार प्राप्त हो। धर्म का **(यजस्व)** सङ्ग कर, **(मनः)** मन को **(भद्रम्)** कल्याणकारी **(कृणुष्व)** कर, **(सुभगः)** सुन्दर ऐश्वर्य्यवाला हुआ **(वृत्रतूर्ये)** शत्रुओं का जहाँ वध होता, उस संग्राम में **(हविः)** दान को **(कृणुष्व)** कर। **(यथा)** जैसे तू **(अससि)** हो, वैसे हम लोग **(अवः)** रक्षा को **(आ, वृणीमहे)** अच्छे प्रकार स्वीकार करें॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य अपने मनों को अति कल्याणकारी मार्ग में प्रवृत्त कर सब कार्य्यों को सिद्ध करते हैं, वे कृतकृत्य होते हैं॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स इज्जनेन स विशा स जन्मना स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिः।

देवानां यः पितरमाविवासति श्रद्धामना हविषा ब्रह्मणस्पतिम्॥ ३॥

सः। इत्। जनेन। सः। विशा। सः। जन्मना। सः। पुत्रैः। वाजम्। भरते। धना। नृऽभिः। देवानाम्। यः। पितरम्। आऽविवासति। श्रद्धाऽमना। हविषा। ब्रह्मणः। पतिम्॥३॥

पदार्थः-(**सः**) (**इत्**) एव (**जनेन**) (**सः**) (**विशा**) प्रजया (**सः**) (**जन्मना**) (**सः**) (**पुत्रैः**) अपत्यैः (**वाजम्**) विज्ञानम् (**भरते**) दधाति (**धना**) (**नृभिः**) नायकैर्मनुष्यैः (**देवानाम्**) विदुषाम् (**यः**) (**पितरम्**) जनकमध्यापकं वा (**आविवासति**) समन्तात्परिचरति सेवते (**श्रद्धामनाः**) श्रद्धा मनसि यस्य सः (**हविषा**) सद्व्यवहारग्रहणेन सह (**ब्रह्मणः**) (**पतिम्**) पालकम्॥३॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा स जनेन स विशा स जन्मना पुत्रैर्वाजं नृभिः सह धना भरते। यः श्रद्धामना हविषा देवानां विदुषां ब्रह्मणस्पतिं पितरमाविवासति स इच्छरीरात्मबलेन युक्तः सन् सुखी भवति॥३॥

भावार्थः-ये प्रीत्या विदुषामध्यापकमुपदेशकं च विद्वांसं सेवन्ते, ते सर्वत्र सर्वैः पदार्थैर्निष्पन्नमानन्दं भुञ्जते॥३॥

पदार्थः–हे विद्वान् जन! जैसे (**सः**) वह (**जनेन**) साधारण मनुष्य के (**सः**) वह (**विशा**) प्रजा के (**सः**) वह (**जन्मना**) जन्म के और (**सः**) वह (**पुत्रैः**) सन्तानों के साथ (**वाजम्**) विज्ञान को तथा (**नृभिः**) अधिकारी मनुष्यों के साथ (**धना**) धनों को (**भरते**) धारण करता (**यः**) जो (**श्रद्धामनाः**) मन में श्रद्धा रखनेवाला (**हविषा**) उत्तम व्यवहार ग्रहण के साथ (**देवानाम्**) विद्वानों के सम्बन्धी (**ब्रह्मणः**) वेद के (**पतिम्**) पालक रक्षक (**पितरम्**) पिता वा अध्यापक का (**आविवासति**) अच्छे प्रकार सेवन करता (**इत्**) वही शरीर और आत्मा के बल से युक्त हुआ सुखी होता है॥३॥

भावार्थः-जो मनुष्य प्रीतिपूर्वक विद्वानों के अध्यापक और उपदेशक विद्वान् का सेवन करते हैं, वे सर्वत्र सब पदार्थों से निष्पन्न हुए आनन्द को भोगते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यो अस्मै हव्यैर्घृतवद्भिरविधत्प्र तं प्राचा नयति ब्रह्मणस्पतिः।
उरुष्यतीमंहसो रक्षती रिषों३ंहोश्चिदस्मा उरुचक्रिरद्भुतः॥४॥५॥

यः। अस्मै। हव्यैः। घृतवत्ऽभिः। अविधत्। प्र। तम्। प्राचा। नयति। ब्रह्मणः। पतिः। उरुष्यति। ईम्। अंहसः। रक्षति। रिषः। अंहोः। चित्। अस्मै। उरुऽचक्रिः। अद्भुतः॥४॥

पदार्थः-**(यः)** **(अस्मै)** विदुषे **(हव्यैः)** दातुमर्हैः **(घृतवद्भिः)** बहुभिर्घृतादिपदार्थैः सह वर्त्तमानैः **(अविधत्)** विदधाति **(प्र)** **(तम्)** **(प्राचा)** प्राचीनेन विज्ञानेन **(नयति)** प्राप्नोति **(ब्रह्मणः)** धननिधेः **(पतिः)** पालकः **(उरुष्यति)** रक्षति **(ईम्)** **(अंहसः)** पापाचरणात् **(रक्षति)**। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(रिषः)** हिंसकान् **(अंहोः)** पापमाचरितुः **(चित्)** अपि **(अस्मै)** **(उरुचक्रिः)** बहुकर्त्ता **(अद्भुतः)** आश्चर्यगुणकर्मस्वभावः॥४॥

अन्वयः-य उरुचक्रिरद्भुतो ब्रह्मणस्पतिरस्मै घृतवद्भिर्हव्यैरविधत्तं प्राचा प्रणयत्यंहसो रक्षती रिषो हत्वास्मा अंहोरुरुष्यति स ईं सुखमाप्नोति॥४॥

भावार्थः-ये यथा घृतादिपुष्टसुगन्धादिद्रव्यैर्हुतैर्वायुवृष्टिजले शुद्धे भूत्वा रोगेभ्यः पृथक्कृत्य सर्वान् सुखयतः तथोपदेशका अधर्मनिषेधपुरस्सरेण धर्मग्रहणेनात्मनः शुद्धान् संपाद्याऽविद्यादिरोगात् पृथक् कुर्वन्ति ते कृतकृत्या जायन्ते॥४॥

अस्मिन् सूक्ते विद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

[इति षड्विंशतितमं सूक्तं पञ्चमो वर्गश्च समाप्तः॥]

पदार्थः–जो **(उरुचक्रिः)** बहुत कर्म करता **(अद्भुतः)** आश्चर्यरूप गुणकर्मस्वभाववाला **(ब्रह्मणस्पतिः)** धन कोष का रक्षक **(अस्मै)** इस विद्वान् के लिये **(घृतवद्भिः)** बहुत घृतादि पदार्थों से युक्त **(हव्यैः)** देने योग्य वस्तुओं से **(अविधत्)** शुभ कार्य साधक पदार्थ बनाता **(तम्)** उसको **(प्राचा)** प्राचीन विज्ञान से **(प्र, नयति)** अच्छे प्रकार प्राप्त होता **(अंहसः)** पाप से **(रक्षति)** बचाता **(रिषः)** हिंसकों को मार के **(अस्मै)** इस विद्वान् को **(अंहो)** पापाचरणों से **(उरुष्यति)** पृथक् रखता वह **(ईम्)** सब ओर से सुख को प्राप्त होता है॥४॥

भावार्थः-जैसे घृत आदि पुष्ट और सुगन्धित द्रव्यों के होम से वायु और वृष्टिजल शुद्ध होके रोगों से प्राणियों को पृथक् कर सबको सुखी करते हैं, वैसे उपदेशक लोग अधर्म के निषेधपूर्वक धर्म के ग्रहण से आत्माओं को शुद्ध कर अविद्यादि रोगों को दूर करते हैं, वे कृतकृत्य होते हैं॥४॥

इस सूक्त में विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिए॥

यह छब्बीसवां सूक्त और पांचवां वर्ग समाप्त हुआ॥

इमा इति सप्तदशर्चस्य सप्तविंशतितमस्य सूक्तस्य कूर्मो गार्त्समदो वा ऋषिः। आदित्यो देवता। १, ३, ६, १३-१५ निचृत्त्रिष्टुप्। २, ४, ५, ८, १२, १७ त्रिष्टुप्। ११, १६ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ७ भुरिक् पङ्क्तिः। ९, १० स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ राजजनाः कीदृशाः स्युरित्याह॥

अब सत्ताईसवें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में राजपुरुष कैसे हों, इस विषय को कहते हैं॥

इमा गिर आदित्येभ्यो घृतस्नूः सनाद्राजभ्यो जुह्वा जुहोमि।
शृणोतु मित्रो अर्यमा भगो नस्तुविजातो वरुणो दक्षो अंशः॥१॥

इमाः। गिरः। आदित्येभ्यः। घृतऽस्नूः। सनात्। राजऽभ्यः। जुह्वा। जुहोमि। शृणोतु। मित्रः। अर्यमा। भगः। नः। तुविऽजातः। वरुणः। दक्षः। अंशः॥१॥

पदार्थः-(इमाः) (गिरः) संस्कृता वाणीः **(आदित्येभ्यः)** मासेभ्यः **(घृतस्नूः)** या घृतमुदकं स्नान्ति शोधयन्ति ताः **(सनात्)** सदा **(राजभ्यः) (जुह्वा)** जिह्वया साधनेन **(जुहोमि) (शृणोतु) (मित्रः)** सखा **(अर्य्यमा)** न्यायेशः **(भगः)** सेवनीयः **(नः)** अस्माकम् **(तुविजातः)** बलादिगुणैः प्रसिद्धः **(वरुणः)** श्रेष्ठः **(दक्षः)** चतुरः **(अंशः)** दुष्टानां सम्यग् घातकः॥१॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथाहमादित्येभ्य इव राजभ्यो या इमा घृतस्नूर्गिरो जुह्वा जुहोमि ता नो गिरः स मित्रोऽर्य्यमा भगस्तुविजातो वरुणो दक्षोंऽशो भवान् सनात् शृणोतु॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। य आदित्यवद्वर्त्तमाना राजानस्तत्सभासदश्च प्रजाजनानां सुखदुःखान्विता निवेदिता वाचः श्रुत्वा न्यायं कुर्वन्ति, ते राज्यं वर्द्धयितुं शक्नुवन्ति॥१॥

पदार्थः-हे विद्वान्! जैसे मैं **(आदित्येभ्यः)** महीनों के तुल्य **(राजभ्यः)** राजपुरुषों के लिये जिन **(इमाः)** इन प्रत्यक्ष **(घृतस्नूः)** घृत को शुद्ध करानेवाली **(गिरः)** शुद्ध की हुई सत्यवाणियों को **(जुह्वा)** जिह्वारूप साधन से **(जुहोमि)** होम करता अर्थात् निवेदन करता हूं, उन **(नः)** हमारी वाणियों को यह **(मित्रः)** मित्र बुद्धि **(भगः)** सेवने योग्य **(तुविजातः)** बलादि गुणों से प्रसिद्ध **(वरुणः)** श्रेष्ठ **(दक्षः)** चतुर **(अंशः)** दुष्टों के सम्यक् विनाशक **(अर्यमा)** न्यायाधीश आप **(सनात्)** सदैव **(शृणोतु)** सुनिये॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो सूर्य्य के तुल्य तेजस्वी राजा लोग और उसके सभासद् प्रजाजनों की सुख-दुःख युक्त निवेदन की वाणियों को सुन के न्याय करते, वे राज्य बढ़ाने को समर्थ होते हैं॥

अथाध्यापकाध्येतृविषयमाह॥

अब पढ़ाने-पढ़ने वालों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इमं स्तोमं सक्रतवो मे अद्य मित्रो अर्यमा वरुणो जुषन्त।
आदित्यासः शुचयो धारपूता अवृजिना अनवद्या अरिष्टाः॥ २॥

इमम्। स्तोमम्। सऽक्रतवः। मे। अद्य। मित्रः। अर्यमा। वरुणः। जुषन्त। आदित्यासः। शुचयः। धारऽपूताः। अवृजिनाः। अनवद्याः। अरिष्टाः॥ २॥

पदार्थः-(**इमम्**) (**स्तोमम्**) स्तुतिम् (**सक्रतवः**) समाना क्रतुः प्रज्ञा येषान्ते (**मे**) मम (**अद्य**) (**मित्रः**) सखा (**अर्यमा**) न्यायेशः (**वरुणः**) सर्वोत्कृष्टः (**जुषन्त**) सेवन्ताम्। अत्राडभावः। (**आदित्यासः**) पूर्णविद्याः (**शुचयः**) सूर्य इव पवित्रकारकाः (**धारपूताः**) धारा वाणी पूता पवित्रा येषान्ते। **धारेति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं०१.११)। (**अवृजिनाः**) अविद्यमानं वृजिनं वर्जनीयं पापं येषान्ते (**अनवद्याः**) प्रशंसनीयाः (**अरिष्टाः**) अहिंसनीया न कञ्चिद्धिंसितवन्तः॥ २॥

अन्वयः-सक्रतवो मित्रोऽर्य्यमा वरुणश्च शुचयो धारपूता अवृजिना अनवद्या अरिष्टा आदित्यासोऽद्य म इमं स्तोमं जुषन्त॥ २॥

भावार्थः-सर्वैर्विद्याप्रियैर्मनुष्यैः पूर्णविद्यानां स्वाध्यायस्य परीक्षां दत्वा स्वविद्या निश्चिता निर्भ्रमा कार्य्या परीक्षकाश्च पक्षपातं विहाय परीक्षां कुर्युर्नैतेन विना यथावद्विद्या भवितुमर्हति॥ २॥

पदार्थः-(**सक्रतवः**) समान बुद्धिवाले (**मित्रः**) मित्र (**अर्यमा**) न्यायाधीश और (**वरुणः**) सब से उत्तम (**शुचयः**) सूर्य के तुल्य पवित्रकारक (**धारपूताः**) पवित्र वाणी से युक्त (**अवृजिनाः**) वर्जनीय पाप से रहित (**अनवद्याः**) प्रशंसा को प्राप्त (**अरिष्टाः**) अहिंसनीय वा किसी को दुःख न देनेवाले (**आदित्यासः**) पूर्ण विद्यायुक्त (**अद्य**) आज (**मे**) मेरे (**इमम्**) इस (**स्तोमम्**) स्तुति को (**जुषन्त**) सेवन करें॥ २॥

भावार्थः-सब विद्याप्रिय मनुष्यों को चाहिये कि पूर्ण विद्यावालों को अपने पढ़े की परीक्षा देके अपनी विद्या को निश्चित निर्भ्रम करें और परीक्षक लोग भी पक्षपात को छोड़ के परीक्षा करें, क्योंकि ऐसे किये विना यथावत् विद्या नहीं हो सकती है॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त आदित्यास उरवो गभीरा अदब्धासो दिप्सन्तो भूर्यक्षाः।

अन्तः पश्यन्ति वृजिनोत साधु सर्वं राजभ्यः परमा चिदन्ति॥ ३॥

ते। आदित्यासः। उरवः। गभीराः। अदब्धासः। दिप्सन्तः। भूरिऽअक्षाः। अन्तरिति। पश्यन्ति। वृजिना। उत। साधु। सर्वम्। राजऽभ्यः। परमा। चित्। अन्ति॥ ३॥

पदार्थः-(**ये**) पूर्वोक्ताः (**आदित्यासः**) पूर्णविद्याः कृताष्टाचत्वारिंशद्वर्षब्रह्मचर्याः (**उरवः**) बहुप्रज्ञाः (**गभीराः**) शीलवन्तः (**अदब्धासः**) अहिंसनीयाः (**दिप्सन्तः**) दम्भितुमिच्छवः (**भूर्यक्षाः**) भूरि बहून्यक्षीणि दर्शनानि येषान्ते (**अन्तः**) आभ्यन्तरे (**पश्यन्ति**) प्रेक्षन्ते (**वृजिना**) वर्जयितव्यानि पापानि (**उत**) अपि (**साधु**) श्रेष्ठम् (**सर्वम्**) (**राजभ्यः**) (**परमा**) प्रकृष्टानि कर्माणि (**चित्**) (**अन्ति**) अन्तिके। अत्र परस्य लोपः॥ ३॥

अन्वयः-ये गभीरा उरवोऽदब्धासो भूर्यक्षा आदित्यासः सन्ति ते परमा चरन्ति। उत ये वृजिना कुर्वन्तो दिप्सन्तः स्युस्ताँश्चिदन्तरन्ति पश्यन्ति। ये च राजभ्यः सर्वं साधु कुर्वन्ति ते परीक्षां कर्त्तुं शक्नुवन्ति॥ ३॥

भावार्थः-परीक्षकाः सज्जनान् दुष्टाँश्च सम्यक् परीक्ष्य सुशीलानां सत्कारं दुश्चरित्राणामसत्कारं विधाय विद्योन्नतिं सततं कुर्युः॥ ३॥

पदार्थः–जो (**गभीराः**) गम्भीर स्वभावयुक्त (**उरवः**) तीव्र बुद्धिवाले (**अदब्धासः**) अहिंसनीय (**भूर्यक्षाः**) बहुत प्रकार से देखने-जाननेवाले (**आदित्यासः**) अड़तालीस वर्ष के ब्रह्मचर्य को सेव के पूर्ण विद्यावाले विद्वान् हैं (**ते**) वे (**परमा**) उत्तम कर्मों का आचरण करते। और जो (**वृजिना**) पाप करते हुए (**दिप्सन्तः**) दम्भ की इच्छा करनेवाले हों, उनको (**चित्**) ही (**अन्तः**) अन्तःकरण में (**अन्ति**) निकट से (**पश्यन्ति**) देख लेते हैं अर्थात् उनसे मिलते नहीं और जो (**राजभ्यः**) राजपुरुषों के लिये (**सर्वम्**) सब (**साधु**) श्रेष्ठ काम करते हैं, वे परीक्षा कर सकते हैं॥ ३॥

भावार्थः-परीक्षा करनेवाले जन श्रेष्ठ और दुष्ट पुरुषों की उत्तम प्रकार परीक्षा करते उत्तम स्वभाववालों के सत्कार और कुत्सित चरित्रवालों के अनादर को करके विद्या की उन्नति निरन्तर करें॥ ३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

धारयन्त आदित्यासो जगत्स्था देवा विश्वस्य भुवनस्य गोपाः।
दीर्घाधियो रक्षमाणा असुर्यमृतावानश्चयमाना ऋणानि॥ ४॥

धा॒रय॑न्तः। आ॒दि॒त्यास॑ः। जग॑त्। स्थाः। दे॒वाः। विश्व॑स्य। भुव॑नस्य। गो॒पाः। दी॒र्घऽधि॑यः। रक्ष॑माणाः। अ॒सु॒र्य॑म्। ऋ॒तऽवा॑नः। चय॑मानाः। ऋ॒णानि॑॥४॥

पदार्थः-(**धारयन्तः**) (**आदित्यासः**) पूर्णविद्याः (**जगत्**) जङ्गमम् (**स्थाः**) स्थावरम् (**देवाः**) सूर्य्यादय इव विद्वांसः (**विश्वस्य**) (**भुवनस्य**) निवासाधिकरणस्य स्थावरस्य जगतः प्राणिसमुदायस्य च (**गोपाः**) रक्षकाः (**दीर्घाधियः**) दीर्घा बृहती धीर्येषान्ते। अत्राऽन्येषामपीति पूर्वपदस्य दीर्घः। (**रक्षमाणाः**) (**असुर्यम्**) असुराणामविदुषां स्वं धनम् (**ऋतावानः**) य ऋतानि सत्यानि वनन्ति सम्भजन्ति ते (**चयमानाः**) वर्द्धमानाः (**ऋणानि**) अन्येभ्यो देयानि विज्ञानानि॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये जगत्स्था धारयन्तो विश्वस्य भुवनस्य गोपा दीर्घाधियोऽसुर्यं रक्षमाणा ऋतावान ऋणानि चयमाना आदित्यासो देवा अन्तः पश्यन्ति तेऽध्यापका भवितुमर्हन्ति॥४॥

भावार्थः-अत्र पूर्वस्मान्मन्त्रात् (**अन्तः, पश्यन्ति**) इति पदद्वयमनुवर्त्तते। यदि विद्याध्यापका जिज्ञासुभ्यो विद्या न प्रदद्युस्तर्हि ते ऋणिनः स्युरिदमेव ऋणसमर्पणं यदधीत्याऽन्येभ्योऽध्यापनं कार्य्यमिति॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**जगत्**) चर और (**स्थाः**) अचर को (**धारयन्तः**) धारण करते हुए (**विश्वस्य**) सब (**भुवनस्य**) निवास के आधार स्थावर और प्राणिमात्र जङ्गम जगत् के (**गोपाः**) रक्षक (**दीर्घाधियः**) बड़ी बुद्धिवाले (**असुर्यम्**) मूर्खों के धन की (**रक्षमाणाः**) रक्षा करते हुए (**ऋतावानः**) सत्य के सेवी (**ऋणानि**) दूसरों को देने योग्य विज्ञानों को (**चयमानाः**) पढ़ाते हुए (**आदित्यासः**) पूर्ण विद्यावाले (**देवाः**) सूर्य्यादि के तुल्य तेजस्वी विद्वान् लोग बुद्धि से भीतर देखते हैं, वे अध्यापक होने योग्य हैं॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में (**अन्तः, पश्यन्ति**) इन दो पदों की अनुवृत्ति पूर्व मन्त्र से आती है। यदि विद्वान् पढ़नेवाले विद्यार्थियों को विद्या न देवें तो वे ऋणी हो जावें, यह ऋण चुकाना है जो स्वयं पढ़कर दूसरों को पढ़ाना चाहिये॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वि॒द्यामा॑दित्या॒ अव॑सो वो अ॒स्य यद॑र्यमन्भ॒य आ चि॑न्मयो॒भु।
यु॒ष्माक॑ं मित्रावरुणा॒ प्रणी॑तौ॒ परि॑ श्वभ्रे॑व दु॒रि॒तानि॑ वृज्याम्॥५॥६॥

वि॒द्याम्। आ॒दि॒त्याः। अव॑सः। वः॒। अ॒स्य। यत्। अ॒र्य॒म॒न्। भ॒ये। आ। चि॒त्। म॒यः॒ऽभु। यु॒ष्माक॑म्। मि॒त्रा॒व॒रु॒णा॒। प्रऽनी॑तौ। परि॑। श्वभ्रा॑ऽइव। दुः॒ऽइ॒तानि॑। वृ॒ज्या॒म्॥५॥

पदार्थः-(**विद्याम्**) जानीयां लभेय वा (**आदित्याः**) सूर्यवद्विद्याप्रकाशकाः (**अवसः**) रक्षणस्य (**वः**) युष्माकम् (**अस्य**) (**यत्**) (**अर्यमन्**) योऽर्य्यान् श्रेष्ठान् मनुष्यान् मिमीते मन्यते तत्सम्बुद्धौ (**भये**) (**आ**) (**चित्**) (**मयोभु**) मयः सुखं भवति यस्मात्तत् (**युष्माकम्**) (**मित्रावरुणा**) प्राणाऽपानाविव सुखप्रदौ (**प्रणीतौ**) प्रकृष्टायां नीतौ (**परि**) (**श्वभ्रेव**) गर्त्तमिव (**दुरितानि**) दुःखदानि पापानि (**वृज्याम्**) त्यजेयम्॥५॥

अन्वयः-हे आदित्या! हे अर्यमन्! यद्भये सति वोऽस्यावसश्चिन्मयोभु स्यात्तदहमाविद्याम्। हे मित्रावरुणा! युष्माकं प्रणीतौ श्वभ्रेव दुरितानि परि वृज्याम्॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्यैर्यथा विद्वांसोऽखिलस्य प्राणिसमुदायस्य भयं विनाश्य सुखं सम्भाव्य पापानि वर्जयन्ति तथा सततमनुष्ठेयम्॥५॥

पदार्थः-हे (**आदित्याः**) सूर्य के तुल्य विद्या के प्रकाशक लोगो तथा हे (**अर्यमन्**) श्रेष्ठ मनुष्यों का सत्कार करनेहारे सज्जन! (**यत्**) जो (**भये**) भय होने में (**वः**) आपको (**अस्य**) इस (**अवसः**) पालन के निमित्त (**चित्**) थोड़ा भी (**मयोभु**) सुखदायी वचन हो, उसको मैं (**आ, विद्याम्**) प्राप्त होऊं वा जानूं। तथा हे (**मित्रावरुणा**) प्राणापान के तुल्य सुखदायी विद्वानो! (**युष्माकम्**) तुम्हारी (**प्रणीतौ**) उत्तम नीति में (**श्वभ्रेव**) पृथिवी के गढ़े के तुल्य (**दुरितानि**) दुःख देनेवाले पापों को (**परि, वृज्याम्**) परित्याग करूं॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि जैसे विद्वान् लोग सब प्राणियों के भय का विनाश कर सुख पहुंचा के पापों को निवृत्त करते हैं, वैसा निरन्तर करें॥५॥

पुनर्विद्वत्सङ्गप्रिया जनाः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर विद्वानों के सङ्ग में प्रीति रखनेवाले मनुष्य लोग क्या करें,
इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सुगो हि वो अर्यमन्मित्र पन्था अनृक्षरो वरुण साधुरस्ति।
तेनादित्या अधि वोचता नो यच्छता नो दुष्परिहन्तु शर्म॥६॥

सुऽगः। हि। वः। अर्यमन्। मित्र। पन्थाः। अनृक्षरः। वरुण। साधुः। अस्ति। तेन। आदित्याः। अधि। वोचत। नः। यच्छत। नः। दुःऽपरिहन्तु। शर्म॥६॥

पदार्थः-(**सुगः**) सुष्ठु गच्छन्ति यस्मिन् सः (**हि**) किल (**वः**) युष्माकम् (**अर्यमन्**) श्रेष्ठसत्कर्त्तः (**मित्र**) सखे (**पन्थाः**) (**अनृक्षरः**) निष्कण्टकः (**वरुण**) श्रेष्ठ (**साधुः**) साध्नुवन्ति धर्मं यस्मिन् सः (**अस्ति**) (**तेन**) (**आदित्याः**) विद्वांसः (**अधि**) (**वोचत**) प्रवदत। अत्र **संहितायामिति**

दीर्घः। **(नः)** अस्मभ्यम् **(यच्छत)** ददत **(नः)** **(दुष्परिहन्तु)** दुःखेन परिहननं यस्य तद्विद्याद्यभ्यासार्थम् **(शर्म)** गृहम्॥६॥

अन्वयः-हे आदित्या! हे अर्यमन्! हे मित्र! हे वरुण! यो योऽनृक्षरः सुगः साधुः पन्था अस्ति तेन हि नोऽधि वोचत यदिदं दुष्परिहन्तु शर्म तन्नो यच्छत॥६॥

भावार्थः-मनुष्यैर्धार्मिकाणां विदुषां स्वभावं गृहीत्वा वेदोक्ते सत्ये मार्गे चलनीयं येन सत्यशास्त्राध्ययनाऽध्यापनवृद्धिस्स्यात्तदेव कर्म सदा सेवनीयम्॥६॥

पदार्थः-हे **(आदित्याः)** विद्वान् लोगो! हे **(अर्यमन्)** श्रेष्ठ सत्कारयुक्त! हे **(मित्र)** मित्र! हे **(वरुण)** प्रतिष्ठित सज्जन पुरुष! जो **(वः)** तुम लोगों का **(अनृक्षरः)** कण्टकादिरहित **(सुगः)** जिसमें निर्विघ्न चल सकें **(साधुः)** जिसमें धर्म को सिद्ध करते ऐसा **(पन्थाः)** मार्ग **(अस्ति)** है **(तेन, हि)** उसी मार्ग से चलने के लिये **(नः)** हमको **(अधि, वोचत)** अधिक कर उपदेश करो। और जो यह **(दुष्परिहन्तु)** बड़ी कठिनता से टूटे-फूटे ऐसे विद्याभ्यासादि के लिये बना हुआ **(शर्म)** घर है, वह **(नः)** हमारे लिये **(यच्छत)** देओ॥६॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि धर्मात्मा विद्वानों के स्वभाव को ग्रहण कर वेदोक्त सत्य मार्ग में चलें। जिससे सत्यशास्त्र के पढ़ने-पढ़ाने की वृद्धि होवे, वही कर्म सदा सेवने योग्य है॥६॥

अथ न्यायाधीशविषयमाह॥

अब न्यायाधीश का विषय अगले मन्त्र में कहा है॥

पिपर्तु नो अदिती राजपुत्राति द्वेषांस्यर्यमा सुगेभिः।
बृहन्मित्रस्य वरुणस्य शर्मोप स्याम पुरुवीरा अरिष्टाः॥७॥

पिपर्तु। नः। अदितिः। राजऽपुत्रा। अति। द्वेषांसि। अर्यमा। सुऽगेभिः। बृहत्। मित्रस्य। वरुणस्य। शर्म। उप। स्याम। पुरुऽवीराः। अरिष्टाः॥७॥

पदार्थः-**(पिपर्त्तु)** पालयन्तु **(नः)** अस्मान् **(अदितिः)** मातेव **(राजपुत्रा)** राजा पुत्रो यस्याः सा **(अति)** **(द्वेषांसि)** **(अर्यमा)** विद्वत्प्रियः **(सुगेभिः)** सुगमैर्मार्गैः **(बृहत्)** **(मित्रस्य)** सख्युः **(वरुणस्य)** प्रशस्तस्य **(शर्म)** गृहम् **(उप)** **(स्याम)** **(पुरुवीराः)** पुरुवो बहवो वीराः शरीरात्मबलाः पुरुषा येषान्ते **(अरिष्टाः)** न केनापि हिंसितुं योग्याः॥७॥

अन्वयः-या राजपुत्रादितिर्योऽर्यमा राजा च सुगेभिरति द्वेषांसि त्याजयित्वा नोऽस्मान् पिपर्त्तु मित्रस्य वरुणस्य बृहच्छर्म च पिपर्त्तु तत्सङ्गेन वयमरिष्टाः पुरुवीरा उप स्याम॥७॥

भावार्थः-यथा न्यायाधीशो न्यायगृहमधिष्ठाय पुरुषाणां दण्डविनयं कुर्य्यात्तथैव राज्ञी न्यायाधीशा च स्त्रीणां न्यायं कुर्य्यात्तत्र रागद्वेषौ प्रीत्यप्रीती च विहाय न्यायमेव कुर्य्यात्॥७॥

पदार्थः-जो **(राजपुत्रा)** जिसका पुत्र राजा हो ऐसी **(अदितिः)** माता के तुल्य सुख देनेवाली राज्ञी और जो **(अर्यमा)** विद्वानों से प्रीति रखनेवाला राजा **(सुगेभिः)** सुगम मार्गों से **(द्वेषांसि, अति)** वैर द्वेषों को अच्छे प्रकार छुड़ा के **(नः)** हमारा **(पिपर्त्तु)** पालन करे। **(मित्रस्य)** मित्र तथा **(वरुणस्य)** प्रशंसायुक्त पुरुष के **(बृहत्)** बड़े ऐश्वर्यवाले **(शर्म)** घर की रक्षा करे। उस राजा-राणी के सङ्ग सम्बन्ध से हम लोग **(अरिष्टाः)** किसी से न मारने योग्य **(पुरुवीराः)** शरीर-आत्मा के बल से युक्त बहुत पुत्र-भृत्यादि जिनके हों ऐसे **(उप, स्याम)** आपके निकट होवें॥७॥

भावार्थः-जैसे न्यायाधीश राजा न्यायघर में बैठ के पुरुषों को दण्ड देवे, वैसे न्यायाधीशा राणी स्त्रियों का न्याय करे। उस न्यायघर में राग-द्वेष और प्रीति-अप्रीति छोड़ के केवल न्याय ही किया करे, अन्य कुछ न करे॥७॥

पुनर्मनुष्याः किंवत् किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य किस के तुल्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तिस्रो भूमीर्धारयन् त्रीँरुत द्यून् त्रीणि व्रता विदथे अन्तरेषाम्।
ऋतेनादित्या महि वो महित्वं तदर्यमन् वरुण मित्र चारु॥८॥

तिस्रः। भूमीः। धारयन्। त्रीन्। उत। द्यून्। त्रीणि। व्रता। विदथे। अन्तः। एषाम्। ऋतेन। आदित्याः। महि। वः। महिऽत्वम्। तत्। अर्यमन्। वरुण। मित्र। चारु॥८॥

पदार्थः-**(तिस्रः)** त्रिविधाः **(भूमीः)** **(धारयन्)** धरन्ति। अत्राडभावः। **(त्रीन्)** **(उत)** अपि **(द्यून्)** प्रकाशान् **(त्रीणि)** **(व्रता)** व्रतानि शरीरात्ममनोजानि धर्म्याणि कर्माणि **(विदथे)** वेदितव्ये व्यवहारे **(अन्तः)** मध्ये **(एषाम्)** लोकानाम् **(ऋतेन)** सत्यस्वरूपेण ब्रह्मणा **(आदित्याः)** सूर्य्याः **(महि)** महत् **(वः)** युष्माकम् **(महित्वम्)** महत्वम् **(तत्)** **(अर्यमन्)** **(वरुण)** **(मित्र)** **(चारु)**॥८॥

अन्वयः-हे अर्य्यमन् वरुण मित्र! यथा ऋतेन धृता आदित्यास्तिस्रो भूमीरुत त्रीन् द्यून् धारयँस्तथा त्वं विदथे त्रीणि व्रता धर धारय च। यदेषामन्तर्महित्वं चारु स्वरूपं महि कर्म वा वर्त्तते तद्वोऽस्तु॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा भूमयः सूर्य्यादयो लोकाश्चेश्वरनियमेन नियन्त्रिता यथावत्स्वस्वक्रियाः कुर्वन्ति तथा मनुष्यैरपि विज्ञेयं वर्त्तितव्यं च। अस्मिन् जगत्युत्तममध्यम-निकृष्टभेदेन भूमिरग्निश्च त्रिविधोऽस्ति सूर्य्यलोकाः भूमिलोकतो महान्तः सन्तीति॥८॥

पदार्थः-हे **(अर्य्यमन्)** न्याय करनेहारे **(वरुण)** शान्तशील **(मित्र)** मित्र जन! जैसे **(ऋतेन)** सत्यस्वरूप परमेश्वर ने धारण किये **(आदित्याः)** सूर्यलोक **(तिस्रः)** तीन प्रकार की **(भूमीः)** भूमियों को **(उत)** और **(त्रीन्)** तीन प्रकार के **(द्यून्)** प्रकाशों को **(धारयन्)** धारण करते हैं, वैसे आप **(विदथे)** जानने योग्य व्यवहार में **(व्रता)** शरीर, आत्मा और मन से उत्पन्न हुए धर्मयुक्त **(त्री)** तीन प्रकार के कर्मों को धारण करो-कराओ। जो **(एषाम्)** इन सूर्य्यलोकों के **(अन्तः)** मध्य में **(महित्वम्)** महत्त्व **(चारु)** सुन्दर स्वरूप वा **(महि)** बड़ा कर्म है **(तत्)** वह **(वः)** आप लोगों का होवे॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे भूमि और सूर्य्यादि लोक ईश्वर के नियम से बन्धे हुए यथावत् अपनी-अपनी क्रिया करते हैं, वैसे मनुष्यों को भी जानना और वर्त्ताव करना चाहिये। इस जगत् में उत्तम, मध्यम और अधम तीन प्रकार की भूमि और अग्नि है तथा सूर्य्यलोक भूमिलोक से बड़े-बड़े हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्री रो॑चना दि॒व्या धा॑रयन्त हिर॒ण्ययाः॒ शुच॑यो॒ धार॑पूताः।

अस्व॑प्नजो अनिमि॒षा अद॑ब्धा उ॒रु॒शंसा॑ ऋ॒जवे॑ मर्त्या॑य॥९॥

त्री। रो॒च॒ना। दि॒व्या। धा॒र॒य॒न्त॒। हि॒र॒ण्ययाः॑। शुच॑यः। धार॑ऽपूताः। अस्व॑ऽप्नजः। अ॒नि॒ऽमि॒षाः। अद॑ब्धाः। उ॒रु॒ऽशंसाः॑। ऋ॒जवे॑। मर्त्या॑य॥९॥

पदार्थः-**(त्री)** त्रीणि **(रोचना)** प्रदीपकानि ज्ञानानि **(दिव्या)** दिव्यानि शुद्धानि **(धारयन्त)** धरन्ते। अत्राडभावः। **(हिरण्ययाः)** ज्योतिर्मयाः **(शुचयः)** पवित्राः **(धारपूताः)** येषां विद्यासुशिक्षाभ्यां वाणी पूता पवित्रा ते **(अस्वप्नजः)** विद्याव्यवहारे जागृता अविद्यानिद्रारहिताः **(अनिमिषाः)** निमेषालस्यवर्जिताः **(अदब्धाः)** अहिंसनीयाः **(उरुशंसाः)** बहुप्रशंसाः **(ऋजवे)** सरलाय **(मर्त्याय)** मनुष्याय॥९॥

अन्वयः-ये हिरण्यया धारपूताः शुचय उरुशंसा अस्वप्नजोऽनिमिषा अदब्धा ऋजवे मर्त्याय त्री दिव्या रोचना धारयन्त ते जगत्कल्याणकराः स्युः॥९॥

भावार्थः-ये जीवप्रकृतिपरमेश्वराणां त्रिविधां विद्यां धृत्वाऽन्येभ्यो ददति सर्वानविद्यानिद्रात उत्थाप्य विद्यायां जागारयन्ति ते मनुष्याणां मङ्गलकारिणो भवन्ति॥९॥

पदार्थः-जो **(हिरण्ययाः)** तेजस्वी **(धारपूताः)** विद्या और उत्तम शिक्षा से जिनकी वाणी पवित्र हुई वे **(शुचयः)** शुद्ध पवित्र **(उरुशंसाः)** बहुत प्रशंसावाले **(अस्वप्नजः)** अविद्यारूप निद्रा से रहित विद्या के व्यवहार में जागते हुए **(अनिमिषाः)** आलस्यरहित और **(अदब्धाः)** हिंसा करने के न योग्य अर्थात् रक्षणीय विद्वान् लोग **(ऋजवे)** सरल स्वभाव **(मर्त्याय)** मनुष्य के लिये **(त्री)** तीन प्रकार के **(दिव्या)** शुद्ध दिव्य **(रोचना)** रुचि योग्य ज्ञान वा पदार्थों को **(धारयन्त)** धारण करते हैं, वे जगत् के कल्याण करनेवाले हों॥९॥

भावार्थः-जो मनुष्य जीव, प्रकृति और परमेश्वर की तीन प्रकार की विद्या को धारण कर दूसरों को देते, सबको विद्यारूप निद्रा से उठा के विद्या में जगाते हैं, वे मनुष्यों के मङ्गल करानेवाले होते हैं॥९॥

अथ मनुष्याः कथं दीर्घायुषः स्युरित्याह॥

अब मनुष्य कैसे दीर्घ आयुवाले हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वं विश्वेषां वरुणासि राजा ये च देवा असुर ये च मर्ताः।
शतं नो रास्व शरदो विचक्षेऽश्यामायूंषि सुधितानि पूर्वा॥१०॥७॥

त्वम्। विश्वेषाम्। वरुण। असि। राजा। ये। च। देवाः। असुर। ये। च। मर्ताः। शतम्। नः। रास्व। शरदः। विऽचक्षे। अश्याम। आयूंषि। सुऽधितानि। पूर्वा॥१०॥

पदार्थः-**(त्वम्)** **(विश्वेषाम्)** सर्वेषां मनुष्यादीनाम् **(वरुण)** वरतम **(असि)** **(राजा)** **(ये)** **(च)** **(देवाः)** विद्वांसः सभासदः **(असुर)** अविद्यमाना सुरा मद्यपानं यस्य तत्सम्बुद्धौ **(ये)** **(च)** **(मर्त्ताः)** मनुष्याः **(शतम्)** **(नः)** अस्मान् **(रास्व)** राहि देहि। अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम्। **(शरदः)** शरदृतवः **(विचक्षे)** विविधदर्शनाय **(अश्याम)** प्राप्नुयाम **(आयूंषि)** **(सुधितानि)** सुष्ठु धृतानि **(पूर्वा)** पूर्वाणि॥१०॥

अन्वयः-हे वरुणासुर! यस्त्वं विश्वेषां राजाऽसि ये च देवाः ये च मर्त्ताः सन्ति तानस्माकं विचक्षे शतं शरदो नो रास्व यतो वयं पूर्वा सुधितान्यायूंष्यश्याम॥१०॥

भावार्थः-ये पूर्णं ब्रह्मचर्यं कृत्वातिविषयासक्तिं त्यजन्ति ते शताद्वर्षेभ्यो न्यूनमायुर्न भुञ्जते नैतेन विना चिरायुषो मनुष्या भवितुमर्हन्ति॥१०॥

पदार्थः-हे **(वरुण)** अतिश्रेष्ठ **(असुर)** मद्यपान से सर्वथा रहित विद्वान् पुरुष! जो **(त्वम्)** आप **(विश्वेषाम्)** सब मनुष्यादि जगत् के **(राजा)** राजा **(असि)** हो **(च)** और **(ये)** जो **(देवाः)** विद्वान् सभासद् **(च)** और **(ये)** जो **(मर्त्ताः)** साधारण मनुष्य हैं, उनको हमारे **(विचक्षे)** विविध

प्रकार के देखने को **(शतम्)** सौ **(शरदः)** वर्ष **(नः)** हमको **(रास्व)** दीजिये, जिससे हम लोग **(पूर्वा)** पहिली **(सुधितानि)** सुन्दर प्रकार धारण की हुई अवस्थाओं को **(अश्याम)** भोगें प्राप्त हों॥१०॥

भावार्थः-जो मनुष्य पूर्ण ब्रह्मचर्य्य का सेवन करके अतिविषयासक्ति को छोड़ देते हैं, वे सौ वर्ष से न्यून आयु को नहीं भोगते। इस ब्रह्मचर्य सेवन के विना मनुष्य कदापि दीर्घ अवस्थावाले नहीं हो सकते॥१०॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

न दक्षिणा वि चिकिते न सव्या न प्राचीनमादित्या नोत पश्चा।
पाक्या चिद्वसवो धीर्या चिद्युष्मानीतो अभयं ज्योतिरश्याम्॥११॥

न। दक्षिणा। वि। चिकिते। न। सव्या। न। प्राचीनम्। आदित्याः। न। उत। पश्चा। पाक्या। चित्। वसवः। धीर्या। चित्। युष्माऽनीतः। अभयम्। ज्योतिः। अश्याम्॥११॥

पदार्थः-**(न)** निषेधे **(दक्षिणा)** **(वि)** विशेषेण **(चिकिते)** जानाति **(न)** **(सव्या)** उत्तरा **(न)** **(प्राचीनम्)** प्राची दिक् **(आदित्याः)** सूर्याः **(न)** **(उत)** अपि **(पश्चा)** पश्चिमा **(पाक्या)** पाकोऽस्यास्तीति पाकी। **सुपामिति** ड्यादेशः। **(चित्)** अपि **(वसवः)** पृथिव्यादयः **(धीर्या)** धीरेषु विद्वत्सु साधुः। अत्र **सुपामित्याकारः**। **(चित्)** अपि **(युष्मानीतः)** युष्माभिरानीतः **(अभयम्)** भयवर्जितम् **(ज्योतिः)** प्रकाशम् **(अश्याम्)** प्राप्नुयाम्॥११॥

अन्वयः-य आदित्या न दक्षिणा न सव्या न प्राचीनं नोत पश्चा भ्रमन्ति यदाधारे चिद्वसवश्चिद्वसन्ति यान् पाक्या धीर्या विचिकिते तदाश्रित्य युष्मानीतश्चिदहमभयं ज्योतिरश्याम्॥११॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये सूर्याः सर्वासु दिक्षु न भ्रमन्ति यदाधारेण पृथिव्यादयो भ्रमन्ति तद्विज्ञानपुरःसरं परमात्मानं विज्ञायाऽभयं पदं प्राप्नुवन्तु॥११॥

पदार्थः-जो **(आदित्याः)** सूर्यलोक **(न)** नहीं **(दक्षिणा)** दक्षिण **(न)** न **(सव्या)** उत्तर **(न)** न **(प्राचीनम्)** पूर्व **(उत)** और **(न)** न **(पश्चा)** पश्चिम दिशा में भ्रमते हैं **(चित्)** और जिनके आधार में **(वसवः)** पृथिवी आदि वसु **(चित्)** भी वसते हैं, जिनको **(पाक्या)** बुद्धिमान् **(धीर्या)** धीर विद्वानों में श्रेष्ठ जन **(वि चिकिते)** विशेष कर जानता है, उनका आश्रय कर **(युष्मानीतः)** तुम

लोगों से प्राप्त हुआ मैं **(अभयम्)** भयरहित **(ज्योतिः)** प्रकाशरूप ज्ञान को **(अश्याम्)** प्राप्त होऊं॥११॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो सूर्य सब दिशाओं में नहीं भ्रमते, जिनके आधार से पृथिवी आदि लोक भ्रमते हैं, उनके विज्ञानपूर्वक परमात्मा को जान के अभयरूप पद को प्राप्त होओ॥११॥

पुनः के प्रशस्ताः स्युरित्याह॥

फिर कौन प्रशस्त हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यो राजभ्य ऋतनिभ्यो ददाश यं वर्धयन्ति पुष्टयश्च नित्याः।
स रेवान् याति प्रथमो रथेन वसुदावा विदथेषु प्रशस्तः॥१२॥

यः। राजऽभ्यः। ऋतनिऽभ्यः। ददाश। यम्। वर्धयन्ति। पुष्टयः। च। नित्याः। सः। रेवान्। याति। प्रथमः। रथेन। वसुऽदावा। विदथेषु। प्रऽशस्तः॥१२॥

पदार्थः-**(यः)** **(राजभ्यः)** न्यायप्रकाशकेभ्यः सभासद्भ्यः **(ऋतनिभ्यः)** सत्यन्यायकर्त्रीभ्यो राज्ञीभ्यः **(ददाश)** दाशति ददाति **(यम्)** **(वर्द्धयन्ति)** **(पुष्टयः)** शरीरात्मबलानि **(च)** **(नित्याः)** शाश्वत्यो नीतयः **(सः)** **(रेवान्)** प्रशस्ता रायो विद्यन्ते यस्य सः **(याति)** प्राप्नोति **(प्रथमः)** आदिमः **(रथेन)** यानेन **(वसुदावा)** यो वसूनि ददाति सः **(विदथेषु)** विज्ञातव्येषु संग्रामादिषु व्यवहारेषु **(प्रशस्तः)** अत्युत्कृष्टः॥१२॥

अन्वयः-यो राजभ्य ऋतनिभ्यश्चोपदेशं ददाश यं नित्याः पुष्टयो वर्द्धयन्ति स रेवान् वसुदावा प्रथमः प्रशस्तो विदथेषु रथेन विजयं याति॥१२॥

भावार्थः-ये पुरुषा यास्स्त्रियश्च पूर्णविद्याः स्युस्ते ताश्च न्यायाधीशा भूत्वा पुरुषाणां स्त्रीणां चोन्नतिं कुर्वन्तु ते ताश्च प्रशंसनीया विजयप्रदा विज्ञेयाः॥१२॥

पदार्थः-**(यः)** जो राजा **(राजभ्यः)** न्यायप्रकाशक सभासद् राजपुरुषों **(च)** और **(ऋतनिभ्यः)** सत्य न्याय करनेवाली राणियों के लिये उपदेश **(ददाश)** देता है **(यम्)** जिसको **(नित्याः)** सनातन नीति तथा **(पुष्टयः)** शरीर-आत्मा के बल को **(वर्द्धयन्ति)** बढ़ाते हैं **(सः)** वह **(रेवान्)** प्रशस्त ऐश्वर्यवाला **(वसुदावा)** धनों का दाता **(प्रथमः)** मुख्य कुलीन **(प्रशस्तः)** प्रशंसा को प्राप्त **(विदथेषु)** जानने योग्य संग्रामादि व्यवहारों में **(रथेन)** रथ से विजय को **(याति)** प्राप्त होता है॥१२॥

भावार्थः-जो पुरुष और जो स्त्री पूर्ण विद्यावाले हों, वे न्यायधीश होकर पुरुष और स्त्रियों की उन्नति करें। वे सब प्रशंसा के योग्य विजय करनेवाले जानने चाहिये॥१२॥

पुनः कीदृशो राजा भवेदित्याह॥

फिर कैसा राजा हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

शुचि॑र॒पः सू॒यव॑सा॒ अद॑ब्ध॒ उप॑ क्षेति वृ॒द्धव॑याः सु॒वीर॑ः।

नकि॒ष्टं घ्न॒न्त्यन्ति॑तो॒ न दू॒राद् य आ॑दि॒त्याना॒ं भव॑ति॒ प्रणी॑तौ॥ १३॥

शुचि॑ः। अ॒पः। सु॒ऽयव॑साः। अद॑ब्धः। उप॑। क्षे॒ति॒। वृ॒द्धऽव॑याः। सु॒ऽवीर॑ः। नकि॑ः। तम्। घ्न॒न्ति॒। अन्ति॑तः। न। दू॒रात्। यः। आ॒दि॒त्याना॑म्। भव॑ति। प्रऽनी॑तौ॥ १३॥

पदार्थः-(शुचिः) पवित्रः **(अपः)** जलानि **(सूयवसाः)** शोभनानि यवसानि याभ्यस्ताः। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(अदब्धः)** अहिंसितः **(उप) (क्षेति)** उपनिवसति **(वृद्धवयाः)** वृद्धं वयो जीवनं यस्य सः **(सुवीरः)** शोभना वीरा यस्य सः **(नकिः)** न **(तम्) (घ्नन्ति)** हन्ति **(अन्तितः)** समीपतः **(न) (दूरात्) (यः) (आदित्यानाम्)** पूर्णब्रह्मचर्यविद्यावताम् **(भवति) (प्रणीतौ)** प्रकृष्टायां नीतौ॥ १३॥

अन्वयः-यः शुचिरदब्धो राजा सूयवसा अप उप क्षेति यो वृद्धवयाः सुवीर आदित्यानां प्रणीतौ वर्त्तमानो भवति तं नकिरन्तितो न दूरात् केऽपि घ्नन्ति॥ १३॥

भावार्थः-यः पवित्राचरणो हिंसादिदोषरहितोऽलंसामग्रीकः चिरञ्जीवी विदुषां शासने सदा वर्त्तते तस्य समीपस्था दूरस्थाश्च शत्रवः पराजयं कर्त्तुं न शक्नुवन्ति॥ १३॥

पदार्थः-(यः) जो **(शुचिः)** पवित्र **(अदब्धः)** हिंसा अर्थात् किसी से दुःख को न प्राप्त हुआ राजा **(सूयवसाः)** जिनसे अच्छे जौ आदि अन्न उत्पन्न हों उन **(अपः)** जलों के **(उप, क्षेति)** निकट वसता है, जो **(वृद्धवयाः)** बड़े जीवनवाला **(सुवीरः)** सुन्दर वीर पुरुषों से युक्त **(आदित्यानाम्)** पूर्ण ब्रह्मचर्य और विद्यावाले पुरुषों की **(प्रणीतौ)** उत्तम नीति में वर्त्तमान **(भवति)** होता है **(तम्)** उसको **(नकिः)** नहीं कोई **(अन्तितः)** समीप से **(न)** न **(दूरात्)** दूर से कोई **(घ्नन्ति)** मार सकते हैं॥ १३॥

भावार्थः-जो पवित्र आचरणवाला, हिंसादि दोषों से रहित पूर्ण सामग्रीवाला, दीर्घजीवी, विद्वानों की रक्षा में सदा रहता, उसके समीपस्थ और दूरस्थ शत्रु लोग पराजय कदापि नहीं कर सकते॥ १३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अदि॑ते॒ मित्र॒ वरु॑णो॒त मृ॑ळ॒ यद्वो॑ व॒यं च॑कृ॒मा कच्चि॒दाग॑ः।

उर्वश्यामभयं ज्योतिरिन्द्र मा नो दीर्घा अभि नशन्तमिस्राः॥१४॥

अदिते। मित्र। वरुण। उत। मृळ। यत्। वः। वयम्। चकृम। कत्। चित्। आगः। उरु। अश्याम्। अभयम्। ज्योतिः। इन्द्र। मा। नः। दीर्घाः। अभि। नशन्। तमिस्राः॥१४॥

पदार्थः-(अदिते) अखण्डितस्वरूपविज्ञाने **(मित्र)** सर्वेषां सुहृत् **(वरुण)** सर्वोत्कृष्ट **(उत)** **(मृळ)** सुखय **(यत्)** **(वः)** युष्माकम् **(वयम्)** **(चकृम)** कुर्याम। अत्राऽन्येषामपीति दीर्घः। **(कत्)** **(चित्)** किंचित् **(आगः)** अपराधम् **(उरु)** बहु **(अश्याम्)** प्राप्नुयाम् **(अभयम्)** भयवर्जितम् **(ज्योतिः)** प्रकाशयुक्तं दिनम् **(इन्द्र)** परमैश्वर्ययुक्त **(मा)** निषेधे **(नः)** अस्माकम् **(दीर्घाः)** स्थूलाः **(अभि)** **(नशन्)** नश्यन्तु **(तमिस्राः)** रात्रयः॥१४॥

अन्वयः-हे अदिते इन्द्र मित्रोत वरुण! त्वमस्मान् मृळ यद्वा कच्चिदुर्वागो वयं चकृम तत् क्षम्यतां यतोऽभयं ज्योतिरहमश्याम्। नो दीर्घास्तमिस्रा माभिनशन्॥१४॥

भावार्थः-यत्र विदुषी स्त्री स्त्रीणां न्यायकर्त्री पुरुषाणां विद्वान् पुरुषश्च तत्राहोरात्रौ निर्भयौ भवेतां विशेषतो रात्रिश्च सुखेन गच्छति॥१४॥

पदार्थः-हे **(अदिते)** अखण्डितस्वरूप और विज्ञानवाली न्यायकर्त्री राज्ञी तथा हे **(इन्द्र)** परमैश्वर्ययुक्त **(मित्र)** सबके सखा **(उत)** और **(वरुण)** सबसे उत्तम राजन्! आप हमको **(मृळ)** सुखी करो **(यत्)** जो **(वः)** तुम्हारा **(कच्चित्)** कुछ **(उरु)** बड़ा **(आगः)** अपराध **(वयम्)** हम **(चकृम)** करें, उसको क्षमा करो जिससे **(अभयम्)** भयरहित **(ज्योतिः)** प्रकाशयुक्त दिन को **(अश्याम्)** प्राप्त होऊँ। और **(नः)** हमारी **(दीर्घाः)** बड़ी **(तमिस्राः)** रात्रि **(मा)** न **(अभि, नशन्)** कटें अर्थात् रात्रि को सुखपूर्वक निर्भय सोवें॥१४॥

भावार्थः-जिस देश वा नगर में विदुषी स्त्री, स्त्रियों का न्याय करनेवाली और पुरुषों का न्याय करनेवाला विद्वान् पुरुष हो, उस देश वा नगर में दिन-रात्रि निर्भय होते और विशेष कर चोर आदि के भय से रहित सुखपूर्वक रात्रि व्यतीत होती हैं॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उभे अस्मै पीपयतः समीची दिवो वृष्टिं सुभगो नाम पुष्यन्।
उभा क्षयावाजयन् याति पृत्सूभावर्धौ भवतः साधू अस्मै॥१५॥

उभे इति। अस्मै। पीपयतः। समीची इति सम्ऽईची। दिवः। वृष्टिम्। सुऽभगः। नाम। पुष्यन्। उभा। क्षयौ। आऽजयन्। याति। पृत्ऽसु। उभौ। अर्धौ। भवतः। साधू इति। अस्मै॥१५॥

पदार्थः-(उभे) पुरुषः स्त्री च **(अस्मै)** राष्ट्राय **(पीपयतः)** वर्द्धयतः **(समीची)** या दीप्तिं सम्यगञ्चति सा **(दिवः)** दिव्यादाकाशात् **(वृष्टिम्)** **(सुभगः)** शोभनैश्वर्यः **(नाम)** जलम् **(पुष्यन्)** पुष्यन्तौ। अत्र विभक्ति लुक्। **(उभा)** उभौ **(क्षयौ)** निवसन्तौ **(आजयन्)** समन्ताद्विजयमानः **(याति)** गच्छति **(पृत्सु)** संग्रामेषु **(उभौ)** **(अर्धौ)** वर्द्धकौ **(भवतः)** **(साधू)** शुभचरित्रस्थौ **(अस्मै)**॥१५॥

अन्वयः-यथा समीची सुभगश्च दिवो वृष्टिं कुरुतो नाम पुष्यंस्तथाऽस्मानुभे पीपयतः। उभा क्षयावुभावर्द्धावस्मै साधू भवतस्तौ पृत्सु विजयमानौ स्याताम्। तत्संग्या जयन् सुखं याति॥१५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये स्त्रीपुरुषाः सूर्यदीप्तिर्जगत्वत्सर्वं राज्यं पोषयेयुः, शुभचरित्राश्च स्युस्ते न्यायाधीशत्वमर्हन्ति॥१५॥

पदार्थः-जैसे **(समीची)** जो दीप्ति को सम्यक् प्राप्त होती वह स्त्री और **(सुभगः)** शोभन ऐश्वर्यवाला राजा **(दिवः)** दिव्य शुद्ध आकाश से **(वृष्टिम्)** यज्ञादि द्वारा वर्षा कराते **(नाम)** जल को **(पुष्यन्)** पुष्ट करते हुए वैसे **(अस्मै)** इस राज्य के लिये **(उभे)** दोनों राजा-राणी **(पीपयतः)** उन्नति करते हैं **(उभा)** दोनों **(क्षयौ** निवास करते हुए **(अर्द्धौ)** राज्य को समृद्ध करनेवाले **(अस्मै)** इस राज्य के लिये **(साधू)** शुभ चरित्र में स्थित **(भवतः)** होवें, वे **(पृत्सु)** संग्रामों में विजय करनेवाले होवें, उन दोनों का सङ्गी **(आ, जयन्)** विजय करता हुआ सुख को **(याति)** प्राप्त होता है॥१५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो स्त्री-पुरुष सूर्यदीप्ति जगत् को जैसे वैसे सब राज्य को पुष्ट करें और सुन्दर चरित्रोंवाले हों, वे न्यायाधीशपन को प्राप्त होते हैं॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

या वो माया अभिद्रुहे यजत्राः पाशा आदित्या रिपवे विचृत्ताः।

अश्वीव ताँ अति येषं रथेनारिष्टा उरावा शर्मन्त्स्याम॥१६॥

याः। वः। मायाः। अभिऽद्रुहे। यजत्राः। पाशाः। आदित्याः। रिपवे। विऽचृत्ताः। अश्वीऽइव। तान्। अति। येषम्। रथेन। अरिष्टाः। उरौ। आ। शर्मन्। स्याम॥१६॥

पदार्थः-(याः) **(वः)** युष्माकम् **(मायाः)** प्रज्ञाः **(अभिद्रुहे)** योऽभिद्रुह्यति तस्मै **(यजत्राः)** सङ्गतिकरणशीलाः **(पाशाः)** बन्धनानि **(आदित्याः)** सूर्यवद्विद्याप्रकाशाः **(रिपवे)** शत्रवे **(विचृत्ताः)**

विस्तृताः **(अश्वीव)** यथा वडवा **(तान्)** **(अति)** अन्तिके **(येषम्)** प्रयतेयम् **(रथेन)** **(अरिष्टाः)** अहिंसनीयाः **(उरौ)** बहूनि **(आ)** समन्तात् **(शर्मन्)** गृहे **(स्याम)** भवेम॥१६॥

अन्वयः-हे यजत्रा आदित्या या वो विचृत्ता अरिष्टा माया अभिद्रुहे रिपवे पाशा इव भवन्ति तानहमतिप्राप्तुमश्वीवा येषं रथेनोरौ शर्मन् सुखिनः स्याम॥१६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये प्राज्ञा द्रोहं विहायाजातशत्रवः स्युस्ते दुष्टान् पाशैर्बध्नीयुस्तद्रक्षया सर्वे सुखिनः स्युः॥१६॥

पदार्थः–हे **(यजत्राः)** सत्सङ्ग करने के स्वभाववाले **(आदित्याः)** सूर्य के तुल्य विद्या से प्रकाशमान विद्वानो! **(याः)** जो **(वः)** आप लोगों की **(विचृत्ताः)** विस्तृत **(अरिष्टाः)** किसी से खण्डित न होने योग्य **(मायाः)** बुद्धियाँ **(अभिद्रुहे)** सब ओर से द्रोह करनेवाले **(रिपवे)** शत्रु के लिये **(पाशाः)** फांसी के तुल्य बांधनेवाली होती हैं **(तान्)** उन तुम लोगों के **(अति)** निकट प्राप्त होने को मैं **(अश्वीव)** घोड़ी के तुल्य **(आ, येषम्)** प्रयत्न करूं और हम लोग **(रथेन)** रमण के साधन रथ से **(उरौ)** बड़े **(शर्मन्)** घर में सुखी **(स्याम)** होवें॥१६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो पण्डित लोग द्रोह को छोड़ के जिनके कोई शत्रु नहीं ऐसे हों, वे दुष्टों को पाशों से बांधे और उनकी रक्षा करके सब सुखी हों॥१६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

माहं मघोनो वरुण प्रियस्य भूरिदाव्न आ विदं शूनमापेः॥
मा रायो राजन्त्सुयमादव स्थां बृहद्वदेम विदथे सुवीराः॥१७॥८॥

मा। अहम्। मघोनः। वरुण। प्रियस्य। भूरिऽदाव्नः। आ। विदम्। शूनम्। आपेः। मा। रायः। राजन्। सुऽयमात्। अव। स्थाम्। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीराः॥१७॥

पदार्थः-**(मा)** **(अहम्)** **(मघोनः)** प्रशस्तधनयुक्तस्य **(वरुण)** श्रेष्ठ **(प्रियस्य)** कमनीयस्य **(भूरिदाव्नः)** बहुदातुः **(आ)** **(विदम्)** प्राप्नुयाम् **(शूनम्)** वर्द्धनम् **(आपेः)** य आप्नोति तस्य **(मा)** **(रायः)** धनात् **(राजन्)** सत्यप्रकाशक **(सुयमात्)** शोभनो यमो यस्मिँस्तस्मात् **(अव)** **(स्थाम्)** तिष्ठेयम् **(बृहत्)** **(वदेम)** **(विदथे)** **(सुवीराः)**॥१७॥

अन्वयः-हे वरुण राजन्! अहमापेर्भूरिदाव्नः प्रियस्य मघोनः शूनं माविदम्। सुयमाद्रायो मावस्थामन्यथा व्ययं मा कुर्यामेवं कृत्वा विदथे सुवीरा वयं बृहद्वदेम॥१७॥

भावार्थ:-धनाढ्यैश्च राजपुरुषैः सह विरोधः कदापि न करणीयः। न चाऽन्याय्ये व्यवहारे न्यायोपार्जितधनस्य व्ययः कार्यः सदैव सर्वव्यापकस्य परमात्मन आज्ञायां च ते वर्त्तेरन्निति॥१७॥

अत्र विद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इति सप्तविंशतितमं सूक्तमष्टमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थ:-हे **(वरुण)** श्रेष्ठ सज्जन **(राजन्)** सत्य के प्रकाश करनेहारे राजन्! **(अहम्)** मैं **(आपेः)** प्राप्त होनेवाले **(भूरिदाव्नः)** बहुत धन देनेवाले **(प्रियस्य)** कामना के योग्य **(मघोनः)** प्रशस्त धनवाले पुरुष की **(शूनम्)** वृद्धि को **(मा)** न **(आ, विदम्)** प्राप्त होऊँ। किन्तु **(सुयमात्)** सुन्दर नियम कराने **(रायः)** धन से **(मा)** न **(अव, स्थाम्)** अवस्थित होके और उसकी प्राप्ति का यत्न अवश्य किया करूं और अन्यथा खर्च न करूं, ऐसा **[करके] (विदथे)** विज्ञान के व्यवहार में **(सुवीराः)** सुन्दर वीरोंवाले हुए हम लोग **(बृहत्)** बड़ा गम्भीर **(वदेम)** उपदेश करें॥१७॥

भावार्थ:-धनाढ्य लोगों को चाहिये कि राजपुरुषों के साथ विरोध कदापि न करें और न अन्याययुक्त व्यवहार में न्याय से उपार्जन किये धन का कभी खर्च करें, सदैव सर्वव्यापक परमात्मा की आज्ञा में वर्त्तें॥१७॥

इस सूक्त में विद्वानों के गुणों आदि का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह सत्ताईसवां सूक्त और आठवां वर्ग समाप्त हुआ॥

इदमित्येकादशर्चस्याष्टाविंशतितमस्य सूक्तस्य कूर्मो गार्त्समदो वा ऋषिः। वरुणो देवता। १, ३, ४, ६ निचृत् त्रिष्टुप्। ५, ७, ११ त्रिष्टुप्। ८ विराट् त्रिष्टुप्। ९ भुरिक्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २, १० भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथोपदेशकः कीदृश स्यादित्याह॥

अब अट्ठाईसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में उपदेशक कैसा हो, इस विषय को कहते हैं॥

इ॒दं क॒वेरा॑दि॒त्यस्य॑ स्व॒राजो॒ विश्वा॑नि॒ सन्त्य॒भ्य॑स्तु म॒ह्ना।
अति॒ यो म॒न्द्रो य॒जथा॑य दे॒वः सु॑की॒र्तिं भि॑क्षे॒ वरु॑णस्य॒ भूरेः॑॥१॥

इ॒दम्। क॒वेः। आ॒दि॒त्यस्य॑। स्व॒ऽराजः॑। विश्वा॑नि। सन्ति॑। अ॒भि। अ॒स्तु॒। म॒ह्ना। अति॑। यः। म॒न्द्रः। य॒जथा॑य। दे॒वः। सु॒की॒र्तिम्। भि॒क्षे॒। वरु॑णस्य। भूरेः॑॥१॥

पदार्थः-**(इदम्)** **(कवेः)** विदुषः **(आदित्यस्य)** सूर्यस्य **(स्वराजः)** यः स्वयं राजते तस्य **(विश्वानि)** सर्वाणि **(सन्ति)** वर्त्तन्ते। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(अभि)** **(अस्तु)** भवतु **(मह्ना)** महिम्ना महत्त्वेन **(अति)** **(यः)** **(मन्द्रः)** आनन्दप्रदः **(यजथाय)** सत्करणाय **(देवः)** विद्वान् **(सुकीर्त्तिम्)** **(भिक्षे)** **(वरुणस्य)** **(भूरेः)** बहुविद्यस्य॥१॥

अन्वयः-अहं यो मन्द्रो देवो मह्नास्तु तस्य स्वराजो वरुणस्य भूरेरादित्यस्येव वर्त्तमानस्य कवेः सकाशाद्यानि सन्तीदं सर्वं सुकीर्तिं यजथायात्यभि भिक्षे॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽऽदित्यस्य किरणा घटपटादीन् प्रकाशयन्ति तथा विदुषामुपदेशाः श्रोतॄणामात्मनः प्रकाशयन्ति॥१॥

पदार्थः-मैं **(यः)** जो **(मन्द्रः)** आनन्द देनेवाला **(देवः)** विद्वान् **(मह्ना)** महत्त्व के साथ **(अस्तु)** होवे उस **(स्वराजः)** स्वयं शोभायमान **(वरुणस्य)** श्रेष्ठ **(भूरेः)** बहुत विद्यावाले **(आदित्यस्य)** सूर्य के तुल्य वर्त्तमान उपकारी **(कवेः)** विद्वान् के सम्बन्ध से जो **(विश्वानि)** सब कर्त्तव्य **(सन्ति)** हैं **(इदम्)** इस सब और **(सुकीर्तिम्)** सुन्दर कीर्त्ति को **(यजथाय)** सत्कार के लिये **(अति, अभि, भिक्षे)** अत्यन्त सब ओर से मांगता हूँ॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य की किरण घटपटादि पदार्थों को प्रकाशित करती हैं, वैसे विद्वानों के उपदेश श्रोता लोगों के आत्माओं को प्रकाशित करते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तव॑ व्र॒ते सु॒भगा॑सः स्याम स्वा॒ध्यो॑ वरुण तुष्टु॒वांसः॑।

उ॒पाय॑न उ॒षसां॒ गोम॑तीनाम॒ग्नयो॒ न जर॑माणा॒ अनु॒ द्यून्॥ २॥

तव॑। व्र॒ते। सु॒ऽभगा॑सः। स्या॒म॒। सु॒ऽआ॒ध्यः॑। व॒रु॒ण॒। तु॒स्तु॒ऽवांसः॑। उ॒प॒ऽअय॑ने। उ॒षसा॑म्। गोऽम॑तीनाम्। अ॒ग्नयः॑। न। जर॑माणाः। अनु॑। द्यून्॥ २॥

पदार्थः-(**तव**) (**व्रते**) सुशीले (**सुभगासः**) शोभनैश्वर्य्याः (**स्याम**) (**स्वाध्यः**) सुष्ठु धीर्येषान्ते (**वरुण**) (**तुष्टुवांसः**) स्तोतारः (**उपायने**) समीपे प्राप्ते (**उषसाम्**) प्रत्यूषकालानाम् (**गोमतीनाम्**) प्रशस्तगोयुक्तानाम् (**अग्नयः**) पावकाः (**न**) इव (**जरमाणाः**) स्तुवन्तः (**अनु**) (**द्यून्**) विद्याप्रकाशान्॥ २॥

अन्वयः-हे वरुण! तव व्रते स्वाध्यस्तुष्टुवांसो गोमतीनामुषसामुपायनेऽग्नयो न जरमाणा वयमनु द्यून् प्राप्य सुभगासः स्याम॥ २॥

भावार्थः-विद्यार्थ्युपदेश्यैर्मनुष्यैः सदा विदुषां सङ्गसेवे कृत्वा विद्या प्रत्यहं ग्राह्या यथोषःसमये सर्वे पदार्थाः सुशोभिता भवन्ति तथा तेऽपि स्युः॥ २॥

पदार्थः-हे (**वरुण**) श्रेष्ठ सज्जन विद्वान् पुरुष! (**तव**) आपके (**व्रते**) सुशीलतारूप नियम में (**स्वाध्यः**) सुन्दर विज्ञानवाले (**तुष्टुवांसः**) स्तुतिकर्त्ता (**गोमतीनाम्**) प्रशस्त गौओंवाली (**उषसाम्**) प्रातःकाल की वेलाओं के (**उपायने**) समीप प्राप्त होने में (**अग्नयः**) अग्नियों के (**न**) तुल्य तेजस्वी (**जरमाणाः**) स्तुति करते हुए हम लोग (**अनु, द्यून्**) अनुकूल विद्याप्रकाशों को प्राप्त हो के (**सुभगासः**) सुन्दर ऐश्वर्यवाले (**स्याम**) होवें॥ २॥

भावार्थः-विद्यार्थी और उपदेश सुननेवाले मनुष्यों को चाहिये कि सदा विद्वानों का सङ्ग और सेवा करके प्रतिदिन विद्या का ग्रहण करें, जैसे प्रातःकाल के समय में सब पदार्थ सुशोभित होते हैं, वैसे वे भी होवें॥ २॥

पुनः पुत्राः कीदृशाः स्युरित्याह॥

फिर पुत्र लोग कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तव॑ स्याम पु॒रु॒वीर॑स्य॒ शर्म॑न्नुरु॒शंस॑स्य वरुण प्रणेतः।

यू॒यं नः॑ पुत्रा अदितेरदब्धा अ॒भि क्ष॑मध्वं॒ युज्या॑य देवाः॥ ३॥

तव॑। स्या॒म॒। पु॒रु॒वीर॑स्य। शर्म॑न्। उ॒रु॒ऽशंस॑स्य। व॒रु॒ण॒। प्र॒ने॒त॒रिति॑ प्रऽनेतः। यू॒यम्। नः॒। पु॒त्राः॒। अ॒दि॒तेः॒। अ॒द॒ब्धाः॒। अ॒भि। क्ष॒म॒ध्व॒म्। युज्या॑य। दे॒वाः॒॥ ३॥

पदार्थ:-**(तव) (स्याम) (पुरुवीरस्य)** बहुप्रवीणशूरस्य **(शर्मन्)** शर्मणि गृहे **(उरुशंसस्य)** बहुप्रशंसितस्य **(प्रणेत:)** सर्वेषां नयनकर्त्त: **(यूयम्) (न:)** अस्माकम् **(पुत्रा:) (अदिते:)** अखण्डितविज्ञानस्य **(अदब्धा:)** अहिंसनीया: **(अभि) (क्षमध्वम्) (युज्याय)** योक्तुमर्हाय व्यवहाराय **(देवा:)** विद्वांस:॥३॥

अन्वय:-हे वरुण प्रणेत:! यथाहं पुरुवीरस्योरुशंसस्य तव शर्मन् सुखिन: स्याम। हे अदब्धा देवा न: पुत्रा! यूयमदितेर्युज्याय देवा भूत्वाऽभि क्षमध्वम्॥३॥

भावार्थ:-हे पुत्रा! यथा वयमुत्तमस्य विदुष: सकाशान्नीतिविद्यां प्राप्यानन्दिता: स्मस्तथा यूयमपि क्षमाशीला भूत्वाऽध्यापकप्रियाचरणेन सुशिक्षिता विद्वांसो भवत॥३॥

पदार्थ:–हे **(वरुण)** श्रेष्ठ **(प्रणेत:)** सबके नायक सज्जन विद्वान्! जैसे मैं **(पुरुवीरस्य)** बहुत प्रवीण शूर **(उरुशंसस्य)** बहुतों से प्रशंसा किये हुए **(तव)** आपके **(शर्मन्)** घर में हम लोग सुखी हों। हे **(अदब्धा:)** अहिंसनीय **(न:)** हमारे **(पुत्रा:)** पुत्रो! **(यूयम्)** तुम लोग **[(अदिते:)** अखण्डित विज्ञान के**] (युज्याय)** युक्त करने योग्य व्यवहार के लिये **(देवा:)** विद्वान् होकर **(अभि, क्षमध्वम्)** सब ओर से क्षमा करनेवाले होओ॥३॥

भावार्थ:-हे पुत्रो! जैसे हम लोग उत्तम विद्वान् के सम्बन्ध से नीति विद्या को प्राप्त होके आनन्दित हों, वैसे तुम लोग भी क्षमाशील होके अध्यापकों के अनुकूल आचरण से सुशिक्षित विद्वान् होओ॥३॥

इदं जगत्कीदृशमित्याह॥

यह जगत् कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

प्र सीमादित्यो असृजद्विधर्ता ऋतं सिन्धवो वरुणस्य यन्ति।

न श्राम्यन्ति न वि मुचन्त्येते वयो न पप्तू रघुया परिज्मन्॥४॥

प्र। सीम्। आदित्य:। असृजत्। विऽधर्ता। ऋतम्। सिन्धव:। वरुणस्य। यन्ति। न। श्राम्यन्ति। न। वि। मुचन्ति। एते। वय:। न। पप्तु:। रघुऽया। परिऽज्मन्॥४॥

पदार्थ:-**(प्र) (सीम्)** सर्वत: **(आदित्य:)** सूर्य्य: **(असृजत्)** सृजति **(विधर्त्ता)** विविधानां लोकानां धारक: **(ऋतम्)** उदकम् **(सिन्धव:)** नद्य: **(वरुणस्य)** मेघस्य। **वरुण इति पदनामसु पठितम्।** (निघं०५.६)। **(यन्ति)** प्राप्नुवन्ति **(न) (श्राम्यन्ति)** स्थिरा भवन्ति **(न) (वि) (मुचन्ति)** उपरमन्ति **(एते) (वय:)** पक्षिण: **(न)** इव **(पप्तु:)** पतन्ति **(रघुया)** रघव: क्षिप्रं गन्तार:। अत्र **सुपां सुलुगिति** जस: स्थाने याजादेश: **(परिज्मन्)** परित: सर्वतो वर्त्तमानायां भूमौ॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यतो विधर्त्तादित्यः सीमृतमसृजत् तस्माद्वरुणस्य सकाशात् सिन्धवो यन्ति न श्राम्यन्ति न विमुचन्त्येते वयो न रघुया परिज्मन् प्रपप्तुस्तथा यूयमपि वर्त्तध्वम्॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। इदञ्जगद्वायुवज्जलवत्सर्वमस्थिरं यथा नद्यश्चलन्ति भौममुदकमुपरि गच्छति तत्र चलति पुनर्भूमाववपतत्येवं जीवानां गतिरस्ति॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिस कारण **(विधर्त्ता)** अनेक प्रकार के लोकों का धारण करनेवाला **(आदित्यः)** सूर्य **(सीम्)** सब ओर से **(ऋतम्)** जल को **(असृजत्)** उत्पन्न करता है, इससे **(वरुणस्य)** मेघ के सम्बन्ध से **(सिन्धवः)** नदियां **(यन्ति)** चलती प्राप्त होतीं **(न) (श्राम्यन्ति)** स्थिर नहीं होतीं **(न, मुचन्ति)** अपने चलनरूप कार्य को नहीं छोड़तीं, किन्तु **(एते)** ये नदी आदि जलाशय **(वयः)** पक्षियों के **(न)** तुल्य **(रघुया)** शीघ्रगामी **(परिज्मन्)** सब ओर से वर्त्तमान भूमि पर **(प्र, पप्तुः)** अच्छे प्रकार गिरते चलते हैं, वैसे तुम लोग भी सब और व्यवहारसिद्ध्यर्थ चलना-फिरना आदि व्यवहार करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। यह सब जगत् वायु और जल के तुल्य चलायमान है। जैसे नदियां चलतीं, पृथिवी का जल ऊपर जाता, वहाँ भी चलायमान होता, फिर भूमि पर गिरता, इस प्रकार जीवों की संसार में गति है॥४॥

पुनर्विद्यार्थिनः कीदृशाः स्युरित्याह॥

फिर विद्यार्थी लोग कैसे हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वि मच्छ्रथाय रशनामिवाग ऋध्याम ते वरुण खामृतस्य।
मा तन्तुश्छेदि वयतो धियं मे मा मात्रा शार्यपसः पुर ऋतोः॥५॥९॥

वि। मत्। श्रथय। रशनाम्ऽइव। आगः। ऋध्याम। ते। वरुण। खाम्। ऋतस्य। मा। तन्तुः। छेदि। वयतः। धियम्। मे। मा। मात्रा। शारि। अपसः। पुरा। ऋतोः॥५॥

पदार्थः-**(वि) (मत्)** मत्तः **(श्रथय)** हिन्धि। अत्राऽन्येषामपीति दीर्घः। **(रशनामिव) (आगः)** अपराधम् **(ऋध्याम) (ते)** तव **(वरुण) (खाम्)** नदीम्। **खा इति नदीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१३)। **(ऋतस्य)** जलस्य **(मा) (तन्तुः)** मूलम् **(छेदि)** छिन्द्याः **(वयतः)** प्राप्नुवतः **(धियम्) (मे)** मम **(मा) (मात्रा)** जनन्या **(शारि)** हिंस्याः **(अपसः)** कर्मणः **(पुरा) (ऋतोः)** ऋतुसमयात्॥५॥

अन्वयः-हे वरुण! त्वं रशनामिव मदागो विश्रथय येन ते तव समीपे वयमृध्याम। यथर्त्तस्य खां न छिन्दति तथा त्वया तन्तुर्मा छेदि। वयतो मे धियं मा छेदि ऋतोः पुरा अपसो मा शारि। मात्रा सह विरोधं मा कुर्य्याः॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा रसनया बद्धा अश्वा नियमेन गच्छन्ति तथैव मा मात्रा पित्राऽऽचार्येण बद्धा बालका नियताः सन्तो विद्यां सुशिक्षा च गृह्णन्तु कदाचिन्मादकद्रव्यसेवनेन बुद्धिनाशं मा कुर्या विवाहं कृत्वा सदैवर्त्तुगामिनः स्युः। सन्तानसन्ततिं मा च्छिन्द्युः॥५॥

पदार्थः–हे **(वरुण)** श्रेष्ठ पुरुष! आप **(रशनामिव)** रस्सी के तुल्य **(मत्)** मुझसे **(आगः)** अपराध को **(वि, श्रथय)** विशेष कर नष्ट कीजिये जिससे **(ते)** आपके समीप हम लोग **(ऋध्याम)** उन्नत हों। जैसे **(ऋतस्य)** जल की **(खाम्)** नदी को नहीं नष्ट करते, वैसे आपसे **(तन्तुः)** मूल **(मा)** न **(छेदि)** नष्ट किया जाय, **(वयतः)** प्राप्त होते हुए **(मे)** मेरी **(धियम्)** बुद्धि को नष्ट न कीजिये, **(ऋतोः)** ऋतु समय से **(पुरा)** पहिले **(अपसः)** कर्म से मत **(शारि)** नष्ट कीजिये और **(मात्रा)** माता के साथ विरोध **(मा)** मत कर॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे रस्सी से बंधे हुए घोड़े नियम से चलते हैं, वैसे ही माता, पिता और आचार्य के नियम में बंधे हुए बालक विद्यार्थी विद्या और सुशिक्षा को ग्रहण करें। कभी मादक द्रव्य के सेवन से बुद्धि को नष्ट न करें। विवाह करके सदैव ऋतुगामी हों और सन्तानों के प्रवाह को न तोड़ें॥५॥

पुनरध्योपकोपदेशकविषयमाह॥

फिर अध्यापक और उपदेशक विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अपो॒ सु म्य॑क्ष वरुण भि॒यसं॒ मत्सम्रा॒ळृता॒वोऽनु॑ मा गृभाय।

दामे॑व व॒त्साद्वि मु॑मु॒ग्ध्यंहो॒ न॒हि त्वदा॒रे नि॒मिष॑श्च॒नेशे॑॥६॥

अपो॒ इति॑। सु। म्य॒क्ष॒। व॒रु॒ण॒। भि॒यस॑म्। मत्। सम्ऽरा॑ट्। ऋत॑ऽवः। अनु॑। मा॒। गृ॒भा॒य॒। दाम॑ऽइव। व॒त्सात्। वि। मु॒मु॒ग्धि॒। अंहः॑। न॒हि। त्वत्। आ॒रे। नि॒ऽमिषः॑। च॒न। ईशे॑॥६॥

पदार्थः-**(अपो)** **(सु)** **(म्यक्ष)** गमय **(वरुण)** श्रेष्ठ **(भियसम्)** भयम् **(मत्)** मम सकाशात् **(सम्राट्)** यः सम्यग् राजते सः **(ऋतावः)** ऋतं सत्यं बहुविधं विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ **(अनु)** **(मा)** माम् **(गृभाय)** गृह्णीयाः **(दामेव)** यथा रज्जुः **(वत्सात्)** **(वि)** **(मुमुग्धि)** मुञ्च **(अंहः)** अपराधम् **(नहि)** **(त्वत्)** तव सकाशात् **(आरे)** निकटे दूरे वा **(निमिषः)** निरन्तरम् **(चन)** **(ईशे)**॥६॥

अन्वय:-हे वरुण! त्वं मद्भियसमपो म्यक्ष। हे ऋताव: सम्राट्! त्वं मानुगृभाय वत्साद् गामिव मदंह: सु विमुमुग्धि त्वदारे निमिषश्चन कश्चिन्नहीशे॥६॥

भावार्थ:-अध्यापका उपदेशका वा प्रथमत: सर्वेषां भयं निस्सार्य विद्याग्रहणं कारयेयु: कुव्यसनानि त्याजयेयुर्यतस्तेषां दूरे समीपे वा कोऽपि धर्मान्निवारयिता न स्यात्॥६॥

पदार्थ:-हे **(वरुण)** श्रेष्ठ जन! आप **(मत्)** मेरे सम्बन्ध से **(भियसम्)** भय को **(अपो, म्यक्ष)** दूर कीजिये। हे **(ऋताव:)** बहुत सत्य को ग्रहण करनेवाले **(सम्राट्)** सम्यक् प्रकाशमान! आप **(मा)** मुझ पर **(अनु, गृभाय)** अनुग्रह करो **(वत्सात्)** बछड़े से गौ को जैसे वैसे मुझसे **(अंह:)** अपराध को **(सु, वि, मुमुग्धि)** सुन्दर प्रकार विशेष कर छुड़ाइये **(त्वत्)** आपके सम्बन्ध से **(आरे)** निकट वा दूर **(निमिष:)** निरन्तर **(चन)** भी कोई **(नहि)** नहीं **(ईशे)** समर्थ होता है॥६॥

भावार्थ:-अध्यापक और उपदेशक पहिले से सबके भय को निकाल विद्या का ग्रहण करावें, बुरे व्यसन् छुड़ावें, जिससे उनके दूर वा समीप में कोई धर्म से रोकनेवाला न हो॥६॥

पुनर्मनुष्या: किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

मा नो वधैर्वरुण ये त इष्टावेन: कृण्वन्तमसुर भ्रीणन्ति।
मा ज्योतिष: प्रवसथानि गन्म वि षू मृध: शिश्रथो जीवसे न:॥७॥

मा। न:। वधै:। वरुण। ये। ते। इष्टौ। एन:। कृण्वन्तम्। असुर। भ्रीणन्ति। मा। ज्योतिष:। प्रऽवसथानि। गन्म। वि। सु। मृध:। शिश्रथ:। जीवसे। न:॥७॥

पदार्थ:-**(मा)** निषेधे **(न:)** अस्माकम् **(वधै:)** हननै: **(वरुण)** वायुरिव वर्त्तमान **(ते)** तव **(इष्टौ)** यजने सङ्गतिकरणे **(एन:)** पापम् **(कृण्वन्तम्)** कुर्वन्तम् **(असुर)** प्रक्षेप्त: **(भ्रीणन्ति)** भर्त्सयन्ति **(मा)** **(ज्योतिष:)** प्रकाशात् **(प्रवसथानि)** प्रवासान् **(गन्म)** प्राप्नुयाम **(वि)** **(सु)**। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घ:। **(मृध:)** सङ्ग्मान् **(शिश्रथ:)** हिन्धि **(जीवसे)** जीवितुम् **(न:)** अस्माकम्॥७॥

अन्वय:-हे असुर वरुण! ये त इष्टावेन: कृण्वन्तं भ्रीणन्ति ते नो वधैर्मा वर्त्तेरन्। ज्योतिष: प्रवसथानि मा गन्म त्वं नो जीवसे मृधो विशिश्रथो यतो वयं सततं सुखं सुगन्म॥७॥

भावार्थ:-ये मनुष्या धार्मिकान्न हिंसन्ति दुष्टान् ताडयन्ति कस्याऽपि प्रवासनं न निरुन्धन्ति सर्वेषां सुखाय शत्रून् विजयन्ते तेऽतुलं सुखमाप्नुवन्ति॥७॥

पदार्थः-हे **(असुर)** दुर्गुणों को दूर करनेहारे **(वरुण)** वायु के तुल्य वर्त्तमान पुरुष! **(ये)** जो लोग **(ते)** आपके **(इष्टौ)** सङ्गति करने रूप व्यवहार में **(एनः)** पाप **(कृण्वन्तम्)** करते हुए को **(भ्रीणन्ति)** धमकाते हैं वे **(नः)** हमारे **(वधैः)** मारने से **(मा)** न वर्त्तें **(ज्योतिषः)** प्रकाश से **(प्रवसथानि)** प्रवासों दूर देशों को **(मा)** न **(गन्म)** प्राप्त हों आप **(नः)** हमारे **(जीवसे)** जीवन के लिये **(मृधः)** संग्रामों को **(वि, शिश्रथः)** विशेष कर मारिये, जिससे हम लोग निरन्तर सुख को **(सु)** अच्छे प्रकार प्राप्त होवें॥७॥

भावार्थः-जो मनुष्य धर्मात्माओं को नहीं मारते, दुष्टों को ताड़ना देते, किसी के प्रवास को न रोकते और सबके सुख के लिये शत्रुओं को जीतते हैं, वे अतुल सुख को प्राप्त होते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

नमः पुरा ते वरुणोत नूनमुतापरं तुविजात ब्रवाम।
त्वे हि कं पर्वते न श्रितान्यप्रच्युतानि दूळभ व्रतानि॥८॥

नमः। पुरा। ते। वरुण। उत। नूनम्। उत। अपरम्। तुविऽजात। ब्रवाम। त्वे इति। हि। कम्। पर्वते। न। श्रितानि। अप्रऽच्युतानि। दुःऽदभ। व्रतानि॥८॥

पदार्थः-**(नमः)** सत्कारि वचः **(पुरा)** **(ते)** तव **(वरुण)** प्रशस्त **(उत)** **(नूनम्)** निश्चितम् **(उत)** अपि **(अपरम्)** द्वितीयम् **(तुविजात)** बहुषु प्रसिद्ध **(ब्रवाम)** **(त्वे)** त्वयि। अत्र **सुपां सुलुगिति** शे आदेशः। **(हि)** खलु **(कम्)** सुखम्। **कमिति वारिमूर्द्धसुखेषु**। **(पर्वते)** मेघे **(न)** इव **(श्रितानि)** आश्रितानि **(अप्रच्युतानि)** अविनश्वराणि **(दूळभ)** दुःखेन हिंसितुं योग्य **(व्रतानि)** सत्यभाषणादीनि॥८॥

अन्वयः-हे दूळभ तुविजात वरुण! वयं ते पुरा नूनमुतापरं नमो ब्रवाम। पर्वते न त्वे कं श्रितान्यप्रच्युतानि ह्युत व्रतानि ब्रवाम॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्यैर्येऽत्र जगति श्रेष्ठा विद्वांसः सन्ति तान् प्रति सदैव प्रियं वचो वक्तव्यमनुकूलमाचरणं च कर्त्तव्यं तद्गुणकर्मस्वभावाः स्वस्मिन् ग्राह्याः॥८॥

पदार्थः-हे **(दूळभ)** दुःख से मारने योग्य **(तुविजात)** बहुतों में प्रसिद्ध **(वरुण)** प्रशंसित पुरुष! हम लोग **(ते)** आपके **(पुरा)** पहिले **(नूनम्)** निश्चित **(उत)** और **(अपरम्)** दूसरे **(नमः)** सत्कार के वचन को **(ब्रवाम)** कहें **(पर्वते)** मेघ में **(न)** जैसे वैसे **(त्वे)** आप में **(कम्)** सुख का

(श्रितानि) आश्रय करते हुए **(अप्रच्युतानि)** नाशरहित **(हि)** ही **(उत)** और **(व्रतानि)** सत्य भाषण आदि व्रतों को कहें॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि जो इस जगत् में श्रेष्ठ विद्वान् हैं, उनके प्रति सदैव प्रिय वचन कहें और अनुकूल आचरण करें और उनके गुण, कर्म, स्वभावों को अपने में ग्रहण करें॥८॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् लोग क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

परा ऋणा सावीरध मत्कृतानि माहं राजन्नन्यकृतेन भोजम्।
अव्युष्टा इन्नु भूयसीरुषास आ नो जीवान् वरुण तासु शाधि॥९॥

परा। ऋणा। सावीः। अध। मत्ऽकृतानि। मा। अहम्। राजन्। अन्यऽकृतेन। भोजम्। अविऽउष्टाः। इत्। नु। भूयसीः। उषसः। आ। नः। जीवान्। वरुण। तासु। शाधि॥९॥

पदार्थः-**(परा)** पराणि **(ऋणा)** ऋणानि **(सावीः)** सुनु **(अध)** अथ **(मत्कृतानि)** मया कृतानि मत्कृतानि **(मा)** **(अहम्)** **(राजन्)** सर्वत्र प्रकाशमान **(अन्यकृतेन)** अन्येन कृतेन **(भोजम्)** भुञ्जेः। अत्र विकरणव्यत्ययेन शबडोऽभावश्च। **(अव्युष्टाः)** अविषु रक्षणादिषूष्टाः कारितनिवासाः **(इत्)** **(नु)** सद्यः **(भूयसीः)** बह्वीः **(उषासः)** उषसो दिनानि। अत्रा**ऽन्येषामपी**त्युपधा दीर्घः। **(आ)** **(नः)** अस्मान् **(जीवान्)** **(वरुण)** सर्वोत्कृष्टजगदीश्वर **(तासु)** उषःषु **(शाधि)** शिक्षस्व॥९॥

अन्वयः-हे वरुण राजन्नीश्वर! त्वं मत्कृतानि परा ऋणा सावीः। यतोऽहमन्यकृतेन मा भोजमध त्वं या भूयसीरुषासोऽव्युष्टाः सन्ति तास्विन्नु नो जीवानाशाधि॥९॥

भावार्थः-यथेश्वरो येन यादृशं कर्म क्रियते तस्मै तादृशं फलं ददाति वेदद्वारा सर्वान् शिक्षये तथैव विद्वद्भिरप्यनुष्ठेयम्॥९॥

पदार्थः-हे **(वरुण)** सर्वोत्कृष्ट **(राजन्)** सर्वत्र प्रकाशमान जगदीश्वर! आप **(मत्कृतानि)** मेरे किये **(परा)** उत्तम **(ऋणा)** ऋणों को **(सावीः)** शीघ्र चुकते कीजिये जिससे **(अहम्)** मैं **(अन्यकृतेन)** अन्य के किये से **(मा)** न **(भोजम्)** भोगूं **(अध)** और अनन्तर आप जो **(भूयसीः)** बहुत **(उषासः)** दिन **(अव्युष्टाः)** रक्षादि में निवास को प्राप्त हैं **(तासु)** उन दिनों में **(इत्)** ही **(नः)** हम **(जीवान्)** जीवों को **(आ, शाधि)** अच्छे प्रकार शिक्षित कीजिये॥९॥

भावार्थः-जैसे ईश्वर जिसने जैसा कर्म किया है, उसको वैसा फल देता है। वेद द्वारा सबको शिक्षा करता, वैसे ही विद्वानों को अनुष्ठान करना चाहिये॥९॥

पुना राजपुरुषविषयमाह॥

फिर राजपुरुष विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यो मे राजन् युज्यो वा सखा वा स्वप्ने भयं भीरवे मह्यमाह।

स्तेनो वा यो दिप्सति नो वृको वा त्वं तस्माद्वरुण पाह्यस्मान्॥१०॥

यः। मे। राजन्। युज्यः। वा। सखा। वा। स्वप्ने। भयम्। भीरवे। मह्यम्। आह। स्तेनः। वा। यः। दिप्सति। नः। वृकः। वा। त्वम्। तस्मात्। वरुण। पाहि। अस्मान्॥१०॥

पदार्थः-**(यः)** **(मे)** मम **(राजन्)** **(युज्यः)** योक्तुमर्हः **(वा)** **(सखा)** मित्रः **(वा)** **(स्वप्ने)** निद्रायाम् **(भयम्)** **(भीरवे)** भयस्वभावाय **(मह्यम्)** **(आह)** प्रतिवदेत् **(स्तेनः)** चोरः **(वा)** **(यः)** **(दिप्सति)** हिंसितुमिच्छति **(नः)** अस्मान् **(वृकः)** वृकवदुत्कोचकश्चोरः **(वा)** **(त्वम्)** **(तस्मात्)** **(वरुण)** श्रेष्ठ **(पाहि)** **(अस्मान्)**॥१०॥

अन्वयः-हे वरुण राजन्! यो मे युज्यः सखा जागृते स्वप्ने वा भयं प्राप्नोति वा भीरवे मह्यं भयं प्राप्नोतीत्याह यः स्तेनो वा दस्युर्नो दिप्सति वृको वा दिप्सति तस्मात् त्वमस्मान् पाहि॥१०॥

भावार्थः-ये राजपुरुषाः प्रजायामभयं दुष्टानां निग्रहं कृत्वा सर्वां प्रजां रक्षन्ति, ते निर्दुःखा जायन्ते॥१०॥

पदार्थः-हे **(वरुण)** श्रेष्ठ **(राजन्)** राजपुरुष! **(यः)** जो **(मे)** मेरा **(युज्यः)** मेली **(सखा)** मित्र जागने **(वा)** अथवा **(स्वप्ने)** सोने में **(भयम्)** भय को प्राप्त होता **(वा)** अथवा **(भीरवे)** डरपोक **(मह्यम्)** मुझको भय प्राप्त होता है ऐसा **(आह)** कहे **(यः)** जो **(स्तेनः)** चोर **(वा)** अथवा डाकू **(नः)** हमको **(दिप्सति)** धमकाता मारना चाहता **(वा)** अथवा **(वृकः)** भेड़िया के तुल्य लुटेरा चोर हमको मारना चाहता **(तस्मात्)** उससे **(त्वम्)** आप **(अस्मान्)** हम लोगों की **(पाहि)** रक्षा कीजिये॥१०॥

भावार्थः-जो राजपुरुष प्रजा में निर्भय दुष्टों का निग्रह कर सब प्रजा की रक्षा करते हैं, वे सब दुःखों से रहित हो जाते हैं॥१०॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

माहं मघोनो वरुण प्रियस्य भूरिदाव्न आ विदं शूनमापेः।

मा रायो राजन्त्सुयमादव स्थां बृहद्वदेम विदथे सुवीराः॥ ११॥ १०॥

मा। अहम्। मघोनः। वरुण। प्रियस्य। भूरिऽदाव्नः। आ। विदम्। शूनम्। आपेः। मा। रायः। राजन्। सुऽयमात्। अव। स्थाम्। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीराः॥ ११॥

पदार्थः-(मा) (अहम्) (मघोनः) बहुपूज्यधनस्य **(वरुण) (प्रियस्य) (भूरिदाव्नः)** बहुदातुः **(आ) (विदम्)** प्राप्नुयाम् **(शूनम्)** सुखम् **(आपेः)** प्राप्तधनात् **(मा) (रायः)** धनात् **(राजन्) (सुयमात्)** शोभना यमा वैरादयो व्यवहारा यस्मात्तस्मात् **(अव) (स्थाम्)** अवतिष्ठस्व **(बृहत्) (वदेम) (विदथे)** विज्ञाने **(सुवीराः)**॥ ११॥

अन्वयः-हे वरुण राजन्! यथाऽहमन्यायेन प्रियस्य मघोनो भूरिदाव्नो जनस्य विरोधमाविदम्। तेन शूनं मा प्राप्नुयामापेः सुयमाद्रायो विरोधेऽहं मावस्थां तथा त्वं भवैवं कुर्वन्तः सुवीरा वयं विदथे सततं बृहद्वदेम॥ ११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यैरन्यायेन विनाज्ञां परपदार्थस्य ग्रहणेच्छा कदापि न कार्य्या, किन्तु धर्म्येण व्यवहारेण धनं यावद्बलं सञ्चयनीयमिति॥ ११॥

अत्र विद्वद्राजप्रजागुणकर्मवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेदितव्यम्॥

इत्यष्टाविंशतितमं सूक्तं दशमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(वरुण)** श्रेष्ठ **(राजन्)** राजपुरुष! जैसे **(अहम्)** मैं अन्याय से **(प्रियस्य)** प्यारे **(मघोनः)** बहुत अच्छे धनवाले **(भूरिदाव्नः)** बहुत पदार्थों के दाता मनुष्य के विरोध को **(आ, विदम्)** प्राप्त होऊं, उससे **(शूनम्)** सुख को न प्राप्त होऊं। **(आपेः)** प्राप्त धन से **(सुयमात्)** सुन्दर वैर आदि व्यवहार के साधक **(रायः)** धन से विरोध में मैं **(मा)** न **(अव, स्थाम्)** अवस्थित होऊं, वैसे आप हों, ऐसे करते हुए **(सुवीराः)** सुन्दर वीरोंवाले हम **(विदथे)** विज्ञान के निमित्त निरन्तर **(बृहत्)** बड़ा अच्छा **(वदेम)** कहें॥ ११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि अन्याय से विना आज्ञा परपदार्थ के ग्रहण की इच्छा कभी न करें, किन्तु धर्मयुक्त व्यवहार से यथाशक्ति धन संचय करें॥ ११॥

इस सूक्त में विद्वान् और राजा-प्रजा के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त में कहे अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह अट्ठाईसवां सूक्त और दशवां वर्ग समाप्त हुआ॥

धृतव्रता इति सप्तर्चस्यैकोनत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य कूर्मो गृत्समदो वा[७] ऋषिः। विश्वेदेवा देवताः। १, ४, ५ निचृत् त्रिष्टुप्। २, ६, ७, त्रिष्टुप्। ३ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब उनतीसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् के विषय को कहते हैं॥

धृतव्रता आदित्या इषिरा आरे मत्कर्त रहसूरिवागः।

शृण्वतो वो वरुण मित्र देवा भद्रस्य विद्वाँ अवसे हुवे वः॥ १॥

धृतऽव्रताः। आदित्याः। इषिराः। आरे। मत्। कर्त। रहसूःऽइव। आगः। शृण्वतः। वः। वरुण। मित्र। देवाः। भद्रस्य। विद्वान्। अवसे। हुवे। वः॥ १॥

पदार्थः-(धृतव्रताः) धृतानि व्रतानि यैस्ते **(आदित्याः)** सूर्य्यवद्विद्या प्रकाशकाः **(इषिराः)** ज्ञानवन्तः **(आरे)** समीपे दूरे वा **(मत्)** मम। व्यत्ययेन पञ्चमी। **(कर्त्त)** कुरुत **(रहसूरिव)** या रह एकान्ते सूते सा **(आगः)** अपराधम् **(शृण्वतः)** **(वः)** युष्मान् **(वरुण)** अत्युत्कृष्ट **(मित्र)** **(देवाः)** विद्वांसः **(भद्रस्य)** कल्याणस्य **(विद्वान्)** **(अवसे)** रक्षणादिने **(हुवे)** **(वः)** युष्मान्॥ १॥

अन्वयः-हे आदित्या! इव इषिरा धृतव्रता देवा विद्वांसो यूयं मदारे सत्यं कर्त्त रहसूरिवागो मा कुरुत। विद्वानहं शृण्वतो वोऽवसो हुवे। वोऽपराधं नाशयेयम्। हे वरुण मित्र! त्वं भद्रस्याऽवसे प्रवर्त्तस्व॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये धर्माचारिणः सर्वेषामधर्मात् पृथग् रक्षणे प्रवर्त्तमानास्ते कल्याणामाप्नुवन्ति॥ १॥

पदार्थः-हे **(आदित्याः)** सूर्य्य के तुल्य विद्या के प्रकाशक **(इषिराः)** ज्ञानयुक्त **(धृतव्रताः)** नियमों को धारण किये हुए **(देवाः)** विद्वान् लोगो! तुम **(मत्)** मेरे **(आरे)** दूर वा समीप में सत्य को प्रवृत्त **(कर्त्त)** करो **(रहसूरिव)** एकान्त में जननेवाली व्यभिचारिणी के तुल्य **(आगः)** अपराध को मत करो। **(विद्वान्)** विद्वान् मैं **(शृण्वतः)** सुनते हुए **(वः)** आपको **(अवसे)** रक्षा आदि के लिये **(हुवे)** बुलाता हूँ **(वः)** तुम लोगों के अपराध को मैं नष्ट करूं। हे **(वरुण)** सर्वोत्तम **(मित्र)** मित्र! आप **(भद्रस्य)** कल्याण की रक्षा के लिये प्रवृत्त हों॥ १॥

---

७. कूर्मो गार्त्समदो गृत्समदो वा॥ सं०॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो धर्माचरण करनेवाले अधर्म से पृथक् सबको रखने में प्रवर्त्तमान हैं, वे कल्याण को प्राप्त होते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यूयं देवाः प्रमतिर्यूयमोजो यूयं द्वेषांसि सनुतर्युयोत।
अभिक्षत्तारो अभि च क्षमध्वमद्या च नो मृळयतापरं च॥२॥

यूयम्। देवाः। प्रऽमतिः। यूयम्। ओजः। यूयम्। द्वेषांसि। सनुतः। युयोत। अभिऽक्षत्तारः। अभि। च। क्षमध्वम्। अद्य। च। नः। मृळयत। अपरम्। च॥२॥

पदार्थः-**(यूयम्)** **(देवाः)** **(प्रमतिः)** प्रकृष्टा प्रज्ञा **(यूयम्)** **(ओजः)** पराक्रमम् **(यूयम्)** **(द्वेषांसि)** द्वेषयुक्तानि कर्माणि **(सनुतः)** नैरन्तर्ये **(युयोत)** गृह्णीत वा पृथक्कुरुत **(अभिक्षत्तारः)** आभिमुख्ये योगस्य कर्त्तारः **(अभि)** **(च)** **(क्षमध्वम्)** **(अद्य)** इदानीम्। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(च)** **(नः)** अस्मान् **(मृळयत)** सुखयत **(अपरम्)** जीवसमूहम् **(च)**॥२॥

अन्वयः-हे देवा! यूयं या प्रमतिस्तां यूयमोजश्च समुतर्युयोत यूयं द्वेषांसि सनुतर्युयोताऽद्य नोऽपरञ्च मृळयताऽभिक्षत्तारो यूयं नोऽपराधं चाभिक्षमध्वम्॥२॥

भावार्थः-ये विद्वांसो द्वेषं विहाय सततं बुद्धिमुन्नयन्त्यन्येषामपराधं क्षमन्ते सर्वान् सुखयन्ति च तेऽत्र सत्कर्त्तव्या भवन्ति॥२॥

पदार्थः-हे **(देवाः)** विद्वानो! **(यूयम्)** तुम जो **(प्रमतिः)** उत्तम बुद्धि है उसको **(च)** और **(यूयम्)** तुम **(ओजः)** पराक्रम को **(सनुतः)** निरन्तर **(युयोत)** ग्रहण करो। **(यूयम्)** तुम **(द्वेषांसि)** द्वेषयुक्त कर्मों को निरन्तर पृथक् करो **(अद्य)** इस समय **(नः)** हमको **(च)** और **(अपरम्)** जीवसमूह को **(मृळयत)** सुखी करो। **(अभिक्षत्तारः)** सम्मुख योग करनेवाले तुम लोग हमारे अपराध को **(अभि, क्षमध्वम्)** सब प्रकार क्षमा करो॥२॥

भावार्थः-जो विद्वान् लोग द्वेष को छोड़ के निरन्तर बुद्धि की उन्नति करते, दूसरे के अपराधों को क्षमा करते और सबको सुखी करते हैं, वे इस जगत् में सत्कार के योग्य होते हैं॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

किमू नु वः कृणवामापरेण किं सनेन वसव आप्येन।

यूयं नो मित्रावरुणादिते च स्वस्तिमिन्द्रामरुतो दधात॥३॥

किम्। ऊम् इति। नु। वः। कृणवाम। अपरेण। किम्। सनेन। वसवः। आप्येन। यूयम्। नः। मित्रावरुणा। अदिते। च। स्वस्तिम्। इन्द्रामरुतः। दधात॥३॥

पदार्थः-(**किम्**) (उ) (**नु**) (**वः**) युष्माकम् (**कृणवाम**) कुर्याम (**अपरेण**) अन्येन (**किम्**) (**सनेन**) विभक्तेन (**वसवः**) पृथिव्यादय इव विद्यानिवासाः (**आप्येन**) व्याप्येन वस्तुना (**यूयम्**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**मित्रावरुणा**) प्राणाऽपानाविव प्रियकारकावध्यापकोपदेशकौ (**अदिते**) विदुषि मातः (**स्वस्तिम्**) (**इन्द्रामरुतः**) इन्द्रश्च विद्युन्मरुतश्च वायवस्तान् (**दधात**) धरत॥३॥

अन्वयः-हे वसवो! वयं वः किमु कृणवामापरेण सनेनाप्येन किन्नु कुर्याम। हे मित्रावरुणाऽदिते च! यूयं नः स्वस्तिमिन्द्रामरुतो दधात॥३॥

भावार्थः-ये प्रथमकल्पा विद्वांसः स्युस्तान् राजानः पृच्छेयुर्युष्माकं कां सेवां वयं कुर्य्याम किं किं युष्मभ्यं दद्याम येन यूयं विद्यासुशिक्षाधर्मोन्नतिं कुर्य्यात॥३॥

पदार्थः-हे (**वसवः**) पृथिव्यादि के तुल्य विद्या को निवास देनेवाले विद्वानो! हम लोग (**वः**) आपके (**किम्, उ**) किस कार्य को (**कृणवाम**) करें। (**अपरेण**) अन्य (**सनेन**) विभाग को प्राप्त (**आप्येन**) व्याप्य वस्तु से (**किम्**) क्या ही करें। हे (**मित्रावरुणा**) प्राण-अपान के तुल्य प्रियकारी अध्यापक और उपदेशक (**च**) और (**अदिते**) विदुषि माता! (**यूयम्**) तुम लोग (**नः**) हमारे लिये (**स्वस्तिम्**) कल्याण को तथा (**इन्द्रामरुतः**) बिजुली और वायुओं को (**दधात**) धारण करो॥३॥

भावार्थः-जो प्रथम कक्षा के विद्वान् हों उनको राजा लोग पूछें कि आपकी क्या सेवा हम करें, क्या क्या तुमको देवें, जिससे तुम लोग विद्या, सुशिक्षा और धर्म की उन्नति करो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

हये देवा यूयमिदापयः स्थ ते मृळत नाधमानाय मह्यम्।
मा वो रथो मध्यमवाळृते भून्मा युष्मावत्स्वापिषु श्रमिष्म॥४॥

हये। देवाः। यूयम्। इत्। आपयः। स्थ। ते। मृळत। नाधमानाय। मह्यम्। मा। वः। रथः। मध्यमऽवाट्। ऋते। भूत्। मा। युष्मावत्ऽसु। आपिषु। श्रमिष्म॥४॥

पदार्थः-(हये) सम्बोधने **(देवाः)** विद्वांसः **(यूयम्)** **(इत्)** एव **(आपयः)** सकलशुभगुणव्यापिनः **(स्थ)** भवत **(ते)** **(मृळत)** सुखयत **(नाधमानाय)** याचमानाय **(मह्यम्)** **(मा)** **(वः)** युष्माकम् **(रथः)** रमणीयं यानम्। **(मध्यमवाट्)** यो मध्ये पृथिव्यां भवान् पदार्थान् वहति सः **(ऋते)** उदकमये समुद्रादौ। **ऋतमित्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२)। **(भूत्)** भवेत् **(मा)** **(युष्मावत्सु)** युष्मत्सदृशेषु **(आपिषु)** विद्यादिगुणैर्व्याप्तेषु **(श्रमिष्म)** श्रमं कुर्याम। अत्राडभावः॥४॥

अन्वयः-हये देवाः! ये यूयमिदापयः स्थ ते नाधमाना मह्यं मृळत यो वो मध्यमवाड् रथ ऋते जले गमयति स नष्टो मा भूदीदृशेषु युष्मावत्स्वापिषु विद्याप्राप्तये वयं श्रमिष्म अयं च श्रमो नष्टो मा भूत्॥४॥

भावार्थः-सर्वैर्मनुष्यैर्विद्याः प्राप्य सर्वे सुखयितव्याः। यथा दृढानि यानानि स्युस्तथा प्रयतितव्यं सदैव विद्वत्सु प्रीतिं विधाय विद्योन्नतिः कार्या॥४॥

पदार्थः-(हये) हे **(देवाः)** विद्वानो! जो **(यूयम्)** तुम लोग **(इत्)** ही **(आपयः)** सकलशुभगुणव्यापि **(स्थ)** होओ **(ते)** वे **(नाधमानाय)** मांगते हुए **(मह्यम्)** मेरे लिये **(मृळत)** सुखी करो, जो **(वः)** तुम्हारा **(मध्यमवाट्)** पृथिवी के पदार्थों को इधर-उधर पहुँचानेवाला **(रथः)** विमान आदि यान **(ऋते)** जलरूप समुद्रादि में चलाता है, वह नष्ट **(मा, भूत्)** न हो। ऐसे **(युष्मावत्सु)** तुम्हारे सदृश **(आपिषु)** विद्यादि गुणों से व्याप्त सज्जनों में विद्या प्राप्ति के अर्थ हम लोग **(श्रमिष्म)** परिश्रम करें। यह हमारा श्रम नष्ट **(मा)** न होवे॥४॥

भावार्थः-सब मनुष्यों को योग्य है कि विद्याओं को प्राप्त हो के सबको सुखी करें और जैसे दृढ़ पुष्ट यान बनें, वैसा प्रयत्न करें। सदा विद्वानों में प्रीति रख के विद्या की उन्नति किया करें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

प्र व एको मिमय भूर्यागो यन्मा पितेव कितवं शशास।
आरे पाशा आरे अघानि देवा मा माधि पुत्रे विमिव ग्रभीष्ट॥५॥

प्र। वः। एकः। मिमय। भूरि। आगः। यत्। मा। पिताऽइव। कितवम्। शशास। आरे। पाशाः। आरे। अघानि। देवाः। मा। मा। अधि। पुत्रे। विम्ऽइव। ग्रभीष्ट॥५॥

पदार्थः-(**प्र**) (**वः**) युष्माकम् (**एकः**) असहायः (**मिमय**) प्रक्षिपेयम् (**भूरि**) बहु (**आगः**) अपराधम् (**यत्**) (**मा**) माम् (**पितेव**) पितृवत् (**कितवम्**) द्यूतकारिणम् (**शशास**) शाधि (**आरे**) दूरे (**पाशाः**) बन्धनानि (**आरे**) दूरे (**अघानि**) पापानि (**देवाः**) विद्वांसः (**मा**) निषेधे (**मा**) माम् (**अधि**) उपरि (**पुत्रे**) (**विमिव**) पक्षिणमिव (**ग्रभीष्ट**) गृह्णीयाः॥५॥

अन्वयः-हे देवा विद्वांसो! वो युष्माकं सङ्गचेकोऽहं यद्भूर्यागोऽस्ति तदारे प्र मिमय पितेव कितवं मा शशास यानि पाशा अघानि च तान्यारे विमिव मिमय। इमानि पुत्रे मा माधि ग्रभीष्ट॥५॥

भावार्थः-सर्वैराशंसितव्यं भो विद्वज्जना! युष्माकं सङ्गेन वयं पापानि त्यक्त्वा धर्माचारिणः स्याम। भवन्तो जनकवदस्मान् शिक्षध्वम्। यतो वयं दुष्टाचाराद् दूरे वसेम॥५॥

पदार्थः–हे (**देवाः**) विद्वानो! (**वः**) तुम्हारा सङ्गी (**एकः**) एक असहाय मैं (**यत्**) जो (**भूरि**) बहुत (**आगः**) अपराध है, उसको (**आरे**) दूर (**प्र, मिमय**) फेकूं और (**पितेव**) पिता के तुल्य (**कितवम्**) जुआ खेलनेवाले (**मा**) मुझको (**शशास**) शिक्षा कीजिये। जो (**पाशाः**) बन्धन और (**अघानि**) पाप हैं उनको (**आरे**) दूर (**विमिव**) पक्षी के तुल्य फेकूं। इन सबको (**पुत्रे**) पुत्र के निमित्त (**मा**) मुझको (**मा**) मत (**अधि, ग्रभीष्ट**) अधिक कर ग्रहण करो॥५॥

भावार्थः-सबको प्रशंसा करनी चाहिये कि हे विद्वान् जनो! तुम्हारे सङ्ग से हम लोग पापों को छोड़ धर्म का आचरण करनेवाले हों। आप लोग पिता के तुल्य हमको शिक्षा देओ जिससे हम दुष्ट आचरण से दूर रहें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अर्वाञ्चो अद्या भवता यजत्रा आ वो हार्दि भयमानो व्ययेयम्।
त्राध्वं नो देवा निजुरो वृकस्य त्राध्वं कर्तादवपदो यजत्राः॥६॥

अर्वाञ्चः। अद्य। भवत। यजत्राः। आ। वः। हार्दि। भयमानः। व्ययेयम्। त्राध्वम्। नः। देवाः। निऽजुरः। वृकस्य। त्राध्वम्। कर्तात्। अवऽपदः। यजत्राः॥६॥

पदार्थः-(**अर्वाञ्चः**) येऽर्वागञ्चन्ति विद्यां प्राप्नुवन्ति ते (**अद्य**) अस्मिन् दिने। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**भवत**) अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**यजत्राः**) सुसङ्गतेः कर्त्तारः (**आ**) (**वः**) युष्माकम् (**हार्दि**) हार्दमस्मिन्नस्ति तत् (**भयमानः**) भयं प्राप्तः (**व्ययेयम्**) व्ययं कुर्य्याम् (**त्राध्वम्**) रक्षत (**नः**) अस्मान् (**देवाः**) विद्यासुशिक्षादानरक्षकाः (**निजुरः**) नितरां हिंसकात् (**वृकस्य**) वृक

इव वर्त्तमानस्य चोरस्य। **वृक इति स्तेननामसु पठितम्।** (निघं०३.२४)। **(त्राध्वम्)** पालयत **(कर्त्तात्)** छेदकात् **(अवपदः)** आपत्कालात् **(यजत्राः)** विद्वत्पूजकाः॥६॥

अन्वयः-हे अर्वाञ्चो यजत्रा देवा! यूयमद्य नस्त्राध्वम्। यद्वो हार्दि तद्वयमा गृह्णीयाम। अस्मभ्यं विद्याप्रदातारो भवत निजुरः कर्त्तादवपदस्त्राध्वम्। हे यजत्रा! वृकस्येव वर्त्तमानस्य सकाशाद् रक्षत यतो भयमानोऽहं व्यर्थमायुर्न व्ययेयम्॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। विदुषामिदमेव कृत्यमस्ति यदज्ञानाविद्यादिदोषेभ्यः पृथग्रक्ष्य सर्वस्माद् दुःखात् पृथक्कृत्य दीर्घायुषो धर्मात्मनो जनान् कुर्युरिति॥६॥

पदार्थः-हे **(अर्वाञ्चः)** आत्मज्ञान सम्बन्धी आदि विद्या को प्राप्त होनेवाले **(यजत्राः)** अच्छी सङ्गति करनेहारे **(देवाः)** विद्या और अच्छी शिक्षा के रक्षक विद्वान् लोगो! तुम **(अद्य)** आज दिन **(नः)** हम लोगों की **(त्राध्वम्)** रक्षा करो। जो **(वः)** तुम्हारा **(हार्दि)** जिसका कार्य्य में मन लगता उसको हम लोग **(आ)** अच्छे प्रकार ग्रहण करें, हमारे लिये आप विद्या देनेवाले **(भवत)** होओ **(निजुरः)** निरन्तर हिंसक **(कर्त्तात्)** छेदक **(अवपदः)** आपत्काल से **(त्राध्वम्)** रक्षा करो। हे **(यजत्राः)** विद्वानों के पूजक लोगो! **(वृकस्य)** भेड़िया के तुल्य वर्त्तमान चोर के संसर्ग से रक्षा करो जिससे **(भयमानः)** भय को प्राप्त मैं व्यर्थ आयु को न **(व्ययेयम्)** नष्ट करूं॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। विद्वानों का यही कर्त्तव्य है कि जो अज्ञान, अविद्यादि दोषों से पृथक् रख के सब दुःख से पृथक् कर मनुष्यों को बड़ी अवस्थावाले धर्मात्मा करें॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

माहं मघोनो वरुण प्रियस्य भूरिदाव्न आ विदं शूनमापेः।
मा रायो राजन्त्सुयमादव स्थां बृहद्वदेम विदथे सुवीराः॥७॥११॥

मा। अहम्। मघोनः। वरुण। प्रियस्य। भूरिऽदाव्नः। आ। विदम्। शूनम्। आपेः। मा। रायः। राजन्। सुऽयमात्। अव। स्थाम्। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीराः॥७॥

पदार्थः-**(मा)** निषेधे **(अहम्)** **(मघोनः)** प्रशंसितधनवतः **(वरुण)** श्रेष्ठ **(प्रियस्य)** कमनीयस्य **(भूरिदाव्नः)** बहुदातुः **(आ)** **(विदम्)** प्राप्नुयाम् **(शूनम्)** सुखम्। अत्राऽन्येषामपीति दीर्घः। **शुनमिति सुखनामसु पठितम्।** (निघं०३.६)। **(आपेः)** प्राप्नुवतः **(मा)** **(रायः)** धनात्

(राजन्) (सुयमात्) सुष्ठु यमसाधकात् **(अव) (स्थाम्)** तिष्ठेयम् **(बृहत्) (वदेम) (विदथे) (सुवीराः)**॥७॥

अन्वयः-हे वरुण विद्वन्! यथाऽहं प्रियस्य भूरिदाव्न आपेर्मघोनश्शूनमाविदं येन दुःखं माऽऽप्नुयाम्। हे राजन्! यथाऽहं सुयमाद्रायोऽवस्थां यस्माद् दारिद्र्यं माप्नुयाम् तथा त्वं भव। यतो मिलित्वा सुवीरा वयं विदथे बृहद्वदेमेति॥७॥

भावार्थः-विद्वद्भिः सभापत्यादिराजपुरुषैश्च तानि धर्मकार्याणि कर्त्तव्यानि यैर्दुःखदारिद्र्ये न प्राप्नुताम्। परस्परं मिलित्वा च सुवीराः प्रजाः कर्त्तव्याः॥७॥

अस्मिन् सूक्ते विद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेदितव्यम्॥

इत्येकोनत्रिंशत्तमं सूक्तमेकादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(वरुण)** श्रेष्ठ विद्वान्! जैसे **(अहम्)** मैं **(प्रियस्य)** कामना के योग्य **(भूरिदाव्नः)** बहुत दान के दाता **(आपेः)** प्राप्त होते हुए **(मघोनः)** प्रशंसित धनवाले पुरुष के **(शूनम्)** सुख को **(आ, विदम्)** अच्छे प्रकार प्राप्त होऊं, जिससे दुःख को **(मा)** न प्राप्त हों। हे **(राजन्)** राजन् सभापते! जैसे मैं **(सुयमात्)** सुन्दर यम-नियम के साधक **(रायः)** धन से **(अव, स्थाम्)** अवस्थित होऊं, जिससे दरिद्रता को **(मा)** न प्राप्त होऊं, जिससे मिल कर **(सुवीराः)** सुन्दर वीर पुरुषोंवाले हमलोग **(विदथे)** युद्धादि में **(बृहत्)** बहुत बलपूर्वक **(वदेम)** कहें॥७॥

भावार्थः-विद्वान् और सभापति आदि राजपुरुषों को योग्य है कि उन धर्मसम्बन्धी कार्यों को करें जिनसे दुःख और दरिद्रता प्राप्त न हों और आपस में मिल के युद्धादि के लिये सुन्दर वीरोंवाली प्रजाओं को उत्पन्न करें॥७॥

इस सूक्त में विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह उनतीसवां सूक्त और ग्यारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

ऋतमित्येकादशर्चस्य त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। १-५, ७, ८, १० इन्द्रः। ६ इन्द्रासोमौ। ९ बृहस्पतिः। ११ मरुतो देवताः। १, ३, भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, ८ निचृत् त्रिष्टुप्। ४-७, ९ त्रिष्टुप्। १० विराट् त्रिष्टुप्। ११ भुरिक् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ वायुसूर्यविषयमाह॥

अब तीसवें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में वायु और सूर्य का विषय कहते हैं॥

ऋतं देवाय कृण्वते सवित्र इन्द्रायाहिघ्ने न रमन्त आपः।

अहरहर्यात्यक्तुरपां कियात्या प्रथमः सर्ग आसाम्॥ १॥

ऋतम्। देवाय। कृण्वते। सवित्रे। इन्द्राय। अहिऽघ्ने। न। रमन्ते। आपः। अहःऽअहः। याति। अक्तुः। अपाम्। कियति। आ। प्रथमः। सर्गः। आसाम्॥ १॥

पदार्थः-(**ऋतम्**) उदकम् (**देवाय**) दिव्यगुणाय (**कृण्वते**) कुर्वते (**सवित्रे**) सकलरसोत्पादकाय सूर्याय (**इन्द्राय**) परमैश्वर्यहेतवे (**अहिघ्ने**) योऽहिं मेघं हन्ति तस्मै (**न**) निषेधे (**रमन्ते**) (**आपः**) जलानि (**अहरहः**) प्रतिदिनम् (**याति**) प्राप्नोति (**अक्तुः**) व्यक्तीकर्त्तुः (**अपाम्**) जलानाम् (**कियति**)। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**आ**) (**प्रथमः**) (**सर्गः**) उत्पत्तिः (**आसाम्**) अपाम्॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! युष्माभिर्ऋतं कृण्वते सवित्रेऽहिघ्न इन्द्राय देवाय या अहरहरापो न रमन्त आसामपां प्रथमः सर्गोऽक्तुःकियत्यायाति तं यूयं विजानीत॥१॥

भावार्थः-यथाऽन्तरिक्षस्थे वायौ जलमस्ति तथा सूर्ये न तिष्ठति सूर्यादेव वृष्टिद्वारा जलप्राकट्यं जायतेऽयमेवोपर्याकर्षति वर्षयति च जलस्यादिमा सृष्टिरग्नेरेव सकाशाज्जातेति वेदितव्यम्॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! तुमको (**ऋतम्**) जल को उत्पन्न (**कृण्वते**) करते हुए (**सवित्रे**) समस्त रसों के उत्पादक (**अहिघ्ने**) मेघ को काटने सूक्ष्म कर गिरानेहारे (**इन्द्राय**) उत्तम ऐश्वर्य के हेतु (**देवाय**) उत्तम गुणयुक्त सूर्य के लिये जो (**अहरहः**) प्रतिदिन (**आपः**) जल (**न, रमन्ते**) नहीं रमण करते अर्थात् सूर्य के आश्रय नहीं ठहरते (**आसाम्**) इन (**अपाम्**) जलों की (**प्रथमः**) पहिली (**सर्गः**) उत्पत्ति (**अक्तुः**) प्रकटकर्त्ता सूर्य के सम्बन्ध से (**कियति**) कितने ही अवकाश में (**आ, याति**) अच्छे प्रकार प्राप्त होती है, उसको तुम जानो॥१॥

भावार्थः-जैसे अन्तरिक्षस्थ वायु में जल ठहरता है, वैसे सूर्य में नहीं ठहरता। सूर्यमण्डल से ही वर्षा द्वारा जल की प्रकटता होती और यही सूर्य जल को ऊपर खींचता और वर्षाता है। जल की प्रथम सृष्टि अग्नि से ही होती है, ऐसा जानना चाहिये॥१॥

पुनः सूर्य्यमण्डलकृत्यविषयमाह॥

फिर सूर्यमण्डल के कृत्य विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यो वृत्राय सिनमत्राभरिष्यत् प्र तं जनित्री विदुष उवाच।
पथो रदन्तीरनु जोषमस्मै दिवेदिवे धुनयो यन्त्यर्थम्॥ २॥

यः। वृत्राय। सिनम्। अत्र। अभरिष्यत्। प्र। तम्। जनित्री। विदुषे। उवाच। पथः। रदन्तीः। अनु। जोषम्। अस्मै। दिवेऽदिवे। धुनयः। यन्ति। अर्थम्॥ २॥

पदार्थः-(**यः**) सूर्य्यः (**वृत्राय**) आवरकाय मेघाय (**सिनम्**) बन्धनम् (**अत्र**) (**अभरिष्यत्**) भरति (**प्र**) (**तम्**) (**जनित्री**) माता (**विदुषे**) विद्यावते (**उवाच**) वक्ति (**पथः**) मार्गात् (**रदन्तीः**) भूमिं विलिखन्त्यः (**अनु**) (**जोषम्**) प्रीतिम् (**अस्मै**) (**दिवेदिवे**) प्रतिदिनम् (**धुनयः**) रश्मिगतयः (**यन्ति**) (**अर्थम्**) द्रव्यम्॥ २॥

अन्वयः-यः सूर्य्योऽत्र वृत्राय सिनमभरिष्यत्तं जनित्री विदुषेऽपत्याय प्रोवाच। अत्र रदन्तीर्धुनयो दिवेदिवेऽर्थं यन्ति पथोऽनु जोषमुत्पादयन्ति तासां कृत्यं विदुषे पितापि प्रोवाच॥ २॥

भावार्थः-यथा सूर्य्यो मेघस्य बन्धनकर्त्ताऽस्ति तथा भूम्यादेर्लोकानामपि यथा प्रत्यहं सूर्य्यो रसानाकृष्य नियतसमये वर्षयति तथैवास्य किरणाः प्रति द्रव्यं प्राप्नुवन्ति॥ २॥

पदार्थः-(**यः**) जो सूर्य्य (**अत्र**) इस जगत् में (**वृत्राय**) घाम आदि के आवरणकर्त्ता मेघ के लिये (**सिनम्**) बन्धन को (**अभरिष्यत्**) धारण करता (**तम्**) उसको (**जनित्री**) माता (**विदुषे**) विद्यावान् सन्तान के लिये (**प्र, उवाच**) कहती उपदेश करती है, इस सूर्य्यविषयक (**रदन्तीः**) भूमियों को प्राप्त होती हुई (**धुनयः**) किरणों की चालें (**दिवेदिवे**) नित्यप्रति (**अर्थम्**) पदार्थमात्र को (**यन्ति**) प्राप्त होतीं (**पथः**) मार्ग से (**अनु, जोषम्**) अनुकूल प्रीति को उत्पन्न कराती हैं, उनके कृत्य को विद्वान् पुत्र के लिये पिता भी उपदेश करें॥ २॥

भावार्थः-जैसे सूर्य्य मेघ का बन्धनकर्त्ता है, वैसे ही पृथिवी आदि लोकों का भी है। जैसे सूर्य्यमण्डल प्रतिदिन रसों को खींच कर नियत समय पर वर्षाता है, वैसे इस सूर्य्य के किरण भी प्रत्येक द्रव्य को प्राप्त होते हैं॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ऊर्ध्वो ह्यस्थादध्यन्तरिक्षेऽधा वृत्राय प्र वधं जभार।

मिहं वसा॑न उप हीमदु॑द्रोत्तिग्मायु॑धो अजय॒च्छत्रु॒मिन्द्रः॥३॥

ऊ॒र्ध्वः। हि। अस्था॑त्। अधि॑। अ॒न्तरि॑क्षे। अध॑। वृ॒त्राय॑। प्र। व॒धम्। ज॒भा॒र॒। मिह॑म्। वसा॑नः। उप॑। हि। ई॒म्। अदु॑द्रोत्। ति॒ग्मऽआ॑युधः। अ॒ज॒य॒त्। शत्रु॑म्। इन्द्रः॥३॥

पदार्थः-(**ऊर्ध्वः**) उपरि स्थितः (**हि**) किल (**अस्थात्**) तिष्ठति (**अधि**) (**अन्तरिक्षे**) आकाशे (**अध**) अथ (**वृत्राय**) वृत्रस्य। अत्र षष्ठ्यर्थे चतुर्थी। (**प्र**) (**वधम्**) ताडनम् (**जभार**) हरति (**मिहम्**) वृष्टिम् (**वसानः**) आच्छादयन् (**उप**) (**हि**) खलु (**ईम्**) सर्वतः (**अदुद्रोत्**) द्रवयति (**तिग्मायुधः**) तिग्मानि तीव्राण्यायुधानीव किरणा यस्य सः (**अजयत्**) जयति (**शत्रुम्**) वैरिणम् (**इन्द्रः**) मेघस्य छेत्ता॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! तिग्मायुध ऊर्ध्व इन्द्रो ह्यन्तरिक्षेऽध्यस्थात्। अध वृत्राय हि वधं प्र जभार मिहं वसान ईमुपादुद्रोच्छत्रुमजयत्तं बुध्यध्वम्॥३॥

भावार्थः-सूर्य्योऽतिदूरे स्थितो भूमिं धरति जलमाकर्षति यथाऽयं मेघं हत्वा भूमौ निपातयति तथैव राजपुरुषैः शत्रवो निपातनीयाः॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**तिग्मायुधः**) तीक्ष्ण आयुधों के तुल्य किरणोंवाला (**ऊर्ध्वः**) ऊपर स्थित (**इन्द्रः**) मेघ का हन्ता सूर्य्य (**हि**) ही (**अन्तरिक्षे**) आकाश में (**अध्यस्थात्**) अधिष्ठित है। (**अध**) इसके अनन्तर (**वृत्राय**) मेघ के (**हि**) ही (**वधम्**) ताड़ना को (**प्र, जभार**) प्रहार करता है। (**मिहम्**) वृष्टि को (**वसानः**) आच्छादन करता हुआ (**ईम्**) सब ओर से (**उप, अदुद्रोत्**) समीप से द्रवित करता पिघलाता है, इस प्रकार अपने (**शत्रुम्**) वैरी मेघ को (**अजयत्**) जीतता है, उसका बोध करो॥३॥

भावार्थः-सूर्य अति दूरस्थ हो भूमि को धारण करता, जल को खींचता है। जैसे यह मेघ को छिन्न-भिन्न कर भूमि पर गिराता है, वैसे ही राजपुरुषों को शत्रु गिराने चाहिये॥३॥

अथ राजपुरुषकर्त्तव्यविषयमाह॥

अब राजपुरुषों के कर्त्तव्य विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

बृह॑स्पते॒ तपु॒षाश्ने॑व विध्य॒ वृक॑द्वरसो॒ असु॑रस्य वी॒रान्।
यथा॑ ज॒घन्थ॑ धृष॒ता पु॒रा चि॑दे॒वा ज॑हि॒ शत्रु॑म॒स्माक॑मिन्द्र॥४॥

बृह॑स्पते। तपु॑षा। अश्ना॑ऽइव। वि॒ध्य॒। वृक॑ऽद्वरसः। असु॑रस्य। वी॒रान्। यथा॑। ज॒घन्थ॑। धृ॒ष॒ता। पु॒रा। चि॒त्। ए॒व। ज॒हि॒। शत्रु॑म्। अ॒स्माक॑म्। इ॒न्द्र॒॥४॥

पदार्थः-(बृहस्पते) बृहतां पालक **(तपुषा)** तापेन **(अश्नेव)** योऽश्नाति भुङ्क्ते तद्वत् **(विध्य)** ताडय **(वृकद्वरसः)** वृकस्य मेघस्य द्वाराणि **(असुरस्य)** विदुषः शत्रोः **(वीरान्)** **(यथा)** **(जघन्थ)** हन्ति **(धृषता)** प्रागल्भ्येन **(पुरा)** **(चित्)** **(एव)** अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(जहि)** **(शत्रुम्)** **(अस्माकम्)** **(इन्द्र)** विदारयितः॥४॥

अन्वयः-हे बृहस्पत इन्द्र! यथा सूर्य्यो वृकद्वरसोऽसुरस्य वीरानश्नेव तपुषा विध्यति तथा दुष्टाँस्त्वं विध्य धृषता पुरैवास्माकं शत्रुं जहि चिदपि दोषाञ्जघन्थ॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारौ। ये विद्युद्वद्बलवन्तो भूत्वा शत्रून् घ्नन्ति ते सूर्य्यवद्राज्ये प्रकाशमाना भवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे **(बृहस्पते)** बड़ों के रक्षक **(इन्द्र)** दुष्टों को विदीर्ण करनेहारे राजपुरुष! **(यथा)** जैसे सूर्य्य **(वृकद्वरसः)** मेघ के अग्रभागों को **(असुरस्य)** विद्वान् के शत्रु के **(वीरान्)** वीरों को **(अश्नेव)** अच्छे भोजन करनेहारे वीर के तुल्य **(तपुषा)** अपने ताप से बेधता है, वैसे आप दुष्टों को **(विध्य)** ताड़ना देओ। **(धृषता)** प्रगल्भता के साथ **(पुरा)** पहिले **(एव)** ही **(अस्माकम्)** हमारे **(शत्रुम्)** शत्रु को **(जहि)** मार **(चित्)** और दोषों को **(जघन्थ)** नष्ट कर॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में दो उपमालङ्कार हैं। जो लोग बिजुली के तुल्य वेग बलयुक्त होकर शत्रुओं को मारते हैं, वे सूर्य्य के तुल्य राज्य में प्रकाशमान होते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अव क्षिप दिवो अश्मानमुच्चा येन शत्रुं मन्दसानो निजूर्वाः।
तोकस्य सातौ तनयस्य भूरेरस्माँ अर्धं कृणुतादिन्द्र गोनाम्॥५॥१२॥

अव। क्षिप। दिवः। अश्मानम्। उच्चा। येन। शत्रुम्। मन्दसानः। निऽजूर्वाः। तोकस्य। सातौ। तनयस्य। भूरेः। अस्मान्। अर्धम्। कृणुतात्। इन्द्र। गोनाम्॥५॥

पदार्थः-(अव) **(क्षिप)** दूरे गमय **(दिवः)** दिव्यादाकाशात् **(अश्मानम्)** योऽश्नुते संहन्ति तं मेघम् **(उच्चा)** ऊर्ध्वं स्थितानि **(येन)** बलेन **(शत्रुम्)** **(मन्दसानः)** प्रशस्यमानः **(निजूर्वाः)** नितरां हिंस्याः **(तोकस्य)** ह्रस्वस्याऽपत्यस्य **(सातौ)** संसेवने **(तनयस्य)** यूनः पुत्रस्य **(भूरेः)** बहुविधस्य **(अस्मान्)** **(अर्द्धम्)** ऋद्धिम् **(कृणुतात्)** कुरु **(इन्द्र)** परमैश्वर्य्यप्रापक **(गोनाम्)** पृथिवीधेनूनाम्॥५॥

अन्वयः-हे इन्द्र सभापते राजन्! मन्दसानस्त्वं येन भूरेस्तोकस्य तनयस्य सातावस्मान् गोनामर्द्धं कृणुतात् तेन यथा सूर्य्य उच्चा घनानि दिवः प्राप्तमश्मानं भूमौ प्रक्षिपति तथा शत्रुमव क्षिप दुष्टान् निजूर्वाः॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। राजपुरुषैर्यथा स्वसन्तानानां दुःखानि दूरीकृत्य संपाल्य वर्द्धयन्ति तथैव प्रजाकण्टकान् निवार्य्य शिष्टान् संपाल्य वर्द्धनीयाः॥५॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** परमैश्वर्य्य के देनेवाले सभापति राजन्! **(मन्दसानः)** प्रशंसा को प्राप्त हुए आप **(येन)** जिस बल से **(भूरेः)** बहुत प्रकार के **(तोकस्य)** छोटे सन्तान **(तनयस्य)** युवा पुत्र के **(सातौ)** सम्यक् सेवन में **(अस्मान्)** हमको **(गोनाम्)** पृथिवी और गौओं की **(अर्द्धम्)** संपन्नता समृद्धि को **(कृणुतात्)** कीजिये उस बल से जैसे सूर्य **(उच्चा)** ऊंचे स्थित बादलों और **(दिवः)** दिव्य आकाश से प्राप्त **(अश्मानम्)** मेघ को भूमि पर फेंकता है, वैसे **(शत्रुम्)** शत्रु को **(अव, क्षिप)** दूर पहुंचा और दुष्टों को **(निजूर्वाः)** निरन्तर मारिये, नष्ट कीजिये॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। राजपुरुषों को चाहिये कि जैसे अपने सन्तानों के दुःख दूर कर सम्यक् रक्षा कर बढ़ाते हैं, वैसे ही प्रजा के कण्टकों को निवृत्त कर शिष्टों का सम्यक् पालन कर बढ़ावें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

प्र हि क्रतुं वृहथो यं वनुथो रध्रस्य स्थो यजमानस्य चोदौ।
इन्द्रासोमा युवमस्माँ अविष्टमस्मिन् भयस्थे कृणुतमु लोकम्॥६॥

प्र। हि। क्रतुम्। वृहथः। यम्। वनुथः। रध्रस्य। स्थः। यजमानस्य। चोदौ। इन्द्रासोमा। युवम्। अस्मान्। अविष्टम्। अस्मिन्। भयऽस्थे। कृणुतम्। ऊम् इति। लोकम्॥६॥

पदार्थः-**(प्र)** **(हि)** खलु **(क्रतुम्)** प्रज्ञाम् **(बृहथः)** वर्द्धयेथाम् **(यम्)** **(वनुथः)** याचेथाम् **(रध्रस्य)** संराध्नुवतः **(स्थः)** भवथः **(यजमानस्य)** सुखप्रदातुः **(चोदौ)** प्रेरकौ **(इन्द्रासोमा)** सेनापत्यैश्वर्य्यवन्तौ **(युवम्)** युवाम् **(अस्मान्)** **(अविष्टम्)** व्याप्नुतम् **(अस्मिन्)** **(भयस्थे)** भये तिष्ठतीति तस्मिन् **(कृणुतम्)** **(उ)** **(लोकम्)** द्रष्टुं योग्यम्॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्रासोमा! यौ युवं रध्रस्य यजमानस्य हि चोदौ यं प्र बृहथो यां क्रतुं वनुथस्तौ सुखिनौ स्थः। अस्मिन् भयस्थे अस्मानविष्टमुलोकं कृणुतम्॥६॥

भावार्थः-राजपुरुषा बहुबलं धनाढ्याः पुष्कलमैश्वर्य्यं च प्राप्य कस्मैचिद्भयं न दद्युः, किन्तु सदैव दरिद्रनिर्बलान् सुखे निवासयेयुः॥६॥

पदार्थः-हे **(इन्द्रासोमा)** सेनापति और ऐश्वर्य्यवान् महाशयो! **(युवम्)** जो तुम दोनों **(रध्रस्य)** सम्यक् सिद्धि करते हुए **(यजमानस्य)** सुखदाता यजमान के **(हि)** ही **(चोदौ)** प्रेरक **(यम्)** जिसको **(प्र, बृहथः)** बढ़ाओ और जिस **(क्रतुम्)** बुद्धि को **(वनुथः)** मांगो चाहो, वे तुम दोनों सुखी **(स्थः)** होओ। **(अस्मिन्)** इस **(भयस्थे)** भय में स्थित **(अस्मान्)** हमको **(अविष्टम्)** व्याप्त होओ **(उ)** और **(लोकम्)** देखने योग्य स्थान वा देश को **(कृणुतम्)** करो॥६॥

भावार्थः-राजपुरुष बहुत बल और धनाढ्य लोग यथेष्ट ऐश्वर्य्य को पाकर किसी को भय न देवें, किन्तु सदैव दरिद्र और निर्बलों को सुख में स्थापन करें, निवास करावें॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

न मा तमन्न श्रमन्नोत तन्द्रन्न वोचाम मा सुनोतेति सोमम्।
यो मे पृणाद्यो दद्यो निबोधाद्यो मा सुन्वन्तमुप गोभिरायत्॥७॥

न। मा। तमत्। न। श्रमत्। न। उत। तन्द्रत्। न। वोचाम। मा। सुनोत। इति। सोमम्। यः। मे। पृणात्। यः। ददत्। यः। निऽबोधात्। यः। मा। सुन्वन्तम्। उप। गोभिः। आ। अयत्॥७॥

पदार्थः-**(न)** निषेधे **(मा)** माम् **(तमत्)** अभिकाङ्क्षेत **(न)** **(श्रमत्)** श्राम्याच्छ्रमं प्राप्येत्। अत्र द्वाभ्यां विकरणव्यत्ययेन शप्। **(न)** **(उत)** अपि **(तन्द्रत्)** मुह्येत् **(न)** **(वोचाम)** वदेम। अत्राडभावः। **(मा)** निषेधे **(सुनोत)** अभिषवं कुरुत **(इति)** **(सोमम्)** ओषधिरसम् **(यः)** **(मे)** मह्यम् **(पृणात्)** तर्पयेत् **(यः)** **(ददत्)** सुखं दद्यात् **(यः)** **(निबोधात्)** निश्चितं बोधयेत् **(यः)** **(मा)** माम् **(सुन्वन्तम्)** यज्ञं कुर्वन्तम् **(उप)** **(गोभिः)** इन्द्रियैः सह वर्त्तमानः **(आ)** समन्तात् **(अयत्)** प्राप्नुयात्॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो मे पृणाद्यो मा ददद्यो मा निबोधाद्यो गोभिः सुन्वन्तं मोपायत्स मया सेवनीयः। यो मा न तमन्न श्रमन्नोत तन्द्रद्भयं यमिति न वोचाम तं सोमं यूयं मा सुनोत॥७॥

भावार्थः-ये प्रजायां कञ्चिन्न क्लेशयन्ति विरुद्धं कर्म नाऽऽचरन्ति सर्वान् सुखयन्त्युपदेशे बोधयन्ति, ते सुखदानेन नित्यं तर्पणीयाः॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(मे)** मुझे **(पृणात्)** तृप्त करे **(यः)** जो मुझको **(ददत्)** सुख देवे **(यः)** जो मुझको **(निबोधात्)** निश्चित बोध करावे **(यः)** जो **(गोभिः)** इन्द्रियों से **(सुन्वन्तम्)**

यज्ञ करते हुए **(मा)** मुझको **(उप, आ, अयत्)** अच्छे प्रकार समीप प्राप्त होवे, वह मुझको सेवने योग्य है। जो **(मा)** मुझको **(न)** नहीं **(तमत्)** चाहता **(न)** नहीं **(श्रमत्)** श्रम कराता **(उत)** और **(न)** नहीं **(तन्द्रत्)** मोह करता; हम लोग जिसको **(इति)** ऐसा **(न)** नहीं **(वोचाम)** कहें उस **(सोमम्)** ओषधि रस को तुम लोग **(मा)** मत **(सुनोत)** खींचो॥७॥

भावार्थः-जो राजपुरुष प्रजा में किसीको क्लेशित नहीं करते, विरुद्ध कर्म का आचरण नहीं करते, सबको सुखी करते, उपदेश से बोध कराते, वे सुख के देने से नित्य तृप्त करने योग्य हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सरस्वति त्वमस्माँ अविड्ढि मरुत्वती धृषती जेषि शत्रून्।
त्यं चिच्छर्धन्तं तविषीयमाणमिन्द्रो हन्ति वृषभं शण्डिकानाम्॥८॥

सरस्वति। त्वम्। अस्मान्। अविड्ढि। मरुत्वती। धृषती। जेषि। शत्रून्। त्यम्। चित्। शर्धन्तम्। तविषीऽयमाणम्। इन्द्रः। हन्ति। वृषभम्। शण्डिकानाम्॥८॥

पदार्थः-**(सरस्वति)** विज्ञानवति **(त्वम्)** **(अस्मान्)** **(अविड्ढि)** प्रविश **(मरुत्वती)** प्रशस्तरूपयुक्ता **(धृषती)** प्रगल्भा **(जेषि)** जयसि। अत्र शबभावः। **(शत्रून्)** अस्माकं शातकान् सुखविच्छेदकान् **(त्यम्)** तम् **(चित्)** इव **(शर्द्धन्तम्)** बलवन्तम् **(तविषीयमाणम्)** सेनयेवाचरन्तम् **(इन्द्रः)** सेनेशः **(हन्ति)** **(वृषभम्)** बलिष्ठम् **(शण्डिकानाम्)** शत्रूणां तस्याऽवयवभूतानां मध्ये वर्त्तमानम्॥८॥

अन्वयः-हे सरस्वति मरुत्वती धृषती! भवती यथा इन्द्रस्त्यं शर्द्धन्तं तविषीयमाणं शण्डिकानां मध्ये वर्त्तमानं वृषभं हन्ति चिदस्माँस्त्वमविड्ढि शत्रून् जेषि तस्मात्सर्वैः सत्कर्त्तव्यासि॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा राजा शत्रून् हत्वा पुरुषाणां न्यायं करोति, तथैव राज्ञी दुष्टाः स्त्रियो निवार्य्य सर्वासां रक्षणं सदा कुर्य्यादर्थाद्यथा पुरुषा न्यायाऽधीशाः स्युस्तथा स्त्रियोऽपि भवन्तु॥८॥

पदार्थः-हे **(सरस्वति)** विज्ञानयुक्त विदुषी राणी **(मरुत्वती)** प्रशंसित रूपवाली **(धृषती)** प्रगल्भ उत्साहिनी! आप जैसे **(इन्द्रः)** सेनापति **(त्यम्)** उस **(शर्द्धन्तम्)** बलवान् **(तविषीयमाणम्)** सेना जैसे युद्ध करें वैसा आचरण करते हुए **(शण्डिकानाम्)** शत्रुओं की सेना के अवयव रूप योद्धाओं में वर्तमान **(वृषभम्)** अत्यन्त बली शत्रु को **(हन्ति)** मारता है **(चित्)** और वैसे

(अस्मान्) हमको **(त्वम्)** आप **(अविड्ढि)** व्याप्त वा प्राप्त हो और **(शत्रून्)** हमारे सुख को नष्ट करनेहारे शत्रुओं को **(जेषि)** जीतती हो, इससे सबको सत्कार करने योग्य हो॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे राजा शत्रुओं को मार कर पुरुषों का सत्कार व न्याय करता है, वैसे ही राणी दुष्टा स्त्रियों को निवृत्त कर सब स्त्रियों की सदा रक्षा करे अर्थात् जैसे पुरुष न्यायाधीश हों वैसे स्त्रियां भी हों॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यो नः सनुत्य उत वा जिघत्नुरभिख्याय तं तिगितेन विध्य।
बृहस्पत आयुधैर्जेषि शत्रून् द्रुहे रीषन्तं परि धेहि राजन्॥९॥

यः। नः। सनुत्यः। उत। वा। जिघत्नुः। अभिऽख्याय। तम्। तिगितेन। विध्य। बृहस्पते। आयुधैः। जेषि। शत्रून्। द्रुहे। रिषन्तम्। परि। धेहि। राजन्॥९॥

पदार्थः-**(यः)** **(नः)** अस्माकम् **(सनुत्यः)** सनुतेषु नम्रादिगुणैः सह वर्त्तमानेषु भवः **(उत)** अपि **(वा)** **(जिघत्नुः)** हन्तुमिच्छुः **(अभिख्याय)** अभितः सर्वतः संख्याय **(तम्)** **(तिगितेन)** प्राप्तेन **(विध्य)** ताडय **(बृहस्पते)** बृहतः पालक **(आयुधैः)** शस्त्रास्त्रैः **(जेषि)** जयसि **(शत्रून्)** **(द्रुहे)** द्रोग्ध्रे **(रीषन्तम्)** हिंसन्तम्। अत्राऽन्येषामपीति दीर्घः। **(परि)** सर्वतः **(धेहि)** **(राजन्)** प्रकाशमान॥९॥

अन्वयः-हे राजन्! **[भवान्]** यो नः सनुत्य उत वा जिघत्नुर्वर्त्तते तमभिख्याय तिगितेन विध्य। **[हे]** बृहस्पते! यतस्त्वमायुधैश्शत्रून् रीषन्तं च जेषि तस्मात्तान् द्रुहे परि धेहि॥९॥

भावार्थः-प्रजास्थैर्जनैः स्वदुःखानि राजपुरुषेभ्यो निवेद्य निवारणीयानि ये प्रजारक्षायां प्रीत्या प्रवर्त्तन्ते ते सुखनीया ये हिंसकाः सन्ति ते निवेद्य दण्डनीयाः॥९॥

पदार्थः-हे **(राजन्)** प्रकाशमान राजन्! आप **(यः)** जो **(नः)** हमारा **(सनुत्यः)** नम्रादि गुणयुक्त जनों में रहनेवाला **(उत, वा)** अथवा **(जिघत्नुः)** मारने की इच्छा करनेवाला है **(तम्)** उसको **(अभिख्याय)** सब ओर से प्रकट कर **(तिगितेन)** प्राप्त हुए शस्त्र से **(विध्य)** ताड़ना दीजिये। हे **(बृहस्पते)** बड़े-बड़े विषय के रक्षक! जिस कारण आप **(आयुधैः)** शस्त्र-अस्त्रों से **(शत्रून्)** शत्रुओं को **(जेषि)** जीतते हो और **(रीषन्तम्)** मारते हुए को जीतते हो, इससे उनको **(द्रुहे)** द्रोहकर्त्ता के लिये **(परि, धेहि)** सब ओर से धारण कीजिये॥९॥

भावार्थ:-प्रजापुरुषों को चाहिये कि अपने दु:खों को राजपुरुषों से निवेदन कर निवृत्त करावें। जो प्रजा की रक्षा में प्रीति से वर्त्तमान हैं, उनको सुख दिलावें और जो हिंसक हैं, उनका निवेदन कर दण्ड दिलावें॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अस्माकेभिः सत्वभिः शूर शूरैर्वीर्या कृधि यानि ते कर्त्वानि।
ज्योगभूवन्ननुधूपितासो हत्वी तेषामा भरा नो वसूनि॥१०॥

अस्माकेभिः। सत्वऽभिः। शूर। शूरैः। वीर्या। कृधि। यानि। ते। कर्त्वानि। ज्योक्। अभूवन्। अनुऽधूपितासः। हत्वी। तेषाम्। आ। भर। नः। वसूनि॥१०॥

पदार्थ:-(**अस्माकेभिः**) अस्मदीयैः। अत्र **वाच्छन्दसी**त्यणि वृद्ध्यभावः। (**सत्वभिः**) (**शूर**) दुष्टानां हिंसक (**शूरैः**) निर्भयैः (**वीर्य्या**) वीरेभ्यो हितानि धनानि (**कृधि**) कुरु (**यानि**) (**ते**) तव (**कर्त्वानि**) कर्त्तुं योग्यानि (**ज्योक्**) निरन्तरम् (**अभूवन्**) भवेयुः (**अनुधूपितासः**) अनुकूलैः सुगन्धैः संस्कृताः (**हत्वी**) (**तेषाम्**) (**आ**) (**भर**) धर। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**नः**) अस्माकम् (**वसूनि**) उत्तमानि द्रव्याणि॥१०॥

अन्वय:-हे शूर! यानि वीर्य्या ते ज्योक् कर्त्वानि सन्ति तान्यस्माकेभिः सत्वभिः शूरैस्त्वं कृधि येऽनुधूपितासोऽभूवन् तान् रक्षयित्वा दुष्टान् हत्वी तेषां नो वसूनि त्वमाभर॥१०॥

भावार्थ:-यदा राजसु युद्धं प्रवर्त्तेत तदा प्रजास्थैर्जनैस्तान् प्रत्येवं वाच्यं नैव भेत्तव्यं यावन्तो वयं स्मस्तावन्तः सर्वे भवतां सहायाः स्मः यद्येवं यूयं वयं च न कुर्य्याम तर्हि कुतो विजयः॥१०॥

पदार्थ:-हे (**शूर**) दुष्टों को मारनेहारे वीरजन! (**यानि**) जो (**वीर्य्या**) वीर पुरुषों के लिये हितकारी धन (**ते**) आपके (**ज्योक्**) निरन्तर (**कर्त्वानि**) करने योग्य हैं उनको (**अस्माकेभिः**) हमारे सम्बन्धी (**सत्वभिः**) शरीरधारी प्राणी (**शूरैः**) निर्भय पुरुषों के साथ आप (**कृधि**) कीजिये। जो (**अनुधूपितासः**) अनुकूल गन्धों से संस्कार किये हुए (**अभूवन्**) होवें उनकी रक्षा कर दुष्टों को (**हत्वी**) मार के (**तेषाम्**) उनके और (**नः**) हमारे (**वसूनि**) उत्तम द्रव्यों को आप (**आ, भर**) अच्छे प्रकार धारण कीजिये॥१०॥

भावार्थ:-जब राजाओं में युद्ध प्रवृत्त हो प्रजास्थ मनुष्य उनके प्रति ऐसे कहें कि तुम डरो नहीं। जितने हम लोग हैं, वे सब तुम्हारे सहायक हैं। जो ऐसे आप-हम आपस में एक-दूसरे के सहायक न हों, तो विजय कहाँ से होवे?॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तं वः शर्धं मारुतं सुम्नयुर्गिरोप ब्रुवे नमसा दैव्यं जनम्।
यथा रयिं सर्ववीरं नशामहा अपत्यसाचं श्रुत्यं दिवेदिवे॥ ११॥ १३॥

तम्। वः। शर्धम्। मारुतम्। सुम्नऽयुः। गिरा। उप। ब्रुवे। नमसा। दैव्यम्। जनम्। यथा। रयिम्। सर्वऽवीरम्। नशामहै। अपत्यऽसाचम्। श्रुत्यम्। दिवेऽदिवे॥ ११॥

पदार्थः-(तम्) **(वः)** युष्माकम् **(शर्द्धम्)** बलम् **(मारुतम्)** मरुतामिदम् **(सुम्नयुः)** य आत्मनः सुम्नमिच्छति **(गिरा)** वाण्या **(उप)** **(ब्रुवे)** **(नमसा)** सत्कारेण **(दैव्यम्)** देवेषु विद्वत्सु भवम् **(जनम्)** प्रसिद्धम् **(यथा)** **(रयिम्)** धनम् **(सर्ववीरम्)** सर्वे वीरा यस्मात्तम् **(नशामहै)** अदृष्टा भवेम **(अपत्यसाचम्)** उत्तमापत्यसंयुक्तम् **(श्रुत्यम्)** श्रुतिषु श्रवणेषु भवम् **(दिवेदिवे)** प्रतिदिनम्॥ ११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा सुम्नयुरहं नमसा गिरा वस्तं मारुतं शर्द्धं दिवेदिवे दैव्यं जनं प्रत्युपब्रुवे तथा यूयमस्माकं बलं सर्वान् प्रत्युपब्रूत यथा वयं श्रुत्यमपत्यसाचं सर्ववीरं रयिं प्राप्य पूर्णमायुर्भुक्त्वा नशामहै तथा यूयमपि भवत॥ ११॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा राजपुरुषाः प्रजागुणान् स्वकीयान् प्रति ब्रुयुस्तथा प्रजाजना राजपुरुषगुणान् स्वकीयान् प्रत्युपदिशेयुरेवं परस्परेषां गुणज्ञानपुरःसरं प्रीतिं प्राप्य नित्यमन्योन्यमानन्दयेयुरिति॥ ११॥

अत्र स्त्रीपुरुषराजप्रजागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इति त्रिंशत्तमं सूक्तं त्रयोदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यथा)** जैसे **(सुम्नयुः)** अपने को धन की इच्छा करनेवाला मैं **(नमसा)** सत्काररूप **(गिरा)** वाणी से **(वः)** तुम्हारे **(तम्)** उस **(मारुतम्)** वायुओं के सम्बन्धी **(शर्द्धम्)** बल को **(दिवेदिवे)** प्रतिदिन **(दैव्यम्)** विद्वानों में प्रसिद्ध हुए **(जनम्)** जन के प्रति **(उप, ब्रुवे)** उपदेश करूं, वैसे तुम लोग हमारे बल को सबके प्रति कहा करो। जैसे हम लोग **(श्रुत्यम्)** सुनने में प्रकट **(अपत्यसाचम्)** उत्तम सन्तानयुक्त **(सर्ववीरम्)** जिससे सब वीर पुरुष हों ऐसे

(रयिम्) धन को प्राप्त हो के पूर्ण अवस्था को भोग के **(नशामहै)** शरीर छोड़ें, वैसे तुम लोग भी होओ॥११॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे राजपुरुष प्रजा के गुणों को अपने लोगों के प्रति कहें, वैसे प्रजापुरुष राजपुरुषों के गुणों को अपने सहयोगियों से कहें, ऐसे परस्पर गुण ज्ञानपूर्वक प्रीति को प्राप्त होके नित्य आनन्दित होवें॥११॥

इस सूक्त में स्त्री-पुरुष और राजा-प्रजा के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये।

यह तीसवां सूक्त और तेरहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अस्माकमिति सप्तर्चस्य एकत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। विश्वेदेवा देवताः। १, २, ४ जगती। ३ विराट् जगती। ५ निचृज्जगती छन्दः। निषादः स्वरः। ६ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ७ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ शिल्पविषयमाह॥

अब इकतीसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में शिल्पविद्या का विषय कहते हैं॥

अस्माकं मित्रावरुणावतं रथमादित्यै रुद्रैर्वसुभिः सचाभुवा।
प्र यद्वयो न पप्तन् वस्मनस्परि श्रवस्यवो हृषीवन्तो वनर्षदः॥१॥

अस्माकम्। मित्रावरुणा। अवतम्। रथम्। आदित्यैः। रुद्रैः। वसुऽभिः। सचाऽभुवा। प्र। यत्। वयः। न। पप्तन्। वस्मनः। परि। श्रवस्यवः। हृषीवन्तः। वनऽसदः॥१॥

पदार्थः-(**अस्माकम्**) (**मित्रावरुणा**) राजप्रजाजनौ (**अवतम्**) गच्छतम् (**रथम्**) यानम् (**आदित्यैः**) मासैरिव वर्त्तमानैः पूर्णविद्यैः (**रुद्रैः**) प्राणवद्बलिष्ठैः (**वसुभिः**) भूम्यादिवद्गुणाढ्यैर्जनैः (**सचाभुवा**) सचेन गुणसमवायेन सह भवन्तौ (**प्र**) (**यत्**) ये (**वयः**) पक्षिणः (**न**) इव (**पप्तन्**) पतेयुः (**वस्मनः**) निवसन्तः (**परि**) (**श्रवस्यवः**) आत्मनः श्रवोऽन्नमिच्छवः (**हृषीवन्तः**) बहुहर्षयुक्ताः (**वनर्षदः**) ये वने सीदन्ति ते। अत्र **वाच्छन्दसी**ति रेफागमः॥१॥

अन्वयः-हे सचाभुवा मित्रावरुणा! यथा युवमादित्यै रुद्रैर्वसुभिर्निर्मितमस्माकं रथमासाद्य प्रावतं तथा यद्वस्मनः श्रवस्यवो हृषीवन्तो वनर्षदो वयो न परि पप्तन्॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यैर्विदुषामनुकरणं कृत्वा विमानादीनि यानानि रचयित्वा पक्षिवदन्तरिक्षादिमार्गेषु सुखेन गमनाऽऽगमने कार्ये॥१॥

पदार्थः-हे (**सचाभुवा**) गुणसम्बन्ध के साथ हुए (**मित्रावरुणा**) राजप्रजापुरुषो! जैसे तुम लोग (**आदित्यैः**) महीनों के तुल्य वर्त्तमान पूर्ण विद्वान् (**रुद्रैः**) प्राण के तुल्य बलवान् (**वसुभिः**) भूमि आदि के तुल्य गुणयुक्त जनों के बनाये (**अस्माकम्**) हमारे (**रथम्**) रथ पर चढ़ के (**प्र, अवतम्**) अच्छे प्रकार चलो तथा (**यत्**) जो (**वस्मनः**) वसते हुए (**श्रवस्यवः**) अपने को अन्न चाहनेवाले (**हृषीवन्तः**) बहुत आनन्दयुक्त (**वनर्षदः**) वन में रहनेवाले (**वयः, न**) पक्षियों के तुल्य सब ओर से (**परि, पप्तन्**) उड़ें॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि विद्वानों का अनुकरण करके, विमानादि यान बना के, पक्षि के अन्तरिक्षादि मार्गों में सुख से गमनागमन किया करें॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अधं स्मा न उदंवता सजोषसो रथं देवासो अभि विक्षु वांजयुम्।
यदाशवः पद्यांभिस्तित्रंतो रजंः पृथिव्याः सानौ जङ्घंनन्त पाणिभिंः॥ २॥

अधं। स्म। नः। उत्। अवत। सऽजोषसः। रथंम्। देवासः। अभि। विक्षु। वाजऽयुम्। यत्। आशवंः। पद्यांभिः। तित्रंतः। रजंः। पृथिव्याः। सानौं। जङ्घंनन्त। पाणिऽभिंः॥ २॥

पदार्थः-(अध) अथ **(स्म)** एव। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(नः)** अस्माकम् **(उत्)** **(अवत)** कामयध्वम्। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(सजोषसः)** समानप्रीतिसेवना **(रथम्)** **(देवासः)** विद्वांसः **(अभि)** आभिमुख्ये **(विक्षु)** प्रजासु **(वाजयुम्)** यो वाजयति वेगेन गच्छति तम् **(यत्)** ये **(आशवः)** शीघ्रगामिनोऽश्वाः **(पद्याभिः)** पत्तुं गन्तुं योग्याभिर्गतिभिः **(तित्रतः)** तरन्तः। विकरणव्यत्ययेन शसोऽभ्यासस्येत्वञ्च। **(रजः)** लोकान्। **लोका रजांस्युच्यन्त** (निरु०४.१९) इति निरुक्तात्। **(पृथिव्याः)** भूमेः **(सानौ)** उच्चप्रदेशे **(जङ्घनन्त)** भृशं हत **(पाणिभिः)** करैः॥ २॥

अन्वयः-हे सजोषसो रजस्तित्रतो देवासो! यूयं नो वाजयुं रथं विक्ष्वभ्युदवताध यथा यदाशवो गच्छन्ति तथा पद्याभिः पृथिव्याः सानौ प्राणिभिः स्म जङ्घनन्त॥ २॥

भावार्थः-यदि मनुष्या हस्तैर्यानेषु यन्त्राणि संस्थाप्य हत्वैतानि चालयेयुस्तेऽश्ववत्पृथिव्या उपर्य्युपरि गन्तुमागन्तुं शक्नुवन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे **(सजोषसः)** आपस में बराबर प्रीति के निबाहनेवाले **(रजः)** लोकों के **(तित्रतः)** पार होते हुए **(देवासः)** विद्वान् लोगो! तुम **(नः)** हमारे **(वाजयुम्)** वेग से चलनेवाले **(रथम्)** विमानादि यान को **(विक्षु)** प्रजाओं में **(अभि, उत्, अवत)** सब प्रकार चाहे **(अध)** इसके अनन्तर जैसे **(यत्)** जो **(आशवः)** शीघ्रगामी घोड़े चलते हैं, वैसे **(पद्याभिः)** चलने योग्य गतियों से **(पृथिव्याः)** भूमि के **(सानौ)** ऊंचे प्रदेश में **(पाणिभिः)** हाथों से **(स्म)** ही **(जङ्घनन्त)** शीघ्र ताड़ना देओ॥ २॥

भावार्थः-जो मनुष्य हाथों से यानों में यन्त्रों को स्थिर कर और ताड़ना देकर इनको चलावें तो घोड़े के तुल्य पृथिवी के ऊपर ऊपर जाने-आने को समर्थ होते हैं॥ २॥

पुना राजप्रजाविषयमाह॥

फिर राज-प्रजा विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उत स्य न इन्द्रो विश्वचर्षणिर्दिवः शर्धेन मारुतेन सुक्रतुः।
अनु नु स्थात्यवृकाभिरूतिभी रथं महे सनये वाजसातये॥ ३॥

उत। स्यः। नः। इन्द्रः। विश्वऽचर्षणिः। दिवः। शर्धेन। मारुतेन। सुऽक्रतुः। अनु। नु। स्थाति। अवृकाभिः। ऊतिऽभिः। रथम्। महे। सनये। वाजऽसातये॥ ३॥

पदार्थः-(**उत**) (**स्यः**) सः (**नः**) अस्माकम् (**इन्द्रः**) सूर्य्य इव सभेशः (**विश्वचर्षणिः**) विश्वस्य दर्शकः (**दिवः**) प्रकाशात् (**शर्द्धेन**) बलेन (**मारुतेन**) मनुष्याणामनेन (**सुक्रतुः**) श्रेष्ठप्रज्ञः (**अनु**) (**नु**) शीघ्रम् (**स्थाति**) तिष्ठति (**अवृकाभिः**) अविद्यमानस्तेनादिभिः (**ऊतिभिः**) रक्षादिभिः (**रथम्**) विमानादियानम् (**महे**) महते (**सनये**) सुखसंविभागाय (**वाजसातये**) वाजस्य सङ्ग्रामस्य सम्यक् सेवनाय॥ ३॥

अन्वयः-विश्वचर्षणिस्सुक्रतुरिन्द्रो दिवः सूर्य्य इवावृकाभिरूतिभिर्मारुतेन शर्द्धेन महे सनये वाजसातये नो रथमनुष्ठाति स्य उत न्वैश्वर्य्यमाप्नोति॥ ३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्यः स्वप्रतापेन सर्वं जगत्पालयति तथा धार्मिकाः प्रजाराजपुरुषाः स्वराज्यं पालयेयुः॥ ३॥

पदार्थः-(**विश्वचर्षणिः**) सबको दिखाने-चिताने वाला (**सुक्रतुः**) उत्तम बुद्धियुक्त (**इन्द्रः**) सूर्य के तुल्य तेजस्वी सभापति (**दिवः**) जैसे प्रकाश से सूर्य शोभित हो, वैसे (**अवृकाभिः**) चोर आदि दुष्टों से रहित (**ऊतिभिः**) रक्षा आदि से (**मारुतेन**) मनुष्य सम्बन्धी (**शर्द्धेन**) बल के साथ (**महे**) बड़े (**सनये**) सुख के सम्यक् विभाग के लिये और (**वाजसातये**) संग्राम के सम्यक् सेवने के लिये (**नः**) हमारे (**रथम्**) विमानादि यान का (**अनु, स्थाति**) अनुष्ठान करता है (**स्यः**) वह (**उत**) तो (**नु**) शीघ्र ऐश्वर्य को प्राप्त होता है॥ ३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य अपने प्रताप से सब जगत् की पालना करता, वैसे धार्मिक प्रजा और राजपुरुष अपने राज्य की रक्षा किया करें॥ ३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उत स्य देवो भुवनस्य सक्षणिस्त्वष्टा ग्नाभिः सजोषा जूजुवद्रथम्।
इळा भगो बृहद्दिवोत रोदसी पूषा पुरंधिरश्विनावधा पती॥ ४॥

उत। स्यः। देवः। भुवनस्य। सक्षणिः। त्वष्टा। ग्नाभिः। सऽजोषाः। जूजुवत्। रथम्। इळा। भगः। बृहत्ऽदिवा। उत। रोदसी इति। पूषा। पुरम्ऽधिः। अश्विनौ। अध। पती इति॥४॥

पदार्थः-(उत) अपि **(स्यः)** सः **(देवः)** द्योतनात्मकः **(भुवनस्य)** लोकसमूहस्य **(सक्षणिः)** समवेता। अत्र सच धातोरनिः प्रत्ययः। **(त्वष्टा)** छेत्ता **(ग्नाभिः)** सुशिक्षिताभिर्वाग्भिः **(सजोषाः)** समानसुखदुःखप्रीतयः **(जूजुवत्)** गमयेत् **(रथम्)** **(इळा)** वाणी **(भगः)** ऐश्वर्यभागी **(बृहत्)** **(दिवा)** प्रकाशेन **(उत)** अपि **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(पूषा)** पोषकः **(पुरन्धिः)** पुराणां धर्त्ता **(अश्विनौ)** सूर्य्याचन्द्रमसौ **(अध)** आनन्तर्य्ये। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(पती)** पालयितारौ॥४॥

अन्वयः-यः पूषा पुरन्धिः सक्षणिः सजोषा भगो देवोऽश्विना पती इवोत दिवा रोदसी भुवनस्य त्वष्टा सूर्यइव रथं जूजुवदधोताप्यस्य ग्नाभिः सहेळोत्तमा वर्त्तते स्यो बृहत्सुखमाप्नुयात्॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये विद्युद्वत्सुशिक्षिता वाणीवच्च प्रवर्त्तन्ते तेऽनेकानि शिल्पसाध्यानि निर्मायैश्वर्यवन्तः स्युः॥४॥

पदार्थः-जो **(पूषा)** पुष्टिकारक **(पुरन्धिः)** पुरों का धारण करनेवाला **(सक्षणिः)** मेली **(सजोषाः)** सुख-दुःख और प्रीति को बराबर रखनेवाला **(भगः)** ऐश्वर्यभागी **(देवः)** प्रकाशक **(पती)** पालन करनेहारे **(अश्विनौ)** सूर्य-चन्द्रमा के तुल्य **(उत)** और **(दिवा)** प्रकाश के साथ **(रोदसी)** सूर्य-भूमी **(भुवनस्य)** लोकों के **(त्वष्टा)** छेदन करनेवाले सूर्य के तुल्य **(रथम्)** विमानादि यान को **(जुजूवत्)** पहुंचावे **(अध)** इसके अनन्तर **(उत)** और इसकी **(ग्नाभिः)** वाणियों के साथ **(इळा)** उत्तम वाणी है **(स्यः)** वह **(बृहत्)** बड़े सुख को प्राप्त होवे॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो बिजुली के तुल्य और सुशिक्षित वाणी के तुल्य वर्त्तते हैं, वे अनेक शिल्पविद्या से साध्य यानों को बना के ऐश्वर्यवाले होते हैं॥४॥

पुनः स्त्रीपुरुषकर्त्तव्यविषयमाह॥

फिर स्त्री-पुरुष के कर्त्तव्य विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उत त्ये देवी सुभगे मिथूदृशोषासानक्ता जगतामपीजुवा।
स्तुषे यद्वां पृथिवि नव्यसा वचः स्थातुश्च वयस्त्रिवया उपस्तिरे॥५॥

उत। त्ये इति। देवी इति। सुभगे इति सुऽभगे। मिथुऽदृशा। उषसानक्ता। जगताम्। अपिऽजुवा। स्तुषे। यत्। वाम्। पृथिवि। नव्यसा। वचः। स्थातुः। च। वयः। त्रिऽवयाः। उपऽस्तिरे॥५॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**त्ये**) ते (**देवी**) देदीप्यमाने (**सुभगे**) शोभनैश्वर्यनिमित्ते (**मिथूदृशा**) परस्परदर्शयितारौ। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**उषासानक्ता**) प्रत्यूषरात्र्यौ। अत्राऽ**न्येषामपी**ति दीर्घः। (**जगताम्**) मनुष्यादिसंसारस्थानाम् (**अपीजुवा**) प्रेरके (**स्तुषे**) (**यत्**) ये (**वाम्**) ते (**पृथिवी**) भूमिवद्वर्त्तमाने (**नव्यसा**) अतिशयेन नवीनेन (**वचः**) वचसा। **सुपां सुलुगि**ति टालोपः। (**स्थातुः**) स्थावरस्य (**च**) (**वयः**) कमनीयम् (**त्रिवयाः**) त्रीणि वयांसि यस्य सः (**उपस्तिरे**) उपस्तृणोमि। अत्र **वाच्छन्दसी**ति रेफादेशः॥५॥

अन्वयः-हे पृथिविवद्वर्त्तमाने! त्रिवयास्त्वं यथा त्ये मिथूदृशा सुभगे देवी अपीजुवोषसानक्ता जगतां स्थातुश्च पालकौ उतापि यथाऽहं नव्यसा वचो वयो यद्ये स्तुषे उपस्तिरे तथैव वां ते चोपस्तुहि॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा रात्रिदिवसौ परस्परं संहतौ वर्त्तेते तथैव स्त्रीपुरुषौ वर्त्तेयातां यथा पुरुषा ब्रह्मचर्येण विद्यामधीत्य सर्वेषां पदार्थानां गुणकर्मस्वभावान् विज्ञाय विद्वांसो जायन्ते, तथैव स्त्रियोऽपि स्युः॥५॥

पदार्थः-हे (**पृथिवि**) पृथिवि के तुल्य वर्त्तमान सहनशील स्त्रि! (**त्रिवयाः**) तीनों अवस्था भोगनेवाली तू जैसे (**त्ये**) वे (**मिथूदृशा**) आपस में एक-दूसरे को देखनेवाले (**सुभगे**) सुन्दर ऐश्वर्य के निमित्त (**देवी**) प्रकाशमान (**अपीजुवा**) प्रेरक (**उषानसक्ता**) दिन-रात (**जगताम्**) संसारस्थ मनुष्यादि (**च**) और (**स्थातुः**) स्थावर वृक्षादि के पालक होते हैं (**उत**) और जैसे मैं (**नव्यसा**) नवीन (**वचः**) वचन से (**वयः**) अभीष्ट अवस्था को (**यत्**) जिनकी (**स्तुषे**) स्तुति करता हूं और (**उपस्तिरे**) निकट आच्छादित रक्षित करता हूं, वैसे ही (**वाम्**) उनकी स्तुति कर॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे रात-दिन परस्पर मिले हुए वर्त्तते हैं, वैसे ही स्त्री-पुरुष वर्तें। जैसे पुरुष ब्रह्मचर्य से विद्या पढ़े के सब पदार्थों के गुण, कर्म, स्वभावों को जान कर विद्वान् होते हैं, वैसे ही स्त्रियां भी हों॥५॥

पुनरस्माभिर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर हम मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उत वः शंसमुशिजामिव श्मस्यहिर्बुध्न्यो३ऽज एकपादुत।

त्रित ऋभुक्षाः सविता चनो दधेऽपां नपादाशुहेमा धिया शमि॥६॥

उत। वः। शंसम्। उशिजाम्ऽइव। श्मसि। अहिः। बुध्न्यः। अजः। एकऽपात्। उत। त्रितः। ऋभुक्षाः। सविता। चनः। दधे। अपाम्। नपात्। आशुऽहेमा। धिया। शमि॥६॥

पदार्थ:-(**उत**) (**व:**) युष्माकम् (**शंसम्**) स्तुतिम् (**उशिजामिव**) कमनीयानां विदुषामिव (**श्मसि**) कामयेमहि (**अहि:**) व्यापनशीलो मेघ: (**बुध्न्य:**) बुध्नेऽन्तरिक्षे व्याप्त: (**अज:**) न जायते कदाचित् स: (**एकपात्**) एक: पादो गमनं प्रापणं यस्य स: (**उत**) एव (**त्रित:**) ब्रह्मचर्य्याऽध्ययनविचारेभ्य: (**ऋभुक्षा:**) मेधावी (**सविता**) ऐश्वर्य्यकारक: (**चन:**) अन्नम् (**दधे**) (**अपाम्**) प्राणानाम् (**नपात्**) न पतति कदाचिद् यद्वा न सन्ति पादादयोऽवयवा यस्य स: (**आशुहेमा**) शीघ्रं वर्द्धमाना (**धिया**) प्रज्ञया कर्मणा वा (**शमि**) कर्मणि। अत्र वर्णव्यत्ययेन ह्रस्व: **सुपां सुलुगि**ति सुलोप:॥६॥

अन्वय:-हे विद्वांसो! यथा त्रित ऋभुक्षा: सविता नपादाशुहेमा उताप्यज एकपादहिर्बुध्न्य इव वर्त्तमानोऽहं धिया शमि प्रवर्त्ते अपां चनो दधे तथा हे पत्नि! त्वं प्रवर्त्तस्व यथा वयमुशिजामिव व: शंसं श्मस्युतापि युष्मान् दधीमहि तथा यूयमप्यस्मासु वर्त्तध्वम्॥६॥

भावार्थ:-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यथेश्वरोऽजन्मा कमनीय: सत्यगुणकर्मस्वभाव: सेवनीयोऽस्ति तथा वयं सर्वे जीवा: स्मोऽतो ब्रह्मचर्यादिभिश्शुभकर्मण्यस्माभि: सदा वर्त्तितव्यम्॥६॥

पदार्थ:-हे विद्वानो! जैसे (**त्रित:**) ब्रह्मचर्य, अध्ययन और विचार इन तीन कर्मों से (**ऋभुक्षा:**) मेधावी (**सविता**) ऐश्वर्य करनेहारा (**नपात्**) न गिरनेवाला वा पग आदि अवयवों से रहित (**आशुहेमा**) शीघ्र बढ़नेवाला (**उत**) और (**अज:**) कभी न उत्पन्न होनेवाला (**एकपात्**) एक प्रकार की प्राप्तियुक्त (**अहि:**) व्याप्तिशील (**बुध्न्य:**) अन्तरिक्ष में व्याप्त मेघ के तुल्य वर्तमान मैं (**धिया**) बुद्धि वा कर्म से (**शमि**) कर्म में प्रवृत्त होऊं (**अपाम्**) प्राणों के (**चन:**) अन्न को (**दधे**) धारण करता हूं, वैसे हे पत्नि! तू प्रवृत्त हो जैसे हम (**उशिजामिव**) कामना के योग्य (**व:**) तुम विद्वानों को (**शंसम्**) स्तुति को (**श्मसि**) चाहते हैं (**उत**) और तुमको धारण करें, वैसे तुम लोग भी हमारे विषय में वर्त्तो॥६॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे ईश्वर अजन्मा, कामना के योग्य, सत्य गुणकर्मस्वभाववाला सेवने योग्य है, वैसे हम सब जीव लोग हैं। इससे ब्रह्मचर्यादि शुभ कर्म में हमको सदा वर्त्तना चाहिये॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

एता वो वश्म्युद्यता यजत्रा अतक्षन्नायवो नव्यसे सम्।

श्रवस्यवो वाजं चकाना: सप्तिर्न रथ्यो अह धीतिमश्या:॥७॥१४॥

एता। वः। वश्मि। उत्ऽयता। यजत्राः। अतक्षन्। आयवः। नव्यसे। सम्। श्रवस्यवः। वाजम्। चकानाः। सप्तिः। न। रथ्यः। अह। धीतिम्। अश्याः॥७॥

पदार्थः-(एता) एतानि **(वः)** युष्माकम् **(वश्मि)** कामये **(उद्यता)** उत्कृष्टतया यतानि गृहीतानि **(यजत्राः)** सङ्गन्तारः **(अतक्षन्)** तनू कुर्वन्ति **(आयवः)** मनुष्याः। **आयव इति मनुष्यनामसु पठितम्।** (निघं०२.३)। **(नव्यसे)** नवीयसे **(सम्)** **(श्रवस्यवः)** आत्मनः श्रवोऽन्नं श्रवणं वेच्छन्तः **(वाजम्)** विज्ञानम् **(चकानाः)** कामयमानाः **(सप्तिः)** अश्वः। **सप्तिरित्यश्वनामसु पठितम्।** (निघं०१.१४)। **(न)** इव **(रथ्यः)** यो रथं वहति सः **(अह)** विनिग्रहे **(धीतिम्)** **(अश्याः)** प्राप्नुयाः॥७॥

अन्वयः-यथा वाजं चकानाः श्रवस्यवो यजत्रा आयवो नव्यसे रथ्यः सप्तिर्न समतक्षन् तथा व एतोद्यताऽहं वश्मि। हे विद्वन्! तथा त्वमह धीतिमश्यास्तथाऽहं प्राप्नुयाम्॥७॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। मनुष्यैर्यद्यद्विद्वांसः कामयन्ते तत्तत्सदा कामनीयं यथैव त उपदिशेयुस्तथा तच्छ्रुत्वा निश्चित्य ग्रहीतव्यं करणीयञ्चेति॥७॥

अत्र विद्वद्विदुषीगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इत्येकाधिकत्रिंशत्तमं सूक्तं चतुर्दशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-जैसे **(वाजम्)** विज्ञान को **(चकानाः)** चाहते हुए **(श्रवस्यवः)** अपने को अन्न वा शास्त्र सुनने की इच्छा करते हुए **(यजत्राः)** मेल मिलाप रखते हुए **(आयवः)** मनुष्य **(नव्यसे)** अति नवीन जन के लिये **(रथ्यः)** रथ के चलानेवाले **(सप्तिः)** घोड़े के **(न)** तुल्य विचारणीय विषय को **(सम्, अतक्षन्)** सम्यक् सूक्ष्म करते हैं अर्थात् अच्छे प्रकार समझाते हैं, वैसे **(वः)** तुम लोगों के **(एता)** इन **(उद्यता)** उत्तम प्रकार ग्रहण किये वचनों को मैं **(वश्मि)** चाहता हूं। हे विद्वन्! जैसे आप **(अह)** नियमपूर्वक **(धीतिम्)** धैर्य को **(अश्याः)** प्राप्त होओ, वैसे मैं भी धैर्य को प्राप्त होऊं॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। मनुष्यों को चाहिये कि जिस-जिस पदार्थ की कामना विद्वान् लोग करें, उस उसकी कामना करें। जैसे विद्वान् लोग उपदेश करें, वैसे उसको सुन, निश्चय कर, स्वीकार और अनुष्ठान किया करें॥७॥

इस सूक्त में विद्वान् और विदुषी स्त्रियों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त में कहे अर्थ की पूर्व सूक्त के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह इकतीसवां सूक्त और चौदहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अस्येत्यस्याष्टर्चस्य द्वात्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। १ द्यावापृथिव्यौ। २, ३ इन्द्रस्त्वष्टा वा। ४, ५ राका। ६, ७ सिनीवाली। ८ लिङ्गोक्ता देवताः। १ जगती। ३ निचृज्जगती। ४, ५ विराट् जगती छन्दः। निषादः स्वरः। २ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ६ अनुष्टुप्। ७ विराडनुष्टुप्। ८ निचृदनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

अथ मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

अब बत्तीसवें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र से मनुष्यों को क्या कर्तव्य है, इस विषय को कहते हैं॥

अस्य मे द्यावापृथिवी ऋतायतो भूतमवित्री वचसः सिषासतः।
ययोरायुः प्रतरं इदं पुर उपस्तुते वसूयुर्वां महो दधे॥१॥

अस्य। मे। द्यावापृथिवी इति। ऋतऽयतः। भूतम्। अवित्री इति। वचसः। सिसासतः। ययोः। आयुः। प्रऽतरम्। ते इति। इदम्। पुरः। उपस्तुते इत्युपऽस्तुते। वसुऽयुः। वाम्। महः। दधे॥१॥

पदार्थः-(अस्य) **(मे)** मम **(द्यावापृथिवी)** सूर्य्यभूमी **(ऋतायतः)** उदकमिवाचरतः **(भूतम्)** उत्पन्नम् **(अवित्री)** रक्षादिनिमित्ते **(वचसः)** वचनस्य **(सिषासतः)** संभक्तुमिवाचरतः **(ययोः)** **(आयुः)** जीवनम् **(प्रतरम्)** पुष्कलम् **(ते)** **(इदम्)** **(पुरः)** **(उपस्तुते)** उप समीपे प्रशंसिते **(वसूयुः)** आत्मनो वस्विच्छुः **(वाम्)** तयोः **(महः)** महत्सुखम् **(दधे)**॥१॥

अन्वयः-येऽवित्री उपस्तुते द्यावापृथिवी मेऽस्य वचसो भूतमृतायतः सिषासतो ययोः सकाशात् प्रतरमिदमायुः वसूयुः सन्नहं पुरो दधे ते सर्वस्य जगतः सुखं साध्नुतो वां तयोः सकाशादहं महत्सुखं दधे॥१॥

भावार्थः-मनुष्यैरग्निभूम्योः सेवनं युक्त्या क्रियते चेत्तर्हि पूर्णमायुर्धनं च प्राप्येत॥१॥

पदार्थः-जो **(अवित्री)** रक्षा आदि के निमित्त **(उपस्तुते)** समीप में प्रशंसा को प्राप्त **(द्यावापृथिवी)** सूर्य और भूमि **(मे)** मेरे **(अस्य)** इस प्रत्यक्ष **(वचसः)** वचन के सम्बन्ध से **(भूतम्)** उत्पन्न हुए **(ऋतायतः)** जल के समान आचरण करते **(सिषासतः)** वा अच्छे प्रकार विभाग होने के समान आचरण करते जिनसे **(प्रतरम्)** पुष्कल **(इदम्)** इस **(आयुः)** जीवन को **(वसूयुः)** धन की चाहना करता हुआ मैं **(पुरः)** आगे **(दधे)** धारण करता हूँ **(ते)** वे सब जगत् का सुख सिद्ध करते हैं **(वाम्)** उनकी उत्तेजना से मैं **(महः)** बहुत सुख को धारण करता हूँ॥१॥

भावार्थः-मनुष्यों को [=के द्वारा] भूमि और अग्नि का सेवन जो युक्ति के साथ किया जाता है तो पूर्ण आयु और धन की प्राप्त हो सकती है॥१॥

अथ विदुषां मित्रत्वमाह॥

अब विद्वानों की मित्रता को अगले मन्त्र में कहा है॥

मा नो गुह्या रिप आयोरहन् दभन् मा न आभ्यो रीरधो दुच्छुनाभ्यः।
मा नो वि यौः सख्या विद्धि तस्य नः सुम्नायता मनसा तत्त्वेमहे॥ २॥

मा। नः। गुह्या। रिपः। आयोः। अहन्। दभन्। मा। नः। आभ्यः। रीरधः। दुच्छुनाभ्यः। मा। नः। वि। यौः। सख्या। विद्धि। तस्य। नः। सुम्नऽयता। मनसा। तत्। त्वा। ईमहे॥ २॥

पदार्थः-(**मा**) निषेधे (**नः**) अस्माकम् (**गुह्या**) गुप्तानि रहस्यानि (**रिपः**) पृथिवी। **रिप इति पृथिवीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१)। (**आयोः**) मनुष्यस्य सुखम् (**अहन्**) अहनि दिवसे (**दभन्**) दभ्नुयुः (**मा**) (**नः**) (**आभ्यः**) पृथिवीभ्यः (**रीरधः**) हिंस्यात् (**दुच्छुनाभ्यः**) दुःखकारिणीभ्यः शत्रुसेनाभ्यः (**मा**) (**नः**) अस्मान् (**वि**) (**यौः**) पृथक् कुर्याः (**सख्या**) सख्युः कर्माणि (**विद्धि**) जानीहि (**तस्य**) (**नः**) अस्माकम् (**सुम्नायता**) आत्मनः सुम्नं सुखमिच्छता (**मनसा**) अन्तःकरणेन (**तत्**) तम् (**त्वा**) त्वाम् (**ईमहे**) याचामहे॥ २॥

अन्वयः-यानि नो गुह्या सख्याऽऽयोरहन्मा दभन्। रिपश्च मा दभ्नीयाद्यथाहं कस्य चिन्मनुष्यस्य सुखं न दभ्नुयां तथा हे सेनेश! त्वमाभ्यो दुच्छुनाभ्यो नो मा रीरधो मा नो मनसा वि यौः सुम्नायता नो विद्धि तस्य सज्जनस्य सुखं मा वियौस्तस्माद्वयं तत्त्वेमहे॥ २॥

भावार्थः-सर्वैर्मनुष्यैरेवं सदैवेषितव्यं यदस्माभिः कस्यचित्सुखहानिः कदाचिन्न कर्त्तव्या, मित्रताभङ्गो नैव विधेयः, शत्रुसेनाभ्यः सर्वे सज्जनाः सदा रक्षणीयाः, सततं सत्पुरुषेभ्यः सुखं याचनीयं च॥ २॥

पदार्थः–जो (**नः**) हमारे (**गुह्या**) गुप्त एकान्त के (**सख्या**) मित्रपन के काम (**आयोः**) मनुष्य के सुख को (**अहन्**) किसी दिन में (**मा**) मत (**दभन्**) नष्ट करें (**रिपः**) और पृथिवी (**मा**) मत नष्ट करें वा जैसे मैं किसी मनुष्य के सुख को न नष्ट करूं, वैसे हे सेनापति! आप (**आभ्यः**) इन पृथिवी वा (**दुच्छुनाभ्यः**) दुःखकारिणी शत्रु की सेनाओं से (**नः**) हम लोगों को (**मा**) मत (**रीरधः**) नष्ट करें (**मा**) मत (**नः**) हम लोगों को (**मनसा**) अन्तःकरण से (**वि, यौः**) अलग करें वा (**सुम्नायता**) अपने को सुख की इच्छा करते हुए (**नः**) हम लोगों को (**विद्धि**) जानो (**तस्य**) उस सज्जन के सुख को (**मा**) मत नष्ट करो इस कारण हम लोग (**तत्**) उक्त कर्म और (**त्वा**) आपको (**ईमहे**) याचते हैं॥ २॥

भावार्थ:-सब मनुष्यों को इस प्रकार सदा इच्छा करनी चाहिये कि किसी के सुख की हानि कभी न करनी चाहिये, मित्रता का भङ्ग न करना चाहिये, सब सज्जनों की सदा रक्षा करनी चाहिये, निरन्तर सज्जनों के लिये सुख मांगना चाहिये॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अहेळता मनसा श्रुष्टिमा वह दुहानां धेनुं पिप्युषीमसश्चतम्।
पद्याभिराशुं वचसा च वाजिनं त्वां हिनोमि पुरुहूत विश्वहा॥३॥

अहेळता। मनसा। श्रुष्टिम्। आ। वह। दुहानाम्। धेनुम्। पिप्युषीम्। असश्चतम्। पद्याभिः। आशुम्। वचसा। च। वाजिनम्। त्वाम्। हिनोमि। पुरुऽहूत। विश्वहा॥३॥

पदार्थ:-(अहेळता) अनादृतेन **(मनसा)** विज्ञानेन **(श्रुष्टिम्)** सद्यः **(आ)** समन्तात् **(वह)** प्राप्नुहि प्रापय वा **(दुहानाम्)** सुखप्रपूरिकाम् **(धेनुम्)** गामिव वाणीम् **(पिप्युषीम्)** प्रवृद्धां वर्द्धयित्रीं वर्द्धयतीं वा **(असश्चतम्)** अप्राप्तम् **(पद्याभि:)** प्रापणीयाभिः क्रियाभिः **(आशुम्)** सद्यः **(वचसा)** **(च)** **(वाजिनम्)** प्रशस्तविज्ञानवन्तम् **(त्वाम्)** **(हिनोमि)** प्राप्नोमि **(पुरुहूत)** बहुभिः सत्कृत **(विश्वहा)** सर्वाणि दिनानि। अत्र **कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे।** (अष्टा०२.३.५) इति द्वितीया॥३॥

अन्वय:-हे पुरुहूत! त्वमहेळता मनसा पद्याभिर्वचसा चासश्चतं पिप्युषीं दुहानां धेनुं विश्वहा श्रुष्टिमावह। अहं वाजिनं त्वां हिनोमि॥३॥

भावार्थ:-यो समाहितेनान्तःकरणेनान्येभ्यः सुशिक्षितां वाचं सद्यः प्रापयति तं सर्वे सत्कृत्य वर्द्धयन्तु॥३॥

पदार्थ:-हे **(पुरुहूत)** बहुतों से सत्कार पाये हुए! आप **(अहेळता)** अनादर किये हुए **(मनसा)** विज्ञान से वा **(पद्याभि:)** प्राप्त करने योग्य क्रियाओं से **(च)** और **(वचसा)** वचन से **(असश्चतम्)** अप्राप्त **(पिप्युषीम्)** बढ़ी हुई बढ़ाने वा बढ़वाने **(दुहानाम्)** और सुख को अच्छे प्रकार पूरा करनेवाली **(धेनुम्)** गौ के समान वाणी को **(विश्वहा)** सब दिन **(श्रुष्टिम्)** शीघ्र **(आ, वह)** प्राप्त होओ वा प्राप्त कराओ मैं **(वाजिनम्)** प्रशंसित विज्ञानवाले **(त्वाम्)** आपको **(हिनोमि)** प्राप्त होता हूं॥३॥

भावार्थ:-जो समाधानयुक्त अन्त:करण से औरों के लिये उत्तम शिक्षायुक्त वाणी को शीघ्र प्राप्त करता है उसको सब सत्कार करके बढ़ावें॥३॥

अथ स्त्रीणां गुणानाह॥

अब स्त्रियों के गुणों को अगले मन्त्र में कहा है॥

राकामहं सुहवां सुष्टुती हुवे शृणोतु नः सुभगा बोधतु त्मना।
सीव्यत्वपः सूच्याच्छिद्यमानया ददातु वीरं शतदायमुक्थ्यम्॥४॥

राकाम्। अहम्। सुऽहवाम्। सुऽस्तुती। हुवे। शृणोतु। नः। सुऽभगा। बोधतु। त्मना। सीव्यतु। अपः। सूच्या। अच्छिद्यमानया। ददातु। वीरम्। शतऽदायम्। उक्थ्यम्॥४॥

पदार्थः-**(राकाम्)** पूर्णप्रकाशयुक्तेन चन्द्रेण युक्तां रात्रीम् **(अहम्)** **(सुहवाम्)** सुष्ठु स्पर्द्धनीयाम् **(सुष्टुती)** शोभनया स्तुत्या **(हुवे)** स्पर्द्धे **(शृणोतु)** **(नः)** अस्मान् **(सुभगा)** उत्तमैश्वर्य्यप्रापिका **(बोधतु)** जानातु **(त्मना)** आत्मना **(सीव्यतु)** सूत्राणि सन्तानयतु **(अपः)** कर्म **(सूच्या)** सीवनसाधनया **(अच्छिद्यमानया)** छेत्तुमनर्हया **(ददातु)** **(वीरम्)** उत्तमसन्तानम् **(शतदायम्)** असङ्ख्यदायभागिनम् **(उक्थ्यम्)** प्रशंसितुमर्हम्॥४॥

अन्वयः-अहं त्मना राकामिव वर्त्तमानां सुहवां यां स्त्रियं सुष्टुती हुवे सा सुभगा नोऽस्मान् शृणोतु बोधतु। अच्छिद्यमानया सूच्याऽपस्सीव्यतु शतदायं सीव्यतूक्थ्यं शतदायं वीरं ददातु॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। तस्य जनस्य स्त्रिया वाऽहोभाग्यं भवति यामभीष्टः पतिः प्राप्नुयादभीष्टा स्त्री वा यं यथा गुणकर्मस्वभावपुरुषो भवेत्तथा पत्न्यपि स्याद्यदि द्वौ विद्वांसौ यथर्त्तु प्रेम्णा सन्तानमुत्पादयेतां तर्हि तदपत्यं प्रशंसितं कथं न स्याद्यथा छिन्नं वस्त्रं सूच्या सन्धीयते तथा ययोर्मनसि परस्परं प्रीतिः स्यात्तत्कुलं सर्वमान्यं भवति॥४॥

पदार्थः–मैं **(त्मना)** आत्मा से **(राकाम्)** उस रात्रि के जो पूर्ण प्रकाशित चन्द्रमा से युक्त है, **[के]** समान वर्त्तमान **(सुहवाम्)** सुन्दर स्पर्द्धा करने योग्य जिस स्त्री की **(सुष्टुती)** शोभनस्तुति के साथ **(हुवे)** स्पर्द्धा करता हूं वह **(सुभगा)** उत्तम ऐश्वर्य को प्राप्त करनेवाली **(नः)** हम लोगों को **(शृणोतु)** सुने और **(बोधतु)** जाने **(अच्छिद्यमानया)** न छेदन करने योग्य **(सूच्या)** सुई से **(अपः)** कर्म **(सीव्यतु)** सीने का करे **(शतदायम्)** असंख्य दायभागवाले को सीवे **(उक्थ्यम्)** और प्रशंसा के योग्य असंख्य दायभागी **(वीरम्)** उत्तम सन्तान को **(ददातु)** देवे॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। उस मनुष्य वा स्त्री का अहोभाग्य होता है जिसको अभीष्ट स्त्री वा पुरुष प्राप्त हो। जैसे गुण, कर्म, स्वभाववाला पुरुष हो, वैसी पत्नी भी हो। यदि दोनों विद्वान् स्त्री-पुरुष ऋतु समय को न उल्लङ्घन कर अर्थात् ऋतु समय के अनुकूल प्रेम से

सन्तानोत्पत्ति करें तो उनकी सन्तान प्रशंसित क्यों न हों। जैसे छिन्न-भिन्न वस्त्र सुई से सिया जाता है, वैसे जिनके मन में परस्पर प्रीति हो, उनका कुल सबका मान्य होता है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यास्ते॑ राके सुम॒तय॑: सुपेश॑सो याभि॒र्ददा॑सि दा॒शुषे॒ वसू॑नि।
ताभि॑र्नो अ॒द्य सु॒मना॑ उ॒पाग॑हि सहस्रपो॒षं सु॑भगे॒ ररा॑णा॥५॥

या:। ते॒। रा॒के॒। सु॒ऽम॒तय॑:। सु॒ऽपेश॑स:। याभि॑:। ददा॑सि। दा॒शुषे॑। वसू॑नि। ताभि॑:। न॒:। अ॒द्य। सु॒ऽमना॑:। उ॒प॒ऽआग॑हि। स॒ह॒स्र॒ऽपो॒षम्। सु॒ऽभ॒गे॒। ररा॑णा॥५॥

पदार्थ:-(या:) (ते) तव **(राके)** सुखप्रदे रात्रिरिव **(सुमतय:)** सुष्ठु प्रज्ञा: **(सुपेशस:)** सुरूपा दीप्तय: **(याभि:) (ददासि) (दाशुषे)** दात्रेऽपत्ये **(वसूनि)** द्रव्याणि **(ताभि:) (न:)** अस्मान् **(अद्य) (सुमना:)** प्रसन्नचित्ता: **(उपागहि) (सहस्रपोषम्)** असंख्यपुष्टिम् **(सुभगे)** सौभाग्ययुक्ते **(रराणा)** सुष्ठु दात्री॥५॥

अन्वय:-हे राके! यास्ते सुपेशस: सुमतय: सन्ति याभिस्त्वं दाशुषे वसूनि ददासि ताभिर्नोऽद्य सुमना: सती उपागहि। हे सुभगे! त्वं रराणा सती नोऽस्मभ्यं सहस्रपोषं देहि॥५॥

भावार्थ:-यदि सुलक्षणा विदुषी स्त्री श्रेष्ठविदुषो जनस्य पत्नी स्यात्तर्हि धनस्य सुखस्य च बहुविधा प्राप्ति: स्यात्॥५॥

पदार्थ:-हे **(राके)** रात्रि के समान सुख देनेवाली! जो **(ते)** आपकी **(सुपेशस:)** सुन्दर रूपवाली दीप्ति और **(सुमतय:)** उत्तम बुद्धि हैं, जिनसे आप **(दाशुषे)** देनेवाले पति के लिये **(वसूनि)** धनों को **(ददासि)** देती हो, उनसे **(न:)** हम लोगों को **(अद्य)** आज **(सुमना:)** प्रसन्नचित्त हुई **(उपागहि)** समीप आओ। हे **(सुभगे)** सौभाग्ययुक्त स्त्री! **(रराणा)** उत्तम देनेवाली होती हुई हम लोगों के लिये **(सहस्रपोषम्)** असंख्य प्रकार से पुष्टि को देओ॥५॥

भावार्थ:-यदि सुलक्षणा विदुषी स्त्री श्रेष्ठ विद्वान् जन की पत्नी हो तो धन की और सुख की बहुत प्रकार प्राप्ति हो॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सिनी॑वालि॒ पृथु॑ष्टुके॒ या दे॒वाना॒मसि॒ स्वसा॑।

जुषस्व हव्यमाहुतं प्रजां देवि दिदिड्ढि नः॥६॥

सिनीवालि। पृथुऽस्तुके। या। देवानाम्। असि। स्वसा। जुषस्व। हव्यम्। आऽहुतम्। प्रऽजाम्। देवि। दिदिड्ढि। नः॥६॥

पदार्थः-(सिनीवालि) प्रेम्णा युक्ते **(पृथुष्टुके)** विस्तीर्णजघने **(या) (देवानाम्)** विदुषाम् **(असि) (स्वसा)** भगिनी **(जुषस्व)** सेवस्व **(हव्यम्)** दातुमर्हम् **(आहुतम्)** समन्तात् प्रक्षिप्तम् **(प्रजाम्) (देवि)** कामयमाने **(दिदिड्ढि)** उपाचिनुहि। अत्र **बहुलं छन्दसीति** शपः श्लुः। **(नः)** अस्मान्॥६॥

अन्वयः-हे पृथुष्टुके! सिनीवालि या त्वं देवानां स्वसासि सा त्वं मयाहुतं हव्यं जुषस्व। हे देवि! त्वं नः प्रजां दिदिड्ढि॥६॥

भावार्थः-या विद्वत्कुलस्य कन्या विद्वद्बन्धुर्ब्रह्मचर्येण प्राप्तविद्या प्रकाशमाना भवेत् तां पत्नीं विधाय विधिनास्यां सन्तानानि य उत्पादयेत् स च सततं सुखिनौ स्याताम्॥६॥

पदार्थः-हे **(पृथुष्टुके)** मोटी-मोटी जङ्घाओंवाली! **(सिनीवालि)** जो अति प्रेम से युक्त तू **(देवानाम्)** विद्वानों की **(स्वसा)** बहिन **(असि)** है सो तू मैंने जो **(आहुतम्)** सब ओर से होमा है उस **(हव्यम्)** देने योग्य द्रव्य को **(जुषस्व)** प्रीति से सेवन कर। हे **(देवि)** कामना करती हुई स्त्री! तू हमारी **(प्रजाम्)** प्रजा को **(दिदिड्ढि)** देओ॥६॥

भावार्थः-जो विद्वानों के कुल की कन्या विद्वानों की बन्धु, ब्रह्मचर्य से विद्या को प्राप्त हुई प्रकाशमान हो, उसे पत्नी कर विधि से इसमें सन्तानों को जो उत्पन्न करे, वह पुरुष और वह स्त्री दोनों सुखी हों॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

या सुबाहुः स्वङ्गुरिः सुषूमा बहुसूवरी।
तस्यै विश्पत्न्यै हविः सिनीवाल्यै जुहोतन॥७॥

या। सुऽबाहुः। सुऽअङ्गुरिः। सुऽसूमा। बहुऽसूवरी। तस्यै। विश्पत्न्यै। हविः। सिनीवाल्यै। जुहोतन॥७॥

पदार्थः-(या) (सुबाहुः) शोभनौ बाहू यस्याः सा **(स्वङ्गुरिः)** शोभनाऽङ्गुरयोऽङ्गुलयो यस्याः सा **(सुषूमा)** सुष्ठु प्रसवित्री **(बहुसूवरी)** बहूनामपत्यानां जनयित्री तस्यै **(विश्पत्न्यै)** विशः प्रजायाः पालयित्र्यै **(हविः)** दातुमर्हं वीर्यम् **(सिनीवाल्यै)** प्रेमबद्धायै **(जुहोतन)** प्रक्षिपत॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! या सुबाहुः स्वङ्गुरिः सुषूमा बहुसूवरी स्त्री तस्यै विश्पत्न्यै सिनीवाल्यै हविर्जुहोतन॥७॥

भावार्थः-पुरुषैस्ता एव पत्न्यः सूत्तमाः सन्ति या सर्वाङ्गैः सुन्दर्यः बहुप्रजोत्पादयित्र्यः शुभगुणकर्मस्वभावा भवेयुरिति वेद्यम्। तासां मध्यादेकैकेन पुरुषेणैकैकया सह विवाहं कृत्वा प्रजोत्पत्तिर्विधेया॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(या)** जो **(सुबाहुः)** सुन्दर बाहु और **(स्वङ्गुरिः)** सुन्दर अंगुलियोंवाली तथा **(सुषूमा)** सुन्दर पुत्रोत्पत्ति करने और **(बहुसूवरी)** बहुत सन्तानों की उत्पन्न करनेवाली स्त्री है **(तस्यै)** उस **(विश्पत्न्यै)** प्रजाजनों की पालनेवाली **(सिनीवाल्यै)** प्रेम से सम्बद्ध हुई के लिये **(हविः)** देने योग्य वीर्य को **(जुहोतन)** छोड़ो॥७॥

भावार्थः-पुरुषों को यह जानना चाहिये कि वे ही पत्नी उत्तम होती हैं जो सर्वाङ्ग सुन्दरी, बहुत प्रजा उत्पन्न करनेवाली, शुभगुणकर्मस्वभावयुक्त हों, उनमें से एक-एक पुरुष को चाहिये कि एक-एक स्त्री के साथ विवाह करके प्रजा उत्पन्न करें॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

या गुङ्गूर्या सिनीवाली या राका या सरस्वती।

इन्द्राणीमह्व ऊतये वरुणानीं स्वस्तये॥८॥१५॥३॥

या। गुङ्गूः। या। सिनीवाली। या। राका। या। सरस्वती। इन्द्राणीम्। अह्वे। ऊतये। वरुणानीम्। स्वस्तये॥८॥

पदार्थः-**(या)** **(गुङ्गूः)** अव्यक्तोच्चारणा **(या)** **(सिनीवाली)** प्रेमास्पदप्रवणा **(या)** **(राका)** पौर्णमासीवद्वर्त्तमाना **(या)** **(सरस्वती)** विद्यासुशिक्षासहितया वाचा युक्ता **(इन्द्राणीम्)** परमैश्वर्ययुक्ताम् **(अह्वे)** आह्वयामि **(ऊतये)** रक्षणाद्याय **(वरुणानीम्)** श्रेष्ठस्य स्त्रियम् **(स्वस्तये)** सुखाय॥८॥

अन्वयः-हे पुरुषा! यथाऽहं या गुङ्गूर्या सिनीवाली या राका या च सरस्वती वर्त्तते तामिन्द्राणीमूतयेऽह्वे तां वरुणानीं स्वस्तयेऽह्वे तथा यूयमपि स्वकीयां स्वकीयां स्त्रियमाह्वयत॥८॥

भावार्थः-यदि काचित् स्त्री मूका काचिच्छ्रेष्ठा सर्वलक्षणसंपन्ना विदुषी भवेत् तयैश्वर्यसुखे सततं वर्द्धनीये इति॥८॥

अत्र विद्वन्मित्रस्त्रीगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इति द्वात्रिंशत्तमं सूक्तं पञ्चदशो वर्गस्तृतीयोऽनुवाकश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे पुरुषो! जैसे मैं **(या)** जो **(गुङ्गूः)** गुङ्गमुङ्ग बोले वा **(या)** जो **(सिनीवाली)** प्रेमास्पद को प्राप्त हुई **(या)** जो **(राका)** पौर्णमासी के समान वर्त्तमान अर्थात् जैसे चन्द्रमा की पूर्ण कान्ति से युक्त पौर्णमासी होती वैसी पूर्ण कान्तिमती और **(या)** जो **(सरस्वती)** विद्या तथा सुन्दर शिक्षासहित वाणी से युक्त वर्त्तमान है, उस **(इन्द्राणीम्)** परमैश्वर्य्ययुक्त को **(ऊतये)** रक्षा आदि के लिये **(अह्वे)** बुलाता हूँ, उस **(वरुणानीम्)** श्रेष्ठ की स्त्री को **(स्वस्तये)** सुख के लिये बुलाता हूँ, वैसे तुम भी अपनी-अपनी स्त्री को बुलाओ॥८॥

भावार्थः-यदि कोई स्त्री गूङ्गी और कोई उत्तम सर्वलक्षणसम्पन्न विदुषी हो, उससे ऐश्वर्य और सुख निरन्तर बढ़ाने चाहिये॥८॥

इस सूक्त में विद्वान् की मित्रता और स्त्री के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ के साथ पिछले सूक्तार्थ की सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह बत्तीसवां सूक्त, पन्द्रहवां वर्ग और तीसरा अनुवाक समाप्त हुआ॥

आ त इति पञ्चदशर्चस्य त्रयस्त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। रुद्रो देवता १, ५, ९, १३-१५ निचृत्त्रिष्टुप्। ३, ६, १०, ११ विराट् त्रिष्टुप्। ४, ८ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २, ७ पङ्क्तिः। १२ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ चिकित्सकविषयमाह॥

अब पन्द्रह ऋचावाले तेंतीसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में वैद्यक विषय को कहते हैं॥

आ ते॑ पितर्मरुतां सु॒म्नमे॑तु मा न॒: सूर्य॑स्य सं॒दृशो॑ युयोथाः।
अ॒भि नो॑ वी॒रो अर्व॑ति क्षमेत॒ प्र जा॑येमहि रुद्र प्र॒जाभि॑:॥ १॥

आ। ते॒। पि॒त॒रिति॑। म॒रु॒ता॒म्। सु॒म्नम्। ए॒तु॒। मा। न॒:। सूर्य॑स्य। स॒म्ऽदृश॑:। यु॒यो॒था॒:। अ॒भि। न॒:। वी॒र:। अर्व॑ति। क्ष॒मे॒त॒। प्र। जा॒ये॒म॒हि॒। रु॒द्र॒। प्र॒ऽजाभि॑:॥ १॥

पदार्थः-(आ) समन्तात् **(ते)** तव **(पितः)** पितृस्वरूप **(मरुताम्)** मनुष्याणाम् **(सुम्नम्)** सुखम् **(एतु)** प्राप्नोतु **(मा)** **(नः)** अस्मभ्यम् **(सूर्यस्य)** सूर्यस्येव वर्त्तमानस्य **(संदृशः)** यः सम्यक् पश्यति तस्य **(युयोथाः)** पृथक् कुर्याः **(अभि)** **(नः)** अस्माकम् **(वीरः)** शुभगुणव्यापी **(अर्वति)** उत्तमेऽश्वे स्थित्वा **(क्षमेत)** सहेत **(प्र)** **(जायेमहि)** **(रुद्र)** दुष्टानां रोदयितः **(प्रजाभिः)** सन्तानादिभिः॥ १॥

अन्वयः-हे मरुतां पिता रुद्र! सूर्यस्य संदृशस्ते सकाशान्न सुम्नमा एतु त्वं सुखादस्मान्मा युयोथा यतोऽर्वति स्थित्वा नो वीरोऽभि क्षमेत येन वयं प्रजाभिः सह प्रजायेमहि॥ १॥

भावार्थः-सर्वे मनुष्याः परमेश्वरं परमं पितरं न्यायकारिणं मत्वा सुखमभिवर्द्धयन्तु कदाचिदीश्वरं मत्वा विरुद्धा मा भवन्तु सहनशीला भूत्वा वीरत्वं संपाद्य प्रजया सह सुखयन्तु॥ १॥

पदार्थः-हे **(मरुताम्)** मनुष्यों के **(पितः)** पिता के समान **(रुद्र)** दुष्टों को रुलानेवाले! **(सूर्यस्य)** सूर्य्य के समान वर्त्तमान और **(संदृशः)** जो अच्छे प्रकार देते हैं, उन **(ते)** आपके सकाश से **(नः)** हमारे लिये **(सुम्नम्)** सुख **(आ, एतु)** आवे, आप सुख से हमें **(मा)** **(युयोथाः)** अलग न करें। जिससे **(अर्वति)** घोड़े पर चढ़ के **(नः)** हमारा **(वीरः)** शुभगुणों में व्याप्त जन **(अभि, क्षमेत)** सब ओर से सहन करे, जिससे हम लोग **(प्रजाभिः)** सन्तानादि प्रजाजनों के साथ **(प्र, जायेमहि)** प्रसिद्ध हों॥ १॥

भावार्थः-सब मनुष्य परमेश्वर को परमपिता न्यायकारी मान कर सुख बढ़ावें, कभी ईश्वर को मानकर विरुद्ध न हों, सहनशील होकर वीरता सिद्ध कर प्रजा के साथ सुखी हों॥ १॥

पुनर्वैद्यविषयमाह॥

फिर वैद्य विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वादत्तेभी रुद्र शंतमेभिः शतं हिमा अशीय भेषजेभिः।

व्य१स्मद्द्वेषो वितरं व्यंहो व्यमीवाश्चातयस्वा विषूचीः॥२॥

त्वाऽदत्तेभिः। रुद्र। शम्ऽतमेभिः। शतम्। हिमाः। अशीय। भेषजेभिः। वि। अस्मत्। द्वेषः। विऽतरम्। वि। अंहः। वि। अमीवाः। चातयस्व। विषूचीः॥२॥

पदार्थः-(त्वादत्तेभिः) त्वया दत्तेभिः **(रुद्र)** सर्वरोगदोषनिवारक **(शन्तमेभिः)** अतिशयेन सुखकारकैः **(शतम्) (हिमाः)** संवत्सरान् **(अशीय)** प्राप्नुयाम् **(भेषजेभिः)** औषधैः **(वि) (अस्मत्)** अस्माकं सकाशात् **(द्वेषः)** द्वेष्टॄन् ईर्ष्यादीन् दोषान् वा **(वितरम्)** विशेषण तरणीयमुल्लङ्घनीयम् **(वि) (अंहः)** पापात्मकं कर्म कुपथ्यादिकं वा **(वि) (अमीवाः)** रोगान् **(चातयस्व)** याचयस्व। अत्रा**न्येषामपी**ति दीर्घः। **(विषूचीः)** समग्रशरीरव्यापकान् रोगान्॥२॥

अन्वयः-हे रुद्र वैद्यराज! त्वमस्मान् वि चातयस्व त्वादत्तेभिश्शंतमेभिर्भेषजेभिर्विषूचीरमीवा वियोजयेर्दूरे कुर्याः। त्वमस्मद्द्वेषो वितरमंहश्च वियोजय यतोऽहं शतं हिमा आनन्दं व्यशीय॥२॥

भावार्थः-हे वैद्या! यूयं अत्युत्तमैरौषधैः सर्वेषां महतो रोगान्निवार्य्य रागद्वेषोन्मादादिदोषाँश्च वियोज्य शतवार्षिकान् प्रायो जनान् कुरुत॥२॥

पदार्थः-हे **(रुद्र)** सर्व रोगदोषों के निवारनेवाले वैद्यराज! आप हम लोगों को **(वि, चातयस्व)** विशेष कर जांचे **(त्वादत्तेभिः)** आपसे दी हुई **(शंतमेभिः)** अतीव सुख करनेवाली **(भेषजेभिः)** औषधों से **(विषूचीः)** समग्र शरीर में व्याप्त **(अमीवाः)** रोगों को दूर करो और आप **(अस्मत्)** हम से हमारे **(द्वेषः)** वैरियों को वा ईर्ष्या आदि दोषों को और **(वितरम्)** विशेषता से उल्लङ्घन करने योग्य **(अंहः)** पाप भरे हुए कर्म वा कुपथ्यादि कर्म को दूर करें, जिससे मैं **(शतम्)** सौ **(हिमाः)** संवत्सर आनन्द को **(वि, अशीय)** विशेष कर प्राप्त होऊँ॥२॥

भावार्थः-हे वैद्य लोगो! तुम अत्युत्तम ओषधियों से सबके बड़े-बड़े रोगों को निवारण करके राग-द्वेषों को और उन्माद आदि दोषों को अलग कर शतवर्ष आयु जिनकी ऐसे मनुष्यों को सिद्ध करो॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

श्रेष्ठो जातस्य रुद्र श्रियासि तवस्तमस्तवसां वज्रबाहो।

पर्षि णः पारमंहसः स्वस्ति विश्वा अभीती रपसो युयोधि॥३॥

श्रेष्ठः। जातस्य। रुद्र। श्रिया। असि। तवःऽतमः। तवसाम्। वज्रबाहो इति वज्रऽबाहो। पर्षि। नः। पारम्। अंहसः। स्वस्ति। विश्वाः। अभिऽईतीः। रपसः। युयोधि॥३॥

पदार्थः-(श्रेष्ठः) अतिशयेन प्रशंसितः **(जातस्य)** प्रसिद्धस्य जगतो मध्ये **(रुद्र)** रोगाणां प्रलयकृत् **(श्रिया)** शोभया लक्ष्म्या वा **(असि)** **(तवस्तमः)** अतिशयेन बली **(तवसाम्)** बलिनाम् **(वज्रबाहो)** वज्रवदौषधं बाहौ यस्य तत्सम्बुद्धौ **(पर्षि)** पारयसि **(नः)** अस्मान् **(पारम्)** **(अंहसः)** कुपथ्यजन्याऽपराधात् **(स्वस्ति)** सुखम् **(विश्वाः)** सर्वाः **(अभीतीः)** अभितः सर्वत इत्या प्राप्त्या **(रपसः)** पापस्य **(युयोधि)** पृथक् करोषि॥३॥

अन्वयः-हे वज्रबाहो रुद्र! यतस्त्वं तवसां तवस्तमो जातस्य श्रेष्ठः श्रिया सह वर्त्तमानोऽसि नोऽस्मानंहसो रपसः पारं पर्षि विश्वा अभीतीः पीडा युयोधि स्वस्ति जनयसि तस्मादस्माभिः सत्कर्त्तव्योऽसि॥३॥

भावार्थः-ये स्वयमरोगाः शोभमाना बलिष्ठा वैद्या अन्यानरोगान् कृत्वा सततं सुखयन्ति, ते सर्वैः सर्वदा सत्कर्त्तव्याः॥३॥

पदार्थः-हे **(वज्रबाहो)** वज्र के तुल्य औषध बाहु में रखने और **(रुद्र)** रोगों के लोप करनेवाले! जिससे आप **(तवसाम्)** बलिष्ठों में **(तवस्तमः)** अतीव बलवान् **(जातस्य)** प्रसिद्ध जगत के बीच **(श्रेष्ठः)** अत्यन्त प्रशंसायुक्त **(श्रिया)** शोभा वा लक्ष्मी के साथ वर्त्तमान **(असि)** हो वा **(नः)** हम लोगों को **(अंहसः)** कुपथ्य से उत्पन्न हुए **(रपसः)** कर्म से **(पारम्)** पार **(पर्षि)** पहुँचाते हो वा **(विश्वाः)** **[(अभीतीः)]** समस्त पीड़ाओं को **(युयोधि)** अलग करते हो वा **(स्वस्ति)** सुख उत्पन्न करते हो, इससे हम लोगों से सत्कार पाने योग्य हो॥३॥

भावार्थः-जो आप रोगरहित शोभते हुए अतीव बलवान् हैं, औरों को रोगरहित करके निरन्तर सुखी करते हैं, वे सबको सर्वदा सत्कार करने योग्य हैं॥३॥

पुनर्वैद्यकविषयमाह॥

फिर वैद्यक विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

मा त्वा रुद्र चुक्रुधामा नमोभिर्मा दुष्टुती वृषभ मा सहूती।
उन्नो वीराँ अर्पय भेषजेभिर्भिषक्तमं त्वा भिषजां शृणोमि॥४॥

मा। त्वा। रुद्र। चुक्रुधाम। नमःऽभिः। मा। दुःऽस्तुती। वृषभ। मा। सऽहूती। उत्। नः। वीरान्। अर्पय। भेषजेभिः। भिषक्ऽतमम्। त्वा। भिषजाम्। शृणोमि॥४॥

पदार्थः-(मा) **(त्वा)** त्वाम् **(रुद्र)** कुपथ्यकारिणां रोदयितः **(चुक्रुधाम)** कुपिता भवेम। अत्राऽ**न्येषामपी**ति दीर्घः। **(नमोभिः)** सत्कारैः **(मा)** **(दुष्टुती)** दुष्टया स्तुत्या। अत्र **सुपामि**ति पूर्वसवर्णः। **(वृषभ)** श्रेष्ठ **(मा)** **(सहूती)** समानया स्पर्द्धया **(उत्)** **(नः)** अस्मभ्यम् **(वीरान्)** अरोगान् बलिष्ठान् पुत्रादीन् **(अर्पय)** समर्पय **(भेषजेभिः)** रोगनिवारकैरौषधैः **(भिषक्तमम्)** वैद्यशिरोमणिम् **(त्वा)** त्वाम् **(भिषजाम्)** वैद्यानां मध्ये **(शृणोमि)**॥४॥

अन्वयः-हे वृषभ रुद्र! वयं दुष्टुती त्वा प्रति मा चुक्रुधाम सहूती मा चुक्रुधाम त्वया सह विरोधं मा कुर्य्याम, किन्तु नमोभिः सततं सत्कुर्य्याम यन्त्वाहं भिषजां भिषक्तमं शृणोमि स त्वं भेषजेभिर्नो वीरानुदर्पय॥४॥

भावार्थः-केनचिद्वैद्येन सह विरोधः कदाचिन्न कर्त्तव्यो नैतेन सहेर्ष्या कार्य्या, किन्तु प्रीत्या सर्वोत्तमो वैद्यः सेवनीयो येन रोगेभ्यः पृथग् भूत्वा सुखं सततं वर्द्धेत॥४॥

पदार्थः-हे **(वृषभ)** श्रेष्ठ **(रुद्र)** कुपथ्यकारियों को रुलानेवाले! हम लोग **(दुष्टुती)** दुष्ट स्तुति से **(त्वा)** आपके **(प्रति)** प्रति **(मा)** मत **(चुक्रुधाम)** क्रोध करें। **(सहूती)** समान स्पर्द्धा से **(मा)** मत क्रोध करें, आपके साथ विरोध **(मा)** मत करें, किन्तु **(नमोभिः)** सत्कार के साथ निरन्तर सत्कार करें। जिन **(त्वा)** आपको मैं **(भिषजाम्)** वैद्यों के बीच **(भिषक्तमम्)** वैद्यों के शिरोमणि **(शृणोमि)** सुनता हूँ सो आप **(भेषजेभिः)** रोग निवारनेवाली ओषधियों से **(नः)** हम लोगों के लिये **(वीरान्)** वीर नीरोग पुत्रादिकों को **(उत्, अर्पय)** उत्तमता से सौंपें॥४॥

भावार्थः-किसी को वैद्य के साथ विरोध कभी न करना चाहिये, न इसके साथ ईर्ष्या करनी चाहिये, किन्तु प्रीति के साथ सर्वोत्तम वैद्य की सेवा करनी चाहिये, जिससे रोगों से अलग होकर सुख निरन्तर बढ़े॥४॥

पुनर्वैद्यविषयमाह॥

फिर वैद्य विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

हवीमभिर्हवते यो हविर्भिरव स्तोमेभी रुद्रं दिषीय।

ऋदूदरः सुहवो मा नो अस्यै बभ्रुः सुशिप्रो रीरधन्मनायै॥५॥१६॥

हवीमऽभिः। हवते। यः। हविःऽभिः। अव। स्तोमेभिः। रुद्रम्। दिषीय। ऋदूदरः। सुऽहवः। मा। नः। अस्यै। बभ्रुः। सुऽशिप्रः। रीरधत्। मनायै॥५॥

पदार्थः-(हवीमभिः) सुष्ठ्वौषधदानैः **(हवते)** स्पर्द्धते **(यः)** जनः **(हविर्भिः)** होतुं ग्रहीतुमर्हैः **(अव)** **(स्तोमेभिः)** श्लाघाभिः **(रुद्रम्)** वैद्यम् **(दिषीय)** खण्डयेयम् **(ऋदूदरः)** मृदूदरः। **ऋदूदरः सोमो मृदूदरो मृदुरुदरेष्विति [वा]** (निरुक्ते ६.४)। **(सुहवः)** सुष्ठुदानः **(मा)** **(नः)** अस्माकम् **(अस्यै)** **(बभ्रुः)** पालकः **(सुशिप्रः)** सुन्दराननः **(रीरधत्)** हिंस्यात् **(मनायै)** मन्यमानायै प्रज्ञायै॥५॥

अन्वयः-यो हवीमभिर्नोऽस्मान् हवते तं रुद्रमहं हविर्भिः स्तोमेभिरव दिषीय मा खण्डयेयम्। यतः सुहव ऋदूदरो बभ्रुः सुशिप्रो वैद्यो नोऽस्यै मनायै मा रीरधत्॥५॥

भावार्थः-ये वैद्या रोगानिवारणेनास्माकं प्रज्ञां वर्द्धयन्ति तैस्सह वयं कदाचिन्न विरुध्येम॥५॥

पदार्थः-(यः) जो वैद्यजन **(हवीमभिः)** सुन्दर ओषधियों के देने से हम लोगों की **(हवते)** स्पर्द्धा करता है, उस **(रुद्रम्)** वैद्य को मैं **(हविर्भिः)** ग्रहण करने योग्य **(स्तोमेभिः)** श्लाघाओं से **(अव, दिषीय)** न खण्डन करूं अर्थात् न उसे क्लेश देऊं, जिससे **(सुहवः)** सुन्दर दानशील **(ऋदूदरः)** कोमल उदरवाला **(बभ्रुः)** पालनकर्त्ता **(सुशिप्रः)** सुन्दर मुखयुक्त वैद्य **(नः)** हमारी **(अस्यै)** इस **(मनायै)** माननेवाली बुद्धि के लिये **(मा)** मत **(रीरधत्)** हिंसा करें॥५॥

भावार्थः-जो वैद्यजन रोग निवारण से हमारी बुद्धि को बढ़ाते हैं, उनके साथ हम लोग कभी न विरोध करें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उन्मा॑ ममन्द वृष॒भो म॒रुत्वा॒न् त्वक्षी॑यसा॒ वय॑सा॒ नाध॑मानम्।
घृणी॑व छा॒याम॑र॒पा अ॑शी॒या वि॑वा॒से॑यं रु॒द्रस्य॑ सु॒म्नम्॥६॥

उत्। मा॒। म॒म॒न्द॒। वृ॒ष॒भः। म॒रुत्वा॑न्। त्वक्षी॑यसा। वय॑सा। नाध॑मानम्। घृणि॑ऽइव। छा॒याम्। अ॒र॒पाः। अ॒शी॒य॒। आ। वि॒वा॒से॒य॒म्। रु॒द्रस्य॑। सु॒म्नम्॥६॥

पदार्थः-(उत्) **(मा)** माम् **(ममन्द)** मन्दते कामयते **(वृषभः)** सुखानां वर्षयिता **(मरुत्वान्)** मनुष्यादिबहुप्रजायुक्तः **(त्वक्षीयसा)** प्रदीप्तेन **(वयसा)** आयुषा **(नाधमानम्)** याचमानम् **(घृणीव)** प्रदीप्तः सूर्य्यइव **(छायाम्)** गृहम्। **छायेति गृहनामसु पठितम्।** (निघं०३.४)। **(अरपाः)** अविद्यमानं रपः पापं यस्य सः **(अशीय)** प्राप्नुयाम्। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(आ)** **(विवासेयम्)** परिचरेयम् **(रुद्रस्य)** वैद्यस्य सकाशात् **(सुम्नम्)** सुखम्॥६॥

अन्वय:-यो वृषभो मरुत्वानरपा वैद्यस्त्वक्षीयसा वयसा नाधमानं मा उन्ममन्द तस्य सकाशादहं घृणीव छायां विवासेयम्। सुम्नमाशीय॥६॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कार:। ये वैद्या अस्माकं रोगान्निवार्य्य दीर्घायुषो जनान् कुर्वन्ति, ते सूर्य्यइव प्रदीप्तकीर्त्तयो भवन्ति॥६॥

पदार्थ:–जो **(वृषभ:)** सुखों को वर्षानेवाले **(मरुत्वान्)** मनुष्य आदि बहुत प्रजाजनों से युक्त **(अरपा:)** अविद्यमान पाप-निष्पाप वैद्य **(त्वक्षीयसा)** प्रदीप्त **(वयसा)** आयु से **(नाधमानम्)** याचना किया हुआ **(मा)** मुझको **(उत्, ममन्द)** उत्तमता से चाहते हो, उनकी उत्तेजना से मैं **(घृणीव)** सूर्य्य के समान **(छायाम्)** घर का **(विवासेयम्)** सेवन करूं और **(सुम्नम्)** सुख को **(आ, अशीय)** अच्छे प्रकार प्राप्त करूं॥६॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो वैद्य हमारे रोगों का निवारण कर मनुष्यों को दीर्घ आयुवाले करते हैं, वे सूर्य्य के समान प्रकाशित कीर्तिवाले होते हैं॥६॥

पुनर्वैद्यकविषयमाह॥

फिर वैद्यक विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

क्व१ स्य ते रुद्र मृळयाकुर्हस्तो यो अस्ति भेषजो जलाषः।

अपभर्ता रपसो दैव्यस्याभी नु मा वृषभ चक्षमीथाः॥७॥

क्व। स्यः। ते। रुद्र। मृळयाकुः। हस्तः। यः। अस्ति। भेषजः। जलाषः। अपऽभर्ता। रपसः। दैव्यस्य। अभि। नु। मा। वृषभ। चक्षमीथाः॥७॥

पदार्थ:-**(क्व)** कुत्र **(स्य:)** स: **(ते)** तव **(रुद्र)** दु:खनिवारक **(मृळयाकु:)** सुखयिता **(हस्त:)** यो हसति स: **(य:)** **(अस्ति)** **(भेषज:)** भिषग् जन: **(जलाष:)** सुखकर्त्ता **(अपभर्त्ता)** अपबिभर्त्ति दूरीकरोतीति **(रपस:)** पापानि **(दैव्यस्य)** यो देवै: सह वर्त्तते तस्य **(अभि)** अभिमुख्ये **(नु)** सद्य: **(मा)** माम् **(वृषभ)** श्रेष्ठ **(चक्षमीथा:)** सहस्व॥७॥

अन्वय:-हे वृषभ रुद्र! त्वं दैव्यस्य मध्ये माभिचक्षमीथा:। यस्ते मृळयाकुर्हस्तो भेषजो जलाषो रपसोऽपभर्त्ताऽस्ति स्य: क्वास्ति॥७॥

भावार्थ:-यदाऽध्यापको वैद्य: शिष्यानध्यापयेत्तदा सम्यगध्याप्य पुन: परीक्षयेत्। यो याथातथ्येन प्रश्नोत्तराणि कर्त्ता स्यात्तं वैद्यककार्य्ये नियुञ्जीध्वम्॥७॥

पदार्थ:–हे **(वृषभ)** श्रेष्ठ **(रुद्र)** दु:खनिवारक वैद्य! आप **(दैव्यस्य)** जो देवों के साथ वर्तमान उसके बीच **(मा)** मुझे **(अभि, चक्षमीथा:)** सब ओर से सहन कीजिये **(य:)** जो **(ते)**

आपको **(मृळयाकुः)** सुख देनेवाला **(हस्तः)** हर्षमुख **(भेषजः)** वैद्यजन **(जलाषः)** सुखकर्त्ता और **(रपसः)** पापों को **(अपभर्त्ता)** अपभर्त्ता अर्थात् दूरकर्त्ता **(अस्ति)** है **(स्यः)** वह **(क्व)** कहाँ है॥७॥

भावार्थः-जब अध्यापक वैद्य शिष्यों को पढ़ावे तब अच्छे प्रकार पढ़ाकर फिर परीक्षा करे। जो यथार्थ प्रश्नोत्तर करनेवाला हो, उसको वैदिकी [=वैद्यककार्य] करने को आज्ञा देओ॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

प्र ब॒भ्रवे॑ वृष॒भाय॑ श्विती॒चे म॒हो म॒हीं सु॑ष्टु॒तिमी॑रयामि।
न॒म॒स्या क॑ल्मली॒किनं॒ नमो॑भिर्गृणी॒मसि॑ त्वे॒षं रु॒द्रस्य॒ नाम॑॥८॥

प्र। ब॒भ्रवे॑। वृ॒ष॒भाय॑। श्वि॒ती॒चे। म॒हः। म॒हीम्। सु॒ऽस्तु॒तिम्। ई॒र॒या॒मि। न॒म॒स्य। क॒ल्म॒ली॒किन॑म्। नमः॑ऽभिः। गृ॒णी॒मसि॑। त्वे॒षम्। रु॒द्रस्य॑। नाम॑॥८॥

पदार्थः-**(प्र)** **(बभ्रवे)** धारकाय **(वृषभाय)** श्रेष्ठाय **(श्वितीचे)** यः श्वितिमावरणमञ्चति तस्मै **(महः)** महते **(महीम्)** महतीम् **(सुष्टुतिम्)** शोभनां स्तुतिम् **(ईरयामि)** प्रेरयामि **(नमस्य)** नम्रो भव। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(कल्मलीकिनम्)** देदीप्यमानम्। **कल्मलीकिनमिति ज्वलतो नाम।** (निघं०१.१७)। **(नमोभिः)** नमस्कारैः **(गृणीमसि)** प्रशंसामः **(त्वेषम्)** प्रकाशमानम् **(रुद्रस्य)** सद्वैद्यस्य **(नाम)**॥८॥

अन्वयः-हे वैद्य! यस्मै वृषभाय बभ्रवे महः श्वितीचे वैद्याय महीं सुष्टुतिं प्रेरयामि स त्वं मां नमस्य यस्य रुद्रस्य कल्मलीकिनं त्वेषं नामास्ति तं वयं नमोभिर्गृणीमसि॥८॥

भावार्थः-विद्यार्थिनां योग्यताऽस्ति यो विद्या ग्राहयेत्तं सदा सत्कुर्य्युः। यस्य वैद्यकशास्त्रे प्रसिद्धिरस्ति तस्मादेव वैद्यकविद्याऽध्येतव्या॥८॥

पदार्थः-हे वैद्य! जिस **(वृषभाय)** श्रेष्ठ **(बभ्रवे)** धारण करनेवाले **(महः)** बड़े **(श्वितीचे)** आवरण को प्राप्त होते हुए वैद्य के लिये **(महीम्)** बड़ी **(सुष्टुतिम्)** सुन्दर स्तुति की **(प्र, ईरयामि)** प्रेरणा देता हूँ। सो आप मुझे **(नमस्य)** नमिये, जिस **(रुद्रस्य)** अच्छे वैद्य का **(कल्मलीकिनम्)** देदीप्यमान **(त्वेषम्)** प्रकाशमान **(नाम)** नाम है, उसकी हम लोग **(नमोभिः)** सत्कारों से **(गृणीमसि)** प्रशंसा करते हैं॥८॥

भावार्थ:-विद्यार्थियों को योग्य है कि जो विद्या ग्रहण करावे उसका सदा सत्कार करें, जिसकी वैद्यक शास्त्र में प्रसिद्धि है, उसी से वैद्य विद्या का अध्ययन करना चाहिये॥८॥

अथ राजपुरुषविषयमाह॥

अब राजपुरुष के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स्थिरेभिरङ्गैः पुरुरूप उग्रो बभ्रुः शुक्रेभिः पिपिशे हिरण्यैः।
ईशानादस्य भुवनस्य भूरेर्न वा उ योषद्रुद्रादसुर्यम्॥९॥

स्थिरेभिः। अङ्गैः। पुरुऽरूपः। उग्रः। बभ्रुः। शुक्रेभिः। पिपिशे। हिरण्यैः। ईशानात्। अस्य। भुवनस्य। भूरेः। न। वै। ऊम् इति। योषत्। रुद्रात्। असुर्यम्॥९॥

पदार्थ:-(**स्थिरेभिः**) दृढैः (**अङ्गैः**) अवयवैः (**पुरुरूपः**) बहुरूपयुक्तः (**उग्रः**) क्रूरस्वभावः (**बभ्रुः**) धर्त्ता (**शुक्रेभिः**) शुद्धैर्वीर्य्यैः (**पिपिशे**) पिंश्यात् (**हिरण्यैः**) किरणैरिव तेजोभिः (**ईशानात्**) जगदीश्वरात् (**अस्य**) (**भुवनस्य**) सर्वाधिकरणस्य लोकस्य (**भूरेः**) बहुरूपस्य (**न**) इव (**वै**) निश्चये (**उ**) वितर्के (**योषत्**) वियोजयेः (**रुद्रात्**) जगदीश्वरात् (**असुर्यम्**) असुरस्य स्वम्॥९॥

अन्वय:-हे पुरुष! पुरुरूप उग्रो बभ्रुर्भवान् स्थिरेभिरङ्गैः शुक्रेभिर्हिरण्यैरीशानाद्रुद्रादस्य भुवनस्य भूरेर्न इव शत्रुदलं पिपिशे स उ वा असुर्य्यं योषत्॥९॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कारः। ये तीव्रमृदुस्वभावास्ते यथा जगदीश्वरनिर्मितानि भूम्यादीनि वस्तूनि दृढानि सुन्दराणि सन्ति तथा बलिष्ठैः प्रशस्तैः सेनाङ्गैः दुष्टानां विजयं कृत्वाऽसुरभावं निवारयेयुः॥९॥

पदार्थ:–हे पुरुष! (**पुरुरूपः**) बहुत रूपों से युक्त (**उग्रः**) क्रूरस्वभावी (**बभ्रुः**) उत्तम व्यवहारों को धारण करनेवाले आप (**स्थिरेभिः**) दृढ़ (**अङ्गैः**) अवयवों से (**शुक्रेभिः**) शुद्ध वीर्य (**हिरण्यैः**) और किरणों के समान तेजों से (**ईशानात्**) ईश (**रुद्रात्**) पापियों को रुलानेवाले जगदीश्वर से (**अस्य**) इस (**भुवनस्य**) सर्वाधिकरण लोक के (**भूरेः**) बहुरूपियों के (**न**) जैसे वैसे शत्रुदल को (**पिपिशे**) पीसते हुए (**उ, वै**) वही आप (**असुर्यम्**) असुर के स्वत्व का (**योषत्**) वियोग कीजिये॥९॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो तीव्र और मृदु स्वभाववाले हैं, वे जैसे जगदीश्वर के बनाये हुए भूमि आदि पदार्थ दृढ़ और सुन्दर हैं, वैसे बलिष्ठ प्रशंसनीय सेनाङ्गों से दुष्टों को विजय कर असुरभाव का निवारण करें॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अर्हन्बिभर्षि सायकानि धन्वार्हन्निष्कं यजतं विश्वरूपम्।

अर्हन्निदं दयसे विश्वमभ्वं न वा ओजीयो रुद्र त्वदस्ति॥ १०॥ १७॥

अर्हन्। बिभर्षि। सायकानि। धन्व। अर्हन्। निष्कम्। यजतम्। विश्वऽरूपम्। अर्हन्। इदम्। दयसे। विश्वम्। अभ्वम्। न। वै। ओजीयः। रुद्र। त्वत्। अस्ति॥ १०॥

पदार्थः-(**अर्हन्**) योग्यो भवान् (**बिभर्षि**) धरसि (**सायकानि**) शस्त्रास्त्राणि (**धन्व**) धनुरादीनि (**अर्हन्**) (**निष्कम्**) सुवर्णभूषणम् (**यजतम्**) सङ्गन्तव्यम् (**विश्वरूपम्**) विचित्रस्वरूपम् (**अर्हन्**) (**इदम्**) (**दयसे**) (**विश्वम्**) सर्वं जगत् (**अभ्वम्**) महत् (**न**) निषेधे (**वै**) निश्चये (**ओजीयः**) बलिष्ठम् (**रुद्र**) दुष्टानां रोदयितः (**त्वत्**) (**अस्ति**)॥१०॥

अन्वयः-हे रुद्र! यस्त्वमर्हन्त्सन् सायकानि धन्व बिभर्ष्यर्हन्विश्वरूपं यजतं निष्कं बिभर्ष्यर्हन्निदमभ्वं विश्वं दयसे तस्मात्त्वदन्यदोजीयो वै नास्ति॥१०॥

भावार्थः-ये योग्यतां प्राप्यायुधानि सेना राज्यं धनञ्च धरन्ति सर्वेषां धर्मात्मनामुपरि दयां च कुर्वन्ति, ते बलिष्ठा जायन्ते॥१०॥

पदार्थः-हे (**रुद्र**) दुष्टों को रुलानेवाले! जो आप (**अर्हन्**) योग्य होते हुए (**सायकानि**) शस्त्र और अस्त्रों को (**धन्व**) तथा धनुर्बाण आदि को (**बिभर्षि**) धारण करते हैं वा (**अर्हन्**) योग्य होते हुए (**विश्वरूपम्**) चित्र-विचित्र रूपवाले (**यजतम्**) सङ्गम करने योग्य (**निष्कम्**) सुवर्ण के आभूषण को धारण करते वा (**अर्हन्**) योग्य होते हुए (**इदम्**) इस (**अभ्वम्**) महान् (**विश्वम्**) समस्त जगत् की (**दयसे**) रक्षा करते हैं, इस कारण (**त्वत्**) आप से अन्य (**ओजीयः**) बलवाला (**न**) नहीं है॥१०॥

भावार्थः-जो योग्यता को प्राप्त होकर आयुध सेना राज्य और धन को धारण करते तथा सब धर्मात्माओं पर दया करते हैं, वे बलिष्ठ होते हैं॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स्तुहि श्रुतं गर्तसदं युवानं मृगं न भीममुपहत्नुमुग्रम्।

मृळा जरित्रे रुद्र स्तवानोऽन्यं ते अस्मन्नि वपन्तु सेनाः॥ ११॥

स्तुहि। श्रुतम्। गर्तऽसदम्। युवानम्। मृगम्। न। भीमम्। उपऽहत्नुम्। उग्रम्। मृळ। जरित्रे। रुद्र। स्तवानः। अन्यम्। ते। अस्मत्। नि। वपन्तु। सेनाः॥ ११॥

पदार्थः-(स्तुहि) (श्रुतम्) यशश्रुतवान् तम् **(गर्त्तसदम्)** यो गर्त्ते गृहे सीदति तम् **(युवानम्)** पूर्णबलम् **(मृगम्)** सिंहम् **(न)** इव **(भीमम्)** भयङ्करम् **(उपहत्नुम्)** य उपहन्ति तम् **(उग्रम्)** क्रूरम् **(मृळ)** सुखय। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(जरित्रे)** स्तावकाय **(रुद्र)** अन्यायकारिणो रोदयितः **(स्तवानः)** स्तुवन् **(अन्यम्)** धर्मात्मानम् **(ते)** तव **(अस्मत्)** अस्माकं सकाशात् **(नि) (वपन्तु)** विस्तारयन्तु **(सेनाः)** बलानि॥११॥

अन्वयः-हे रुद्र सेनेश! त्वं मृगं न भीमं श्रुतं गर्त्तसदमुपहत्नुमुग्रं युवानं स्तुहि जरित्रे मृळ स्तवानः सन्नन्यं प्रशंस यतो विद्वांसोऽस्मत्ते सेना नि वपन्तु॥११॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये राज्यं वर्द्धितुमिच्छेयुस्ते सिंहवच्छत्रूणां भयङ्कराञ्छ्रेष्ठानामानन्दप्रदान् राजकार्य्ये सेनायां च सत्कृत्य नियोज्य न्यायेन राज्यं सततं पालयेयुः॥११॥

पदार्थः–हे **(रुद्र)** अन्यायकारियों को रुलानेवाले सेनापति! आप **(मृगम्)** सिंह के **(न)** समान **(भीमम्)** भयङ्कर **(श्रुतम्)** जो सुने हैं उस **(गर्त्तसदम्)** घर में बैठ कर **(उपहत्नुम्)** और समीप में मारते हुए **(उग्रम्)** क्रूर **(युवानम्)** पूर्ण बलवाले पुरुष की **(स्तुहि)** स्तुति कर और **(जरित्रे)** स्तुति करनेवाले के लिये **(मृळ)** सुखी कर **(स्तवानः)** स्तुति करता हुआ **(अन्यम्)** और धर्मात्मा की प्रशंसा कर जिससे विद्वान् **(अस्मत्)** मेरी उत्तेजना से **(ते)** तेरी **(सेनाः)** सेना अर्थात् बल को **(नि, वपन्तु)** विस्तारें॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राज्य बढ़ाने की इच्छा करें, वे सिंह के समान शत्रुओं में भयङ्कर और श्रेष्ठों में आनन्द देनेवालों का राजकार्य्य और सेना में सत्कार कर और उनको आज्ञा दे न्याय से निरन्तर राज्य की पालना करें॥११॥

अथ विद्याध्ययनविषयमाह॥

अब विद्याध्ययन विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

कुमारश्चित्पितरं वन्दमानं प्रति नानाम रुद्रोपयन्तम्।
भूरेर्दातारं सत्पतिं गृणीषे स्तुतस्त्वं भेषजा रास्यस्मे॥१२॥

कुमारः। चित्। पितरम्। वन्दमानम्। प्रति। ननाम। रुद्र। उपऽयन्तम्। भूरेः। दातारम्। सत्ऽपतिम्। गृणीषे। स्तुतः। त्वम्। भेषजा। रासि। अस्मे इति॥१२॥

पदार्थः-(कुमारः) ब्रह्मचारी **(चित्)** इव **(पितरम्)** जनकम् **(वन्दमानम्)** स्तूयमानम्। अत्र कर्मणि शानच्। **(प्रति) (ननाम)** नमति। अत्र **तुजादीनामित्यभ्यासदैर्घ्यम्**॥ (अष्टा०६.१.७) **(रुद्र)**

(उपयन्तम्) समीपं प्राप्नुवन्तम् **(भूरेः)** बहोः **(दातारम्)** **(सत्पतिम्)** सतां पालकम् **(गृणीषे)** स्तौषि **(स्तुतः)** प्रशंसितः **(त्वम्)** **(भेषजा)** औषधानि **(रासि)** ददासि **(अस्मे)** अस्मभ्यम्॥१२॥

अन्वयः-हे रुद्र! स्तुतस्त्वं पितरं कुमारश्चिद्वन्दमानमुपयन्तं भूरेर्दातारं सत्पतिं प्रति ननाम गृणीषेऽस्मे भेषजा रास्यतोऽस्माभिः सत्कर्त्तव्योऽसि॥१२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा सत्पुत्रः पितरं सत्करोति नमति स्तौति तथा सदध्येताऽध्यापकं प्रसादयति॥१२॥

पदार्थः-हे **(रुद्र)** दुष्टों को रुलानेवाले विद्वान्! **(स्तुतः)** प्रशंसा को प्राप्त **(त्वम्)** आप **(पितरम्)** पिता को **(कुमारः)** ब्रह्मचारी **(चित्)** जैसे वैसे **(वन्दमानम्)** स्तुति को प्राप्त और **(उपयन्तम्)** समीप आते हुए **(भूरेः)** बहुत पदार्थ के **(दातारम्)** देने वा **(सत्पतिम्)** सज्जनों के पालनेवाले विद्वान् के प्रति **(ननाम)** नमस्कार करता वा **(गृणीषे)** उसकी स्तुति करते हैं तथा **(अस्मे)** हम लोगों के लिये **(भेषजा)** औषधों को **(रासि)** देता है, इससे हम लोगों को सत्कार करने के योग्य हैं॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे अच्छा पुत्र पिता का सत्कार करता वा नमता वा स्तुति करता है, वैसे अच्छा विद्यार्थी पढ़ानेवाले को प्रसन्न करता है॥१२॥

अथ पुनर्वैद्यकविषयमाह॥

अब फिर वैद्यक विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

या वो भेषजा मरुतः शुचीनि या शंतमा वृषणो या मयोभु।
यानि मनुरवृणीता पिता नस्ता शं च योश्च रुद्रस्य वश्मि॥१३॥

या। वः। भेषजा। मरुतः। शुचीनि। या। शम्ऽतमा। वृषणः। या। मयःऽभु। यानि। मनुः। अवृणीत। पिता। नः। ता। शम्। च। योः। च। रुद्रस्य। वश्मि॥१३॥

पदार्थः-**(या)** यानि **(वः)** युष्मभ्यम् **(भेषजा)** औषधानि **(मरुतः)** मनुष्यान् **(शुचीनि)** पवित्राणि **(या)** यानि **(शन्तमा)** अतिशयेन सुखकराणि **(वृषणः)** वर्षयितारः **(या)** यानि **(मयोभु)** सुखं भावुकानि **(यानि)** **(मनुः)** वैद्यकविद्यावित् **(अवृणीत)** स्वीकरोति। अत्राऽ**न्येषामपी**ति दीर्घः। **(पिता)** जनकः **(नः)** अस्मभ्यम् **(ता)** तानि **(शम्)** सुखम् **(च)** बलम् **(योः)** त्यक्तव्यस्य **(च)** उत्पद्यमानस्य **(रुद्रस्य)** रोदयितृ रोगस्य **(वश्मि)** कामये॥१३॥

अन्वयः-हे वृषणो! मरुतो यथा या शुचीनि या शन्तमा या मयोभु यानि रोगनिवारकाणि भेषजा वो मनुः पिता अवृणीत ता वो नश्च योश्च रुद्रस्य निवारणाय शञ्च भावनाय तथाऽहं वश्मि॥१३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यैः पितृपितामहेभ्योऽध्यापकेभ्योऽन्येभ्यो विद्वद्भ्यश्च प्रतिरोगस्य निवारणायौषधीर्विज्ञाय स्वेषां परेषां च रोगान्निवार्य सर्वार्थसुखं कामनीयम्॥१३॥

पदार्थः–हे **(वृषणः)** वृष्टि करानेवाले विद्वानो! जैसे **(मरुतः)** मनुष्यों को और **(या)** जिन **(शुचीनि)** शुद्ध वा **(या)** जिन **(शन्तमा)** अतीव सुख करने वा **(या)** जिन **(मयोभु)** सुख की भावना देने वा **(यानि)** जिस रोग निवारनेवाली **(भेषजा)** औषधों को **(वः)** तुम्हारे लिये **(मनुः)** वैद्यविद्या जाननेवाला **(पिता)** पिता **(अवृणीत)** स्वीकार करता है, वह तुम्हारे **(च)** और **(नः)** हमारे लिये **(योः)** न्याय करने **(रुद्रस्य)** और रुलानेवाले रोग की निवृत्ति के लिये **(च)** और **(शम्)** कल्याण की भावना के लिये होती वैसी मैं **(वश्मि)** कामना करूं॥१३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि पिता और पितामहों तथा अध्यापक वा अन्य विद्वानों से प्रतिरोग के निवारण के अर्थ औषधियों को जानकर अपने और दूसरों के रोगों को निवारण करके सबके लिये सुख की कांक्षा करें॥१३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

परि णो हेती रुद्रस्य वृज्याः परि त्वेषस्य दुर्मतिर्मही गात्।

अव स्थिरा मघवद्भ्यस्तनुष्व मीढ्वस्तोकाय तनयाय मृळ॥१४॥

परि। नः। हेतिः। रुद्रस्य। वृज्याः। परि। त्वेषस्य। दुःऽमतिः। मही। गात्। अव। स्थिरा। मघवत्ऽभ्यः। तनुष्व। मीढ्वः। तोकाय। तनयाय। मृळ॥१४॥

पदार्थः-**(परि)** सर्वतः **(नः)** अस्मान् **(हेतिः)** वज्रादिव पीडा। **हेतिरिति वज्रनामसु पठितम्।** (निघं०२.२०)। **(रुद्रस्य)** दुःखप्रदस्य रोगस्य **(वृज्याः)** वर्जनीयाः पीडाः **(परि)** अभितः **(त्वेषस्य)** प्रदीप्तस्य **(दुर्मतिः)** दुष्टा मतिः **(मही)** महती पूज्या वाक्। **महीति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं०१.११)। **(गात्)** प्राप्नुयात् **(अव)** **(स्थिरा)** स्थिराणि **(मघवद्भ्यः)** पूजितधनेभ्यः **(तनुष्व)** विस्तृणीहि **(मीढ्वः)** सुखसेचक **(तोकाय)** सद्यो जाताया ऽपत्याय **(तनयाय)** प्राप्तकुमारा ऽवस्थाय **(मृळ)** सुखय॥१४॥

अन्वयः-हे मीढ्वो वैद्य! यो रुद्रस्य हेतिर्वृज्यास्त्वेषस्य दुर्मतिश्च नोऽस्मान् पर्य्यगात्। या मघवद्भ्यो मह्यस्मान् पर्य्यगात् स्थिरा च गात् तानि तोकाय तनयाय तनुष्व तैः सर्वान् मृळ रोगानव तनुष्व दूरी कुरु॥१४॥

भावार्थः-मनुष्यैः सुशिक्षया दुष्टां मतिं वैद्यकरीत्या सर्वान् रोगान्निवार्य्य स्वं स्वं कुलं सदा सुखनीयम्॥१४॥

पदार्थः-हे **(मीढ्वः)** सुखों से सींचनेवाले वैद्य! जो **(रुद्रस्य)** दुःख देनेवाले रोग को **(हेतिः)** वज्र से पीड़ा के समान वा **(वृज्याः)** वर्जने योग्य पीड़ा और **(त्वेषस्य)** प्रदीप्त अर्थात् प्रबल की **(दुर्मतिः)** दुष्ट मति **(नः)** हम लोगों को **(परि)** सब ओर से प्राप्त होवे। तथा जो **(मघवद्भ्यः)** प्रशंसित धनवालों से **(मही)** प्रशंसनीय वाणी हम लोगों को सब ओर से प्राप्त हो और **(स्थिरा)** स्थिर पदार्थों को **(गात्)** प्राप्त हो उनको **(तोकाय)** शीघ्र उत्पन्न हुए सन्तान के लिये **(तनयाय)** जो कि कुमारावस्था को प्राप्त है, उसके लिये विस्तारो। और उनसे सबको **(मृळ)** सुखी करो और रोगों को **(अव, तनुष्व)** दूर करो॥१४॥

भावार्थः-मनुष्यों को उत्तम शिक्षा से दुष्ट मति को तथा वैद्यक रीति से सब रोगों को निवारण कर अपने कुल को सदा सुखी करना चाहिये॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

एवा बभ्रो वृषभ चेकितान यथा देव न हृणीषे न हंसि।

हवनश्रुन्नो रुद्रेह बोधि बृहद्वदेम विदथे सुवीराः॥१५॥१८॥

एव। बभ्रो इति। वृषभ। चेकितान। यथा। देव। न। हृणीषे। न। हंसि। हवनऽश्रुत्। नः। रुद्र। इह। बोधि। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीराः॥१५॥

पदार्थः-**(एव)** निश्चये। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(बभ्रो)** धर्त्तः पोषक **(वृषभ)** रोगनिवारणेन बलप्रद **(चेकितान)** विज्ञापक **(यथा)** **(देव)** कमनीय **(न)** निषेधे **(हृणीषे)** हरसि। अत्र विकरणव्यत्ययेन श्ना। **(न)** निषेधे **(हंसि)** **(हवनश्रुत्)** या हवनं दानमादानं शृणोति **(नः)** अस्माकम् **(रुद्र)** सर्वरोगनिवारक **(इह)** अस्मिन् **(बोधि)** बुध्यस्व **(बृहत्)** **(वदेम)** **(विदथे)** औषधविज्ञानव्यवहारे **(सुवीराः)** सुष्ठुप्राप्तवीर्य्याः सन्तः॥१५॥

अन्वयः-हे बभ्रो वृषभ चेकितान देव रुद्र! यतो हवनश्रुत् त्वमिह यथा नः सुखानि न हृणीषे सर्वेषां सुखं बोधि तस्माद्वयं सुवीराः सन्त एव यथा विदथे बृहद्वदेम॥१५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये वैद्याः राज्यन्यायाधीशाः स्युस्तेऽन्यायेन कस्यचित्किञ्चिन्न हरेयुः। न कञ्चिद्धन्युः, किन्तु सदा सुपथ्यौषधव्यवहारसेवनेन बलपराक्रमान् वर्द्धयेयुरिति॥१५॥

अस्मिन् सूक्ते चिकित्सकराजपुरुषपठनव्यवहारवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इत्यष्टादशो वर्गस्त्रयस्त्रिंशं सूक्तं च समाप्तम्॥

पदार्थः-हे **(बभ्रो)** धारण वा पोषण करने वा **(वृषभ)** रोगनिवारण करने से बल के देने वा **(चेकितान)** विज्ञान देने वा **(देव)** मनोहर **(रुद्र)** और सर्व रोग निवारनेवाले! जिस कारण **(हवनश्रुत्)** देने-लेने को सुननेवाले आप **(इह)** इसमें **(यथा)** जैसे **(नः)** हम लोगों के सुखों को **(न)** नहीं **(हृणीषे)** हरते हैं, सबके सुख को **(बोधि)** जानें, इससे हम लोग **(सुवीराः)** सुन्दर पराक्रम को प्राप्त होते हुए ही वैसे **(विदथे)** ओषधियों के विज्ञान व्यवहार में **(बृहत्)** बहुत **(वदेम)** कहें॥१५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो वैद्यजन राज्य और न्याय के अधीश हों, वे अन्याय से किसी का कुछ भी धन न हरें न किसी को मारें, किन्तु सदा अच्छे पथ्य और ओषधों के व्यवहार सेवन से बल और पराक्रम को बढ़ावें॥१५॥

इस सूक्त में वैद्य, राजपुरुष और विद्या ग्रहण के व्यवहार वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह अठारहवां वर्ग और तेतीसवां सूक्त समाप्त हुआ॥

धारावरा इत्यस्य पञ्चदशर्चस्य चतुस्त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। मरुतो देवताः। १, ३, ८, ९ निचृज्जगती। २, १०-१३ विराड्जगती। ४-७, १४ जगती छन्दः। निषादः स्वरः। १५ निचृत् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब पन्द्रह ऋचावाले चौंतीसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में विद्वानों के विषय का वर्णन करते हैं॥

धारावरा मरुतो धृष्णवोजसो मृगा न भीमास्तविषीभिरर्चिनः।
अग्नयो न शुशुचाना ऋजीषिणो भृमिं धमन्तो अप गा अवृण्वत॥१॥

धारावराः। मरुतः। धृष्णुऽओजसः। मृगाः। न। भीमाः। तविषीभिः। अर्चिनः। अग्नयः। न। शुशुचानाः। ऋजीषिणः। भृमिम्। धमन्तः। अप। गाः। अवृण्वत॥१॥

पदार्थः-(धारावराः) धारासु शिक्षितासु वाणीष्ववरा अर्वाचीना येषान्ते **(मरुतः)** मरणधर्मयुक्ताः **(धृष्णवोजसः)** धृष्णु धृष्टमोजो येषान्ते **(मृगाः)** मृगेन्द्राः सिंहाः **(न)** इव **(भीमाः)** दुष्टान् प्रति भयङ्कराः **(तविषीभिः)** बलयुक्ताभिः सेनाभिः **(अर्चिनः)** सत्कर्त्तारः **(अग्नयः)** पावकाः **(न)** इव **(शुशुचानाः)** शुद्धाः शोधका वा **(ऋजीषिणः)** कोमलस्वभावाः **(भृमिम्)** अनवस्थाम् **(धमन्तः)** दूरीकुर्वन्तः **(अप) (गाः)** सुशिक्षिता वाचः **(अवृण्वत)** स्वीकुर्वन्तु॥१॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! धारावरा मरुतो भीमा मृगा न धृष्णवोजसः शुशुचाना अग्नयो न तविषीभिरर्चिन ऋजीषिणो भृमिमपधमन्तो भवन्तो गा अवृण्वत॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये मनुष्या पावकवत्पवित्रा जलवत्कोमलाः सिंहवत्पराक्रमिणो वायुवद्बलिष्ठा भूत्वाऽन्यायं निवर्त्तयेयुस्तेऽखिलं सुखमाप्नुयुः॥१॥

पदार्थः–हे विद्वानो! **(धारावराः)** धाराप्रवाह शिक्षित वाणियों के बीच न्यून जिनकी वाणी **(मरुतः)** वे मरणधर्मयुक्त **(भीमाः)** दुष्टों के प्रति भयङ्कर **(मृगाः)** सिहों के **(न)** समान **(धृष्णवोजसः)** पराक्रम को धारण किये हुए **(शुशुचानाः)** शुद्ध वा शोधनेवाले **(अग्नयः)** पावक अग्नियों के **(न)** समान **(तविषीभिः)** बलयुक्त सेनाओं से **(अर्चिनः)** सत्कार करनेवाले **(ऋजीषिणः)** कोमल स्वभावी मनुष्य **(भृमिम्)** अनवस्था को **(अप, धमन्तः)** दूर करते हुए आप **(गाः)** सुशिक्षित वाणियों को **(अवृण्वत)** स्वीकार करें॥१॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य पावक के समान पवित्र, जल के समान कोमल, सिंह के समान पराक्रम करनेवाले, वायु के समान बलिष्ठ होकर अन्याय को निवृत्त करें, वे समस्त सुख को प्राप्त हों॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

द्यावो न स्तृभिश्चितयन्त खादिनो व्य१भ्रिया न द्युतयन्त वृष्टयः।
रुद्रो यद्वो मरुतो रुक्मवक्षसो वृषाजनि पृश्न्याः शुक्र ऊधनि॥२॥

द्यावः। न। स्तृऽभिः। चितयन्त। खादिनः। वि। अभ्रियाः। न। द्युतयन्त। वृष्टयः। रुद्रः। यत्। वः। मरुतः। रुक्मऽवक्षसः। वृषा। अजनि। पृश्न्याः। शुक्रे। ऊधनि॥२॥

पदार्थ:-(द्यावः) प्रकाशाः **(न)** इव **(स्तृभिः)** नक्षत्रैः। **स्तृभिरिति नक्षत्रनामसु पठितम्।** (निरु०३.२०)। **(चितयन्त)** चितं कुर्वन्तु **(खादिनः)** भक्षकाः **(वि) (अभ्रियाः)** अभ्राणि **(न)** इव **(द्युतयन्त)** द्युतयन्तु **(वृष्टयः)** वर्षाः **(रुद्रः)** दुष्टानां रोदयिता **(यत्)** यः **(वः)** युष्मभ्यम् **(मरुतः)** मनुष्याः **(रुक्मवक्षसः)** रुक्मं रोचकं वक्षो हृदयं येषान्ते **(वृषा)** सुखसेचकः **(अजनि)** जनयेत् **(पृश्न्याः)** अन्तरिक्षस्य मध्ये **(शुक्रे)** वीर्य्यकरे **(ऊधनि)** रात्रौ। **ऊध इति रात्रिनामसु पठितम्।** (निघं०१.७)॥२॥

अन्वय:-हे रुक्मवक्षसो मरुतो! वो यद्यो वृषा रुद्रः पृश्न्याः शुक्र ऊधन्यजनि खादिनो भवन्तः स्तृभिर्द्यावो न चितयन्ताऽभ्रिया वृष्टयो न वि द्युतयन्त स भवन्तश्च माननीयाः स्युः॥२॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कारः। ये नक्षत्रैः सह सूर्य्यवदभ्रैः सह विद्युद्वद्विद्याव्यवहारप्रकाशे रमन्ते ते शयनाय रात्रीव सर्वेषां सुखाय भवन्ति॥२॥

पदार्थ:-हे **(रुक्मवक्षसः)** दीप्ति और अभिप्रीतियुक्त हृदयवाले **(मरुतः)** विद्वान् मनुष्यो! **(वः)** तुम लोगों के लिये **(यत्)** जो **(वृषा)** सुख को सींचने और **(रुद्रः)** दुष्टों को रुलानेवाला मनुष्य **(पृश्न्याः)** अन्तरिक्ष के बीच **(शुक्रे)** वीर्य करनेवाली **(ऊधनि)** रात्रि में **(अजनि)** उत्पन्न करे। वा **(खादिनः)** भक्षण करनेवाले आप लोग **(स्तृभिः)** नक्षत्रों से **(द्यावा)** प्रकाशों के **(न)** समान **(चितयन्त)** व्यवहारों को पवित्र करें और **(अभ्रियाः)** बादलों को **(वृष्टयः)** वर्षाओं के **(न)** समान **(वि, द्युतयन्त)** विशेषता से प्रकाशित करे, वह और आप माननीय हों॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो नक्षत्रों के साथ सूर्य्य के समान, बादलों के साथ बिजुली के समान विद्या व्यवहाररूपी प्रकाश में रमते हैं, वे सोने के लिये रात्रि के समान सबके सुख के लिये होते हैं॥२॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राज विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उक्षन्ते अश्वाँ अत्याँइवाजिषु नदस्य कर्णैस्तुरयन्त आशुभिः।
हिरण्यशिप्रा मरुतो दविध्वतः पृक्षं याथ पृषतीभिः समन्यवः॥३॥

उक्षन्ते। अश्वान्। अत्यान्ऽइव। आजिषु। नदस्य। कर्णैः। तुरयन्ते। आशुऽभिः। हिरण्यऽशिप्राः। मरुतः। दविध्वतः। पृक्षम्। याथ। पृषतीऽभिः। सऽमन्यवः॥३॥

पदार्थः-(**उक्षन्ते**) सिञ्चन्ति (**अश्वान्**) (**अत्यानिव**) यथाऽश्वाः सततं सद्यो गच्छन्ति तथा (**आजिषु**) सङ्ग्रामेषु (**नदस्य**) जलेन पूर्णस्य जलाशयस्य मध्ये (**कर्णैः**) नौचालकैः (**तुरयन्ते**) सद्यो गमयन्ति (**आशुभिः**) शीघ्रगन्तृभिरश्वैः (**हिरण्यशिप्राः**) हिरण्यमिव शिप्राणि मुखानि येषान्ते (**मरुतः**) मनुष्याः (**दविध्वतः**) दुष्टान् कम्पयन्तः। इदं पदं **दाधर्ती**त्यत्र निपातितम्। (अष्टा०७.४.६५) (**पृक्षम्**) सेचनीयम् (**याथ**) प्राप्नुथ (**पृषतीभिः**) वायुगतिसदृशगतिविशिष्टाभिर्धाराभिः (**समन्यवः**) मन्युना सह वर्त्तमानाः॥३॥

अन्वयः-हे समन्यवो मरुतो यथाऽश्वानत्यानिवाजिषु नदस्य कर्णैरिवाशुभिस्तुरयन्ते हिरण्यशिप्रा दविध्वतः पृषतीभिः पृक्षमुक्षन्ते तथैतद्यूयं याथ॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा शिक्षका अश्वान् कैवर्त्ता नावं सुष्ठु गमयन्ति तथा राजजनाः स्वसेना नयेयुः॥३॥

पदार्थः-हे (**समन्यवः**) क्रोध में भरे (**मरुतः**) मनुष्यो! जैसे (**अश्वान्**) घोड़ों को (**अत्यानिव**) निरन्तर चलनेवाले घोड़ों के समान वा (**आजिषु**) संग्रामों में (**नदस्य**) जल से पूर्ण बड़े जलाशय के बीच (**कर्णैः**) नौकाओं के चलानेवालों के समान (**आशुभिः**) शीघ्र चलनेवाले घोड़ों के साथ (**तुरयन्ते**) शीघ्र चलाते हैं वा (**हिरण्यशिप्राः**) सुवर्ण के सदृश मुखवाले (**दविध्वतः**) दुष्टों को कंपाते हुए (**पृषतीभिः**) पवन की गतियों के समान गतियों से युक्त धाराओं से (**पृक्षम्**) सींचने योग्य को (**उक्षन्ते**) सींचते हैं, वैसे इस व्यवहार को तुम लोग प्राप्त होओ॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे शिक्षा करनेवाले जन घोड़ों को वा खेवट नाव को उत्तम रीति पर चलाते हैं, वैसे राजजन अपनी सेना को पहुंचावें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

पृक्षे ता विश्वा भुवना ववक्षिरे मित्राय वा सदमा जीरदानवः।
पृषदश्वासो अनवभ्रराधस ऋजिप्यासो न वयुनेषु धूर्षदः॥४॥

पृक्षे। ता। विश्वा। भुवना। ववक्षिरे। मित्राय। वा। सदम्। आ। जीरऽदानवः। पृषत्ऽअश्वासः। अनवभ्रऽराधसः। ऋजिप्यासः। न। वयुनेषु। धूःऽसदः॥४॥

पदार्थः-(**पृक्षे**) जलादिभिः सिक्ते (**ता**) तानि (**विश्वा**) सर्वाणि (**भुवना**) भुवनानि (**ववक्षिरे**) रुष्टाः स्युः (**मित्राय**) (**वा**) (**सदम्**) स्थानम् (**आ**) (**जीरदानवः**) जीवाः (**पृषदश्वासः**) पृषतस्स्थूलाः सिञ्चिता अश्वा यैस्ते (**अनवभ्रराधसः**) अनवभ्रोऽपतितं राधो येषान्ते (**ऋजिप्यासः**) ये ऋजिं कोमलत्वं वर्द्धयन्ति ते (**न**) इव (**वयुनेषु**) प्रज्ञापनेषु (**धूर्षदः**) धुरि सीदन्ति॥४॥

अन्वयः-जीरदानवः पृषदश्वासोऽनवभ्रराधसो धूर्षद ऋजिप्यासो न मित्राय वा ह्यस्मै पृक्षे यानि विश्वा भुवना सदमा ववक्षिरे ता वयुनेषु वर्द्धन्ते॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये दुष्टेभ्यः क्रुध्यन्ति श्रेष्ठानाह्लादयन्ति ते प्राज्ञा जायन्ते॥४॥

पदार्थः-(**जीरदानवः**) साधरण जीव वा (**पृषदश्वासः**) स्थूल अश्व जिन्होंने सींचे वा (**अनवभ्रराधसः**) जिनका धन नीचे नहीं गिरा वा (**धूर्षदः**) जो धुर पर स्थिर होनेवाले (**ऋजिप्यासः**) वा जो कोमलपन को बढ़ाते हैं (**न**) उनके समान (**मित्राय**) मित्र के लिये (**वा**) अथवा जिस कारण इसके लिये (**पृक्षे**) जलादिकों में सीचें हुए पृथ्वीमण्डल पर जो (**विश्वा**) समस्त (**भुवना**) लोकलोकान्तर (**सदम्**) वा स्थान (**आ, ववक्षिरे**) अच्छे प्रकार रोष को प्राप्त हों (**ता**) वे (**वयुनेषु**) उत्तम ज्ञानों में बढ़ते हैं॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो दुष्टों के लिये क्रोध करते वा श्रेष्ठों को आनन्द देते हैं, वे बुद्धिमान् होते हैं॥४॥

पुनर्विद्वद्विषयमाह॥

फिर विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इषुन्वभिर्धेनुभी रप्शदूधभिरध्वस्मभिः पथिभिर्भ्राजदृष्टयः।
आ हंसासो न स्वसराणि गन्तन मधोर्मदाय मरुतः समन्यवः॥५॥१९॥

इन्धन्व॑ऽभिः। धे॒नुऽभिः॑। र॒प्शदू॑धऽभिः। अ॒ध्व॒स्मऽभिः॑। प॒थिऽभिः॑। भ्रा॒ज॒त्ऽऋ॒ष्ट॒यः॒। आ। हं॒सासः॑। न। स्वस॑राणि। ग॒न्त॒न॒। मधोः॑। मदा॑य। म॒रु॒तः॒। स॒ऽम॒न्य॒वः॒॥५॥

पदार्थः-(इन्धन्वभिः) प्रदीपिकाभिः। अत्र वनिपि **छान्दसो वर्णलोपो वे**त्यलोपः। **(धेनुभिः)** वाग्भिः **(रप्शदूधभिः)** व्यक्तशब्दघनैः **(अध्वस्मभिः)** अध्वस्तैः **(पथिभिः)** मार्गैः **(भ्राजदृष्टयः)** प्राप्तप्रकाशाः **(आ) (हंसासः) (न)** इव **(स्वसराणि)** दिनानि। **स्वसराणीति दिननामसु पठितम्।** (निघं०१.९)। **(गन्तन)** प्राप्नुत **(मधोः)** मधुरस्य **(मदाय)** हर्षाय **(मरुतः) (समन्यवः)** सक्रोधाः॥५॥

अन्वयः-हे भ्राजदृष्टयः समन्यवो मरुतो! यूयमिन्धन्वभिर्धेनुभी रप्शदूधभिरध्वस्मभिः पथिभिः हंसासो न मधोर्मदाय स्वसराण्या गन्तन॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथाऽऽकाशमार्गेण हंसा अभीष्टानि स्थानानि सुखेन गच्छन्ति तथा सुशिक्षितया वाचा विद्यामार्गान् धर्मपथैः सुखानि च नित्यं यूयं प्राप्नुत॥५॥

पदार्थः-हे **(भ्राजदृष्टयः)** प्रकाश को प्राप्त हुए **(समन्यवः)** क्रोधों के साथ वर्त्तमान **(मरुतः)** मरणधर्मा! तुम लोग **(इन्धन्वभिः)** प्रदीप्त करनेवाली **(धेनुभिः)** वाणियों से वा **(रप्शदूधभिः)** प्रकट शब्दरूपी घनों से **(अध्वस्मभिः)** जो कि ध्वस्त नष्ट न हुए उन **(पथिभिः)** मार्गों से **(हंसासः)** हंसो के **(न)** समान **(मधोः)** मधुर सम्बन्धी **(मदाय)** हर्ष के लिये **(स्वसराणि)** दिनों को **(आ, गन्तन)** आओ प्राप्त होओ॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे आकाश मार्ग से हंस अभीष्ट स्थानों को सुख से जाते हैं, वैसे सुशिक्षित वाणी से विद्या मार्गों को और धर्म पथों से सुखों को नित्य तुम लोग प्राप्त होओ॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ नो॒ ब्रह्मा॑णि मरुतः समन्यवो न॒रां न शंसः॒ सव॑नानि गन्तन।
अश्वा॑मिव पिप्यत धे॒नुमूध॑नि कर्ता॒ धियं॑ जरि॒त्रे वाज॑पेशसम्॥६॥

आ। नः॒। ब्रह्मा॑णि। म॒रु॒तः॒। स॒ऽम॒न्य॒वः॒। न॒राम्। न। शंसः॑। सव॑नानि। ग॒न्त॒न॒। अश्वा॑म्ऽइव। पि॒प्य॒त॒। धे॒नुम्। ऊध॑नि। कर्त॑। धिय॑म्। ज॒रि॒त्रे। वाज॑ऽपेशसम्॥६॥

पदार्थः-(आ) समन्तात् **(नः)** अस्मभ्यम् **(ब्रह्माणि)** धनानि **(मरुतः)** मनुष्याः **(समन्यवः)** सक्रोधाः **(नराम्)** मनुष्याणाम् **(न)** इव **(शंसः)** स्तुतिः **(सवनानि)** ऐश्वर्याणि **(गन्तन) (अश्वामिव)**

वडवामिव **(पिप्यत)** प्राप्नुत **(धेनुम्)** वाणीम् **(ऊधनि)** रात्रौ **(कर्त्त)** कुरुत। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(धियम्)** प्रज्ञाम् **(जरित्रे)** स्तावकाय **(वाजपेशसम्)** वाजस्य विज्ञानस्य पेशो रूपं यस्यान्ताम्॥६॥

अन्वयः-हे समन्यवो मरुतो! यूयं नो ब्रह्माणि कर्त्ताऽश्वामिवोधनि धेनुं पिप्यत नराम्न शंसः सवनान्यागन्तन जरित्रे वाजपेशसं धियं कुरुत॥६॥

भावार्थः-अत्र द्वावुपमालङ्कारौ। ये मनुष्या मनुष्यस्वभावजां प्रशंसां प्राप्य सुविद्यां वाचं प्रजां च वर्द्धयित्वा सर्वान्त्सुखैरलं कुर्वन्तु ते सुखिनो जायन्ते॥६॥

पदार्थः–हे **(समन्यवः)** क्रोध से युक्त **(मरुतः)** मनुष्यो! तुम **(नः)** हम लोगों के लिये **(ब्रह्माणि)** धनों को **(कर्त्त)** सिद्ध करो **(अश्वामिव)** घोड़ी के समान **(ऊधनि)** रात्रि में **(धेनुम्)** वाणी को **(पिप्यत)** प्राप्त होओ **(नराम्)** मनुष्यों की **(न)** जैसे **(शंसः)** स्तुति वैसे **(सवनानि)** ऐश्वर्य्यों को **(आ, गन्तन)** प्राप्त होओ **(जरित्रे)** स्तुति करनेवाले के लिये **(वाजपेशसम्)** विज्ञान का जिसमें रूप विद्यमान उस **(धियम्)** उत्तम बुद्धि को सिद्ध करो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में दो उपमालङ्कार हैं। जो मनुष्य मनुष्यस्वभाव से उत्पन्न हुई प्रशंसा को प्राप्त हो के विद्या, वाणी और उत्तम बुद्धि को बढ़ाकर, सर्व मनुष्यों को सुखों से अलंकृत करें, वे सुखी होते हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तं नों दात मरुतो वाजिनं रथं आपानं ब्रह्म चितयंद्दिवेदिवे।

इषं स्तोतृभ्यो वृजनेषु कारवें सनिं मेधामरिष्टं दुष्टरं सहः॥७॥

तम्। नः। दात। मरुतः। वाजिनम्। रथे। आपानम्। ब्रह्म। चितयत्। दिवेऽदिवे। इषम्। स्तोतृऽभ्यः। वृजनेषु। कारवे। सनिम्। मेधाम्। अरिष्टम्। दुस्तरम्। सहः॥७॥

पदार्थः-**(तम्)** सकलविद्यास्तावकम् **(नः)** अस्मभ्यम् **(दात)** दत्त। अत्र **वाच्छन्दसी**ति शपो लुक्। **(मरुतः)** प्राणवायुवत् प्रियाः **(वाजिनम्)** विज्ञानवन्तमश्वम् **(रथे)** याने युक्तम् **(आपानम्)** व्यापकम्। **आपानमिति व्याप्तिकर्मा।** (निघं०२.१८)। **(ब्रह्म)** धनमन्नं वा **(चितयत्)** यच्चितं ज्ञातारं करोति तत् **(दिवेदिवे)** प्रतिदिनम् **(इषम्)** इष्टम् **(स्तोतृभ्यः)** सकलविद्याप्रयोजनविद्भ्यः **(वृजनेषु)** बलेषु **(कारवे)** कारुकाय **(सनिम्)** विभक्ताम् **(मेधाम्)** प्रज्ञाम् **(अरिष्टम्)** अहिंसितम् **(दुष्टरम्)** दुःखेन तरितुमर्हम् **(सहः)** बलम्॥७॥

अन्वयः- हे मरुतो! यूयं नस्तं दात रथे वाजिनं दात दिवेदिवे चितयदापानं ब्रह्म वृजनेषु स्तोतृभ्य इषं कारवे सनिं मेधामरिष्टं दुष्टरं सहश्च दात॥७॥

भावार्थः-मनुष्यैः सदैव सर्वेभ्यस्सकलविद्याविदध्यापकेन धर्म्मार्जितं धनं विद्वद्भ्यो दानायान्नमुत्तमां प्रज्ञां पूर्णं बलं च याचनीयं विद्वांसः खलु याचकेभ्य एतानि सततं प्रदद्युः॥७२॥

पदार्थः-हे **(मरुतः)** प्राणवायु के समान प्रिय! तुम **(नः)** हम लोगों के लिये **(तम्)** उस समस्त विद्या की स्तुति करनेवाले को **(दात)** देओ **(रथे)** रथ के निमित्त **(वाजिनम्)** सुशिक्षित घोड़े को देओ **(दिवेदिवे)** प्रतिदिन **(चितयत्)** चिताते हुए **(आपानम्)** व्यापक **(ब्रह्म)** धन वा अन्न को **(वृजनेषु)** बलों में **(स्तोतृभ्यः)** सकल विद्याओं के प्रयोजनवेत्ताओं के लिये **(इषम्)** इष्ट प्रयोजन को **(कारवे)** करनेवाले के लिये **(सनिम्)** अलग बढ़ी हुई **(मेधाम्)** उत्तम बुद्धि को और **(अरिष्टम्)** अविनष्ट **(दुष्टरम्)** दुःख से तैरने को योग्य **(सहः)** बल को देओ॥७॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि सदैव सबके लिये सकल विद्या बतानेवाले से धर्म से संचित किये हुए धन विद्वानों को देने के लिये; अन्न, उत्तम प्रज्ञा और पूर्ण बल को जाँचे **[=माँगे]**। विद्वान् जन निश्चय से याचकों के लिये उन उक्त पदार्थों को निरन्तर देवें॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यद्युञ्जते मरुतो रुक्मवक्षसोऽश्वान् रथेषु भग आ सुदानवः।
धेनुर्न शिश्वे स्वसरेषु पिन्वते जनाय रातहविषे महीमिषम्॥८॥

यत्। युञ्जते। मरुतः। रुक्मऽवक्षसः। अश्वान्। रथेषु। भगे। आ। सुऽदानवः। धेनुः। न। शिश्वे। स्वसरेषु। पिन्वते। जनाय। रातऽहविषे। महीम्। इषम्॥८॥

पदार्थः-**(यत्)** यान् **(युञ्जते)** **(मरुतः)** विद्वांसो मनुष्याः **(रुक्मवक्षसः)** रुक्ममिव वक्षो येषान्ते **(अश्वान्)** तुरङ्गानग्न्यादीन् वा **(भगे)** ऐश्वर्ये सति **(आ)** **(सुदानवः)** श्रेष्ठानां पदार्थानां दातारः **(धेनुः)** दुग्धदात्री गौः **(न)** इव **(शिश्वे)** वत्साय **(स्वसरेषु)** दिनेषु **(पिन्वते)** सिञ्चति अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम्। **(जनाय)** सत्पुरुषाय **(रातहविषे)** दत्तदातव्याय **(महीम्)** महतीं पूज्यां वाचम् **(इषम्)** इष्टामिच्छां वा॥८॥

अन्वयः-हे रुक्मवक्षसः सुदानवो मरुतो! भगे रथेषु यदश्वान् युञ्जते स्वसरेषु शिश्वे रातहविषे जनाय धेनुर्वत्सेनेव महीमिषमा पिन्वते तान् सर्वे संयुञ्जन्ताम्॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सुशिक्षिता विद्वांसोऽश्वादीन् पशूनग्न्यादींश्च कार्य्यसिद्धये प्रयुञ्जते तथाऽनुतिष्ठत एवं कृते सति यथा धेनुः स्ववत्सं तर्पयति तथैते प्रयोक्तॄन् धनयन्ति॥८॥

पदार्थः-हे (**रुक्मवक्षसः**) सुवर्ण के समान वक्षःस्थलवाले (**सुदानवः**) उत्तम पदार्थों के दानकर्त्ता (**मरुतः**) विद्वान् पुरुषो! (**भगे**) ऐश्वर्य्य के होते (**रथेषु**) यानों में (**यत्**) जिन (**अश्वान्**) घोड़े वा अग्न्यादि पदार्थों को (**युञ्जते**) युक्त करते वा (**स्वसरेषु**) दिनों के बीच (**शिश्वे**) बालक वा जो (**रातहविषे**) देने योग्य दे चुका उन (**जनाय**) सत्पुरुष के लिये (**धेनुः**) दुःख देनेवाली गौ बछड़े को (**न**) जैसे वैसे (**महीम्**) अत्यन्त (**इषम्**) इच्छा को (**आ, पिन्वते**) अच्छे प्रकार सींचते हैं, उन सबको सब लोग अच्छे प्रकार प्रयुक्त करें॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे अच्छी शिक्षा को प्राप्त विद्वान् जन घोड़े आदि पशुओं को और अग्नि आदि पदार्थों का प्रयोग कार्यसिद्धि के लिये करते हैं, वैसे अनुष्ठान करो। ऐसे करने से जैसे गौ अपने बछड़े को तृप्त करती है, वैसे ये प्रयोग करनेवालों को धनी करते हैं॥८॥

पुना राजपुरुषविषयमाह॥

फिर राजपुरुषों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यो नो मरुतो वृकताति मर्त्यो रिपुर्दधे वसवो रक्षता रिषः।
वर्तयत तपुषा चक्रियाभि तमव रुद्रा अशसो हन्तना वधः॥९॥

यः। नः। मरुतः। वृकऽताति। मर्त्यः। रिपुः। दधे। वसवः। रक्षत। रिषः। वर्तयत। तपुषा। चक्रिया। अभि। तम्। अव। रुद्राः। अशसः। हन्तन। वधरिति॥९॥

पदार्थः-(**यः**) (**नः**) अस्मान् (**मरुतः**) विद्वांसः (**वृकताति**) वृको वज्र एव (**मर्त्यः**) (**रिपुः**) स्तेनः। **रिपुरिति स्तेननामसु पठितम्।** (निघं०३.२४)। (**दधे**) दधाति। अत्र लडर्थे लिट्। (**वसवः**) वसुसंज्ञकाः (**रक्षत**)। **अत्राऽन्येषामपी**ति दीर्घः। (**रिषः**) हिंसकान् (**वर्त्तयत**) (**तपुषा**) परितापेन क्रोधादिना (**चक्रिया**) चक्रेण (**अभि**) अभितः (**तम्**) (**अव**) (**रुद्राः**) मध्यमा विद्वांसो दुष्टानां रोदयितारः (**अशसः**) अहिंसकस्य (**हन्तन**) घ्नत। अत्राऽ**न्येषामपी**ति दीर्घः। (**वधः**) हननम्॥९॥

अन्वयः-हे वसवो मरुतो! यो वृकताति मर्त्यो रिपुस्तपुषा नोऽस्मान् दधे तस्माद् रिषोऽस्मात् पृथग्रक्षत। हे रुद्रा! यूयं चक्रिया अशसोऽव हन्तन योऽस्मान् रक्षति तमभिरक्षत येनान्यस्य वधः क्रियते तं कारागृहेऽभि वर्त्तयत॥९॥

भावार्थ:-राजपुरुषैर्हिंसकेभ्य: प्रजा: पृथग् रक्ष्य रिपून्निवार्य्य बध्वा वा धर्मेण राज्यं शासनीयम्॥९॥

पदार्थ:-हे **(वसव:)** वसु संज्ञावाले **(मरुत:)** विद्वान् मनुष्यो! **(य:)** जो **(वृकताति)** वज्र ही **(मर्त्य:)** मरणधर्मा **(रिपु:)** चोर **(तपुषा)** सब ओर से ताप देनेवाले क्रोध आदि **(न:)** हम लोगों को **(दधे)** धारण करता है, उससे **(रिष:)** हिंसको को [हमसे] अलग **(रक्षत)** रक्खो। हे **(रुद्रा:)** दुष्टों को रुलानेवाले मध्यम विद्वानो! तुम **(चक्रिया)** चक्र से **(अशस:)** अहिंसक जो दूसरों का विनाश नहीं करता, उसको **(अव, हन्तन)** न मारो, जो हम लोगों की रक्षा करता है, उसकी सब ओर से रक्षा करो। जिसने और का **(वध:)** वध किया है, उसको कारागृह अर्थात् जेलखाना में **(अभि, वर्त्तयत)** सब ओर से बर्त्ताओ॥९॥

भावार्थ:-राजपुरुषों को हिंसकों से प्रजाजनों को अलग रख शत्रुओं को निवारण कर वा बांध के धर्म से राज्य शिक्षा करनी चाहिये॥९॥

पुनर्विद्वद्विषयमाह॥

फिर विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

चित्रं तद्वो मरुतो याम चेकिते पृश्न्या यदूधरप्यापयो दुहु:।
यद्वा निदे नवमानस्य रुद्रियास्त्रितं जराय जुरतामदाभ्या:॥१०॥२०॥

चित्रम्। तत्। व:। मरुत:। याम। चेकिते। पृश्न्या:। यत्। ऊध:। अपि। आपय:। दुहु:। यत्। वा। निदे। नवमानस्य। रुद्रिया:। त्रितम्। जराय। जुरताम्। अदाभ्या:॥१०॥

पदार्थ:-**(चित्रम्)** अद्भुतम् **(तत्)** **(व:)** युष्माकम् **(मरुत:)** **(याम)** प्राप्तव्यं कर्म **(चेकिते)** जानाति **(पृश्न्या:)** पृश्नावन्तरिक्षे भवम् **(यत्)** **(ऊध:)** पयोऽधिकरणम् **(अपि)** **(आपय:)** मित्रतां व्याप्ता: **(दुहु:)** पिप्रति। अत्र लिटि **वा च्छन्दसी**ति द्वित्वाभाव:। **(यत्)** **(वा)** **(निदे)** निन्दकाय **(नवमानस्य)** स्तोतु: **(रुद्रिया:)** रुद्रस्य मध्यमस्य विदुष: सम्बन्धिन: **(त्रितम्)** हिंसकम् **(जराय)** स्तावकाय **(जुरताम्)** जीर्णानाम् **(अदाभ्या:)** अहिंसनीया:॥१०॥

अन्वय:-हे अदाभ्या रुद्रिया मरुतो! यद्वश्चित्रं याम यत्पृश्न्या ऊध आपयो दुहु:। वा यो नवमानस्य निदे त्रितं जुरतां जरायामपि चेकिते तद्यूयं गृह्णत॥१०॥

भावार्थ:-हे विद्वांसो! यूयं निन्दनीयस्य निन्दां स्तवनीयस्य प्रशंसां कृत्वाऽद्भुतानि कर्माणि कुरुत। येन पूर्णमायुर्भुक्त्वा वृद्धावस्थां प्राप्य मरणं स्यात्तदनुतिष्ठत॥१०॥

पदार्थः-हे **(अदाभ्याः)** न नष्ट करने योग्य **(रुद्रियाः)** मध्यम विद्वानों के सम्बन्धी **(मरुतः)** मनुष्यो! **(यत्)** जिस **(वः)** तुम्हारा **(चित्रम्)** अद्भुत **(याम)** योग्य कर्म वा **(यत्)** जिस **(पृश्न्याः)** अन्तरिक्ष में सिद्ध हुए **(ऊधः)** जल वा दूध के अधिकरण को **(आपयः)** मित्र भाव को प्राप्त हुए **(दुहुः)** परिपूर्ण करते हैं **(वा)** अथवा **(यः)** जो **(नवमानस्य)** स्तुति करने की **(निदे)** निन्दा करनेवाले के लिये **(त्रितम्)** हिंसा करनेवाले को **(जुरताम्)** जीर्णों की **(जराय)** स्तुति करनेवाले के लिये **(अपि)** भी **(चेकिते)** जानता है **(तत्)** उसको तुम लेओ॥१०॥

भावार्थः-हे विद्वानो! तुम निन्दा करने योग्य की निन्दा तथा स्तुति करने योग्य की प्रशंसा कर अद्भुत कर्मों को करो, जिससे पूरी आयु भोग **[कर]**, वृद्धावस्था पाकर मरण हो, उस अनुष्ठान को करो॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तान् वो महो मरुत एवयाव्नो विष्णोरेषस्य प्रभृथे हवामहे।
हिरण्यवर्णान् ककुहान् यतस्रुचो ब्रह्मण्यन्तः शंस्यं राध ईमहे॥११॥

तान्। वः। महः। मरुतः। एवऽयाव्नः। विष्णोः। एषस्य। प्रऽभृथे। हवामहे। हिरण्यऽवर्णान्। ककुहान्। यतऽस्रुचः। ब्रह्मण्यन्तः। शंस्यम्। राधः। ईमहे॥११॥

पदार्थः-(तान्) **(वः)** युष्मभ्यम् **(महः)** महतः **(मरुतः)** मनुष्याः **(एवयाव्नः)** य एवं विज्ञानं यान्ति तान् **(विष्णोः)** व्यापकस्य **(एषस्य)** ऐश्वर्यवतः **(प्रभृथे)** प्रकृष्टे पालने **(हवामहे)** स्वीकुर्वहे **(हिरण्यवर्णान्)** हिरण्यमिव वर्णो येषान्तान् **(ककुहान्)** महतः। **ककुह इति महन्नामसु पठितम्।** (निघं०३.३)। **(यतस्रुचः)** यताः स्रुचो यज्ञपात्रणि यैस्तान् ऋत्विजः। **यतस्रुच इति ऋत्विङ्नामसु पठितम्।** (निघं०३.१८)। **(ब्रह्मण्यन्तः)** आत्मनो ब्रह्मेच्छन्तः **(शंस्यम्)** प्रशंसनीयम् **(राधः)** धनम् **(ईमहे)** याचामहे॥११॥

अन्वयः-हे मरुतो मनुष्या! यथा वयं वस्तानेषस्य विष्णोः प्रभृथे मह एवयाव्नो हिरण्यवर्णान् ककुहान् यतस्रुचो हवामहे ब्रह्मण्यन्तः शंस्यं राध ईमहे तथा यूयमस्मभ्यं प्रयतध्वम्॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यैः परस्परस्मिन् प्रीत्या दुष्टेष्वप्रेम्णा च वर्त्तित्वा विष्णोरीश्वरस्य भक्तौ प्रयतनीयम्॥११॥

पदार्थः-हे **(मरुतः)** मनुष्यो! जैसे हम लोग **(वः)** तुम्हारे लिये **(तान्)** उनको **(एषस्य)** ऐश्वर्यवाले **(विष्णोः)** व्यापक ईश्वर के **(प्रभृथे)** अत्युत्तम पालन में **(महः)** महान् व्यवहार के

(एवयाव्रः) इस प्रकार विशेष ज्ञान को पाते हैं **(हिरण्यवर्णान्)** हिरण्य-सुवर्ण के समान वर्णवाले **(ककुहान्)** बड़े **(यतस्रुचः)** नियम से यज्ञपात्रों के रखनेवाले को **(हवामहे)** स्वीकार करते हैं। और **(ब्रह्मण्यन्तः)** अपने को ईश्वर वा वेद की इच्छा करते हुए विद्वानों को **[=से]** **(शंस्यम्)** प्रशंसनीय **(राधः)** धन की **(ईमहे)** याचना करते हैं, वैसे तुम हमारे लिये प्रयत्न करो॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि परस्पर एक-दूसरे से प्रीति के साथ और दुष्टों में अप्रीति के साथ वर्त्त कर व्यापक ईश्वर की भक्ति में प्रयत्न करें॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ते दशग्वाः प्रथमा यज्ञमूहिरे ते नो हिन्वन्तूषसो व्युष्टिषु।
उषा न रामीररुणैरपोर्णुते महो ज्योतिषा शुचता गोअर्णसा॥१२॥

ते। दशग्वाः। प्रथमाः। यज्ञम्। ऊहिरे। ते। नः। हिन्वन्तु। उषसः। विऽउष्टिषु। उषाः। न। रामीः। अरुणैः। अप। ऊर्णुते। महः। ज्योतिषा। शुचता। गोऽअर्णसा॥१२॥

पदार्थः-**(ते)** **(दशग्वाः)** ये दशभिरिन्द्रियैः सिद्धिं गच्छन्ति ते **(प्रथमाः)** पृथुबुद्धयः **(यज्ञम्)** **(ऊहिरे)** प्राप्नुवन्ति **(ते)** **(नः)** अस्मान् **(हिन्वन्तु)** वर्द्धयन्तु **(उषसः)** प्रभातस्य **(व्युष्टिषु)** प्रतापेषु **(उषाः)** प्रभातः **(न)** इव **(रामीः)** आरामप्रदा रात्रीः **(अरुणैः)** रक्तवर्णैः **(अप)** **(ऊर्णुते)** आच्छादयति **(महः)** महता **(ज्योतिषा)** प्रकाशेन **(शुचता)** पवित्रेण पवित्रकारकेण **(गोअर्णसा)** गावः किरणा अर्णो जलं चास्मिँस्तेन॥१२॥

अन्वयः-ये दशग्वाः प्रथमा विद्वांसो यज्ञमूहिरे त उषसो व्युष्टिषु नोऽस्मान् हिन्वन्तु। येऽरुणैर्महो गोअर्णसा शुचता ज्योतिषा रामीरुषा नापोर्णुते तेऽस्माकं शिक्षकाः सन्तु॥१२॥

भावार्थः-ये क्रियाकाण्डकुशला जितेन्द्रिया उषर्वदविद्याऽन्धकारनिवारका मनुष्यान् विद्यासुशिक्षाभ्यां वर्द्धयन्ति ते सर्वैः सत्कर्त्तव्याः॥१२॥

पदार्थः-जो **(दशग्वाः)** दशों इन्द्रियों से सिद्धि को प्राप्त होते हैं वे **(प्रथमाः)** बहुत विस्तारयुक्त बुद्धिवाले मुख्य विद्वान् जन **(यज्ञम्)** यज्ञ को **(ऊहिरे)** प्राप्त होते हैं **(ते)** वे **(उषसः)** प्रभात काल के **(व्युष्टिषु)** प्रतापों में **(नः)** हम लोगों को **(हिन्वन्तु)** बढ़ावें। जो **(अरुणैः)** लाल वर्णों से **(महः)** बड़े **(गोअर्णसा)** जिसमें कि किरण और प्रकाश विद्यमान **(शुचता)** जो पवित्र वा पवित्रता है उस **(ज्योतिषा)** प्रकाश से **(रामीः)** आराम की देनेवाली रात्रियों को **(उषाः)** प्रभात

समय के **(न)** समान **(अप, ऊर्णुते)** न ढांपते अर्थात् प्रकट करते हैं **(ते)** वे हमारे शिक्षक हों॥१२॥

भावार्थः-जो क्रियाकाण्ड में कुशल जितेन्द्रिय जन प्रभातकाल के समान अविद्यान्धकार की निवृत्ति करनेवाले मनुष्यों को विद्या और उत्तम शिक्षा से बढ़ाते हैं, वे सबको सत्कार करने योग्य हैं॥१२॥

पुनस्तमेवविषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ते क्षोणीभिररुणेभिर्नाञ्जिभी रुद्रा ऋतस्य सदनेषु वावृधुः।
निमेघमाना अत्येन पाजसा सुश्चन्द्रं वर्णं दधिरे सुपेशसम्॥१३॥

ते। क्षोणीभिः। अरुणेभिः। न। अञ्जिऽभिः। रुद्राः। ऋतस्य। सदनेषु। ववृधुः। निऽमेघमानाः। अत्येन। पाजसा। सुऽचन्द्रम्। वर्णम्। दधिरे। सुऽपेशसम्॥१३॥

पदार्थः-**(ते)** **(क्षोणीभिः)** पृथिवीभिः। **क्षोणीति पृथिवीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१)। **(अरुणेभिः)** आरक्तैः प्रकाशादिभिः **(न)** इव **(अञ्जिभिः)** प्रकटैः **(रुद्राः)** वायवः **(ऋतस्य)** उदकस्य **(सदनेषु)** स्थानेषु **(ववृधुः)** वर्द्धन्ते **(निमेघमानाः)** निश्चितो मेघो येषान्ते **(अत्येन)** अश्वेनेव वेगेन **(पाजसा)** बलेन **(सुश्चन्द्रम्)** सुवर्णमिव। अत्र **ह्रस्वाच्चन्द्रोत्तरपदे मन्त्रे।** (अष्टा०६.१.१५१)। इति सुडागमः **(वर्णम्)** स्वरूपम् **(दधिरे)** दधति **(सुपेशसम्)** सुन्दरं रूपम्॥१३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! युष्माभिः रुद्राः क्षोणीभिरञ्जिभिररुणेभिर्न ऋतस्य सदनेषु ववृधुः। निमेघमाना अत्येन पाजसा सुपेशसं सुश्चन्द्रं वर्णं दधिरे ते विज्ञातव्याः॥१३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा वायुभिः सहोषा वर्धित्वा दिनं जायते सर्वं विविधं रूपं प्रकटयति तथा युष्माभिः सुखरूपं धृत्वा वायुविद्याः प्रकाशनीयाः॥१३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! तुमको **(रुद्राः)** वायु **(क्षोणीभिः)** पृथिवियों से **(अञ्जिभिः)** प्रकट व्यवहारों से **(अरुणेभिः)** कुछ ललामी लिये प्रकाशों के समान **(ऋतस्य)** जल के **(सदनेषु)** स्थानों में **(ववृधुः)** बढ़ते हैं वा **(निमेघमानाः)** निश्चित माननेवाले जन **(अत्येन)** अश्व के समान वेग से और **(पाजसा)** बल से **(सुपेशसम्)** सुन्दर रूपयुक्त **(सुश्चन्द्रम्)** सुन्दरता से वर्त्तमान सुवर्ण के समान **(वर्णम्)** स्वरूप को **(दधिरे)** धारण करते हैं **(ते)** वे जानने योग्य हैं॥१३॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जैसे पवनों के साथ प्रभात वेला बढ़कर दिन होता और समस्त विविध प्रकार का रूप प्रकट करती है, वैसे तुमको अच्छा अपना रूप धारण कर वायुविद्या का प्रकाश करना चाहिये॥१३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ताँ इ॒या॒नो महि॒ वरू॑थमू॒तय॒ उप॒ घेदे॒ना नम॑सा गृणीमसि।
त्रि॒तो न यान् पञ्च॒ होतॄ॑न॒भिष्ट॑य आव॒वर्त॒दव॑राञ्च॒क्रियाव॑से॥१४॥

तान्। इ॒या॒नः। महि॑। वरू॑थम्। ऊ॒तये॑। उप॑। घ॒। इत्। ए॒ना। नम॑सा। गृ॒णी॒म॒सि॒। त्रि॒तः। न। यान्। पञ्च॑। होतॄ॑न्। अ॒भिष्ट॑ये। आ॒ऽव॒वर्त॑त्। अव॑रान्। च॒क्रिया॑। अव॑से॥१४॥

पदार्थ:-**(तान्)** **(इयानः)** प्राप्नुवन् **(महि)** महत् **(वरूथम्)** वरं गृहम् **(ऊतये)** रक्षणाद्याय **(उप)** **(घ)** अपि **(इत्)** एव **(एना)** एनेन **(नमसा)** नमस्कारेण **(गृणीमसि)** स्तुमः **(त्रितः)** यस्त्रीणि शरीरात्मसम्बन्धिसुखानि तनोति सः **(न)** इव **(यान्)** **(पञ्च)** प्राणाऽपानव्यानोदानसमानान् **(होतॄन्)** आदातॄन् **(अभिष्टये)** अभीष्टसुखाय **(आववर्त्तत्)** समन्ताद्वर्त्तयते **(अवरान्)** अर्वाचीनान् **(चक्रिया)** चक्राविव वर्त्तमानान् **(अवसे)** कामनायै॥१४॥

अन्वय:-वयमभिष्टय ऊतय इयानस्त्रितो न यान् पञ्चावरान् होतॄन् पञ्चावराञ्चक्रियाऽभिष्टयेऽवस आववर्त्तत् तानूतये महि वरूथं प्राप्य घेदेना नमसोपगृणीमसि॥१४॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कारः। यथा कर्मोपासनाज्ञानवित्परावरान् वायून् विदित्वा स्वस्य परेषां च रक्षणाय वर्त्तते तथा वयं प्रवर्त्तेमहि। यथोत्तमं प्रासादं प्राप्य जनाः सुखिनो भवन्ति तथा वयमपि भवेम॥१४॥

पदार्थ:-हम लोग **(अभिष्टये)** अभीष्ट सुख की **(ऊतये)** रक्षा आदि के अर्थ **(इयानः)** प्राप्त होता हुआ कोई जन **(त्रितः)** जो शरीर और आत्मा सम्बन्धी सुख को विस्तृत करता है उसके **(न)** समान **(यान्)** जिन **(पञ्च)** पांच **(अवरान्)** अर्वाचीन **(होतॄन्)** ग्रहण करनेवालों को और पांच अर्वाचीन **(चक्रिया)** चाक के समान वर्त्तमानों को अभीष्ट सुख वा **(अवसे)** कामना के लिये **(आववर्त्तत्)** सब ओर से वर्त्तता है **(तान्)** उनको **(ऊतये)** रक्षा आदि के लिये **(महि)** बड़े

(वरूथम्) श्रेष्ठ घर को प्राप्त हो **(घ, इत्)** ही निश्चय कर **(एना)** इस **(नमसा)** नमस्कार से **(उप, गृणीमसि)** उपस्तुत करते हैं अर्थात् उनकी अति निकटस्थ ही स्तुति करते हैं॥१४॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे कर्मोपासना और ज्ञानविद्या का जाननेवाला अगले-पिछले पवनों को जानकर अपनी और दूसरी की रक्षा के लिये वर्त्तमान है, वैसे हम लोग प्रवृत्त हों॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यया रध्रं पारयथात्यंहो यया निदो मुञ्चथ वन्दितारम्।
अर्वाची सा मरुतो या व ऊतिरो षु वाश्रेव सुमतिर्जिगातु॥१५॥२१॥

यया। रध्रम्। पारयथ। अति। अंहः। यया। निदः। मुञ्चथ। वन्दितारम्। अर्वाची। सा। मरुतः। या। वः। ऊतिः। ओ इति। सु। वाश्राऽइव। सुऽमतिः। जिगातु॥१५॥

पदार्थ:-(यया) क्रियया **(रध्रम्)** संराधनम् **(पारयथ) (अति) (अंहः)** अपराधम् **(यया) (निदः)** निन्दकान् **(मुञ्चथ) (वन्दितारम्)** स्तावकम् **(अर्वाची)** याऽर्वणोऽश्वानञ्चति सा **(सा) (मरुतः) (या) (वः)** युष्मान् **(ऊतिः)** रक्षा **(ओ)** प्रेरणेषु **(सु) (वाश्रेव)** कमनीयइव **(सुमतिः)** सुष्ठुप्रज्ञा **(जिगातु)** प्रशंसतु॥१५॥

अन्वय:-हे मरुतो! योतिः सुमतिर्वो वाश्रेव सुजिगातु यया रध्रमति पारयथांहो निवारयथ यया निदो मुञ्चथ साऽर्वाची वन्दितारं प्राप्नोतु॥१५॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्या यया क्रिययाऽधर्मनिन्दकत्यागो धर्मप्रशंसितग्रहणं रक्षा बुद्धिवर्द्धनं स्यात्तां क्रिया सततं कुर्वन्तु सदा निन्दावर्जनं स्तुतिस्वीकरणं कुर्युरिति॥१५॥

अत्र विद्वद्वायुगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इति चतुस्त्रिंशं सूक्तमेकविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थ:-हे **(मरुतः)** मरणधर्मा मनुष्यो! **(या)** जो **(ऊतिः)** रक्षा **(सुमतिः)** और सुन्दर बुद्धि **(ओ)** प्रेरणाओं में **(वः)** तुम लोगों की **(वाश्रेव)** मनोहर के समान **(सुजिगातु)** प्रशंसा करें वा **(यया)** जिससे **(रध्रम्)** अच्छे प्रकार की सिद्धि को **(अति, पारयथ)** अतीव पार पहुंचाओ और

(अंहः) अपराध को निवृत्त करो वा **(यया)** जिससे **(निदः)** निन्दाओं को **(मुञ्चथ)** मोचो अर्थात् छोड़ो **(सा)** वह **(अर्वाची)** घोड़ों को प्राप्त होनेवाली कोई क्रिया **(वन्दितारम्)** वन्दना करनेवाले को प्राप्त हो॥१५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्य जिस क्रिया से अधर्म और निन्दा करनेवाले का त्याग और धर्म वा प्रशंसावाले का ग्रहण, रक्षा, बुद्धि की वृद्धि हो उस क्रिया को निरन्तर करें अर्थात् सदा निन्दा का त्याग और स्तुति का स्वीकार करें॥१५॥

इस सूक्त में विद्वान् और पवन के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह चौतीसवां सूक्त और इक्कीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

उपेमित्यस्य पञ्चदशर्चस्य पञ्चत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। अपान्नपाद्देवता। १, ४, ६, ७, ९, १०, १२, १३, १५ निचृत्त्रिष्टुप्। ११ विराट् त्रिष्टुप्। १४ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २, ३, ८ भुरिक् पङ्क्तिः। ५ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथाऽग्निविषयमाह॥

अब पन्द्रह ऋचावाले पेंतीसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में अग्नि के विषय को कहते हैं॥

उपे॑मसृक्षि वाज॒युर्व॑च॒स्यां चनो॑ दधीत ना॒द्यो गिरो॑ मे।
अ॒पां नपा॑दाशु॒हेमा॑ कु॒वित्स सु॒पेश॑सस्करति॒ जोषि॑ष॒द्धि॥१॥

उप॑। ईम्। अ॒सृ॒क्षि॒। वा॒ज॒ऽयुः। व॒च॒स्याम्। चनः॑। द॒धी॒त॒। ना॒द्यः। गिरः॑। मे॒। अ॒पाम्। नपा॑त्। आ॒शु॒हेमा॑। कु॒वित्। सः। सु॒ऽपेश॑सः। क॒र॒ति॒। जोषि॑षत्। हि॥१॥

पदार्थः-(**उप**) समीपे (**ईम्**) जलम् (**असृक्षि**) सृजति (**वाजयुः**) य आत्मनो वाजमिच्छुः (**वचस्याम्**) वचसि उदके भवाम् (**चनः**) अन्नम् (**दधीत**) (**नाद्यः**) नदितुं योग्यः (**गिरः**) वाण्याः (**मे**) मम (**अपाम्**) जलानाम् (**नपात्**) न पतति सः (**आशुहेमा**) सद्यो वर्द्धकः (**कुवित्**) बहुः। **कुविदिति बहुनामसु पठितम्।** (निघं०३.१)। (**सः**) (**सुपेशसः**) सु-शोभनं पेशो रूपं येषान्तान् (**करति**) कुर्य्यात् (**जोषिषत्**) जुषेत सेवेत। व्यत्ययेन परस्मैपदम्। (**हि**) खलु॥१॥

अन्वयः-यो वाजयुर्वचस्यामुपेमसृक्षि चनो दधीत योऽपानपान्नाद्य आशुहेमा कुविन्मे गिरस्सम्बन्ध्यस्ति स हि सुपेशसस्करति जोषिषच्च॥१॥

भावार्थः-यः सूर्यो जलमाकृष्य वर्षयित्वा नदीर्बाहयत्यन्नान्युत्पादयति तदशनेन प्राणिनः स्वरूपवतः करोति स सर्वैर्युक्त्या सेवनीयः॥१॥

पदार्थः-जो (**वाजयुः**) अपने को विज्ञान और अन्नादिकों की इच्छा करनेवाला (**वचस्याम्**) जल में हुई क्रिया का वा (**उप, ईम्**) समीप में जल को (**असृक्षि**) सिद्ध करता है और (**चनः**) चणकादि अन्न को (**दधीत**) धारण करे वा जो (**अपान्नपात्**) जलों के बीच न गिरनेवाला (**नाद्यः**) अव्यक्त शब्द करने योग्य तथा (**आशुहेमा**) शीघ्र बढ़नेवाली (**कुवित्**) बहु प्रकार की क्रिया और (**मे**) मेरी (**गिरः**) वाणी का सम्बन्ध करनेवाला व्यवहार है (**सः, हि**) वह (**सुपेशसः**) सुन्दर रूपवालों को (**करति**) करे और (**जोषिषत्**) उन्हें सेवे॥१॥

भावार्थः-जो सूर्य जल को खींच और वर्षा कर नदियों को बहाता और अन्नों को उत्पन्न करता जिसके खाने से प्राणियों को स्वरूपवान् करता है, वह सबको युक्ति के साथ सेवन करने योग्य है॥१॥

अथेश्वरस्तुतिविषयमाह॥

अब ईश्वरस्तुति का विषय अगले मन्त्र में कहा है॥

इमं स्वस्मै हृद आ सुतष्टं मन्त्रं वोचेम कुविदस्य वेदत्।
अपां नपादसुर्यस्य मह्ना विश्वान्यर्यो भुवना जजान॥ २॥

इमम्। सु। अस्मै। हृदः। आ। सुऽतष्टम्। मन्त्रम्। वोचेम। कुवित्। अस्य। वेदत्। अपाम्। नपात्। असुर्यस्य। मह्ना। विश्वानि। अर्यः। भुवना। जजान॥ २॥

पदार्थः-(**इमम्**) (**सु**) (**अस्मै**) (**हृदः**) हृदयस्य समीपे स्थितम् (**आ**) (**सुतष्टम्**) सुष्ठु सुखस्य निर्वर्त्तकम् (**मन्त्रम्**) विचारम् (**वोचेम**) (**कुवित्**) बहु (**अस्य**) (**वेदत्**) विद्यात् (**अपाम्**) जलानां मध्ये (**नपात्**) अविनाशी (**असुर्यस्य**) मेघे भवस्य (**मह्ना**) महत्त्वेन (**विश्वानि**) सर्वाणि (**अर्य्यः**) सर्वस्वामीश्वरः (**भुवना**) लोकान् (**जजान**) प्रादुर्भावयति। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम्॥ २॥

अन्वयः-यो नपादर्यो मह्ना विश्वानि भुवना जजानापां कुविद्वेददस्यासुर्य्यस्य मेघस्य प्रबन्धं करोति तस्मै हृदोऽस्मै इमं सुतष्टं मन्त्रं वा सुवोचेम॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन जगदीश्वरेण समग्रं जगन्निर्मितं तस्यैव स्तुतिप्रार्थनोपासनाः कुरुत॥ २॥

पदार्थः-जो (**नपात्**) अविनाशी (**अर्यः**) सर्वस्वामी ईश्वर (**मह्ना**) अपने महत्व से (**विश्वानि**) समस्त (**भुवना**) लोक-लोकान्तरों को (**जजान**) उत्पन्न करता है वा जो (**अपाम्**) जलों के बीच (**कुवित्**) बहुत व्यवहार को (**वेदत्**) जाने वा (**अस्य**) इस (**असुर्य्यस्य**) मेघ के बीच उत्पन्न हुए व्यवहार का प्रबन्ध करता है, उस (**हृदः**) हृदय के समीप स्थित (**अस्मै**) इस ईश्वर के लिये (**इमम्**) इस (**सुतष्टम्**) सुन्दर सुख के सिद्ध करनेवाले व्यवहार वा (**मन्त्रम्**) विचार को हम लोग (**सुवोचेम**) अच्छे प्रकार कहें॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस जगदीश्वर ने समग्र जगत् बनाया उसी की स्तुति, प्रार्थना वा उपासना करो॥ २॥

अथ मेघविषयमाह॥

अब मेघ के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

समन्या यन्त्युप यन्त्यन्याः समानमूर्वं नद्यः पृणन्ति।
तमू शुचिं शुचयो दीदिवांसमपां नपातं परि तस्थुरापः॥ ३॥

सम्। अन्याः। यन्ति। उप। यन्ति। अन्याः। समानम्। ऊर्वम्। नद्यः। पृणन्ति। तम्। ऊम् इति। शुचिम्। शुचयः। दीदिऽवांसम्। अपाम्। नपातम्। परि। तस्थुः। आपः॥३॥

पदार्थः-(सम्) (अन्याः) (यन्ति) प्राप्नुवन्ति **(उप) (यन्ति) (अन्याः) (समानम्)** तुल्यम् **(ऊर्वम्)** दुःखानां हिंसकम् **(नद्यः) (पृणन्ति)** सुखयन्ति **(तम्) (उ)** वितर्के **(शुचिम्)** पवित्रम् **(शुचयः)** पवित्राः **(दीदिवांसम्)** देदीप्यमानम् **(अपाम्)** जलानां मध्ये **(नपातम्)** नाशरहितमग्निम् **(परि) (तस्थुः)** तिष्ठन्ति **(आपः)** जलानि॥३॥

अन्वयः-अन्या नद्यस्समानमूर्वं संयन्ति अन्या उपयन्ति तम्वपां नपातं दीदिवांसं शुचिमग्निं शुचय आपः परि तस्थुस्ताः सर्वान् पृणन्ति॥३॥

भावार्थः-यथा नद्यः स्वयं समुद्रं प्राप्य स्थिराः शुद्धोदका जायन्ते यथा आपो मेघमण्डलं प्राप्य दिव्या भवन्ति तथा स्त्र्यभीष्टं पतिं पतिरभीष्टां स्त्रियं च प्राप्य स्थिरमनस्कौ शुद्धभावौ भवतः॥३॥

पदार्थः-जो **(अन्याः)** और **(नद्यः)** नदी **(समानम्)** तुल्य **(ऊर्वम्)** दुःखों के नष्ट करनेवाले को **(संयन्ति)** अच्छे प्रकार प्राप्त होतीं वा **(अन्याः)** और **(उप, यन्ति)** उसको उसके समीप से प्राप्त होती हैं **(तम्, उ)** उसी **(अपां, नपातम्)** जलों के बीच नाशरहित **(दीदिवांसम्)** अतीव प्रकाशमान **(शुचिम्)** पवित्र अग्नि को **(शुचयः)** पवित्र **(आपः)** जल **(परि, तस्थुः)** सब ओर से प्राप्त हो स्थिर होते हैं, वे जल सबको **(पृणन्ति)** तृप्त करते हैं॥३॥

भावार्थः-जैसे नदी आप समुद्र को प्राप्त होकर स्थिर और शुद्ध जलवाली होती हैं, वैसे जल मेघमण्डल को प्राप्त होकर दिव्य होते हैं, वैसे स्त्री अभीष्ट पति और पति अभीष्ट स्त्री को पाकर स्थिरचित्त होते हैं॥३॥

अथ विवाहविषयमाह॥

अब विवाह विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तमस्मेरा युवतयो युवानं मर्मृज्यमानाः परि यन्त्यापः।
स शुक्रेभिः शिक्वभी रेवदस्मे दीदायानिध्मो घृतनिर्णिगप्सु॥४॥

तम्। अस्मेराः। युवतयः। युवानम्। मर्मृज्यमानाः। परि। यन्ति। आपः। सः। शुक्रेभिः। शिक्वऽभिः। रेवत्। अस्मे इति। दीदाय। अनिध्मः। घृतऽनिर्निक्। अप्ऽसु॥४॥

पदार्थः-(तम्) (अस्मेराः) या अस्मानीरयन्ति ताः। अत्र **पृषोदरादिना** त लोपः। **(युवतयः)** प्राप्तयौवनाः **(युवानम्)** सम्प्राप्तयौवनम् **(मर्मृज्यमानाः)** भृशं शुद्धाः **(परि)** सर्वतः **(यन्ति) (आपः) (सः) (शुक्रेभिः)** शुद्धैरुदकैर्वीर्यैर्वा **(शिक्वभिः)** सेचनैः। अत्र शीकृधातोः क्वनिपि

वाच्छन्दसीति आद्यचो ह्रस्वत्वम्। **(रेवत्)** श्रीमत् **(अस्मे)** अस्मान् **(दीदाय)** प्रकाशयेत् **(अनिध्मः)** अदीप्यमानः **(घृतनिर्णिक्)** यो घृतमुदकं नितरां नेनेक्ति पुष्णाति सः। यद्वा घृतस्य सुस्वरूपम्। **निर्णिक् इति रूपनामसु पठितम्।** (निघं०३.७)। **(अप्सु)** जलेषु॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथाऽस्मेरा मर्मृज्यमाना युवतयश्शिक्वभिः शुक्रेभिस्सह आपस्समुद्रमिव तं युवानं परियन्ति तथा स त्वमनिध्मोऽस्मे रेवद् दीदायाप्सु घृतनिर्णिक् सूर्यइवास्मान् सदुपदेशेन शोधयतु॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा सम्प्राप्तयौवनाः स्त्रियो ब्रह्मचर्येण कृतविद्यान् हृद्यान् पूर्णविद्यान् यूनः पतीन् संपरीक्ष्य प्राप्नुवन्ति तथा पुरुषा अप्येताः प्राप्नुवन्ति यथा सूर्यो जलं संशोध्य वृष्ट्या सर्वान् सुखयति तथा संशुद्धौ परस्परप्रीतिमन्तौ विद्वांसौ कृतविवाहौ स्त्रीपुरुषौ स्वसन्तानान् शोधयितुमर्हतः॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(अस्मेराः)** हम लोगों को प्रेरणा देनेवाली **(मर्मृज्यमानाः)** निरन्तर शुद्ध **(युवतयः)** युवतियाँ **(शिक्वभिः)** सेचनाओं से **(शुक्रेभिः)** शुद्ध जल वा वीर्यों के साथ **(आपः)** नदियां समुद्र को जैसे वैसे **(तम्)** उस **(युवानम्)** युवा पुरुष को **(परियन्ति)** सब ओर से प्राप्त होतीं, वैसे **(सः)** वह, तू **(अनिध्मः)** अप्रकाशमान **(अस्मे)** हम लोगों को **(रेवत्)** श्रीमान् के समान **(दीदाय)** प्रकाशित करो वा और **(अप्सु)** जलों में **(घृतनिर्णिक्)** जल को पुष्टि देनेवाले सूर्य्य के समान हम लोगों को श्रेष्ठ उपदेश से शुद्ध करें॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे अच्छे प्रकार युवावस्था को प्राप्त युवति स्त्रियाँ ब्रह्मचर्य से की विद्या जिन्होंने ऐसे हृदय को प्रिय पूर्ण विद्यावान् युवा पतियों को अच्छे प्रकार परीक्षा कर प्राप्त होतीं, वैसे पुरुष भी इनको प्राप्त हों। जैसे सूर्य जल को संशोधन कर वृष्टि से सबको सुखी करता है, वैसे अच्छे प्रकार शुद्ध परस्पर प्रीतिमान् विद्वान् विवाह किये हुए स्त्री-पुरुष अपने सन्तानों को शुद्ध करने को योग्य हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अ॒स्मै ति॒स्रो अ॑व्य॒थ्याय॒ नारी॑र्दे॒वाय॑ दे॒वीर्दि॑धिष॒न्त्यन्न॑म्।
कृता॑इ॒वोप॒ हि प्र॑स॒र्स्रे अ॒प्सु स पी॒यूषं॑ धयति पूर्व॒सूना॑म्॥५॥२२॥

अ॒स्मै। ति॒स्रः। अ॒व्य॒थ्याय॑। नारीः॑। दे॒वाय॑। दे॒वीः। दि॒धि॒ष॒न्ति॒। अन्न॑म्। कृताः॑ऽइव। उप॑। हि। प्र॒ऽस॒र्स्रे। अ॒प्ऽसु। सः। पी॒यूष॑म्। ध॒य॒ति॒। पू॒र्व॒ऽसूना॑म्॥५॥

पदार्थः-(**अस्मै**) (**तिस्रः**) त्रित्वसङ्ख्याकाः (**अव्यथ्याय**) व्यथितुमनर्हाय (**नारीः**) स्त्रियः (**देवाय**) कामाय विदुषे (**देवीः**) देदीप्यमानाः स्त्रियः (**दिधिषन्ति**) धरन्ति (**अन्नम्**) (**कृताइव**) यथा निष्पन्नाः (**उप**) (**हि**) किल (**प्रसर्स्रे**) प्रसर्पन्ति (**अप्सु**) अन्तरिक्षप्रदेशेषु (**सः**) (**पीयूषम्**) अमृतमिव दुग्धं (**धयति**) पिबति (**पूर्वसूनाम्**) याः पूर्वमपत्यानि सूयन्ते तासाम्॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! याः कृताइव तिस्रो देवीर्नारीरस्मा अव्यथ्याय देवायान्नं दिधिषन्ति अप्सूप प्रसर्स्रे तासां पूर्वसूनां स सन्तानो हि पीयूषन्धयति पिबति॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। त्रिविधा हि उत्तममध्यमकनिष्ठत्वभेदेन नार्यो भवन्ति याश्च समानपतयो भूत्वा यदि विधवाः स्युस्तर्हि सन्तानोत्पादनाय स्वसदृशेभ्यो वीर्यङ्गृहीत्वा धर्मेण सन्तानानुत्पादयन्तु यदि सन्तानेप्सवो न स्युस्तर्हि ब्रह्मचर्ये तिष्ठन्तु॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**कृताइव**) निष्पन्न हुई सी (**तिस्रः**) तीन (**देवीः**) निरन्तर प्रकाशमान (**नारीः**) स्त्री हम लोगों के (**अव्यथ्याय**) व्यथन अर्थात् नष्ट करने को नहीं योग्य (**देवाय**) काम के लिये (**अन्नम्**) अन्न (**दिधिषन्ति**) धारण करती हैं तथा जो (**अप्सु**) अन्तरिक्ष प्रदेशों में जल (**उप, प्रसर्स्रे**) अच्छे प्रकार पास में बहते हैं, उन (**पूर्वसूनाम्**) पहिले सन्तानों को उत्पन्न करनेवालियों का (**सः**) वह विद्वान् सन्तान (**हि**) ही (**पीयूषम्**) अमृत के समान दुग्ध को (**धयति**) पीता है॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। तीन प्रकार की निश्चय स्त्रियां होती हैं जो समान पतियोंवाली होकर विधवा हों तो सन्तानों की उत्पत्ति के लिये अपने समान पुरुषों के वीर्य लेकर धर्म से सन्तानों को उत्पन्न करें, जो सन्तानों की विशेष इच्छा न हो तो ब्रह्मचर्य में स्थिर हों॥५॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

फिर विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अश्वस्यात्र जनिमास्य च स्वर्द्रुहो रिषः संपृचः पाहि सूरीन्।

आमासु पूर्षु परो अप्रमृष्यं नारातयो वि नशन्नानृतानि॥६॥

अश्वस्य। अत्र। जनिम। अस्य। च। स्वः। द्रुहः। रिषः। सम्ऽपृचः। पाहि। सूरीन्। आमासु। पूर्षु। परः। अप्रऽमृष्यम्। न। अरातयः। वि। नशन्। न। अनृतानि॥६॥

पदार्थः-(**अश्वस्य**) वीर्यप्रदातुमर्हतः। **अश्व इति महन्नामसु पठितम्।** (निघं०३.३)। (**अत्र**) अस्मिन् व्यवहारे (**जनिम**) जन्म (**अस्य**) (**च**) (**स्वः**) सुखम् (**द्रुहः**) द्रोग्धुरीर्ष्यकात् (**रिषः**) हिंसकात् (**संपृचः**) संयुक्तात् (**पाहि**) रक्ष (**सूरीन्**) विदुषः (**आमासु**) गृहे भवासु (**पूर्षु**) पुरीषु

(परः) प्रकृष्टः **(अप्रमृष्यम्)** सोढुमनर्हम् **(न)** **(अरातयः)** शत्रवः **(वि)** **(नशन्)** आप्नुवन्ति। **नशतीति व्याप्तिकर्मा।** (निघं०२.१८)। **(न)** **(अनृतानि)** मिथ्या कर्माणि॥६॥

अन्वयः-यतोऽत्राऽस्याऽश्वस्य जनिम भवति तस्मादत्र स्वर्वर्द्धते यः परस्त्वमामासु पूर्षु द्रुही रिषः संपृचः सूरीनप्रमृष्यं च पाहि त्वामरातयो न पीडयन्ति अनृतानि न विनशन् प्राप्नुवन्ति॥६॥

भावार्थः-यस्मिन् कुले महान्तो मनुष्या जायन्ते तत्र सुखमेधते यत्र शरीरात्मबला मनुष्याः स्युस्तत्र शत्रवः पीडां कर्त्तुं न शक्नुवन्ति न वीर्य्यवन्तोऽनृतान्यधर्मयुक्तानि कर्माणि कर्त्तुमुत्सहन्ते॥६॥

पदार्थः-जिससे **(अत्र)** इस व्यवहार में **(अस्य)** इस **(अश्वस्य)** महान् वीर्य देनेवाले का **(जनिम)** जन्म होता है उससे यहाँ **(स्वः)** सुख बढ़ता है, जो **(परः)** परमोत्तम आप **(आमासु)** घर में हुई **(पूर्षु)** पुरियों में **(द्रुहः)** ईर्ष्यक **(रिषः)** हिंसा और **(संपृचः)** संयोग करनेवालों के **(सूरीन्)** सम्बन्धी विद्वानों को **(च)** और **(अप्रमृष्यम्)** सहने को न योग्य व्यवहारों को **(पाहि)** रक्षा करो और आपको **(अरातयः)** शत्रुजन **(न)** नहीं पीड़ा देते तथा **(अनृतानि)** मिथ्या कर्मों को **(न)** नहीं **(विनशन्)** विशेषता से प्राप्त होते हैं॥६॥

भावार्थः-जिस कुल के बीच बड़े महात्माजन उत्पन्न होते हैं, वहाँ सुख बढ़ता है और जहाँ शरीर और आत्मा के बलयुक्त मनुष्य हों, वहाँ शत्रुजन पीड़ा नहीं कर सकते हैं और बलवान् पुरुष झूठ अधर्मयुक्त कामों का उत्साह नहीं करते हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स्व आ दमे॑ सु॒दुघा॒ यस्य॑ धे॒नुः स्व॒धां पी॑पाय सु॒भ्वन्न॑मत्ति।
सो अ॒पां नपा॑दू॒र्जय॑न्न॒प्स्व१॒॑न्तर्व॑सु॒देया॑य विध॒ते वि भा॑ति॥७॥

स्वे। आ। दमे॑। सु॒ऽदुघा॑। यस्य॑। धे॒नुः। स्व॒धाम्। पी॒पा॒य॒। सु॒ऽभु। अन्न॑म्। अ॒त्ति॒। सः। अ॒पाम्। नपा॑त्। ऊ॒र्जय॑न्। अ॒प्ऽसु। अ॒न्तः। व॒सु॒ऽदेया॑य। वि॒ध॒ते। वि। भा॒ति॒॥७॥

पदार्थः-**(स्वे)** स्वकीये **(आ)** **(दमे)** गृहे **(सुदुघा)** सुष्ठुप्रपूरिका **(यस्य)** **(धेनुः)** विद्यासुशिक्षायुक्ता वाक् **(स्वधाम्)** सूदकम्। **स्वधेत्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२)। **(पीपाय)** पीयते **(सुभु)** यत्सुष्ठु संस्कारैर्भाव्यते **(अन्नम्)** अत्तुमर्हम् **(अत्ति)** भुङ्क्ते **(सः)** **(अपाम्)** प्राणानाम् **(नपात्)** अविनाशी सन् **(ऊर्जयन्)** बलं प्राप्नुवन् **(अप्सु)** प्राणेषु **(अन्तः)** आभ्यन्तरे **(वसुदेयाय)** देयं वसु यस्य तस्मै **(विधते)** सेवमानाय **(वि)** **(भाति)** प्रकाशयति॥७॥

अन्वयः:-यस्य स्वे दमे सुदुघा धेनुः प्रवर्त्तते सोऽपां नपादप्स्वन्तरूर्जयन् स्वधां पीयाय सुभ्वन्नमत्ति विधते वसुदेयायाविभाति॥७॥

भावार्थः:-ये मनुष्याः स्वसम्बन्धिषु कामानाम्पूर्तये सुशिक्षितां वाचं संशोधितमुदकं सुसंस्कृतान्यन्नानि सेवन्ते सुशिक्षिताय सेवकाय यथायोग्यं वस्तु ददति यथाकालं सर्वान् व्यवहारान् सेवन्ते, ते सदा सुखिनो वर्त्तन्ते॥७॥

पदार्थः–जिसके **(स्वे)** अपने **(दमे)** घर में **(सुदुघा)** सुन्दरता से पूर्ण करनेवाली **(धेनुः)** विद्या और शिक्षायुक्त वाणी प्रवृत्त है **(सः)** वह **(अपांनपात्)** प्राणों के बीच अविनाशी होता और **(अप्सु)** प्राणों के **(अन्त)** भीतर **(ऊर्जयन्)** बल को प्राप्त होता हुआ **(स्वधाम्)** सुन्दर जल को **(पीपाय)** पीता और **(सुभु)** सुन्दर संस्कारों से भावना दी जाती उस **(अन्नम्)** भोजन करने योग्य अन्न को **(अत्ति)** खाता है तथा **(विधते)** सेवा करते हुए **(वसुदेयाय)** जिसे धन देना योग्य है, उसके लिये **(आ, विभाति)** प्रकाश को प्राप्त होता है॥७॥

भावार्थः:-जो मनुष्य अपने सम्बन्धियों में कामों की परिपूर्णता के लिये सुन्दर शिक्षित वाणी, सुन्दर शुधा हुआ जल, और सुन्दर संस्कार किये हुए अन्नों की सेवा करते, सुन्दर शिक्षित सेवक के लिये यथायोग्य वस्तु देते और काल पर सब व्यवहारों को सेवते हैं, वे सदा सुखी रहते हैं॥७॥

पुनर्विद्वद्विषयमाह॥

फिर विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यो अ॒प्स्वा शुचि॑ना दैव्ये॑न ऋ॒तावाज॑स्र उर्वि॒या वि॒भाति॑।

व॒या इद॒न्या भुव॑नान्यस्य॒ प्र जा॑यन्ते वी॒रुध॑श्च प्र॒जाभि॑ः॥८॥

यः। अ॒प्ऽसु। आ। शुचि॑ना। दैव्ये॑न। ऋ॒तऽवा॑। अज॑स्रः। उ॒र्वि॒या। वि॒ऽभाति॑। व॒याः। इत्। अ॒न्या। भुव॑नानि। अ॒स्य। प्र। जा॒य॒न्ते॒। वी॒रुध॑ः। च॒। प्र॒जाऽभि॑ः॥८॥

पदार्थः:-**(यः)** **(अप्सु)** व्यापकेषु पदार्थेषु **(आ)** समन्तात् **(शुचिना)** पवित्रेण **(दैव्येन)** देवैः कृतेन **(ऋतावा)** य ऋतं वनति संभजति सः **(अजस्रः)** निरन्तरम् **(उर्विया)** बहुरूपः **(विभाति)** प्रकाशते **(वयाः)** शाखाः **(इत्)** एव **(अन्या)** अन्यानि **(भुवनानि)** **(अस्य)** **(प्र)** **(जायन्ते)** **(वीरुधः)** ओषधयः **(च)** **(प्रजाभिः)**॥८॥

अन्वयः:-य ऋतावाजस्रो दैव्येन शुचिनोर्विया विभाति सोऽन्या भुवनानि वया प्रजाभिरिदिवाप्सु प्रजायन्तेऽस्य संसारस्य मध्ये या वीरुधश्च आजायन्ते ता विजानीयात्॥८॥

भावार्थः:-ये पवित्रबुद्धयो दिव्यकर्म्माणो निरन्तरं सृष्टिक्रमं जानन्ति ते सदानन्दिता जायन्ते॥८॥

पदार्थ:-(य:) जो **(ऋतावा)** सत्य का अच्छे प्रकार सेवन करता हुआ **(अजस्र:)** निरन्तर **(दैव्येन)** विद्वानों से किये हुए **(शुचिना)** पवित्र व्यवहार से **(उर्विया)** बहुरूप **(विभाति)** प्रकाशित होता है वह **(अन्या)** और **(भुवनानि)** लोक-लोकान्तरों को **(वया:)** शाखाओं को तथा **(प्रजाभि:)** प्रजा के समान **(इत्)** ही **(अप्सु)** व्यापक जलरूपी पदार्थों में जो **(प्रजायन्ते)** उत्पन्न होते हैं उन्हें और **(अस्य)** इस संसार के बीच जो **(वीरुध:, च)** ओषधियां **(आ)** उत्पन्न होती हैं, उन सबको जाने॥८॥

भावार्थ:-जो पवित्र बुद्धि, दिव्य कर्म करनेवाले निरन्तर सृष्टिक्रम को जानते हैं, वे सदा आनन्दित होते हैं॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अपां नपादाह्यस्थादुपस्थं जिह्मानामूर्ध्वो विद्युतं वसानः।
तस्य ज्येष्ठं महिमानं वहन्तीर्हिरण्यवर्णाः परि यन्ति यह्वीः॥९॥

अपाम्। नपात्। आ। हि। अस्थात्। उपऽस्थम्। जिह्मानाम्। ऊर्ध्वः। विऽद्युतम्। वसानः। तस्य। ज्येष्ठम्। महिमानम्। वहन्तीः। हिरण्यऽवर्णाः। परि। यन्ति। यह्वीः॥९॥

पदार्थ:-(अपाम्) जलानां मध्ये **(नपात्)** अपतनशील: **(आ) (हि) (अस्थात्)** तिष्ठति **(उपस्थम्)** समीपस्थम् **(जिह्मानाम्)** कुटिलानाम् **(ऊर्ध्व:)** ऊर्ध्वं स्थित: **(विद्युतम्)** स्तनयित्नुम् **(वसान:)** आच्छादयन् **(तस्य) (ज्येष्ठम्)** अतिशयेन प्रशस्यम् **(महिमानम्) (वहन्ती:)** प्रवाहं प्रापयन्त्य: **(हिरण्यवर्णा:)** हिरण्यवद्वर्णो यासां ता नद्य: **(परि) (यन्ति)** परिगच्छन्ति **(यह्वी:)** महत्य:। **यह्व इति महन्नामसु पठितम्।** (निघं०३.३)॥९॥

अन्वय:-यो जिह्मानामूर्ध्वो विद्युतं वसानोऽपां नपान्मेघ उपस्थमास्थात् यथा तस्य हि ज्येष्ठं महिमानं वहन्तीर्यह्वीर्हिरण्यवर्णा: परियन्ति तथा प्रजा राजानं प्रतिवर्त्तन्ताम्॥९॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। यथा वायोर्महिमानन्नद्य: परियन्ति तथा विद्वांसो राजानं प्रति वर्त्तन्ताम्॥९॥

पदार्थ:-जो **(जिह्मानाम्)** कुटिलों के **(ऊर्ध्व:)** ऊपर स्थित **(विद्युतम्)** बिजुली को **(वसान:)** आच्छादित करता हुआ **(अपांनपात्)** जलों के बीच न गिरने का शीलवाला मेघ **(उपस्थम्)** समीपस्थ पदार्थों को प्राप्त होकर **(आ, अस्थात्)** स्थिर होता है **(तस्य, हि)** उसी की

(ज्येष्ठम्) अतीव प्रशंसनीय **(महिमानम्)** महिमा को **(वहन्तीः)** प्रवाहरूप से प्राप्त करती हुई **(यह्वीः)** बड़ी **(हिरण्यवर्णाः)** हिरण्य अर्थात् सुवर्ण के समान वर्णवाली नदियां **(परि, यन्ति)** सब ओर से जाती हैं, वैसे प्रजागण राजा से वर्त्ताव करें॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे पवन की महिमा को नदियां प्राप्त होती हैं, वैसे विद्वान् जन राजा के प्रति वर्त्तें॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

हिरण्यरूपः स हिरण्यसंदृगपां नपात्सेदु हिरण्यवर्णः।
हिरण्ययात्परि योनेर्निषद्या हिरण्यदा ददत्यन्नमस्मै॥१०॥२३॥

हिरण्यऽरूपः। सः। हिरण्यऽसंदृक्। अपाम्। नपात्। सः। इत्। ऊम् इति। हिरण्यऽवर्णः। हिरण्ययात्। परि। योनेः। निऽसद्य। हिरण्यऽदाः। ददति। अन्नम्। अस्मै॥१०॥

पदार्थः-(हिरण्यरूपः) तेजःस्वरूपः **(सः) (हिरण्यसंदृक्)** यो हिरण्यं तेजः सम्यक् दर्शयति **(अपाम्)** जलानाम् **(नपात्) (सः) (इत्)** एव (उ) वितर्के **(हिरण्यवर्णः)** हिरण्यं सुवर्णमिव वर्णो यस्य सः **(हिरण्ययात्)** तेजोमयात् **(परि) (योनेः)** स्वकारणात् **(निषद्य)** निषण्णो भूत्वा। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(हिरण्यदाः)** ये वायवो हिरण्यं तेजो ददति ते **(ददति) (अन्नम्) (अस्मै)** प्राणिने॥१०॥

अन्वयः-ये हिरण्यदा अस्मा अन्नं ददति स हिरण्यरूपो हिरण्यसंदृक् स इदु हिरण्यवर्णोऽपांनपात् हिरण्ययाद्योनेः परि निषद्य सर्वान् पालयति॥१०॥

भावार्थः-योऽग्निर्वायुजोऽखिलवस्तुदर्शकोऽन्तर्हितो सर्वविद्यानिमित्तोऽस्ति तं विज्ञाय प्रयोजनसिद्धिः कार्य्या॥१०॥

पदार्थः–जो **(हिरण्यदाः)** वायु तेज देते हैं वे **(अस्मै)** इस प्राणी के लिये **(अन्नम्)** अन्न को **(ददति)** देते हैं **(सः)** वह **(हिरण्यरूपः)** तेजःस्वरूप **(हिरण्यसंदृक्)** तेज को दर्शाता **(सः, इत्, उ)** वही **(हिरण्यवर्णाः)** सुवर्ण के समान वर्णयुक्त **(अपांनपात्)** जलों के बीच न गिरनेवाला **(हिरण्यात्)** तेजःस्वरूप **(योनेः)** निज कारण से **(परि, निषद्य)** सब ओर से निरन्तर स्थिर हुआ अग्नि सबको पालन करता है॥१०॥

भावार्थः-जो अग्नि पवन से उत्पन्न हुआ समस्त पदार्थों को दिखानेवाला सर्व पदार्थों के भीतर रहता हुआ सर्वविद्याओं का निमित्त है, उसको जान कर प्रयोजन सिद्ध करना चाहिये॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तदुस्यानीकमुत चारु नामापीच्यं वर्धते नप्तुरपाम्।
यमिन्धते युवतयः समित्था हिरण्यवर्णं घृतमन्नमस्य॥ ११॥

तत्। अस्य। अनीकम्। उत। चारु। नाम। अपीच्यम्। वर्धते। नप्तुः। अपाम्। यम्। इन्धते। युवतयः। सम्। इत्था। हिरण्यऽवर्णम्। घृतम्। अन्नम्। अस्य॥ ११॥

पदार्थः-(**तत्**) (**अस्य**) (**अनीकम्**) सैन्यमिव तेजः (**उत**) अपि (**चारु**) सुन्दरम् (**नाम**) आख्या (**अपीच्यम्**) स्वगुणैर्निश्चितम्। **अपीच्यमिति निर्णीतान्तर्हितनामसु पठितम्।** (निघं०३.२५)। (**वर्धते**) (**नप्तुः**) पौत्रादिव वर्त्तमानात् (**अपाम्**) प्राणानाम् (**यम्**) (**इन्धते**) प्रदीपयन्ति (**युवतयः**) प्रौढयौवनाः (**सम्**) (**इत्था**) अनेन हेतुना (**हिरण्यवर्णम्**) तेजोमयं शोभनस्वरूपम् (**घृतम्**) उदकमाज्यं वा (**अन्नम्**) सुशोधितं भोक्तुमर्हम् (**अस्य**)॥ ११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यदस्य चार्वनीकमुतापीच्यं नामापां नप्तुर्वर्धते यं युवतय इत्था समिन्धते यद्धिरण्यवर्णं घृतमन्नं चास्य वर्त्तते तद्यूयं विजानीत॥ ११॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा युवतिर्युवानं प्राप्य पुत्रपौत्रैर्वर्धते तथा येऽग्निविद्यां जानन्ति ते धनधान्यैर्वर्धन्ते॥ ११॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**अस्य**) इस अग्नि का (**चारु**) सुन्दर (**अनीकम्**) सैन्य के समान तेज (**उत**) और (**अपीच्यम्**) अपने गुणों से निश्चित (**नाम**) आख्या अर्थात् कथन (**अपाम्**) प्राणों के (**नप्तुः**) पौत्र के समान व्यवहार से (**वर्धते**) बढ़ता है वा (**यम्**) जिसको (**युवतयः**) प्रबल यौवनवती स्त्री (**इत्था**) इस हेतु से (**समिन्धते**) अच्छे प्रकार प्रदीप्त करती हैं वा जो (**हिरण्यवर्णम्**) तेजोमय शोभन शुद्धस्वरूप (**घृतम्**) जल व घी और (**अन्नम्**) अच्छा शोधा हुआ खाने योग्य अन्न (**अस्य**) इस अग्नि के सम्बन्ध में वर्त्तमान है, उसको तुम जानो॥ ११॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे युवतिजन युवा पुरुष को प्राप्त होकर पुत्र और पौत्रों से बढ़ती हैं, वैसे जो अग्निविद्या को जानते हैं, वे धन-धान्यों से बढ़ते हैं॥ ११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अस्मै बहूनामवमाय सख्ये यज्ञैर्विधेम नमसा हविर्भिः।

सं सानु मार्ज्मि दिधिषामि बिल्मैर्दधाम्यन्नैः परि वन्द ऋग्भिः॥१२॥

अस्मै। बहूनाम्। अवमाय। सख्ये। यज्ञैः। विधेम। नमसा। हविःऽभिः। सम्। सानु। मार्ज्मि। दिधिषामि। बिल्मैः। दधामि। अन्नैः। परि। वन्दे। ऋक्ऽभिः॥१२॥

पदार्थः-(**अस्मै**) (**बहूनाम्**) पदार्थानाम्मध्ये (**अवमाय**) अवराय रक्षकाय वा (**सख्ये**) मित्राय (**यज्ञैः**) सङ्गताभिः क्रियाभिः (**विधेम**) प्राप्नुयाम सेवेमहि वा। **विधेमेति गतिकर्मा।**[८] (निघं०२.१४)। **परिचरणकर्मा च।** (निघं०३.५)। (**नमसा**) अन्नाद्येन (**हविर्भिः**) अन्नं दातुं चार्हैः (**सम्**) (**सानु**) संसेवनीयम् (**मार्ज्मि**) शोधयामि (**दिधिषामि**) शब्दयाम्युपदिशामि (**बिल्मैः**) प्रदीप्तसाधनैः (**दधामि**) (**अन्नैः**) सुसँस्कृतैरन्नादिभिः (**परि**) (**वन्दे**) स्तौमि (**ऋग्भिः**) मन्त्रैः॥१२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! वयं यथाऽस्मा अवमाय बहूनां सख्ये नमसा हविर्भिर्यज्ञैर्विधेम यथाहं यस्य सानु संमार्ज्मि दिधिषामि बिल्मैरन्नैर्दधामि ऋग्भिः परिवन्दे तथा तं यूयमपि परिचरत॥१२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा मनुष्या बहूनाम्मध्यात्सखायं प्रीणयन्ति तस्मा अन्नपानादीनि प्रयच्छन्ति परस्परं हितमुपदिशन्ति तथा स्वयमप्येता विद्याः प्राप्यान्यान् प्रत्युपदिशेयुरैश्वर्य्यमवाप्यान्येभ्यः प्रयच्छेयुः॥१२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! हम लोग जैसे (**अस्मै**) इस (**अवमाय**) न्यून वा रक्षा करनेवाले (**बहूनाम्**) बहुत पदार्थों के बीच (**सख्ये**) मित्र के लिये (**नमसा**) अन्नादि पदार्थ (**हविर्भिः**) खाने वा देने योग्य पदार्थ और (**यज्ञैः**) मिली हुई क्रियाओं से उत्तम व्यवहार को (**विधेम**) प्राप्त हों वा उसकी सेवा करें वा जैसे मैं जिसके (**सानु**) अच्छे प्रकार सेवने योग्य पदार्थ को (**सं, मार्ज्मि**) अच्छा शुद्ध करूं तथा (**दिधिषामि**) उपदेश करूं वा (**बिल्मैः**) उत्तम दीप्ति को प्राप्त साधनों से युक्त (**अन्नैः**) अच्छा संस्कार किये हुए अन्नादि पदार्थों से (**दधामि**) धारण करता हूं (**ऋग्भिः**) मन्त्रों से (**परिवन्दे**) सब ओर से स्तुति करता हूं, उसकी तुम लोग भी सेवा करो॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे मनुष्य बहुतों में से अपने मित्र को तृप्त करते हैं वा उसके लिये अन्नपानादि देते हैं, परस्पर हित का उपदेश करते हैं, वैसे स्वयं भी इतनी विद्याओं को प्राप्त होकर औरों के प्रति उपदेश करें तथा ऐश्वर्य को प्राप्त हो के औरों के लिये दें॥१२॥

---

८. गतिकर्मासु नैव दृश्यते। सं०।

अथ केऽत्र सुखमाप्नुवन्तीत्याह॥

अब इस जगत् में कौन लोग सुख पाते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स ईं वृषाजनयत्तासु गर्भं स ईं शिशुर्धयति तं रिहन्ति।

सो अपां नपादनभिम्लातवर्णोऽन्यस्येवेह तन्वा विवेष॥१३॥

सः। ईम्। वृषा। अजनयत्। तासु। गर्भम्। सः। ईम्। शिशुः। धयति। तम्। रिहन्ति। सः। अपाम्। नपात्। अनभिम्लातवर्णः। अन्यस्यऽइव। इह। तन्वा। विवेष॥१३॥

पदार्थः-(**सः**) (**ईम्**) जलम् (**वृषा**) वर्षकः (**अजनयत्**) जनयति (**तासु**) अप्सु (**गर्भम्**) (**सः**) (**ईम्**) दुग्धम् (**शिशुः**) बालकः (**धयति**) पिबति (**तम्**) पदार्थम् (**रिहन्ति**) लिहन्ति आस्वादन्ते। अत्र व्यत्ययेन रस्य लः। (**सः**) (**अपाम्**) जलानाम् (**नपात्**) अपत्यम्। **नपादित्यपत्यनामसु पठितम्।** (निघं०२.२)। (**अनभिम्लातवर्णः**) न म्रियतेऽभितो म्लातो हर्षक्षीणो वर्णो यस्य सः (**अन्यस्येव**) यथा अन्यशरीरे प्रविशति तथा (**इह**) अस्मिन् संसारे (**तन्वा**) शरीरेण (**विवेष**) व्याप्नोति॥१३॥

अन्वयः-स वृषा तास्वीं गर्भमजनयत्स शिशुरीं धयति तमन्ये रिहन्ति सोऽपामनभिम्लातवर्णो नपादन्यस्येवेह तन्वा विवेष॥१३॥

भावार्थः-ये पुरुषाः स्वस्यां स्त्रियां गर्भं धृत्वाऽपत्यमुत्पाद्य सम्पाल्य स्वादिष्ठमन्नमभिभोज्य प्रसन्नाकृतिं सम्पादयन्ति तेऽस्मिन् संसारे सुखान्याप्नुवन्ति॥१३॥

पदार्थः-(**सः**) वह (**वृषा**) वर्षा करनेवाला अग्नि (**तासु**) उन जलों में (**ईम्**) ही (**गर्भम्**) गर्भ को (**अजनयत्**) उत्पन्न करता है और (**सः**) वह (**शिशुः**) बालक (**ईम्**) ही (**धयति**) पीता है (**तम्**) उसको और (**रिहन्ति**) चाटते हैं (**सः**) वह (**अपाम्**) जलों के बीच (**अनभिम्लातवर्णः**) जिसका वर्ण सब ओर से क्षीण न हो (**नपात्**) सन्तान (**अन्यस्येव**) जैसे और के शरीर में प्रविष्ट होता, वैसे ही (**इह**) इस संसार में (**तन्वा**) शरीर के साथ (**विवेष**) व्याप्त होता है॥१३॥

भावार्थः-जो पुरुष अपनी स्त्री में गर्भ धारण कर सन्तान को उत्पन्न वा पालन कर और स्वादिष्ट अन्न खाय शरीर की प्रसन्नाकृति से चेष्टा करते हैं, वे इस संसार में सुखों को प्राप्त होते हैं॥१३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अस्मिन् पदे परमे तस्थिवांसमध्वस्मभिर्विश्वहा दीदिवांसम्।

आपो नप्त्रे घृतमन्नं वहन्तीः स्वयमत्कैः परि दीयन्ति यह्वीः॥ १४॥

अस्मिन्। पदे। परमे। तस्थिवांसम्। अध्वस्मऽभिः। विश्वहा। दीदिवांसम्। आपः। नप्त्रे। घृतम्। अन्नम्। वहन्तीः। स्वयम्। अत्कैः। परि। दीयन्ति। यह्वीः॥ १४॥

पदार्थः-(**अस्मिन्**) (**पदे**) प्राप्तव्ये (**परमे**) सर्वोत्कृष्टे (**तस्थिवांसम्**) स्थितम् (**अध्वस्मभिः**) अपतनशीलैर्गुणकर्मस्वभावैः (**विश्वहा**) विश्वानि च तान्यहानि च विश्वहानि। अत्र **छान्दसो वर्णलोप** इत्युत्तरपदादि लोपः। (**दीदिवांसम्**) देदीप्यमानम् (**आपः**) प्राणाः (**नप्त्रे**) पौत्राय (**घृतम्**) जलम् (**अन्नम्**) (**वहन्तीः**) प्रापयन्त्यः (**स्वयम्**) (**अत्कैः**) अत्तुमर्हैः (**परि**) (**दीयन्ति**) क्षयन्ति। व्यत्ययेनात्र परस्मैपदम्। (**यह्वीः**) महत्यः॥ १४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य आपोऽत्कैरध्वस्मभिस्सहास्मिन् परमे पदे तस्थिवांसं विश्वहा दीदिवांसं वहन्तीः स्वयं यह्वीः परिदीयन्ति तद्द्वारा नप्त्रे घृतमन्नं यूयं प्राप्नुत॥ १४॥

भावार्थः-ये मनुष्याः प्रतिदिनं सच्चिदानन्दस्वरूपं स्वस्मिन् स्थितमीशं ध्यायन्ति, ते परमं पदं ब्रह्म प्राप्यानन्दन्ति न सद्यः क्षीणलोका भवन्ति॥ १४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**आपः**) प्राण (**अत्कैः**) भोगने योग्य (**अध्वस्मभिः**) न गिरनेवाले गुण, कर्म, स्वभावों के साथ (**अस्मिन्**) इस (**परमे**) सबों से अति उत्तम (**पदे**) प्राप्त होने योग्य व्यवहार में (**तस्थिवांसम्**) स्थित (**विश्वहा**) सब दिन (**दीदिवांसम्**) देदीप्यमान ईश्वर को (**वहन्तीः**) प्राप्त करती हुई (**स्वयम्**) आप (**यह्वीः**) महान् भी (**परि, दीयन्ति**) नष्ट होती हैं, उनके द्वारा (**नप्त्रे**) पौत्र के लिये (**घृतम्**) जल और (**अन्नम्**) अन्न को तुम लोग प्राप्त होओ॥ १४॥

भावार्थः-जो मनुष्य प्रतिदिन सच्चिदानन्दस्वरूप अपने में स्थित ईश्वर का ध्यान करते हैं, वे परमपद ब्रह्म को प्राप्त होकर आनन्द को प्राप्त होते हैं [और] उत्तम सुख प्राप्ति से शीघ्र क्षीण नहीं होते॥ १४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अयांसमग्ने सुक्षितिं जनायायांसमु मघवद्भ्यः सुवृक्तिम्।
विश्वं तद्भद्रं यदवन्ति देवा बृहद्वदेम विदथे सुवीराः॥ १५॥ २४॥

अयांसम्। अग्ने। सुऽक्षितिम्। जनाय। अयांसम्। ऊम् इति। मघवत्ऽभ्यः। सुऽवृक्तिम्। विश्वम्। तत्। भद्रम्। यत्। अवन्ति। देवाः। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीराः॥ १५॥

पदार्थः-(अयांसम्) अयौ प्राप्तवन्तौ दोर्दण्डौ येन तम् **(अग्ने)** विद्वन् **(सुक्षितिम्)** शोभनां भूमिम् **(जनाय)** **(अयांसम्)** **(उ)** वितर्के **(मघवद्भ्यः)** परमपूजितधनेभ्यः **(सुवृक्तिम्)** सुष्ठुवृक्तिर्दुष्टकर्मवर्जनं यस्य तम् **(विश्वम्)** समस्त जगत् **(तत्)** **(भद्रम्)** भन्दनीयं कल्याणरूपम् **(यत्)** **(अवन्ति)** रक्षन्ति **(देवाः)** विद्वांसः **(बृहत्)** महत् **(वदेम)** उपदिशेम **(विदथे)** यज्ञे **(सुवीराः)** सुष्ठु प्राप्तशरीरबलाः॥१५॥

अन्वयः-हे अग्ने! यमयांसं सुक्षितिं सुवृक्तिमु जनायायांसं मघवद्भ्यो यद्भद्रं विश्वं सुवीराः देवा अवन्ति तद्बृहद्विदथे वयं वदेम॥१५॥

भावार्थः-ये जना धर्म्याचरणान् सुरक्ष्य दुष्टान् परिदण्ड्य जगत्कल्याणाय महान्त्युत्तमानि कर्म्माणि कुर्युस्ते सदा सर्वैस्सत्कर्त्तव्यास्स्युरिति॥१५॥

अत्राग्निमेघापत्यविवाहविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इति पञ्चत्रिंशत्तमं सूक्तं चतुर्विंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वन्! जिस **(अयांसम्)** जिससे भुजायें प्राप्त हुईं **(सुक्षितिम्)** जो सुन्दर पृथिवीयुक्त **(सुवृक्तिम्)** जिसकी दुष्ट कर्मों का त्याग करना वृत्ति **(उ)** और **(जनाय)** मनुष्यों के लिये वा **(अयांसम्)** जिससे भुजायें प्राप्त हुईं **(मघवद्भ्यः)** परम धनवान् मनुष्यों के लिये **(यत्)** जिस **(भद्रम्)** कल्याणरूपी **(विश्वम्)** जगत् की **(सुवीराः)** सुन्दर वीर अर्थात् प्राप्त हुआ शरीर बल जिनको वे **(देवाः)** विद्वान् जन **(अवन्ति)** रक्षा करते हैं **(तत्)** उसको **(बृहत्)** बहुत **(विदथे)** यज्ञ में हम लोग **(वदेम)** कहें अर्थात् उसको उपदेश दें॥१५॥

भावार्थः-जो जन धर्म के अनुकूल आचरण करनेवालों की अच्छे प्रकार रक्षा और दुष्टों को दण्ड दे जगत् के कल्याण के लिये बड़े-बड़े उत्तम कर्मों को करें, वे सबको सर्वदा सत्कार करने योग्य हैं॥१५॥

इस सूक्त में अग्नि, मेघ, अपत्य, विवाह और विद्वान् के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह ३५ पैंतीसवां सूक्त और २४ चौबीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

तुभ्यमिति षड्चस्य षट्त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। १ इन्द्रो मधुश्च। २ मरुतो माधवश्च। ३ त्वष्टा शक्रश्च[१]। ४ अग्निः शुचिश्च। ५ इन्द्रो नभश्च। ६ मित्रावरुणौ नभस्यश्च देवताः। १, ४ स्वराट् त्रिष्टुप्। ५, ६ भुरिक् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २, ३ जगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथ विद्वद्गुणानाह॥

अब छः ऋचावाले ३६ वें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में विद्वानों के गुणों का वर्णन करते हैं॥

तुभ्यं हिन्वानो वसिष्ट गा अपोऽधुक्षन्त्सीमविभिरद्रिभिर्नरः।
पिबेन्द्र स्वाहा प्रहुतं वषट्कृतं होत्रादासोमं प्रथमो य ईशिषे॥१॥

तुभ्यम्। हिन्वानः। वसिष्ट। गाः। अपः। अधुक्षन्। सीम्। अविऽभिः। अद्रिऽभिः। नरः। पिब। इन्द्र। स्वाहा। प्रऽहुतम्। वषट्ऽकृतम्। होत्रात्। आ। सोमम्। प्रथमः। यः। ईशिषे॥१॥

पदार्थः-(तुभ्यम्) (हिन्वानः) वर्द्धयन् **(वसिष्ट)** वसेत् **(गाः)** वाचः **(अपः)** प्राणान् **(अधुक्षन्)** प्रपूरयन्तु **(सीम्)** आदित्यः **(अविभिः)** रक्षकैः **(अद्रिभिः)** मेघैः **(नरः)** नायकाः **(पिब) (इन्द्र)** यज्ञपते **(स्वाहा)** सत्क्रियया **(प्रहुतम्)** प्रकृष्टतया गृहीतम् **(वषट्कृतम्)** क्रियया निष्पादितम् **(होत्रात्)** दानात् **(आ) (सोमम्)** सदोषधिरसम् **(प्रथमः)** आदिमः **(यः) (ईशिषे)** ऐश्वर्यवान् भवेः॥१॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यो हिन्वानस्तुभ्यं वसिष्ट। हे नरो! भवन्तोऽविभिरद्रिभिः सह सीमादित्य इव गा अपोऽधुक्षन्। हे इन्द्र! प्रथमस्त्वं स्वाहा प्रहुतं होत्राद्वषट्कृतं सोममा पिब यस्त्वं सर्वानीशिषे स स्वयमपि तथा भव॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये यज्ञानुष्ठानेन जलं संशोध्य तज्जन्यमोषधिरसं पीत्वा धर्म्मानुष्ठानेनैश्वर्यं स्वार्थं परार्थं च वर्द्धयन्ति ते सर्वतो वर्द्धन्ते॥१॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** यज्ञपति जो **(हिन्वानः)** वृद्धि को प्राप्त होता हुआ **(तुभ्यम्)** तुम्हारे लिये **(वसिष्ट)** वसे वा। हे **(नरः)** नायक सर्वोत्तम जनो! आप लोग **(अविभिः)** रक्षा करनेवाले **(अद्रिभिः)** मेघों के साथ **(सीम्)** आदित्य के समान **(गाः)** वाणी और **(अपः)** प्राणों को **(अधुक्षन्)** पूर्ण करो। हे **(इन्द्र)** यज्ञपते! **(प्रथमः)** आदिभूत आप **(स्वाहा)** उत्तम क्रिया के साथ

---

१. त्वष्टा शुक्रश्च॥ सं०॥

(प्रहुतम्) अत्युत्तमता से गृहीत **(होत्रात्)** दान के कारण **(वषट्कृतम्)** क्रिया से सिद्ध किये हुए **(सोमम्)** उत्तम ओषधियों के रस को **(आ, पिब)** अच्छे प्रकार पिओ **(यः)** जो आप सबके **(ईशिषे)** ईश्वर हो अर्थात् स्वामी अधिपति हो वह आप भी वैसे होओ॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो यज्ञानुष्ठान से जल को शुद्ध कर उससे उत्पन्न हुए ओषधियों के रस को पीकर धर्म के अनुष्ठान से ऐश्वर्य्य अपने या औरों के लिये बढ़ाते हैं, वे सब ओर से बढ़ते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यज्ञैः संमिश्लाः पृषतीभिर्ऋष्टिभिर्यामंञ्छुभ्रासों अञ्जिषु प्रिया उत।
आसद्या बर्हिर्भरतस्य सूनवः पोत्रादा सोमं पिबता दिवो नरः॥२॥

यज्ञैः। सम्ऽमिश्लाः। पृषतीभिः। ऋष्टिऽभिः। यामन्। शुभ्रासः। अञ्जिषु। प्रियाः। उत। आऽसद्य। बर्हिः। भरतस्य। सूनवः। पोत्रात्। आ। सोमम्। पिबत। दिवः। नरः॥२॥

पदार्थः-(यज्ञैः) सत्क्रियामयैः **(संमिश्लाः)** सम्यग्मिश्राः **(पृषतीभिः)** मरुद्गतिभिः **(ऋष्टिभिः)** प्रापिकाभिः **(यामन्)** यामनि प्राप्ते काले **(शुभ्रासः)** श्वेतवर्णाः **(अञ्जिषु)** कामयमानेषु **(प्रियाः)** प्रीतिविषयाः **(उत)** अपि **(आसद्य)** प्राप्य। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(बर्हिः)** अन्तरिक्षे **(भरतस्य)** धारकस्य **(सूनवः)** पुत्राः **(पोत्रात्)** पवित्रात् **(आ) (सोमम्) (पिबत)**। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(दिवः)** प्रकाशात् **(नरः)** नेतारः॥२॥

अन्वयः-हे भरतस्य सूनवो नरो! यथा सम्मिश्ला शुभ्रासः प्रिया यज्ञैः पृषतीभिर्ऋष्टिभिर्यामन्नुताञ्जिषु बर्हिरासद्य पोत्राद्दिवः सोमं पिबन्ति तथा यूयमा पिबत॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा वायवोऽन्तरिक्षे भ्रमन्तः सर्वान् प्राणिनो जीवयन्ति प्राणरूपेण प्रियाः सन्ति सर्वस्माद्रसमुपरिनीय वर्षित्वा सर्वानानन्दयन्ति तथा मनुष्यैरपि वर्त्तितव्यम्॥२॥

पदार्थः-हे **(भरतस्य)** धारण करनेवाले के **(सूनवः)** पुत्रो **(नरः)** नायक मनुष्यो! जैसे **(संमिश्लाः)** अच्छे प्रकार मिले हुए **(शुभ्रासः)** श्वेतवर्ण **(प्रियाः)** प्यारे जन **(यज्ञैः)** अच्छी क्रियाओं से युक्त **(ऋष्टिभिः)** प्राप्ति करानेवाली **(पृषतीभिः)** पवन की गतियों से **(यामन्)** प्राप्त हुए समय में **(उत)** और **(अञ्जिषु)** कामना करते हुओं में **(बर्हिः)** अन्तरिक्ष को **(आसद्य)** पहुँच

कर **(पोत्रात्)** पवित्र व्यवहार से उत्पन्न हुए **(दिवः)** प्रकाश से **(सोमम्)** ओषधियों के रस को पीते हैं, वैसे तुम **(आ, पिबत)** पिओ॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे पवन अन्तरिक्ष में भ्रमते हुए सब प्राणियों को जिलाते हैं और प्राणस्वरूप से प्यारे हैं तथा सबसे रस ऊपर को पहुँचा और वर्षा कर सबको आनन्दित करते हैं, वैसे मनुष्यों को होना चाहिये॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अमेव नः सुहवा आ हि गन्तन नि बर्हिषि सदतना रणिष्टन।
अथा मन्दस्व जुजुषाणो अन्धसस्त्वष्टर्देवेभिर्जनिभिः सुमद्गणः॥३॥

अमाऽइव। नः। सुऽहवाः। आ। हि। गन्तन। नि। बर्हिषि। सदतन। रणिष्टन। अथ। मन्दस्व। जुजुषाणः। अन्धसः। त्वष्टः। देवेभिः। जनिऽभिः। सुमत्ऽगणः॥३॥

पदार्थः-**(अमेव)** गृहं यथा **(नः)** अस्माकम् **(सुहवाः)** सुष्ठु प्रशंसिताः **(आ)** **(हि)** खलु **(गन्तन)** गच्छत **(नि)** नितराम् **(बर्हिषि)** अन्तरिक्षे **(सदतन)**। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(रणिष्टन)** शब्दयत **(अथ)** आनन्तर्य्ये। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(मन्दस्व)** आनन्दय **(जुजुषाणः)** भृशं सेवमानः **(अन्धसः)** अन्नस्य **(त्वष्टः)** विच्छेदकः **(देवेभिः)** दिव्यगुणैः **(जनिभिः)** जन्मभिः **(सुमद्गणः)** सुमता गणा यस्य सः॥३॥

अन्वयः-हे त्वष्टः सुमद्गणो! जुजुषाणस्त्वं देवेभिर्जनिभिः सहाऽन्धसो भोगान् कुरु। अथ मन्दस्व हे सुहवा! यूयं नोऽमेव बर्हिषि निसदतनास्मान् रणिष्टन हि नोऽस्मानागन्तन॥३॥

भावार्थः-यथाऽन्तरिक्षे स्थिता वायवः सर्वान् प्राप्नुवन्ति त्यजन्ति च तथा विद्वांसो धार्मिका धर्मं प्राप्नुयुर्दुष्टा अधर्मं च त्यजेयुः, सत्यं चोपदिशन्तु॥३॥

पदार्थः-हे **(त्वष्टः)** छिन्न-भिन्न करनेवाले पुरुष! **(सुमद्गणः)** अच्छे माने हुए गण जिनके **(जुजुषाणः)** ऐसे निरन्तर सेवा करते हुए आप **(देवेभिः)** दिव्यगुणों और **(जनिभिः)** जन्मों के साथ **(अन्धसः)** अन्न के भोगों को कीजिये। **(अथ)** इसके अनन्तर **(मन्दस्व)** आनन्दित हूजिये। हे **(सुहवाः)** अच्छे प्रकार प्रशंसा को प्राप्त तुम लोग **(बर्हिषि)** अन्तरिक्ष में **(नः)** हमारी **(अमेव)** घर को जैसे वैसे **(अन्तरिक्ष)** में **(नि, सदतन)** निरन्तर जाओ पहुँचो, हमें **(रणिष्टन)** उपदेश देओ **(हि)** निश्चय से हम लोगों को **(आ, गन्तन)** आओ प्राप्त होओ॥३॥

भावार्थः-जैसे अन्तरिक्ष में स्थित पवन सबको प्राप्त होते और छोड़ते हैं, वैसे विद्वान् धार्मिक जन धर्म को प्राप्त हों तथा दुष्ट जन अधर्म को त्याग करें और सत्य का उपदेश दें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ व॑क्षि दे॒वाँ इ॒ह वि॑प्र॒ यक्षि॑ चो॒शन् हो॑त॒र्नि ष॑दा॒ योनि॑षु त्रि॒षु।
प्रति॑ वीहि॒ प्रस्थि॑तं सो॒म्यं मधु॒ पिबाग्नी॑ध्रा॒त्तव॑ भा॒गस्य॑ तृप्णुहि॥४॥

आ। व॒क्षि॒। दे॒वान्। इ॒ह। वि॒प्र॒। यक्षि॑। च॒। उ॒शन्। हो॒त॒रिति॑। नि। स॒द॒। योनि॑षु। त्रि॒षु। प्रति॑। वी॒हि॒। प्रऽस्थि॑तम्। सो॒म्यम्। मधु॑। पिब॑। आग्नी॑ध्रात्। तव॑। भा॒गस्य॑। तृ॒प्णु॒हि॒॥४॥

पदार्थः-(**आ**) (**वक्षि**) वदसि (**देवान्**) दिव्यगुणान् (**इह**) संसारे (**विप्र**) (**यक्षि**) यजसि (**च**) (**उशन्**) कामयमानः (**होतः**) सुखप्रदातः (**नि**) नितराम् (**सद**) स्थिरो भव। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**योनिषु**) निमित्तेषु (**त्रिषु**) कर्मोपासनाज्ञानेषु (**प्रति**) (**वीहि**) प्राप्नुहि (**प्रस्थितम्**) प्रकर्षेण स्थितम् (**सोम्यम्**) सोमगुणसंपन्नम् (**मधु**) मधुरमुदकम्। **मध्विति उदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२)। (**पिब**) (**आग्नीध्रात्**) अग्निं धरति यस्मात् तस्मात् (**तव**) (**भागस्य**) भजनीयस्य (**तृप्णुहि**)॥४॥

अन्वयः-हे होतरुशन् विप्र! यतस्त्वमिह देवानावक्षि सङ्गतानि कर्माणि च यक्षि तस्मात्त्रिषु योनिषु निषद प्रस्थितं प्रति वीहि सोम्यं मधु पिब तव भागस्याग्नीध्रात् तृप्णुहि॥४॥

भावार्थः-ये मनुष्याः कर्मोपासनाज्ञानेषु प्रयत्य सत्यं कामयन्तो मनुष्यानध्यापनोदेशाभ्यां विदुषः कुर्वन्ति ते नित्यं सुखमश्नुवते॥४॥

पदार्थः-हे (**होतः**) सुख के देनेवाले! (**उशन्**) कामना करते हुए (**विप्र**) मेधावी जन! आप नियत अपने कर्म को (**इह**) इस संसार में (**देवान्**) दिव्य गुणों को (**आ, वक्षि**) अच्छे प्रकार कहते (**च**) और प्राप्त हुए कर्मों को (**यक्षि**) प्राप्त होते तथा दूसरे प्राणियों को उनका उपदेश देते हैं, इसी से (**त्रिषु**) कर्म, उपासना, ज्ञान इन तीनों (**योनिषु**) निमित्तों में (**निषद**) निरन्तर स्थिर हों और (**प्रस्थितम्**) प्रकर्षता से स्थित विषय को (**प्रति, वीहि**) प्राप्त होओ (**सोम्यम्**) शीतलगुण सम्पन्न (**मधु**) मीठे जल को (**पिब**) पीओ और (**तव**) तुम्हारे (**भागस्य**) सेवने योग्य व्यवहार के (**आग्नीध्रात्**) उस भाग से जिससे अग्नि को धारण करते हैं (**तृप्णुहि**) तृप्त हूजिये॥४॥

भावार्थः-जो मनुष्य कर्मोपासना और ज्ञानों में प्रयत्न कर सत्य की कामना करते हुए मनुष्यों को अध्यापन और उपदेश से विद्वान् करते हैं, वे नित्य सुख को प्राप्त होते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

एष स्य ते तन्वो नृम्णवर्धनः सह ओजः प्रदिवि बाह्वोर्हितः।
तुभ्यं सुतो मघवन् तुभ्यमाभृतस्त्वमस्य ब्राह्मणादा तृपत्पिब॥५॥

एषः। स्यः। ते। तन्वः। नृम्णऽवर्धनः। सहः। ओजः। प्रऽदिवि। बाह्वोः। हितः। तुभ्यम्। सुतः। मघऽवन्। तुभ्यम्। आऽभृतः। त्वम्। अस्य। ब्राह्मणात्। आ। तृपत्। पिब॥५॥

पदार्थः-(**एषः**) (**स्यः**) सः (**ते**) तव (**तन्वः**) शरीरस्य (**नृम्णवर्धनः**) धनवर्धनः (**सहः**) बलम् (**ओजः**) पराक्रमम् (**प्रदिवि**) प्रकृष्टप्रकाशे (**बाह्वोः**) भुजयोः (**हितः**) धृतः (**तुभ्यम्**) (**सुतः**) पुत्रः (**मघवन्**) प्रकृष्टधनः (**तुभ्यम्**) (**आभृतः**) समन्तात् पोषितः (**त्वम्**) (**अस्य**) (**ब्राह्मणात्**) (**आ**) (**तृपत्**) तृप्यतु (**पिब**)॥५॥

अन्वयः-हे मघवन्! यस्ते तन्वः प्रदिवि सह ओजो बाह्वोर्हितस्तुभ्यं सुत आभृतोऽस्ति स्य एष नृम्णवर्धनो भवति त्वमस्य ब्राह्मणात् तृपत्सन्ना पिब॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये युष्मदर्थं शारीरिकमात्मीयं च बलं वर्धयेयुस्तेन धनं तांश्चोत्तमैः पदार्थैस्सेवध्वम्॥५॥

पदार्थः–हे (**मघवन्**) अति उत्तम धन वाले! जो (**ते**) आपके (**तन्वः**) शरीर के सम्बन्धी (**प्रदिवि**) अतीव प्रकाश में (**सहः**) बल (**ओजः**) पराक्रम तथा (**बाह्वोः**) भुजाओं के बीच (**हितः**) धारण (**सुतः**) और उत्पन्न किया हुआ (**तुभ्यम्**) आपके लिये और (**आभृतः**) अच्छे प्रकार पुष्ट किया पुत्र है (**स्यः**) सो (**एषः**) यह (**नृम्णवर्धनः**) धन का बढ़ानेवाला होता है (**त्वम्**) आप (**अस्य**) इसके सम्बन्धी (**ब्राह्मणात्**) ब्राह्मण से (**तृपत्**) तृप्त होते हुए (**आ, पिब**) अच्छे प्रकार ओषधि रस को पिओ॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो तुम्हारे लिये शारीरिक और आत्मीय बल को बढ़ावें, उससे धन और उनकी अच्छे पदार्थों से सेवा करो॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

जुषेथां यज्ञं बोधतं हवस्य मे सत्तो होता निविदः पूर्व्या अनु।
अच्छा राजाना नम एत्यावृतं प्रशास्त्रादा पिबतं सोम्यं मधु॥६॥२५॥

जुषेथाम्। यज्ञम्। बोधतम्। हवस्य। मे। सत्तः। होता। निऽविदः। पूर्व्याः। अनु। अच्छ। राजाना। नमः। एति। आऽवृतम्। प्रऽशास्त्रात्। आ। पिबतम्। सोम्यम्। मधु॥६॥

पदार्थः-(जुषेथाम्) सेवेथाम् **(यज्ञम्)** विद्वत्सत्कारादिकम् **(बोधतम्)** विजानीतम् **(हवस्य)** दातुमादातुमर्हस्य **(मे)** मम **(सत्तः)** प्रतिष्ठितः **(होता)** दाता **(निविदः)** नितरां विदन्ति याभ्यस्ता वाचः। **निविदिति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं०१.११) **(पूर्व्याः)** पूर्वैर्विद्वद्भिः सेविताः **(अनु) (अच्छ)** अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(राजाना)** देदीप्यमानावध्यापकोपदेशकौ **(नमः)** अन्नम् **(एति)** आप्नोति **(आवृतम्)** समन्तादाच्छादितम् **(प्रशास्त्रात्) (आ) (पिबतम्) (सोम्यम्)** यत्सोममर्हति तत् **(मधु)** मधुरगुणोपेतम्॥६॥

अन्वयः-हे राजाना! मे हवस्य यज्ञं जुषेथां पूर्व्या निविदोऽच्छानुबोधतं यथा सत्तो होता आवृतं नम एति तथा युवां प्रशास्त्रात् सोम्यं मध्वा पिबतम्॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथाऽध्यापका उपदेष्टारश्च युष्मान् प्रति प्रीत्या विद्यादानसत्योपदेशाभ्यां सह वर्त्तन्ते तथा यूयमपि वर्त्तध्वमिति॥६॥

अत्र विद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति बोध्यम्॥

इति षट्त्रिंशत्तमं सूक्तं पञ्चविंशो वर्गः सप्तमोऽध्यायश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(राजना)** राजजनो! **(मे)** मेरे **(हवस्य)** देने-लेने योग्य व्यवहार सम्बन्धी **(यज्ञम्)** विद्वानों के सत्कार आदि काम को **(जुषेथाम्)** सेवो। **(पूर्व्याः)** पूर्व विद्वानों ने सेवन की हुई **(निविदः)** जिनसे निरन्तर विषयों को जानते हैं, उन वाणियों को **(अच्छ)** अच्छे प्रकार **(अनु, बोधतम्)** अनुकूलता से जानो। जैसे **(सत्तः)** प्रतिष्ठित **(होता)** देनेवाला **(आवृतम्)** अत्युत्तमता से ढपे हुए **(नमः)** अन्न को **(एति)** प्राप्त होता है, वैसे तुम दोनों **(प्रशास्त्रात्)** उत्तम शिक्षा करनेवाले से **(सोम्यम्)** शान्ति वा शीतलता के योग्य **(मधु)** मधुर गुणयुक्त रस को **(आ, पिबतम्)** अच्छे प्रकार पिओ॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे पढ़ाने वा उपदेश करनेवाले आप लोगों के प्रति प्रीति से विद्यादान और सत्योपदेश के साथ वर्त्तमान हैं, वैसे आप भी वर्त्तो॥६॥

इस सूक्त में विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्तार्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह छत्तीसवां सूक्त पचीसवां वर्ग और सप्तमाध्याय समाप्त हुआ॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्याणां परमविदुषां श्रीविरजानन्दसरस्वतीस्वामिनां शिष्येण परमहंसपरिव्राजकाचार्येण श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिना विरचिते संस्कृतार्य्यभाषाभ्यां समन्विते सुप्रमाणयुक्ते ऋग्वेदभाष्ये द्वितीयाष्टके सप्तमोऽध्याय आदितः पञ्चदशोऽध्यायः परिपूर्णः। इति॥

ओ३म्

अथाष्टमाध्यायारम्भः॥

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद्भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥ ऋ०५.८२.५॥

मन्दस्वेत्यस्य षड्चस्य सप्तत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। १-४ द्रविणोदाः। ५ अश्विनौ। ६ अग्निश्च देवताः। १, ५ निचृज्जगती। २ जगती। ३ विराड् जगती छन्दः। निषादः स्वरः। ४, ६ भुरिक् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ विद्वद्गुणानाह॥

अब छः ऋचावाले सैंतीसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में विद्वानों के गुणों का उपदेश करते हैं॥

मन्द॑स्व हो॒त्रादनु॒ जोष॒मन्ध॒सोऽध्व॑र्यव॒: स पू॒र्णां व॑ष्ट्यासिच॑म्।
तस्मा॑ ए॒तं भ॑रत तद्व॒शो द॒दिर्हो॒त्रात्सोम॑ द्रविणोद॒: पिब॑ ऋ॒तुभि॑:॥ १॥

मन्द॑स्व। हो॒त्रात्। अनु॑। जोष॑म्। अन्ध॑सः। अध्व॑र्यवः। सः। पू॒र्णाम्। व॒ष्टि। आ॒ऽसिच॑म्। तस्मै॑। ए॒तम्। भ॒र॒त। त॒त्ऽव॒शः। द॒दिः। हो॒त्रात्। सोम॑म्। द्र॒वि॒णः॒ऽदः॒। पिब॑। ऋ॒तुऽभि॑:॥ १॥

पदार्थः-(**मन्दस्व**) आनन्द (**होत्रात्**) आदानात् (**अनु**) (**जोषम्**) प्रीतिम् (**अन्धसः**) अन्नस्य (**अध्वर्यवः**) य आत्मानमध्वरमिच्छवस्ते (**सः**) (**पूर्णाम्**) (**वष्टि**) कामयते (**आसिचम्**) समन्तात्सेचकम् (**तस्मै**) (**एतम्**) (**भरत**) भरत। अत्र **बहुलं छन्दसी**ति शपः श्लुर्न। (**तद्वशः**) तदिच्छः (**ददिः**) दाता (**होत्रात्**) दातुः (**सोमम्**) (**द्रविणोदः**) यो द्रविणो ददाति तत्सम्बुद्धौ (**पिब**) (**ऋतुभिः**) वसन्तादिभिः॥ १॥

अन्वयः-हे द्रविणोदस्त्वं होत्रादन्धसो जोषमनु मन्दस्व। यथा स विद्वान् पूर्णामासिचं वष्टि तथा हे अध्वर्यवो! यूयं तस्मा एतं भरत। हे द्रविणोदस्तद्वशो ददिस्त्वमृतुभिः सह होत्रात्सोमं पिब॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यैः परस्परेभ्यो विद्याधनधान्यादीनि दत्वा सततमानन्दितव्यम्॥ १॥

पदार्थः-हे (**द्रविणोदः**) धन देनेवाले! आप (**होत्रात्**) लेने से (**अन्धसः**) अन्न की (**जोषम्**) प्रीति को (**अनु, मन्दस्व**) अनुमोदन करो और जैसे (**सः**) वह विद्वान् (**पूर्णाम्**) पूर्ण वृष्टि को

(आसिचम्) अच्छे प्रकार सींचनेवाले की **(वष्टि)** कामना करता है, वैसे हे **(अध्वर्यवः)** अपने को यज्ञ की इच्छा करनेवाले! तुम **(तस्मै)** उसके लिये **(एतम्)** इसको **(भरत)** धारण करो। हे धन देनेवाले पुरुष! **(तद्वशः)** उसकी इच्छावान् **(ददिः)** दाता आप **(ऋतुभिः)** वसन्तादि ऋतुओं के साथ **(होत्रात्)** देनेवाले से **(सोमम्)** ओषधियों के रस को **(पिब)** पिओ॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को परस्पर के लिये विद्या, धन और धान्य आदि पदार्थ देकर निरन्तर आनन्द करना चाहिये॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यमु पूर्वमहुवे तमिदं हुवे सेदु हव्यो ददिर्यो नाम पत्यते।
अध्वर्युभिः प्रस्थितं सोम्यं मधु पोत्रात्सोमं द्रविणोदः पिब ऋतुभिः॥२॥

यम्। ऊम् इति। पूर्वम्। अहुवे। तम्। इदम्। हुवे। सः। इत्। ऊम् इति। हव्यः। ददिः। यः। नाम। पत्यते। अध्वर्युऽभिः। प्रऽस्थितम्। सोम्यम्। मधु। पोत्रात्। सोमम्। द्रविणःऽद। पिब। ऋतुऽभिः॥२॥

पदार्थः-**(यम्)** (उ) वितर्के **(पूर्वम्)** **(अहुवे)** जुहोमि। अत्र **बहुलं छन्दस्यमाङ्योगेऽपी**त्यडागमः। **(तम्)** **(इदम्)** **(हुवे)** गृह्णामि **(सः)** **(इत्)** एव (उ) **(हव्यः)** ग्रहीतुमर्हः **(ददिः)** दाता **(यः)** **(नाम)** **(पत्यते)** पतिं कुर्वते **(अध्वर्युभिः)** आत्मनो हिंसामनिच्छुभिः **(प्रस्थितम्)** ओषधिभ्यो निष्पादितम् **(सोम्यम्)** सोमार्हम् **(मधु)** मधुरगुणयुक्तम् **(पोत्रात्)** पवित्रकर्त्तुः **(सोमम्)** महौषधिरसम् **(द्रविणोदः)** धनप्रद **(पिब)** **(ऋतुभिः)**॥२॥

अन्वयः-हे द्रविणोदो! यथा यो ददिर्हव्योऽहं यमु पूर्वमहुवे सोऽहं तमिदं नामेदु पत्यते हुवे। अध्वर्युभिर्ऋतुभिस्सह वर्त्तमानो यथाऽहं प्रस्थितं सोम्यं मधु पिबामि तथा पोत्रात्सोमं त्वं पिब॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। येऽविद्वांसो विद्वद्भिः सह सङ्गत्यान्नपानादिकं सुपरीक्ष्य सेवन्ते ते सुखिनो भवन्ति॥२॥

पदार्थः-हे **(द्रविणोदः)** धन देनेवाले! जैसे **(यः)** जो **(ददिः)** देनेवाला **(हव्यः)** ग्रहण करने योग्य मैं **(यम्, उ)** जिसको **(पूर्वम्)** प्रथम **(अहुवे)** होमता हूं **(सः)** सो मैं **(तम्)** उस **(इदम्)** इसको **(नाम)** प्रसिद्ध **(इत्)** ही (उ) तर्क-वितर्क के साथ **(पत्यते)** पति करने अर्थात् रक्षक की इच्छा करनेवाले के लिये **(हुवे)** ग्रहण करता हूं। और **(अध्वर्युभिः)** अपने को हिंसा न चाहनेवाले जनों तथा **(ऋतुभिः)** वसन्तादि ऋतुओं के साथ वर्त्तमान जैसे मैं **(प्रस्थितम्)** ओषधियों

से निकाले हुए **(सोम्यम्)** सोम के योग्य **(मधु)** मधुरगुणयुक्त रस को पीता हूं, वैसे **(पोत्रात्)** पवित्र करनेवाले से **(सोमम्)** महौषधियों के रस को तू **(पिब)** पी॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो अविद्वान् पुरुष विद्वानों के साथ सङ्गति कर अन्न-पान आदि की अच्छी परीक्षा करके उसको सेवते हैं, वे सुखी होते हैं॥॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

मेद्यन्तु ते वह्नयो येभिरीयसेऽरिषण्यन् वीळयस्वा वनस्पते।
आयूया धृष्णो अभिगूर्या त्वं नेष्ट्रात्सोमं द्रविणोदः पिब ऋतुभिः॥३॥

मेद्यन्तु। ते। वह्नयः। येभिः। ईयसे। अरिषण्यन्। वीळयस्व। वनस्पते। आऽयूय। धृष्णो इति। अभिऽगूर्य। त्वम्। नेष्ट्रात्। सोमम्। द्रविणःऽदः। पिब। ऋतुऽभिः॥३॥

पदार्थः-(मेद्यन्तु) आत्मनो मेदं स्नेहमिच्छन्तु **(ते)** तव **(वह्नयः)** वोढारः। **वह्नयो वोढार** (निरु०८.३) इति यास्कः। **(येभिः)** यैः **(ईयसे)** प्राप्नोषि **(अरिषण्यन्) [न]** द्रविणमिच्छुः **(वीळयस्व)** स्तुहि। अत्राऽ**न्येषामपी**ति दीर्घः। **(वनस्पते)** वनस्य किरणसमूहस्य पालक **(आयूय)** संमेल्य। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(धृष्णो)** प्रगल्भ **(अभिगूर्य)** अभित उद्यमं कृत्वा। अत्रापि पूर्ववद्दीर्घः। **(त्वम्) (नेष्ट्रात्)** प्रापणात् **(सोमम्)** रसम् **(द्रविणोदः)** धनस्य दातः **(पिब) (ऋतुभिः)** वसन्तादिभिः सह॥३॥

अन्वयः-हे द्रविणोदो वनस्पते धृष्णो! त्वं यथा वह्नयस्ते सोमं मेद्यन्तु येभिः सहेयसे तथा तैः सहाऽरिषण्यन् वीळयस्व, अभिगूर्यायूय नेष्ट्रात् त्वमृतुभिः सह सोमं पिब॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। नहि केनचिदनुद्यमिना स्थातव्यमृतून् प्रत्यनुकूलं व्यवहारं कृत्वा सुखं वर्द्धनीयम्॥३॥

पदार्थः-हे **(द्रविणोदः)** धन के देने और **(वनस्पते)** किरण समूह की रक्षा करनेवाले **(धृष्णो)** प्रगल्भ! आप जैसे **(वह्नयः)** पदार्थ पहुँचानेवाले **(ते)** आपके **(सोमम्)** ओषध्यादि रस को **(मेद्यन्तु)** सचिक्कण अपने को चाहें वा **(येभिः)** जिनके साथ आप **(ईयसे)** प्राप्त होते हो, वैसे उनके साथ **(अरिषण्यन्)** धन की न काङ्क्षा करते हुए **(वीळयस्व)** स्तुति कीजिये **(अभिगूर्य)** और सब ओर से उद्यम कर **(आयूय)** और मेल कर **(नेष्ट्रात्)** प्राप्ति से **(त्वम्)** आप **(ऋतुभिः)** वसन्तादि ऋतुओं के साथ **(सोमम्)** ओषध्यादि के रस को **(पिब)** पिओ॥३॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। किसी को विना उद्यम के न रहना चाहिये और ऋतुओं के प्रति अनुकूल व्यवहार करके सुख बढ़ाना चाहिये॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अपा॑द्धोत्रादु॒त पो॒त्राद॑मत्तो॒त ने॒ष्ट्राद॑जुषत॒ प्रयो॑ हि॒तम्।
तु॒रीयं॒ पात्र॒ममृ॑क्त॒मम॑र्त्यं द्रवि॒णो॒दाः पि॑बतु द्राविणो॒द॒सः॥४॥

अपा॑त्। हो॒त्रात्। उ॒त। पो॒त्रात्। अ॒म॒त्त॒। उ॒त। ने॒ष्ट्रात्। अ॒जु॒ष॒त॒। प्रयः॑। हि॒तम्। तु॒रीय॑म्। पात्र॑म्। अमृ॑क्तम्। अम॑र्त्यम्। द्र॒वि॒णः॒ऽदाः। पि॒ब॒तु॒। द्रा॒वि॒णः॒ऽद॒सः॥४॥

पदार्थः-(अपात्) पिबेत् **(होत्रात्)** हवनात् **(उत)** **(पोत्रात्)** पवित्रात् **(अमत्त)** हृष्यतु **(उत)** **(नेष्ट्रात्)** **(अजुषत)** **(प्रयः)** कमनीयमन्नादिकम् **(हितम्)** सुखकरम् **(तुरीयम्)** चतुर्थम् **(पात्रम्)** दातुं योग्यम् **(अमृक्तम्)** अकोमलम् **(अमर्त्यम्)** मरणधर्मरहितम् **(द्राविणोदाः)** यो द्रविणं ददाति सः **(पिबतु)** **(द्रविणोदसः)** यो द्रविणमत्ति तस्य। **ऋत्विजोऽत्र द्रविणोदस उच्यन्ते हविषो दातारस्ते चैनं जनयन्ति।** (निरु०८.२)॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा द्रविणोदा होत्रादुत पोत्रात्प्रयो हितमपादमत्त उत नेष्ट्रादजुषत तथा द्रविणोदसः प्रयो हितं तुरीयममर्त्यममृक्तं पात्रं पिबतु॥४॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये हवनेन पवित्रीकरणे प्रापणेन हितं साद्धुं शक्नुवन्ति ते प्रीतिमन्तो जायन्ते॥४॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जैसे **(द्रविणोदाः)** धन देनेवाला **(होत्रात्)** हवन से **(उत)** और **(पोत्रात्)** पवित्र व्यवहार से **(प्रयः)** मनोहर अन्नादि पदार्थ **(हितम्)** जो कि सुख करनेवाला है, उसको **(अपात्)** पीये, **(अमत्त)** हर्ष को प्राप्त हो **(उत)** और **(नेष्ट्रात्)** पदार्थ प्राप्ति से **(अजुषत)** प्रसन्न हो। वैसे **(द्रविणोदसः)** जो धन को भोगता उस ऋत्विज् का मनोहर अन्नादि पदार्थ जो सुख करनेवाला **(तुरीयम्)** चतुर्थ **(अमर्त्यम्)** नष्ट होनेपन से रहित **(अमृक्तम्)** अकोमल **(पात्रम्)** जो पीने योग्य है उसको **(पिबतु)** पिओ॥४॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो हवन से अपवित्र को पवित्र करनेवाली प्राप्ति से हित साध सकते हैं, वे प्रीतिमान् होते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अर्वाञ्चमद्य यय्यं नृवाहणं रथं युञ्जाथामिह वां विमोचनम्।
पृङ्क्तं हवींषि मधुना हि कं गतमथा सोमं पिबतं वाजिनीवसू॥५॥

अर्वाञ्चम्। अद्य। यय्यम्। नृऽवाहनम्। रथम्। युञ्जाथाम्। इह। वाम्। विऽमोचनम्। पृङ्क्तम्। हवींषि। मधुना। हि। कम्। गतम्। अथ। सोमम्। पिबतम्। वाजिनीवसू इति वाजिनीऽवसू॥५॥

पदार्थः-(अर्वाञ्चम्) अर्वाग् गामिनम् **(अद्य)** **(यय्यम्)** ययिं यातारम्। अत्र **आदृगमहनेति** किः प्रत्ययः। **अमि पूर्व** इत्यत्र **वाच्छन्दसी**त्यनुवर्त्तनात्पूर्वसवर्णाभावपक्षे यमादेशः। **(नृवाहणम्)** यो नॄन् वहति तम् **(रथम्)** **(युञ्जाथाम्)** **(इह)** अस्मिन् याने **(वाम्)** युवयोः **(विमोचनम्)** **(पृङ्क्तम्)** संयोजयतम् **(हवींषि)** दातुमादातुं योग्यानि वस्तूनि **(मधुना)** मधुरेण गुणेन सह **(हि)** किल **(कम्)** देशम् **(गतम्)** प्राप्नुतम् **(अथ)** आनन्तर्ये। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(सोमम्)** **(पिबतम्)** **(वाजिनीवसू)** यौ वाजिनीं वेगवतीं क्रियां वासयतस्तौ॥५॥

अन्वयः-हे वाजिनीवसू शिल्पिनौ! युवामद्य यय्यमर्वाञ्चं नृवाहणं रथं युञ्जाथामिह मधुना सह वर्त्तमानानि हवींषि पृङ्क्त हि कं गतं सोमं पिबतमथ वां विमोचनमस्तु॥५॥

भावार्थः-यौ शिल्पविद्याऽध्यापकाऽध्येतारावग्निजलादिभिः काष्ठादिभिर्निर्मितानि यानानि चालयित्वा देशान्तरं गत्वा धनमुन्नयन्ति ते सततं सुखं प्राप्नुवन्ति॥५॥

पदार्थः-हे **(वाजिनीवसू)** वेगवती क्रिया को वसानेवाले शिल्पी जनो! तुम **(अद्य)** आज **(यय्यम्)** जो अच्छे प्रकार पहुँचाता हुआ **(अर्वाञ्चम्)** नीचे-नीचे चलनेवाला **(नृवाहणम्)** और मनुष्यों को पहुँचाता है उस **(रथम्)** रमणीय मनोहर यान को **(युञ्जाथाम्)** जोड़ो और **(इह)** इस यान में **(मधुना)** मधुर गुण के साथ वर्त्तमान जो **(हवींषि)** देने-लेने योग्य वस्तु हैं, उनको **(पृङ्क्तम्)** संयुक्त कराओ **(हि)** और निश्चय से **(कम्)** किस देश को **(गतम्)** प्राप्त होओ **(सोमम्)** तथा ओषध्यादि रस को **(पिबतम्)** पिओ **(अथ)** इसके अनन्तर **(वाम्)** तुम दोनों का **(विमोचनम्)** विशेषता से छूटना हो॥५॥

भावार्थः-जो शिल्पविद्या के पढ़ाने और पढ़नेवाले काष्ठादिकों से निर्माण किये यानों को अग्नि और जलादि से चला और देशान्तर में जाकर धन को अच्छे प्रकार उन्नत करते हैं, वे निरन्तर सुख पाते हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

जोष्यग्ने समिधं जोष्याहुतिं जोषि ब्रह्म जन्यं जोषि सुष्टुतिम्।

विश्वेभिर्विश्वाँ ऋतुना वसो मह उशन्देवाँ उशतः पायया हविः॥६॥१॥

जोषि। अग्ने। सम्ऽइधम्। जोषि। आऽहुतिम्। जोषि। ब्रह्म। जन्यम्। जोषि। सुऽस्तुतिम्। विश्वेभिः। विश्वान् ऋतुना। वसो इति। महः। उशन्। देवान्। उशतः। पायय। हविः॥६॥

पदार्थः-(जोषि) जुषसे सेवसे। अत्र **बहुलं छन्दसी**ति शविकरणस्य लुक् व्यत्ययेन परस्मैपदं च। **(अग्ने)** विद्वन् **(समिधम्)** प्रदीपिकाम् **(जोषि) (आहुतिम्)** वेद्यां प्रक्षिप्ताम् **(जोषि) (ब्रह्म)** अन्नम् **(जन्यम्)** जनितुं योग्यम् **(जोषि) (सुष्टुतिम्)** शोभनां प्रशंसाम् **(विश्वेभिः)** सर्वैः **(विश्वान्)** सर्वान् **(ऋतुना)** वसन्ताद्येन **(वसो)** वासयितः **(महः)** महतः **(उशन्)** कामयमानः **(देवान्)** विदुषः **(उशतः)** कामयमानान् **(पायय)**। अत्राऽ**न्येषामपी**ति दीर्घः। **(हविः)** दातव्यं वस्तु॥६॥

अन्वयः-हे अग्ने! वसोऽग्निरिव त्वं यतो समिधं जोष्याहुतिं जोषि ब्रह्म विश्वान् जोषि जन्यं सुष्टुतिं च जोषि तस्माद्विश्वेभिर्ऋतुना च सह मह उशतो देवानुशंस्त्वमेतान् हविः पायय॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा विद्युदग्निः काष्ठादीन् पदार्थान् सेवित्वाऽपि न दहति तथैव सर्वैः सह वसित्वैतेषां नाशो न कर्त्तव्य एवं सति कामसिद्धिर्जायत इति॥६॥

अत्र विद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्बोध्या॥

इति सप्तत्रिंशत्तमं सूक्तमेको वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वान्! **(वसो)** निवास करानेवाले अग्नि के समान आप जिस कारण **(समिधम्)** प्रदीप्त करनेवाली क्रिया को **(जोषि)** सेवते **(आहुतिम्)** वेदी में डाली हुई वस्तु **(जोषि)** सेवते **(ब्रह्म)** अन्न और **(विश्वान्)** सब पदार्थों का **(जोषि)** सेवन करते **(जन्यम्)** उत्पन्न करने योग्य पदार्थ वा **(सुष्टुतिम्)** सुन्दर प्रशंसा को **(जोषि)** सेवते इस कारण **(विश्वेभिः)** सब **(ऋतुना)** वसन्त आदि ऋतुसमूह के साथ **(महः)** बड़े-बड़े **(उशतः)** कामना करनेवाले **(देवान्)** विद्वानों की **(उशन्)** कामना करते हुए आप उनको **(हविः)** देने योग्य वस्तु **(पायय)** पियाओ॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे बिजुलीरूप अग्नि काष्ठ आदि पदार्थों का सेवन करके भी नहीं जलाता, वैसे ही सबके साथ बसकर उनका नाश न करना चाहिये, ऐसे होने पर कामसिद्धि होती है॥६॥

इस सूक्त में विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह सैंतीसवां सूक्त और प्रथम वर्ग समाप्त हुआ॥

उद्वित्यष्टत्रिंशत्तमस्यैकादशर्चस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। सविता देवता। १, ५ निचृत् त्रिष्टुप्। २ त्रिष्टुप्। ३, ४, ६, १०, ११ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ७, ८ स्वराट् पङ्क्तिः। ९ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथेश्वरविषयमाह॥

अब अड़तीसवें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में ईश्वर के विषय को कहते हैं॥

उदु ष्य देवः सविता सवाय शश्वत्तमं तदपा वह्निरस्थात्।

नूनं देवेभ्यो वि हि धाति रत्नमथाभजद्वीतिहोत्रं स्वस्तौ॥ १॥

उत्। ऊम् इति। स्यः। देवः। सविता। सवाय। शश्वत्ऽतमम्। तत्ऽअपाः। वह्निः। अस्थात्। नूनम्। देवेभ्यः। वि। हि। धाति। रत्नम्। अथ। आ। अभजत्। वीतिऽहोत्रम्। स्वस्तौ॥ १॥

पदार्थः-(**उत**) (**उ**) (**स्यः**) सः (**देवः**) (**सविता**) सकलजगदुत्पादकः (**सवाय**) उत्पादनाय (**शश्वत्तमम्**) अनादिस्वरूपमनुत्पन्नं कारणम् (**तदपाः**) तदपः कर्म यस्य सः (**वह्निः**) वोढा (**अस्थात्**) तिष्ठति (**नूनम्**) निश्चितम् (**देवेभ्यः**) क्रीडमानेभ्यो जीवेभ्यः (**वि**) (**हि**) किल (**धाति**) दधाति (**रत्नम्**) रमणीयं जगत् (**अथ**) आनन्तर्ये (**आ**) (**अभजत्**) सेवते (**वीतिहोत्रम्**) गृहीतेश्वरव्याप्तिम् (**स्वस्तौ**) सुखे॥ १॥

अन्वयः-यो वह्निस्तदपाः सविता देवो जगदीश्वरः सवाय शश्वत्तमं देवेभ्यो नूनमुदस्थात्। उ स्यो हि रत्नं विधाति अथ स्वस्तौ वीतिहोत्रं जगदभजत्॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यदनादि त्रिगुणात्मकं प्रकृतिस्वरूपं जगत्कारणमस्ति तस्मादेव सर्वं जगदुत्पाद्य यो धरति तस्मात्सर्वे जीवाः स्वंस्वं शरीरं कर्मफलं च सेवन्ते, यदीदं जगदीश्वरो नोत्पादयेत्तर्हि कोऽपि जीवः शरीरादि प्राप्तुं न शक्नुयात्॥ १॥

पदार्थः-जो (**वह्निः**) पहुँचानेवाला (**तदपाः**) जिसका पहिचानना ही कर्म है (**सविता**) सकल जगत् का उत्पादनकर्त्ता (**देवः**) देदीप्यमान जगदीश्वर (**सवाय**) उत्पन्न करने के लिये (**शश्वत्तमम्**) अनादिस्वरूप अनुत्पन्न कारण को (**देवेभ्यः**) क्रीड़ा करते हुए जीवों से (**नूनम्**) निश्चित (**उदस्थात्**) उपस्थित होता है (**उ**) और (**स्यः**) वह (**हि**) ही (**रत्नम्**) रमणीय जगत् को (**वि, धाति**) विधान करता है (**अथ**) इसके अनन्तर (**स्वस्तौ**) सुख के निमित्त (**वीतिहोत्रम्**) ग्रहण की ईश्वर की व्याप्ति में अपनी व्याप्ति जिसमें ऐसे जगत् को (**अभजत्**) सेवता है॥ १॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जो अनादि त्रिगुणात्मक प्रकृतिस्वरूप जगत् का कारण है, उसी से सब जगत् को उत्पन्न कर जो धारण कर रहा है, उससे सब जीव निज-निज शरीर और कर्म को सेवते हैं, जो इस जगत् को जगदीश्वर न उत्पादन करे तो कोई भी जीव शरीरादि न पा सके॥१॥

पुनरीश्वरविषयमाह॥

फिर ईश्वर के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

विश्वस्य हि श्रुष्टये देव ऊर्ध्वः प्र बाहवा पृथुपाणिः सिसर्ति।
आपश्चिदस्य व्रत आ निमृग्रा अयं चिद्वातो रमते परिज्मन्॥२॥

विश्वस्य। हि। श्रुष्टये। देवः। ऊर्ध्वः। प्र। बाहवा। पृथुऽपाणिः। सिसर्ति। आपः। चित्। अस्य। व्रते। आ। निऽमृग्राः। अयम्। चित्। वातः। रमते। परिऽज्मन्॥२॥

पदार्थ:-(विश्वस्य) जगतो मध्ये **(हि)** खलु **(श्रुष्टये)** शीघ्रत्वाय **(देवः)** दिव्यसुखप्रदः **(ऊर्ध्वः)** ऊर्ध्वं स्थित उत्कृष्टः **(प्र) (बाहवा)** बाहू। अत्र **सुपां सुलगिति** आकारादेशः। **(पृथुपाणिः)** पृथवो विस्तीर्णः पाणिरिव किरणा यस्य सः **(सिसर्त्ति)** गच्छति **(आपः)** जलानि **(चित्) (अस्य) (व्रते)** शीले **(आ) (निमृग्राः)** नितरां शुद्धिहेतवः **(अयम्) (चित्) (वातः)** वायुः **(रमते)** क्रीडते **(परिज्मन्)** परितः सर्वतो व्याप्तः॥२॥

अन्वय:-हे मनुष्या! योऽयं परिज्मन् वातो रमतेऽस्य व्रते निमृग्रा आपश्चिदारमन्ते यो विश्वस्य मध्य ऊर्ध्वः पृथुपाणिर्देवः सविता श्रुष्टये बाहवा चिदिव प्र सिसर्त्ति एतत्सर्वं परमेश्वरे हि वर्त्तते॥२॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदि परमेश्वरो भूमिजलाग्निपवनान् न निर्मिमीते तर्हि किञ्चिदपि स्वयमुत्पत्तुं न शक्नुयात्॥२॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो **(अयम्)** यह **(परिज्मन्)** सब ओर से व्याप्त होता हुआ **(वातः)** पवन **(रमते)** क्रीड़ा को करता है **(अस्य)** इसके **(व्रते)** शीलस्वभाव के निमित्त **(निमृग्राः)** निरन्तर शुद्धि के हेतु **(आपः)** जल **(चित्)** भी **(आ)** अच्छे प्रकार रमण करते हैं, जो **(विश्वस्य)** जगत् के बीच **(ऊर्ध्वः)** ऊपर स्थित **(पृथुपाणिः)** जिसके विस्तीर्ण हाथों के समान किरण वह **(देवः)** दिव्य सुख देनेवाला **(सविता)** जगत् का उत्पन्न करनेवाला **(श्रुष्टये)** शीघ्रता के लिये **(बाहवा)** भुजाओं के **(चित्)** समान **(प्र, सिसर्त्ति)** जाता है, वह सब उक्त वृत्तान्त परमेश्वर के बीच में **(हि)** ही वर्त्तमान है॥२॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो परमेश्वर भूमि, जल, अग्नि और पवनों को न बनाता तो कुछ भी अपने-आप उत्पन्न न हो सके॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आशुभिश्चिद्यान्वि मुचाति नूनमरीरमदतमानं चिदेतोः।
अह्यर्षूणां चिन्न्ययाँ अविष्यामनु व्रतं सवितुर्मोक्यागात्॥ ३॥

आशुऽभिः। चित्। यान्। वि। मुचाति। नूनम्। अरीरमत्। अतमानम्। चित्। एतोः। अह्यर्षूणाम्। चित्। नि। अयान्। अविष्याम्। अनु। व्रतम्। सवितुः। मोकी। आ। अगात्॥ ३॥

पदार्थः-(**आशुभिः**) अश्वैरिव क्षिप्रकारिभिः (**चित्**) अपि (**यान्**) (**वि**) (**मुचाति**) मुच्यात्। अत्र लेटि **छान्दसो वर्णलोप** इति न लोपः। (**नूनम्**) निश्चितम् (**अरीरमत्**) रमयति (**अतमानम्**) अततं सततं प्राप्तम्। अत्र व्यत्येनात्मनेपदम्। (**चित्**) अपि (**एतोः**) एताम् (**अह्यर्षूणाम्**) येऽहिं मेघं प्राप्नुवन्ति तेषाम् (**चित्**) (**नि**) (**अयान्**) प्राप्तान् (**अविष्याम्**) रक्षाम्। अत्राऽवधातोरौणादिकः स्यः प्रत्ययः। (**अनु**) (**व्रतम्**) शीलं नियमं वा (**सवितुः**) जगदीश्वरस्य (**मोकी**) रात्रिः। **मोकीति रात्रिनामसु पठितम्।** (निघं०१.७) (**आ**) (**अगात्**) प्राप्नोति॥ ३॥

अन्वयः-या मोक्याशुभिर्यानयान् वि मुचात्येतोरतमानं चिन्नूनमरीरमदह्यर्षूणां चिदविष्यां सवितुरनुव्रतं न्यागात्। एतच्चिदीश्वरनियमाद्भवति॥ ३॥

भावार्थः-यदीश्वरो नियमेन पृथिवीं न भ्रामयेत्तर्हि सुखप्रदा रात्रिर्न निवर्त्तेत पृथिव्यां यावन्देशसूर्य्यसन्निधौ भवति तत्र दिनमपरस्मिन् रात्रिश्च सततं वर्त्तेते॥ ३॥

पदार्थः–जो (**मोकी**) रात्रि (**आशुभिः**) घोड़ों के समान शीघ्रकारी पदार्थों से (**यान्**) जिन (**अयान्**) प्राप्त वस्तुओं को (**वि, मुचाति**) छोड़े (**एतोः**) इसको (**अतमानम्**) निरन्तर प्राप्त (**चित्**) भी पदार्थ (**नूनम्**) निश्चय करके (**अरीरमत्**) रमण करता है (**अह्यर्षूणाम्**) और जो मेघ को प्राप्त होते हैं, उन पदार्थों की (**चित्**) भी (**अविष्याम्**) रक्षा को (**सवितुः**) जगदीश्वर का जैसे (**अनुव्रतम्**) अनुकूल वा नियम, वैसे (**नि, आ, अगात्**) प्राप्त होता है, यह उक्त समस्त काम (**चित्**) भी जगदीश्वर के नियम से होता है॥ ३॥

भावार्थः-यदि ईश्वर नियम से पृथिवी को न भ्रमावे तो सुख देनेवाली रात्रि न सिद्ध हो, पृथिवी में जितना देश सूर्य के निकट होता है, उसमें दिन और दूसरे में रात्रि ये दोनों निरन्तर वर्त्तमान हैं॥ ३॥

अथ सूर्यलोकविषयमाह॥

अब सूर्यलोक विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

पुनः समव्यद्विततं वयन्ती मध्या कर्तोर्न्यधाच्छक्म धीरः।

उत्संहायास्थाव्यृ१तूँरदर्धरमतिः सविता देव आगात्॥४॥

पुनरिति। सम्। अव्यत्। विऽततम्। वयन्ती। मध्या। कर्तोः। नि। अधात्। शक्म। धीरः। उत्। सम्ऽहाय। अस्थात्। वि। ऋतून्। अदर्धः। अरमतिः। सविता। देवः। आ। अगात्॥४॥

पदार्थः-(**पुनः**) (**सम्**) (**अव्यत्**) व्याप्नोति। अत्र **बहुलं छन्दसी**ति शपो लुक्। (**विततम्**) व्याप्तम् (**वयन्ती**) गच्छन्ती (**मध्या**) आकाशस्य मध्ये भवा (**कर्तोः**) कर्त्तव्यं गमनाद्यगन्तव्यं कर्म (**नि**) (**अधात्**) दधाति (**शक्म**) शक्यं कर्म (**धीरः**) धीमान् (**उत्**) (**संहाय**) सम्यक् त्यक्त्वा (**अस्थात्**) तिष्ठति (**वि**) (**ऋतून्**) वसन्तादीन् (**अदर्धः**) भृशं विदारयति। अत्र वर्णव्यत्ययेन दस्य स्थाने धः। (**अरमतिः**) न रमती रमणं विद्यते यस्य सः (**सविता**) सूर्यलोकः (**देवः**) प्रकाशमानः (**आ**) (**अगात्**) आगच्छति॥४॥

अन्वयः-यो धीरो विद्वान् या मध्या वयन्ती पृथिवी विततं समव्यत् कर्त्तोः शक्म न्यधात् पुनः पूर्वं देशं संहायोत्तरं प्राप्नुवत्युदस्थात् तां जानाति योऽरमतिः सविता देव ऋतून् व्यदर्धः सन्निहितान् पदार्थानागात्तां जानाति स भूगोलखगोलविद्भवति॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! इमे सर्वे लोका अन्तरिक्षस्था भ्रमणशीला ईश्वरेण नियमं प्रापिताः सन्ति तेषु सूर्यसन्निध्या भ्रमणेन च षडृतवो जायन्त इति वेद्यम्॥४॥

पदार्थः-जो (**धीरः**) धीर बुद्धिमान् (**मध्या**) आकाश के बीच (**वयन्ती**) चलती हुई पृथिवी (**विततम्**) जो पदार्थ अपने में व्याप्त उसको (**सम्, अव्यत्**) सम्यक् व्याप्त होती (**कर्त्तोः**) और करने योग्य जाने-आने के काम को तथा (**शक्म**) शक्ति के अनुकूल जो कर्म है, उसको (**नि, अधात्**) निरन्तर धारण करती है (**पुनः**) फिर पूर्व देश को (**संहाय**) अच्छे प्रकार छोड़ उत्तर अर्थात् दूसरे देश को प्राप्त होती हुई (**उत्, अस्थात्**) स्थित होती उसको जानता है। जो (**अरमतिः**) विना रमण विद्यमान है, वह (**सविता**) सूर्य्यलोकः (**देवः**) प्रकाशमान होता हुआ (**ऋतून्**) ऋतुओं को (**व्यदर्धः**) निरन्तर अलग करता तथा निकट के पदार्थों को (**आ, अगात्**) प्राप्त होता उसको जो जानता है, वह भूगोल और खगोल विद्या का जाननेवाला होता है॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! ये सब लोक अन्तरिक्ष में ठहरे हुए भ्रमणशील ईश्वर ने नियम को पहुँचाये हुए हैं, उनमें सूर्य के सन्निकट और भ्रमण से छः ऋतु होते हैं, यह जानना चाहिये॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

नानौकांसि दुर्यो विश्वमायुर्वि तिष्ठते प्रभवः शोको अग्नेः।

ज्येष्ठं माता सूनवे भागमाधादन्वस्य केतमिषितं सवित्रा॥५॥२॥

नाना। ओकांसि। दुर्यः। विश्वम्। आयुः। वि। तिष्ठते। प्रऽभवः। शोकः। अग्नेः। ज्येष्ठम्। माता। सूनवे। भागम्। आ। अधात्। अनु। अस्य। केतम्। इषितम्। सवित्रा॥५॥

पदार्थः-(नाना) अनेकानि **(ओकांसि)** समवेतानि गृहाणि **(दुर्य्यः)** द्वारवन्ति **(विश्वम्)** सर्वम् **(आयुः)** जीवनम् **(वि) (तिष्ठते) (प्रभवः)** उत्पत्तिः **(शोकः)** मरणम् **(अग्नेः)** विद्युदादिरूपात् **(ज्येष्ठम्)** प्रशस्यम् **(माता)** जननी **(सूनवे)** सन्तानाय **(भागम्)** भजनीयम् **(अधात्) (अनु) (अस्य)** सन्तानस्य **(केतम्)** विज्ञानम् **(इषितम्)** इष्टम् **(सवित्रा)** सूर्येण सह॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यत्र नाना दुर्य्य ओकांसि सन्ति यत्र सवित्रा सहाग्नेर्विश्वमायुर्वितिष्ठते प्रभवः शोकश्च भवति यत्र माता सूनवे ज्येष्ठं भागमन्वस्येषितं केतमाधात् तस्मिन् वाऽस्मिन् जगति यथावद्वर्त्तितव्यम्॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यदि भवतां जन्मानि जातानि तर्हि मरणमपि भविष्यत्यत्र सर्वर्त्तुसुखानि गृहाणि विधाय विद्यावृद्धये पाठशाला निर्माय स्वकन्याः पुत्रांश्च विद्यासुशिक्षायुक्तान् कृत्वा पूर्णमायुर्भुक्त्वा यशो विस्तार्यम्॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जहाँ **(नाना)** अनेक प्रकार के **(दुर्य्यः)** द्वारवान् **(ओकांसि)** घर हैं वा जहाँ **(सवित्रा)** सूर्य्यलोक के साथ **(अग्नेः)** बिजुली आदि रूप अग्नि से **(विश्वम्)** समस्त **(आयुः)** जीवन को **(वि, तिष्ठते)** विशेषता से स्थिर करता है तथा **(प्रभवः)** उत्पत्ति और **(शोकः)** मरण भी होता है, जहाँ **(माता)** जननी **(सूनवे)** सन्तान के लिये **(ज्येष्ठम्)** प्रशंसनीय **(भागम्)** भाग को और **(अनु)** अनुकूल **(अस्य)** इस सन्तान को **(इषितम्)** इष्ट अभीष्ट चाहे हुए **(केतम्)** विज्ञान को **(आ, अधात्)** अच्छे प्रकार धारण करती उसमें वा इस जगत् में यथावत् वर्त्ताव करना चाहिये॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो तुम्हारे जन्म हुए तो मरण भी होगा, इसके बीच सब ऋतुओं में सुख देनेवाले घरों को बनाकर विद्यावृद्धि के लिये पाठशालायें बनाय अपने कन्या और पुत्रों को विद्या और उत्तम शिक्षायुक्त कर पूर्ण आयु को भोग के यश का विस्तार करना चाहिये॥५॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

समाववर्ति विष्ठितो जिगीषुर्विश्वेषां काममश्चरताममाभूत्।
शश्वाँ अपो विकृतं हित्व्यागादनु व्रतं सवितुर्दैव्यस्य॥६॥

सम्ऽआववर्ति। विऽस्थितः। जिगीषुः। विश्वेषाम्। कामः। चरताम्। अमा। अभूत्। शश्वान्। अपः। विऽकृतम्। हित्वी। आ। अगात्। अनु। व्रतम्। सवितुः। दैव्यस्य॥६॥

पदार्थः-(समाववर्ति) सम्यगववर्त्यते **(विष्ठितः)** विशेषेण स्थितः **(जिगीषुः)** जयशीलः **(विश्वेषाम्)** सर्वेषाम् **(कामः)** कमिता **(चरताम्)** प्राणभृताम् **(अमा)** गृहम् **(अभूत्)** भवति **(शश्वान्)** शीघ्रगतिमान्। **शश प्लुतगता**विति धातोः क्विबन्तान्मतुप्। **(अपः)** कर्म **(विकृतम्)** प्राप्तविकारम् **(हित्वी)** हित्वा। अत्र **स्नात्व्यादयश्चे**ति निपातनादीत्वम्। **(आ) (अगात्) (अनु) (व्रतम्)** नियमम् **(सवितुः)** जगदुत्पादकस्य **(दैव्यस्य)** देवैर्विद्वद्भिर्लब्धस्य जगदीश्वरस्य॥६॥

अन्वयः-यो विष्ठितो विश्वेषां चरतां सुखस्य कामः शश्वान् जिगीषुरभूद्योऽमा गृहे समाववर्ति विकृतमपो हित्वी दैव्यस्य सवितुर्व्रतमन्वगात् स सुखमप्याप्नोति॥६॥

भावार्थः-ये मनुष्याः सर्वेषु प्राणिषु सुखदुःखव्यवहारे समदर्शिनः परमेश्वरस्योपदेशादविरोधिनः पापाचरणं विहाय निश्चितं धर्ममाचरन्ति ते शाश्वतं सुखं लभन्ते॥६॥

पदार्थः-जो **(विष्ठितः)** विशेषता से स्थित दृढ़ **(विश्वेषाम्)** समस्त **(चरताम्)** प्राण धारनेवालों के सुख की **(कामः)** कामना करने वा **(शश्वान्)** शीघ्र चलने और **(जिगीषुः)** जीतने का शील रखनेवाला **(अभूत्)** होता है वा जो **(अमा)** घर में **(समाववर्ति)** अच्छे प्रकार वर्त्तमान है **(विकृतम्)** विकार को प्राप्त हुए **(अपः)** कर्म को **(हित्वी)** छोड़ के **(दैव्यस्य)** विद्वानों से पाये हुए **(सवितुः)** संसार को उत्पन्न करनेवाले जगदीश्वर के **(व्रतम्)** नियम को **(अनु, आ, अगात्)** अनुकूलता से प्राप्त होता वह सुख को भी प्राप्त होता है॥६॥

भावार्थः-जो मनुष्य सब प्राणियों में सुख-दुःख के व्यवहार में समदर्शी, परमेश्वर के उपदेश से विरोध न करनेवाले और पापाचरण को छोड़ निश्चित धर्माचरण को करते हैं, वे निरन्तर सुख को प्राप्त होते हैं॥६॥

अथेश्वरविषयमाह॥

अब ईश्वर विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वया हितमप्यमप्सु भागं धन्वान्वा मृगयसो वि तस्थुः।
वनानि विभ्यो नकिरस्य तानि व्रता देवस्य सवितुर्मिनन्ति॥७॥

त्वया। हितम्। अप्यम्। अप्ऽसु। भागम्। धन्व। अनु। आ। मृगयसः। वि। तस्थुः। वनानि। विऽभ्यः। नकिः। अस्य। तानि। व्रता। देवस्य। सवितुः। मिनन्ति॥७॥

पदार्थः-(त्वया) (हितम्) (अप्यम्) अप्सु प्राणेषु भवम् **(अप्सु)** जलेषु **(भागम्)** भजनीयम् **(धन्व)** अन्तरिक्षम्। **धन्वेत्यन्तरिक्षनामसु पठितम्।** (निघं०१.३)। **(अनु) (आ) (मृगयसः)** मृगादयः **(वि) (तस्थुः)** तिष्ठन्ति **(वनानि) (विभ्यः)** पक्षिभ्यः **(नकिः)** न **(अस्य) (तानि) (व्रता)** व्रतानि गुणकर्मशीलानि **(देवस्य)** कमनीयस्य **(सवितुः)** सकलैश्वर्य्यं प्रापयत ईश्वरस्य **(मिनन्ति)** हिंसन्ति॥७॥

अन्वयः-हे जगदीश्वर! यत्त्वया सह वर्त्तमाना मृगयसः प्राणिनोऽप्सु हितमप्यं भागमन्वा तस्थुर्विभ्यो धन्व वनानि च त्वया निर्मितानि तानि तवाऽस्य सवितुर्देवस्य व्रता केऽपि नकिर्विमिनन्ति॥७॥

भावार्थः-यदीश्वरो भूम्यादिकं भोग्यान् पेयाञ्चूष्यान् लेह्यान् पदार्थान् न निर्मिमीत तर्हि कोऽपि शरीरं जीवनं च धर्त्तुं न शक्नुयात्। ईश्वरेण यदर्था ये नियमाः संस्थापितास्तदुल्लङ्घनं कर्त्तुं कोऽपि समर्थो न भवति॥७॥

पदार्थः-हे जगदीश्वर! जो **(त्वया)** आपके नियम के साथ वर्त्तमान **(मृगयसः)** मृग आदि वन्य प्राणी **(अप्सु)** जलों में **(हितम्)** स्थापित किये हुए वा **(अप्यम्)** प्राणों में प्रसिद्ध हुए **(भागम्)** सेवन करने योग्य अंश को **(अनु, आ, तस्थुः)** अनुकूलता से प्राप्त होते हैं तथा **(विभ्यः)** पक्षियों के लिये **(धन्व)** अन्तरिक्ष और **(वनानि)** वनों को आपने बनाया **(तानि)** उन **(अस्य)** इन आप **(सवितुः)** सकलैश्वर्य्य को प्राप्त करनेवाले **(देवस्य)** मनोहर ईश्वर के **(व्रता)** गुण, कर्म, स्वभावों को कोई भी **(नकिः)** नहीं **(विमिनन्ति)** नष्ट करते हैं॥७॥

भावार्थः-यदि ईश्वर भूमि आदि स्थान तथा भोग्य, पेय, चूष्य, लेह्य, पदार्थों को न बनाये तो कोई भी शरीर और जीवन को धारण नहीं कर सकता। ईश्वर ने जिनके अर्थ जो नियम स्थापन किये हैं, उनके उल्लङ्घन करने को कोई समर्थ नहीं होता॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

याद्राध्यं१॒ वरु॑णो॒ योनि॒मप्य॒मनि॑शितं नि॒मिषि॒ जर्भु॑राणः।

विश्वो॑ मार्ता॒ण्डो व्र॒जमा प॒शुर्गा॑त् स्थ॒शो जन्मा॑नि सवि॒ता व्याकः॑॥८॥

या॒त्ऽरा॒ध्य॑म्। वरु॑णः। योनि॑म्। अप्य॑म्। अनि॑ऽशितम्। नि॒ऽमिषि॑। जर्भु॑राणः। विश्वः॑। मा॒र्ता॒ण्डः। व्र॒जम्। आ। प॒शुः। गा॒त्। स्थ॒ऽशः। जन्मा॑नि। स॒वि॒ता। वि। आ। अ॒क॒रित्य॑कः॥८॥

पदार्थः-(याद्राध्यम्) ये यान्ति ते यातस्तै राध्यं याद्राध्यं संसाधनीयम् **(वरुणः)** वरो जीवः **(योनिम्)** कारणं वह्निम् **(अप्यम्)** अप्सु भवम् **(अनिशितम्)** अतीक्ष्णम् **(निमिषि)** निमिषादि कालव्यवहारे **(जर्भुराणः)** भृशं धरन् **(विश्वः)** सर्वः **(मार्त्ताण्डः)** मार्त्तण्डे सूर्ये भवः। अत्राऽ**न्येषामपी**ति दीर्घः। **(व्रजम्)** गोष्ठानम् **(आ)** **(पशुः)** **(गात्)** प्राप्नुयात् **(स्थशः)** तिष्ठन्तीति स्थास्तानि बहूनि इति स्थशः। अत्र बह्वल्पार्थादिति शस्। **(जन्मानि)** **(सविता)** परमात्मा **(वि)** **(आ)** **(अकः)** करोति॥८॥

अन्वयः-यो विश्वो मार्त्ताण्डो निमिषि जर्भुराणो वरुणो व्रजं पशुरिव याद्राध्यमप्यमनिशितं योनिमा गात् तस्य जीवस्य स्थशो जन्मानि सविता व्यापकः॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यावन्तोऽत्र जगति जीवाः सन्ति ते स्वकीयकर्मजन्यं फलं विद्यमाने शरीरे परस्ताच्च प्राप्नुवन्ति यथा पशुः गोपालेन नियतः सन् प्राप्तव्यं स्थानं प्राप्नोति तथा जगदीश्वरो जीवैरनुष्ठितकर्मानुसारेण सुखदुःखे निकृष्टमध्यमोत्तमानि जन्मानि च ददाति॥८॥

पदार्थः-जो **(विश्वः)** समस्त **(मार्त्ताण्डः)** सूर्यलोक में उत्पन्न और **(निमिषि)** निमेषादि कालव्यवहार में **(जर्भुराणः)** निरन्तर धारण करता हुआ **(वरुणः)** श्रेष्ठ जीव **(व्रजम्)** गोंड़े को **(पशुः)** जैसे पशु वैसे **(याद्राध्यम्)** जानेवालों से अच्छे प्रकार सिद्ध होने योग्य **(अप्यम्)** जलों में प्रसिद्ध **(अनिशितम्)** अतीक्ष्ण **(योनिम्)** कारणरूप अग्नि को **(आ, गात्)** प्राप्त होवे, उस जीव के **(स्थशः)** बहुत ठहरनेवाले **(जन्मानि)** जन्मों को **(सविता)** परमात्मा **(व्याकः)** विविध प्रकार से करता है॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जितने इस जगत् के जीव हैं, वे अपने कर्मजन्य फल को विद्यमान शरीर में और पीछे भी प्राप्त होते हैं। जैसे पशु गोपाल से नियम में रक्खा हुआ प्राप्तव्य स्थान को प्राप्त होता है, वैसे जगदीश्वर जीवों से अनुष्ठित कर्मों के अनुसार सुख-दुःख और निकृष्ट मध्यम तथा उत्तम जन्मों को देता है॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

न यस्येन्द्रो वरुणो न मित्रो व्रतमर्यमा न मिनन्ति रुद्रः।
नारातयस्तमिदं स्वस्ति हुवे देवं सवितारं नमोभिः॥९॥

न। यस्य। इन्द्रः। वरुणः। न। मित्रः। व्रतम्। अर्यमा। न। मिनन्ति। रुद्रः। न। अरातयः। तम्। इदम्। स्वस्ति। हुवे। देवम्। सवितारम्। नमःऽभिः॥९॥

पदार्थः-(**न**) (**यस्य**) जगदीश्वरस्य (**इन्द्रः**) सूर्य्यो विद्युद्वा (**वरुणः**) आपः (**न**) (**मित्रः**) वायुः (**व्रतम्**) नियमम् (**अर्य्यमा**) नियन्ता धारकवायुः (**न**) (**मिनन्ति**) हिंसन्ति (**रुद्रः**) जीवः (**न**) (**अरातयः**) शत्रवः (**तम्**) (**इदम्**) (**स्वस्ति**) (**हुवे**) स्तौमि (**देवम्**) दातारम् (**सवितारम्**) सकलजगदुत्पादकम् (**नमोभिः**) सत्कर्मभिः॥९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्य व्रतं नेन्द्रो न वरुणो न मित्रो नार्यमा न रुद्रो नारातयो मिनन्ति तमिदं स्वस्ति सुखरूपं सवितारं देवं नमोभिर्यथाऽहं हुवे तथा यूयमपि प्रशंसेत॥९॥

भावार्थः-इह न कश्चित्पदार्थ ईश्वरतुल्योऽस्ति कुतोऽधिको न कोऽप्यस्य नियममुल्लङ्घयितुं शक्नोति तस्मात् सर्वैर्मनुष्यैस्तस्यैवेश्वरस्य स्तुतिप्रार्थनोपासनाः कार्य्याः॥९॥

पदार्थः–हे मनुष्यो! (**यस्य**) जिस जगदीश्वर के (**व्रतम्**) नियम को (**न**) न (**इन्द्रः**) सूर्य्य और बिजुली (**न**) न (**वरुणः**) जल (**न**) न (**मित्रः**) वायु (**न**) न (**अर्य्यमा**) द्वितीय प्रकार का नियन्ता धारक वायु (**न**) न (**रुद्रः**) जीव (**न**) न (**अरातयः**) शत्रुजन (**मिनन्ति**) नष्ट करते हैं (**तम्**) उस (**इदम्**) इस (**स्वस्ति**) सुखरूप (**सवितारम्**) समस्त जगत् के उत्पन्न करनेवाले (**देवम्**) दाता परमात्मा को (**नमोभिः**) सत्कर्मों से जैसे मैं (**हुवे**) स्तुति करूं, वैसे तुम भी प्रशंसा करो॥९॥

भावार्थः-इस संसार में कोई पदार्थ ईश्वर के तुल्य नहीं है तो अधिक कैसे हो और कोई भी इसके नियम को उल्लङ्घन नहीं कर सकता है, इस कारण सब मनुष्यों को उसी ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करनी चाहिये॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

भगं धियं वाजयन्तः पुरंधिं नराशंसो ग्नास्पतिर्नो अव्याः।

आये वामस्य संगथे रयीणां प्रिया देवस्य सवितुः स्याम॥१०॥

भगम्। धियम्। वाजयन्तः। पुरम्ऽधिम्। नराशंसः। ग्नाः। पतिः। नः। अव्याः। आऽअये। वामस्य। सम्ऽगथे। रयीणाम्। प्रियाः। देवस्य। सवितुः। स्याम॥१०॥

पदार्थः-(**भगम्**) सकलैश्वर्यम् (**धियम्**) चिन्तनीयम् (**वाजयन्तः**) जानन्तो ज्ञापयन्तः (**पुरन्धिम्**) सर्वस्य जगतो धर्त्तारम् (**नराशंसः**) नरैः प्रशंसितः (**ग्नाः**) वाचः (**पतिः**) पालकः (**नः**) अस्मान् (**अव्याः**) रक्षेत् (**आये**) यत्समन्तादय्यते तस्मिन् (**वामस्य**) प्रशस्यस्य (**सङ्गथे**) संग्रामे (**रयीणाम्**) धनानाम् (**प्रियाः**) प्रीतिविषयाः (**देवस्य**) भगवतः परमात्मनः (**सवितुः**) सर्वस्य जगतो निर्मातुः (**स्याम**) भवेम॥१०॥

अन्वयः-यो नराशंसः पतिरीश्वरो नो ग्नाश्चाव्यास्तं भगं धियं पुरन्धिं वाजयन्तो वयं रयीणामाये सङ्गथे वामस्य सवितुर्देवस्य परमात्मनः प्रियाः सततं स्याम॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! सर्वस्य रक्षकं धर्त्तारं प्रशंसितं सर्वस्य स्वामिनं परमेश्वरमुपास्य तदाज्ञाचरणेन तत्प्रिया यूयं भवत॥१०॥

पदार्थः-जो **(नराशंसः)** मनुष्यों ने प्रशंसित किया हुआ **(पतिः)** पालना करनेवाला ईश्वर **(नः)** हम लोगों **(ग्नाः)** और वाणियों की **(अव्याः)** रक्षा करे और उस **(भगम्)** समस्त ऐश्वर्य को **(धियम्)** जो चिन्तन करने योग्य है वा **(पुरन्धिम्)** समस्त जगत् के धारण करनेवाले को **(वाजयन्तः)** जानते वा उसका विज्ञान कराते हुए हम लोग **(रयीणाम्)** धनों के **(आये)** इस व्यवहार में जो सब ओर से प्राप्त होता और **(सङ्गथे)** संग्राम में **(वामस्य)** प्रशंसनीय **(सवितुः)** सकल जगत् के बनानेवाले **(देवस्य)** भगवान् परमात्मा के **(प्रियाः)** प्रीति विषय निरन्तर **(स्याम)** हों॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! सबकी रक्षा और धारण करनेवाले प्रशंसित सबके स्वामी परमेश्वर की उपासना कर उसकी आज्ञा के आचरण से उसके पियारे तुम होओ॥१०॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अ॒स्मभ्यं॒ तद्दि॒वो अ॒द्भ्यः पृ॑थि॒व्यास्त्वया॑ द॒त्तं का॒म्यं राध॒ आ गा॑त्।

शं यत्स्तो॒तृभ्य॑ आ॒पये॒ भवा॑त्युरु॒शंसा॑य सवितर्जरि॒त्रे॥ ११॥ ३॥

अ॒स्मभ्य॑म्। तत्। दि॒वः। अ॒त्ऽभ्यः। पृ॒थि॒व्याः। त्वया॑। द॒त्तम्। का॒म्य॑म्। राध॑ः। आ। गा॒त्। शम्। यत्। स्तो॒तृऽभ्य॑ः। आ॒पये॑। भवा॑ति। उ॒रु॒ऽशंसा॑य। स॒वि॒त॒रिति॑। ज॒रि॒त्रे॥ ११॥

पदार्थः-**(अस्मभ्यम्)** **(तत्)** पूर्वोक्तं जलम् **(दिवः)** प्रकाशमानात् **(अद्भ्यः)** जलेभ्यः **(पृथिव्याः)** भूमेः **(त्वया)** **(दत्तम्)** **(काम्यम्)** कमनीयम् **(राधः)** धनम् **(आ)** **(गात्)** प्राप्नुयात् **(शम्)** सुखम् **(यत्)** **(स्तोतृभ्यः)** स्तावकेभ्यः **(आपये)** विद्याव्यापकाय **(भवाति)** भवेत् **(उरुशंसाय)** बहुभिः प्रशंसिताय **(सवितः)** **(जरित्रे)** अर्चिताय॥११॥

अन्वयः-हे सवितः परमात्मन्! त्वया दत्तं दिवोऽद्भ्यः पृथिव्या यत् काम्यं राधोऽस्मभ्यमा गात् तदुरुशंसाय जरित्रे आपये स्तोतृभ्यश्च शं भवाति॥११॥

भावार्थः-परमेश्वरेण प्रकृत्या महान् महतोऽहङ्कारोऽहङ्कारात् पञ्चतन्मात्रास्ताभ्य एकादशेन्द्रियाणि स्थूलानि पञ्चभूतानि चौषधयो निर्मिताः। यैः सर्वेषां प्राणिनां सुखं सञ्जायत इति॥११॥

अत्रेश्वरसूर्य्यविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति अष्टत्रिशत्तमं सूक्तं तृतीयो वर्गश्च समाप्त:॥

पदार्थ:-हे **(सवित:)** परमात्मन्! **(त्वया)** आपने **(दत्तम्)** दिया हुआ **(दिव:)** प्रकाशमान लोग **(अद्भ्य:)** जलों और **(पृथिव्या:)** भूमि से **(यत्)** जो **(काम्यम्)** कामना करने योग्य **(राध:)** धन **(अस्मभ्यम्)** हम लोगों के लिये **(आ, गात्)** प्राप्त हो **(तत्)** वह **(उरुशंसाय)** बहुतों ने प्रशंसा किये हुए **(जरित्रे)** प्रशंसित **(आपये)** विद्या व्यापक के लिये और **(स्तोतृभ्य:)** स्तुति करनेवालों के लिये **(शम्)** कल्याणरूप **(भवाति)** हो॥११॥

भावार्थ:-परमेश्वर ने प्रकृति से महत् तत्त्व, महत् तत्त्व से अहङ्कार, अहङ्कार से पञ्चतन्मात्रा, पञ्चतन्मात्राओं से एकादश इन्द्रियां और स्थूल पञ्चभूत और ओषधियां बनाईं। जिनसे सब प्राणियों को सुख होता है॥११॥

इस सूक्त में ईश्वर, सूर्य और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह अड़तीसवां सूक्त और तीसरा वर्ग समाप्त हुआ॥

ग्रावाणेवेत्यस्याऽष्टर्चस्यैकोनचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। अश्विनौ देवते। १ निचृत्त्रिष्टुप्। ३ विराट् त्रिष्टुप्। ४, ७, ८ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २ भुरिक् पङ्क्तिः। ५, ६ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ वाय्वग्निगुणानाह॥

अब ऊनतालीसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में वायु और अग्नि के गुणों को कहते हैं॥

ग्रावा॑णेव॒ तदिदर्थं॑ जरेथे॒ गृध्रे॑व वृ॒क्षं नि॑धि॒मन्त॒मच्छ॑।

ब्र॒ह्माणे॑व वि॒दथ॑ उक्थ॒शासा॑ दू॒तेव॒ हव्या॒ जन्या॑ पुरु॒त्रा॥१॥

ग्रावा॑णाऽइव। तत्। इत्। अर्थ॑म्। ज॒रे॒थे॒ इति॑। गृध्रा॑ऽइव। वृ॒क्षम्। नि॒धि॒ऽमन्त॑म्। अच्छ॑। ब्र॒ह्माणा॑ऽइव। वि॒दथे॑। उ॒क्थ॒ऽशासा॑। दू॒ताऽइ॑व। हव्या॑। जन्या॑। पु॒रु॒ऽत्रा॥१॥

पदार्थः-(ग्रावाणेव) मेघाविव **(तत्)** **(इत्)** एव **(अर्थम्)** द्रव्यम् **(जरेथे)** जरयतः **(गृध्रेव)** गृध्राइव **(वृक्षम्)** वृश्चनीयं जलं स्थलं वा **(निधिमन्तम्)** बहवो निधयो विद्यन्ते यस्मिंस्तम् **(अच्छ)** **(ब्रह्माणेव)** यथा समग्रवेदविदौ **(विदथे)** शिल्पाख्ययज्ञे **(उक्थशासा)** उक्ता उक्था शासा शासनानि ययोस्तौ **(दूतेव)** दूतवद्वर्त्तमानौ **(हव्या)** आदातुमर्हौ **(जन्या)** जनितारौ **(पुरुत्रा)** पुरुषु बहुषु पदार्थेषु वर्त्तमानौ॥१॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यौ वाय्वग्नी ग्रावाणेव तदर्थमिदेव जरेथे विदथे गृध्रेव निधिमन्तं वृक्षमच्छ जरेथे ब्रह्माणेवोक्थशासा दूतेव हव्या जन्या पुरुत्रा वर्त्तेते तौ यूयं संप्रयोजयत॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये वह्न्यादयः पदार्था मेघवत्पक्षिवद्विद्वद्दूतवच्च कार्य्यसाधकाः सन्ति तान् विज्ञाय प्रयोजनानि साधनीयानि॥१॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जो वायु और अग्नि **(ग्रावाणेव)** दो मेघों के समान **(तत्)** उस **(अर्थम्)** द्रव्य को **(इत्)** ही **(जरेथे)** नष्ट करते वा **(विदथे)** शिल्प यज्ञ में **(गृध्रेव)** गृद्धों के समान **(निधिमन्तम्)** जिसमें बहुत निधि धन कोष विद्यमान उस **(वृक्षम्)** छेदन करने योग्य जलस्थल को **(अच्छ)** अच्छे प्रकार नष्ट करते **(ब्रह्माणेव)** और जैसे समस्त वेदवेत्ता जन हों, वैसे वर्त्तमान **(उक्थशासा)** वा जिनकी शिक्षायें कही हुई हैं उन **(दूतेव)** दूतों के समान वर्त्तमान **(हव्या)** तथा ग्रहण करने योग्य **(जन्या)** अनेक पदार्थों की उत्पत्ति करनेवाले **(पुरुत्रा)** और बहुत पदार्थों में वर्त्तमान हैं, उन वायु और अग्नि का अच्छे प्रकार प्रयोग तुम लोग करो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो वह्नि आदि पदार्थ मेघ वा पक्षियों तथा विद्वानों और दूत के समान कार्य्यसिद्धि करनेवाले हैं, उनको जान के प्रयोजनों को सिद्ध करना चाहिये॥१॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

प्रातर्यावाणा रथ्येव वीराजेव यमा वरमा सचेथे।
मेनेइव तन्वा३ शुम्भमाने दम्पतीव क्रतुविदा जनेषु॥२॥

प्रातःऽयावाना। रथ्याऽइव। वीरा। अजाऽइव। यमा। वरम्। आ। सचेथे इति। मेनेइवेति मेनेऽइव। तन्वा। शुम्भमाने इति। दम्पतीइवेति दम्पतीऽइव। क्रतुऽविदा। जनेषु॥२॥

पदार्थः-(**प्रातर्यावाणा**) यौ प्रातर्यातस्तौ (**रथ्येव**) यथा रथाय हितावश्वौ (**वीरा**) विक्रान्तकर्माणौ (**अजेव**) यथाऽजौ (**यमा**) उपरतौ (**वरम्**) उत्तमम् (**आ**) (**सचेथे**) सम्बध्नीथः (**मेनेइव**) यथा मेने पक्षिण्यौ (**तन्वा**) शरीरेण (**शुम्भमाने**) सुशोभेते (**दम्पतीव**) यथा भार्य्यापती (**क्रतुविदा**) क्रतुं प्रज्ञां विन्दति याभ्याम् (**जनेषु**) मनुष्येषु॥२॥

अन्वयः-यौ द्यावापृथिव्यौ जनेषु रथ्येव प्रातर्यावाणाऽजेव वीरा यमा मेनेइव तन्वा शुम्भमाने दम्पतीव क्रतुविदावर्त्तेते तौ विदित्वाऽध्यापकाध्येतारौ वरमा सचेथे॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्यैर्यथा सुशिक्षिताऽश्वे समाने याने स्थित्वाऽजवद्वीरतां प्रकाश्य पक्षिवद्दम्पतीव शोभेते सुकर्माणि च जनयतस्तथा सूर्य्यभूमी सर्वोपकारिके वर्त्तेते इति ज्ञेयम्॥२॥

पदार्थः-जो सूर्य और पृथिवी (**जनेषु**) मनुष्यों में (**रथ्येव**) रथ के हित दो घोड़ों के तुल्य (**प्रातर्यावाणा**) जो प्रातःकाल जाते उनके समान वा (**अजेव**) दो बकरों के समान (**वीरा**) वीरता कर्मयुक्त वा (**यमा**) उपराम अर्थात् उड़ते-उड़ते निवृत्त हुए (**मेनेइव**) दो मैनाओं के समान वा (**तन्वा**) शरीर से (**शुम्भमाने**) शोभते हुए (**दम्पतीव**) स्त्री-पुरुष के समान (**क्रतुविदा**) जिनसे प्रज्ञा को प्राप्त होते हैं, उनको जान के पढ़ाने और पढ़नेवाले (**वरम्**) उत्तम कर्म का (**आ, सचेथे**) सम्बन्ध करते हैं॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्यों को जैसे सुशिक्षित घोड़ेवाले एक यान में स्थिर होके बकरों के समान वीरता का प्रकाश कर पक्षियों वा स्त्री-पुरुषों के समान शोभा को प्राप्त होते और अच्छे कर्मों को उत्पन्न कराते हैं, वैसे सूर्य्य और भूमि सबका उपकार करनेवाले वर्त्तमान हैं, यह जानना चाहिये॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

शृङ्गेव नः प्रथमा गन्तमर्वाक्छफाविव जर्भुराणा तरोभिः।
चक्रवाकेव प्रति वस्तोरुस्रार्वाञ्चा यातं रथ्येव शक्रा॥३॥

शृङ्गाऽइव। नः। प्रथमा। गन्तम्। अर्वाक्। शफौऽइव। जर्भुराणा। तरःऽभिः। चक्रवाकाऽइव। प्रति। वस्तोः। उस्रा। अर्वाञ्चा। यातम्। रथ्याऽइव। शक्रा॥३॥

पदार्थः-(**शृङ्गेव**) शृङ्गवत्सम्बन्धिनौ हिंसकौ (**नः**) अस्मान् (**प्रथमा**) आदिमौ (**गन्तम्**) प्राप्नुतम् (**अर्वाक्**) पश्चात् (**शफाविव**) यथा खुरौ परस्परेण सम्बद्धौ (**जर्भुराणा**) भृशं धर्त्तारौ (**तरोभिः**) तरन्ति यैस्तानि तरांसि नौकादीनि तैः (**चक्रवाकेव**) यथा चक्रवाकौ पक्षिणौ (**प्रति**) (**वस्तोः**) दिनम् (**उस्रा**) किरणवद्वर्त्तमानौ (**अर्वाञ्चा**) अर्वाग्गामिनौ (**यातम्**) प्राप्नुतम् (**रथ्येव**) यथा रथाय हितानि (**शक्रा**) शक्तिमन्तौ॥३॥

अन्वयः-हे उस्रा रथ्येव शक्रा! युवां नोऽर्वाग्गन्तं शृङ्गेव शफाविव जर्भुराणा प्रथमा तरोभिश्चक्रवाकेव प्रति वस्तोरर्वाञ्चा यातम्॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यद्यग्निवायू शिल्पकार्येषु सम्प्रयुज्येतां तर्हि बहूनि कार्याणि साधयेताम्॥३॥

पदार्थः-हे (**उस्रा**) किरणों के समान वर्त्तमान (**रथ्येव**) रथ के लिये हितकारी वस्तु के तुल्य (**शक्रा**) शक्तिमान्! तुम लोग (**नः**) हम लोगों के (**अर्वाक्**) पीछे (**गन्तम्**) प्राप्त हुए को (**शृङ्गेव**) शृङ्गों के समान सम्बन्ध करने तथा हिंसा करनेवाले (**शफाविव**) जैसे खुर परस्पर सम्बन्ध करे हुए हैं, वैसे (**जर्भुराणा**) निरन्तर धारण करनेवाले (**प्रथमा**) पहिले सनातन वा (**तरोभिः**) जिनसे तैरते हैं, उन नौकाओं से जैसे (**चक्रवाकेव**) चकई चकवा (**प्रति**) प्रति (**वस्तोः**) दिन (**अर्वाञ्चा**) पीछे जानेवाले होकर (**यातम्**) प्राप्त हूजिये॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। यदि अग्नि वायु शिल्पकार्य्यों में संयुक्त किये जावें तो बहुत कार्य्यों को सिद्ध करें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

नावेव नः पारयतं युगेव नभ्येव न उपधीव प्रधीव।

श्वानेव नो अरिषण्या तनूनां खृगलेव विस्रसः पातमस्मान्॥४॥

नावाऽइव। नः। पारयतम्। युगाऽइव। नभ्याऽइव। नः। उपधी इवेत्युपधीऽइव। प्रधीइवेति प्रधीऽइव। श्वानाऽइव। नः। अरिषण्या। तनूनाम्। खृगलाऽइव। विऽस्रसः। पातम्। अस्मान्॥४॥

पदार्थः-(नावेव) यथोत्तमे नावौ **(नः)** अस्मान् **(पारयतम्)** पारयतः **(युगेव)** अश्वादिवत्संयोजितौ **(नभ्येव)** यथा रथचक्रमध्यप्रदेशाऽवयवौ **(नः)** अस्मान् **(उपधीव)** यथोपधिर्मध्यस्थस्य रथावयवस्य धारिका **(प्रधीव)** यया सर्वस्य धर्त्री रथावयवा **(श्वानेव)** यथा चोरादिभ्यो रक्षकौ कुक्कुरौ **(नः)** अस्माकम् **(अरिषण्या)** अहिंसकौ **(तनूनाम्)** शरीराणाम् **(खृगलेव)** यौ खृ खननं गलयतस्तौ **(विस्रसः)** जीर्णावस्थायाः **(पातम्)** रक्षतः **(अस्मान्)**॥४॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यौ वायुविद्युतौ युगेव नावेव नः पारयतं नभ्येवोपधीव प्रधीव नः पारयतं श्वानेव नस्तनूनामरिषण्या स्तः खृगलेव विस्रसोऽस्मान् पातं तावस्माननुपदिशत॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। नहि कश्चिदपि सृष्टिपदार्थानां गुणकर्मस्वभावानविदित्वा पूर्णविद्यो जायते तस्मात्सृष्टिविद्याः संचारणीयाः॥४॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जो वायु और बिजुली **(युगेव)** रथादि में अश्वादिकों के समान जोड़े हुए **(नावेव)** वा जैसे उत्तमता से नावें, वैसे **(नः)** हम लोगों को **(पारयतम्)** पार पहुंचाते **(नभ्येव)** वा रथ के पहियों के बीच के अङ्ग के समान वा **(उपधीव)** रथ के बीच के भाग की धारण करनेवाली लकड़ी के समान वा **(प्रधीव)** समस्त रथ की धारण करनेवाली दो लकड़ियों के समान **(नः)** हम लोगों को पहुँचाते हैं वा **(श्वानेव)** चोरादिकों से रक्षा करनेवाले कुत्तों के समान **(नः)** हमारे **(तनूनाम्)** शरीरों को **(अरिषण्या)** न नष्ट करनेहारे हैं और **(खृगलेव)** जो खोदने को गलाते हुए के समान **(विस्रसः)** जीर्णावस्था से **(अस्मान्)** हम लोगों की **(पातम्)** रक्षा करते हैं, उनका हम लोगों को आप उपदेश देओ॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। कोई भी सृष्टि के पदार्थों के गुण, कर्म और स्वभावों को न जान के पूर्ण विद्यावाला नहीं होता है, इससे सृष्टि की विद्याओं का अच्छे प्रकार प्रचार करना चाहिये॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वातेवाजुर्या नद्येव रीतिरक्षीइव चक्षुषा यातमर्वाक्।

हस्ताविव तन्वे३ शम्भविष्ठा पादेव नो नयतं वस्यो अच्छ॥५॥४॥

वातांऽइव। अजुर्या। नद्यांऽइव। रीतिः। अक्षी इवेत्यक्षीऽइंव। चक्षुंषा। आ। यातम्। अर्वाक्। हस्तौंऽइव। तन्वें। शम्ऽभंविष्ठा। पादांऽइव। नः। नयतम्। वस्यंः। अच्छं॥५॥

पदार्थः-(वातेव) वायुवत् **(अजुर्या)** अजीर्णौ **(नद्येव)** नद्यां भवं जलं नद्यं तद्वत् सद्यो गन्तारौ **(रीतिः)** श्लेषणम् **(अक्षीइव)** यथाऽक्षिणी **(चक्षुषा)** दर्शनशक्तियुक्तौ **(आ) (यातम्)** समन्तात्प्राप्नुतः **(अर्वाक्)** अधः **(हस्ताविव) (तन्वे)** शरीराय **(शम्भविष्ठा)** अतिशयेन सुखं भावुकौ **(पादेव)** यथा पादौ **(नः)** अस्मान् **(नयतम्)** नयतः **(वस्यः)** अत्युत्तमं धनम् **(अच्छ)** सम्यक्॥५॥

अन्वयः-हे विद्वांसौ! यौ वातेवाजुर्या नद्येव रीतिर्गन्तारावक्षीइव चक्षुषाऽर्वागायातं हस्ताविव तन्वे शम्भविष्ठा पादेव नो वस्योऽच्छ नयतं तौ जलाग्नी अस्मान् बोधय॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा शरीराऽवयवा स्व-स्व कर्मणि प्रवर्त्तमानाः शरीरं रक्षन्ति तथा वाय्वादयः पदार्थाः सर्वान् रक्षन्तीति वेद्यम्॥५॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जो **(वातेव)** पवन के समान **(अजुर्या)** अजीर्ण अर्थात् पुष्ट **(नद्येव)** नदी में उत्पन्न हुए जल के समान **(रीतिः)** मिले हुए शीघ्र जानेवाले वा **(अक्षीइव)** नेत्रों के समान **(चक्षुषा)** दिखाने की शक्तियुक्त **(अर्वाक्)** नीचे **(आ, यातम्)** सब ओर से प्राप्त होते हैं **(हस्ताविव)** हाथों के समान **(तन्वे)** शरीर के लिये **(शम्भविष्ठा)** अतीव सुख की भावना करानेवाले **(पादेव)** पैरों के समान **(नः)** हम लोगों को **(वस्यः)** अति उत्तम धन **(अच्छ)** अच्छे प्रकार **(नयतम्)** प्राप्त करते हैं, उन जल और अग्नि को हम लोगों को बतलाओ॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे शरीर के अङ्ग अपने-अपने काम में प्रवर्त्तमान शरीर की रक्षा करते हैं, वैसे वायु आदि पदार्थ सबकी रक्षा करते हैं, यह जानना चाहिये॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ओष्ठांविव मध्वास्ने वदंन्ता स्तनांविव पिप्यतं जीवसें नः।
नासेंव नस्तन्वों रक्षितारा कर्णांविव सुश्रुतां भूतमस्मे॥६॥

ओष्ठौंऽइव। मधुं। आस्ने। वदंन्ता। स्तनौंऽइव। पिप्यतम्। जीवसें। नः। नासांऽइव। नः। तन्वंः। रक्षितारां। कर्णौंऽइव। सुऽश्रुतां। भूतम्। अस्मे इतिं॥६॥

पदार्थः-(**ओष्ठाविव**) (**मधु**) (**आस्ने**) आस्याय मुखाय (**वदन्ता**) ब्रुवन्तौ (**स्तनाविव**) (**पिप्यतम्**) प्याययतो वर्द्धयतः (**जीवसे**) जीवितुम् (**नः**) अस्मभ्यम् (**नासेव**) नासिके इव (**नः**) अस्माकम् (**तन्वः**) शरीरस्य (**रक्षितारा**) रक्षकौ (**कर्णाविव**) (**सुश्रुता**) शोभनं श्रुतं याभ्यान्तौ (**भूतम्**) भवतः (**अस्मे**) अस्मभ्यम्॥६॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यूयं यावास्ने मध्वोष्ठाविव वदन्ता जीवसे स्तनाविव नः पिप्यतं नासेव नस्तन्वो रक्षितारा अस्मे कर्णाविव सुश्रुता भूतं तावग्निवायू विदितौ कारयत॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। येऽध्यापका जिह्वया रसमिव स्तनेन दुग्धमिव नासिकया गन्धमिव श्रोत्रेण शब्दमिव सर्वा विद्याः प्रत्यक्षीकारयन्ति ते जगत्पूज्या भवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे विद्वानो! तुम जो (**आस्ने**) मुख के लिये (**मधु**) मधुर रस को (**ओष्ठाविव**) ओष्ठों के समान (**वदन्ता**) कहते हुए (**जीवसे**) जीवने को (**स्तनाविव**) स्तनों के समान (**नः**) हमारे लिये (**पिप्यतम्**) बढ़ाते अर्थात् जैसे स्तनों में उत्पन्न हुए दुग्ध से जीवन बढ़ता है, वैसे बढ़ाते (**नासेव**) और नासिका के समान (**नः**) हमारे (**तन्वः**) शरीर की (**रक्षितारा**) रक्षा करनेवाले वा (**अस्मे**) हम लोगों के लिये (**कर्णाविव**) कर्णों के समान (**सुश्रुता**) जिनसे सुन्दर श्रवण होता है ऐसे (**भूतम्**) होते हैं, उन वायु और अग्नि को विदित कराइये॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो अध्यापक जिह्वा से रस के समान, स्तनों से दुग्ध के समान, नासिका से गन्ध के तुल्य, कान से शब्द के समान, समस्त विद्याओं को प्रत्यक्ष कराते हैं, वे जगत्पूज्य होते हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

हस्तेव शक्तिमभि संददी नः क्षामेव नः समजतं रजांसि।

इमा गिरो अश्विना युष्मयन्तीः क्षणोत्रेणेव स्वधितिं सं शिशीतम्॥७॥

हस्ताऽइव। शक्तिम्। अभि। संददी इति सम्ऽददी। नः। क्षामऽइव। नः। सम्। अजतम्। रजांसि। इमाः। गिरः। अश्विना। युष्मऽयन्तीः। क्षणोत्रेणऽइव। स्वऽधितिम्। सम्। शिशीतम्॥७॥

पदार्थः-(**हस्तेव**) (**शक्तिम्**) तीक्ष्णाग्राम् (**अभि**) (**संददी**) याभ्यां सम्यग् ददतस्तौ (**नः**) अस्मान् (**क्षामेव**) निवासाधिकरणां पृथिवीम्। **क्षामेति पृथिवीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१) (**नः**) अस्माकम् (**सम्**) सम्यक् (**अजतम्**) प्रापयतः (**रजांसि**) ऐश्वर्याणि लोकान् वा (**इमाः**) (**गिरः**)

सुशिक्षिता वाणीः **(अश्विना)** वाय्वग्नी **(युष्मयन्तीः)** या युष्मानाचक्षते ताः **(क्ष्णोत्रेणेव)** तेजस्विकारकेण साधनेनेव **(स्वधितिम्)** वज्रम् **(सम्)** सम्यक् **(शिशीतम्)** तीक्ष्णीकुर्य्यातम्॥७॥

अन्वयः-हे अश्विनेव वर्त्तमानावध्यापकपरीक्षकौ! यावग्निवायू शक्तिं हस्तेव नोऽभिसंददी क्षामेव नो रजांसि समजतं क्ष्णोत्रेणेवेमा युष्मयन्तीर्गिरः स्वधितिमिव संशिशीतं तयोर्गुणकर्मस्वभावानस्मान् बोधयतम्॥७॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! ये हस्तक्रियाकारकाः पृथिवीवदैश्वर्य्यप्रदाः सुशिक्षिता वाग्वज्ज्ञापकास्तीक्ष्णवज्रवद्दारिद्र्यदुःखविनाशका अग्न्यादयः पदार्थाः सन्ति तानस्मानद्य ग्राहयत॥७॥

पदार्थः-हे **(अश्विना)** वायु और अग्नि के समान वर्त्तमान पढ़ाने और परीक्षा करनेवालो! जो अग्नि और वायु **(शक्तिम्)** तीक्ष्ण अग्रभागवाली शक्ति को **(हस्तेव)** हाथों के समान **(नः)** हम लोगों को **(अभि, संददी)** जिनसे अच्छे प्रकार देते वा **(क्षामेव)** पृथिवी के समान **(नः)** हम लोगों को **(रजांसि)** ऐश्वर्यवालों को **(समजतम्)** अच्छे प्रकार प्राप्त कराते हैं वा **(क्ष्णोत्रेणेव)** तेजस्वी करनेवाले साधन से जैसे वैसे **(इमाः)** इन **(युष्मयन्तीः)** जो तुमको कहती हैं उन **(गिरः)** सुशिक्षित वाणियों को **(स्वधितिम्)** वज्र के समान **(सम्, शिशीतम्)** तीक्ष्ण करें, उनके गुण, कर्म और स्वभावों को हम लोगों को बताओ॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे विद्वानो! जो हाथ की क्रिया को करनेवाले, पृथिवी के समान ऐश्वर्य देने, अच्छी शिक्षित वाणी के समान पदार्थों को बताने, तीक्ष्ण वज्र के समान दारिद्र्य और दुःख का विनाश करनेवाले अग्न्यादि पदार्थ हैं, उनको आज हम लोगों को ग्रहण कराओ॥७॥

पुनर्विद्वद्विषयमाह॥

फिर विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

एतानि वामश्विना वर्धनानि ब्रह्म स्तोमं गृत्समदासो अक्रन्।
तानि नरा जुजुषाणोप यातं बृहद्वदेम विदथे सुवीराः॥८॥५॥

एतानि। वाम्। अश्विना। वर्धनानि। ब्रह्म। स्तोमम्। गृत्सऽमदासः। अक्रन्। तानि। नरा। जुजुषाणा। उप। यातम्। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीराः॥८॥

पदार्थः-**(एतानि)** **(वाम्)** युवयोः **(अश्विना)** सकलविद्याव्यापिनौ **(वर्द्धनानि)** **(ब्रह्म)** धनम् **(स्तोमम्)** प्रशंसाम् **(गृत्समदासः)** गृत्सा अभिकाङ्क्षिता मदा हर्षा यैस्ते **(अक्रन्)** कुर्य्युः **(तानि)** **(नरा)** नेतारौ **(जुजुषाणा)** सेवमानौ **(उप)** **(यातम्)** उपाप्नुतः **(बृहत्)** महद्विज्ञानम् **(वदेम)**

अध्यापयेम उपदिशेम वा **(विदथे)** विज्ञानमये यज्ञे **(सुवीराः)** शोभनाश्च ते वीरा व्याप्तविद्यास्ते॥८॥

अन्वयः-हे अश्विना नरेव वर्त्तमानावध्यापकपरीक्षकौ! युवां वां यान्येतानि वर्द्धनानि ब्रह्म स्तोमं च गृत्समदासोऽक्रन् तानि जुजुषाणा सन्तावास्मानुपयातं यतस्सुवीराः सन्तो वयं विदथे बृहत्सततं वदेम॥८॥

भावार्थः-ये मनुष्या विद्वदनुकरणं कुर्य्युस्तर्हि ते महान्तो भवेयुरिति॥८॥

अत्र वाय्वग्न्यादिविदुषाञ्च गुणवर्णनादेतत्सूक्तार्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकोनचत्वारिंशत्तमं सूक्तं पञ्चमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अश्विना)** सकल विद्या में व्याप्त होनेवाले **(नरा)** मनुष्यों में अग्रगन्ताओं के समान वर्त्तमान अध्यापक और परीक्षको! तुम **(वाम्)** तुम दोनों के जिन **(एतानि)** इन **(वर्द्धनानि)** वृद्धियों **(ब्रह्म)** धन और **(स्तोमम्)** प्रशंसा को **(गृत्समदासः)** जिन्होंने आनन्द चाहे हुए हैं, वे जन **(अक्रन्)** करें। **(तानि)** उनको **(जुजुषाणा)** सेवते हुए हम लोगों के **(उप, यातम्)** समीप प्राप्त होते, जिससे **(सुवीराः)** उत्तम वीरोंवाले हम सब लोग **(विदथे)** संग्राम में **(बृहत्)** बहुत विज्ञान को निरन्तर **(वदेम)** पढ़ावें वा उपदेश करें॥८॥

भावार्थः-जो मनुष्य विद्वानों का अनुकरण करें तो वे महात्मा होवें॥८॥

इस सूक्त में वायु और अग्नि आदि पदार्थ वा विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह उनतालीसवां सूक्त और पांचवां वर्ग पूरा हुआ॥

सोमापूषणेति षड्चस्य चत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। सोमा पूषणावदितिश्च देवताः। १, ३ त्रिष्टुप्। २ विराट् त्रिष्टुप्। ५, ६ निचृत् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ वायुगुणानाह॥

अब चालीसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में पवन के गुणों का उपदेश करते हैं॥

सोमापूषणा जनना रयीणां जनना दिवो जनना पृथिव्याः।
जातौ विश्वस्य भुवनस्य गोपौ देवा अकृण्वन्नमृतस्य नाभिम्॥१॥

सोमापूषणा। जनना। रयीणाम्। जनना। दिवः। जनना। पृथिव्याः। जातौ। विश्वस्य। भुवनस्य। गोपौ। देवाः। अकृण्वन्। अमृतस्य। नाभिम्॥१॥

पदार्थः-(सोमापूषणा) प्राणाऽपानौ **(जनना)** सुखजनकौ **(रयीणाम्)** धनानाम् **(जनना)** उत्पादकौ **(दिवः)** प्रकाशस्य **(जनना) (पृथिव्याः) (जातौ)** उत्पन्नौ **(विश्वस्य)** सर्वस्य **(भुवनस्य)** संसारस्य **(गोपौ)** रक्षकौ **(देवाः)** विद्वांसः **(अकृण्वन्)** कुर्युः **(अमृतस्य)** नाशरहितस्य **(नाभिम्)** मध्यम्॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! देवा यौ रयीणां जनना दिवो जनना पृथिव्या जनना जातौ विश्वस्य भुवनस्य गोपौ सोमापूषणाऽमृतस्य नाभिमकृण्वन् तौ विजानीत॥१॥

भावार्थः-मनुष्यैः प्रकाशपृथिवीधनानां निमित्ते भूत्वा सर्वस्य रक्षकौ परमात्मनो ज्ञापकौ प्राणापानौ वर्त्तेत इति वेद्यम्॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(देवाः)** विद्वान् जन जिन **(रयीणाम्)** धनों को **(जनना)** सुखपूर्वक उत्पन्न करनेवाले वा **(दिवः)** प्रकाश के **(जनना)** उत्पन्न करनेवाले **(पृथिव्याः)** पृथिवी के **(जनना)** उत्पन्न करनेवाले **(जातौ)** उत्पन्न हुए **(विश्वस्य)** समस्त **(भुवनस्य)** संसार की **(गोपौ)** रक्षा करनेवाले **(सोमापूषणा)** प्राण और अपान **(अमृतस्य)** नाशरहित पदार्थ के **(नाभिम्)** मध्य भाग को **(अकृण्वन्)** प्रकट करें, उनको विशेषता से जानो॥१॥

भावार्थः-मनुष्यों को प्रकाश पृथिवी और धनों के निमित्त होकर सब की रक्षा करनेवाले परमात्मा का विज्ञान करानेवाले प्राण और अपान वर्त्तमान हैं, यह जानना चाहिये॥१॥

अथ वह्निविषयमाह॥

अब अग्नि के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इमौ देवौ जायमानौ जुषन्तेमौ तमांसि गूहतामजुष्टा।
आभ्यामिन्द्रः पक्वमामास्वन्तः सोमापूषभ्यां जनदुस्त्रियासु॥ २॥

इमौ। देवौ। जायमानौ। जुषन्त। इमौ। तमांसि। गूहताम्। अजुष्टा। आभ्याम्। इन्द्रः। पक्वम्। आमासु। अन्तरिति। सोमापूषऽभ्याम्। जनत्। उस्त्रियासु॥ २॥

पदार्थः-(**इमौ**) प्रत्यक्षौ (**देवौ**) कमनीयौ (**जायमानौ**) (**जुषन्त**) (**इमौ**) वर्त्तमानौ (**तमांसि**) रात्रीः (**गूहताम्**) समावृणुतः (**अजुष्टा**) असेवितौ (**आभ्याम्**) (**इन्द्रः**) विद्युत्सूर्य्यौ वा (**पक्वम्**) (**आमासु**) अपक्वासु (**अन्तः**) मध्ये (**सोमापूषभ्याम्**) चन्द्रौषधिगणाभ्याम् (**जनत्**) जनयति। अत्राडभावो विकरणात्मनेपदव्यत्ययश्च। (**उस्त्रियासु**) भूमिषु॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! सर्वे पदार्था याविमौ जायमानौ देवौ जुषन्त यौ याविमावजुष्टा तमांसि गूहतामाभ्यां सोमापूषभ्यां सहेन्द्र आमासूस्त्रियास्वन्तः पक्वं जनत्तौ सम्यगुपयुङ्ग्धत॥ २॥

भावार्थः-योऽग्निः प्रकाशमन्तर्हितं करोति स याभ्यां चन्द्रौषधिगणाभ्यां विना किञ्चित्करो भवति तौ विज्ञाय कार्य्यसिद्धिः कार्य्या॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! सब पदार्थ (**इमौ**) इन प्रत्यक्ष (**जायमानौ**) उत्पन्न होते हुए (**देवौ**) मनोहरों को (**जुषन्त**) सेवते हैं जो (**इमौ**) यह दोनों (**अजुष्टा**) न सेवन किये हुए (**तमांसि**) रात्रियों को (**गूहताम्**) अच्छे प्रकार ढांपते हैं (**आभ्याम्**) इन (**सोमापूषभ्याम्**) चन्द्र और ओषधि गणों के साथ (**इन्द्रः**) बिजुली वा सूर्य्य (**आमासु**) अपक्व (**उस्त्रियासु**) भूमियों के (**अन्तः**) बीच (**पक्वम्**) पके पदार्थ को (**जनत्**) उत्पन्न कराता, उनका अच्छे प्रकार उपयोग करो॥ २॥

भावार्थः-जो अग्नि सब के भीतर स्थित प्रकाशकारक है, वह जिन चन्द्रमा और ओषधिगणों के विना अकिंचित्कर होता अर्थात् संसार का सुख करनेवाला नहीं होता, उनको जान कार्य्यसिद्धि करनी चाहिये॥ २॥

अथाग्निवायुगुणानाह॥

अब अग्नि और वायु के गुणों को कहते हैं॥

सोमापूषणा रजसो विमानं सप्तचक्रं रथमविश्वमिन्वम्।
विषूवृतं मनसा युज्यमानं तं जिन्वथो वृषणा पञ्चरश्मिम्॥ ३॥

सोमापूषणा। रजसः। विऽमानम्। सप्तऽचक्रम्। रथम्। अविश्वऽमिन्वम्। विषुऽवृतम्। मनसा। युज्यमानम्। तम्। जिन्वथः। वृषणा। पञ्चऽरश्मिम्॥ ३॥

पदार्थः-(सोमापूषणा) अग्निवायू **(रजसः)** लोकसमूहस्य **(विमानम्)** वियतिगमकम् **(सप्तचक्रम्)** सप्तचक्राणि यस्मिँस्तम् **(रथम्)** रमणीयं यानम् **(अविश्वमिन्वम्)** अविद्यमानानि विश्वानि मिन्वन्ति येन तम् **(विषूवृतम्)** विषुणा व्यापकेन गमनेन वृतम् **(मनसा)** अन्तःकरणेन विचारेण **(युज्यमानम्)** **(तम्)** **(जिन्वथः)** गमयतः **(वृषणा)** बलिष्ठौ **(पञ्चरश्मिम्)** पञ्चप्राणाऽपानव्यानोदानसमाना रश्मय इव यस्मिँस्तम्॥३॥

अन्वयः-हे वृषणा! वाय्वग्निवद्वर्त्तमानौ विद्वांसौ युवां सोमापूषणा रजसोऽविश्वमिन्वं विषूवृतं सप्तचक्रं पञ्चरश्मिं मनसा युज्यमानं विमानं रथं जिन्वथः प्रापयतस्तं विजानीतम्॥३॥

भावार्थः-मनुष्यैरन्तरिक्षे गमयितारं सप्तकलायन्त्रभ्रामणनिमित्तं सद्यो गमयितारं रथं कृत्वा सुखमाप्तव्यम्॥३॥

पदार्थः-हे **(वृषणा)** बलिष्ठ वायु और अग्नि के समान वर्त्तमान विद्वानो! तुम **(सोमापूषणा)** अग्नि और वायु **(रजसः)** लोकसमूह के **(अविश्वमिन्वम्)** जिससे अविद्यमान समस्त पदार्थों को अलग करते हैं जो **(विषूवृतम्)** व्यापक गमन से ढपा हुआ **(सप्तचक्रम्)** जिसमें सात चक्र **(पञ्चरश्मिम्)** तथा पांच प्राण, अपान, व्यान, उदान और समान रश्मि के तुल्य विद्यमान **(मनसा)** जो अन्तःकरणस्थ विचार से **(युज्यमानम्)** युक्त किया जाता उस **(विमानम्)** आकाश में गमन करनेवाले **(रथम्)** रमणीय यान को **(जिन्वथः)** चलाते हैं **(तम्)** उसको जानो॥३॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि अन्तरिक्ष में गमन करानेवाले सात कलायन्त्र घुमाने के जिसमें निमित्त ऐसे शीघ्र गमन करानेवाले रथ को बना कर सुख पावें॥३॥

अथाग्निविषयमाह॥

अब अग्नि के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

दिव्य१॒न्यः सद॑नं च॒क्रे उ॒च्चा पृ॑थि॒व्याम॒न्यो अध्य॒न्तरि॑क्षे।

ताव॒स्मभ्यं॑ पु॒रुवारं॑ पु॒रु॒क्षुं॑ रा॒यस्पोषं॒ वि ष्य॑तां॒ नाभि॑म॒स्मे॥४॥

दि॒वि। अ॒न्यः। सद॑नम्। च॒क्रे। उ॒च्चा। पृ॒थि॒व्याम्। अ॒न्यः। अधि॑। अ॒न्तरि॑क्षे। तौ। अ॒स्मभ्य॑म्। पु॒रु॒ऽवार॑म्। पु॒रु॒ऽक्षुम्। रा॒यः। पोष॑म्। वि। स्य॒ता॒म्। नाभि॑म्। अ॒स्मे इति॑॥४॥

पदार्थः-(दिवि) आकाशे **(अन्यः)** **(सदनम्)** स्थानम् **(चक्रे)** कृतवान् **(उच्चा)** उच्चे ऊर्ध्वस्थिते **(पृथिव्याम्)** **(अन्यः)** भिन्नः **(अधि)** **(अन्तरिक्षे)** **(तौ)** **(अस्मभ्यम्)** **(पुरुवारम्)**

बहुभिर्वरणीयम् **(पुरुक्षुम्)** पुरुभिः शब्दितम् **(रायः)** धनादेः **(पोषम्)** पोषकम् **(वि) (स्यताम्)** अन्ते भवताम् **(नाभिम्)** मध्यं बन्धनम् **(अस्मे)** अस्माकम्॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! अग्नेर्भागोऽन्य उच्चा दिवि सदनमधि चक्रेऽन्यः पृथिव्यामन्योऽन्तरिक्षे सदनमधिचक्रे तावस्मभ्यं पुरुवारं पुरुक्षुं रायस्पोषमस्मे नाभिं च विष्यतां तौ यूयं विजानीत॥४॥

भावार्थः-अग्नेस्त्रीणि स्थानानि उपर्य्याकाशे पृथिव्यां मध्ये च तत्र सूर्य्यरूपेणान्तरिक्षे निकटे स्थितः प्रत्यक्षः पृथिव्यां गुप्तोऽन्तरिक्षे वर्त्तते तं मनुष्या विजानन्तु॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! अग्नि का भाग **(अन्यः)** और है और वह **(उच्चा)** ऊपर जो स्थित **(दिवि)** आकाश उसमें **(सदनम्)** स्थान **(अधि, चक्रे)** किये हुए है तथा **(अन्यः)** और **(पृथिव्याम्)** पृथिवी में और **(अन्तरिक्षे)** अन्तरिक्ष में स्थान को **(अधि)** अधिकता से किये हुए हैं **(तौ)** वे दोनों **(अस्मभ्यम्)** हम लोगों के लिये **(पुरुवारम्)** बहुतों से स्वीकार करने योग्य **(पुरुक्षुम्)** बहुतों ने शब्दित किये अर्थात् कहे-सुने **(रायः)** धनादि पदार्थों के **(पोषम्)** पुष्ट करनेवाले और **(अस्मे)** हमारे **(नाभिम्)** मध्य बन्धन के **(वि, ष्यताम्)** निकट हों, उनको तुम जानो॥४॥

भावार्थः-अग्नि के तीन स्थान हैं-एक ऊपर आकाश में, दूसरा पृथिवी में और तीसरा बीच में; उन तीनों में सूर्य्यरूप से अन्तरिक्ष में, निकट स्थित प्रत्यक्ष पृथिवी में और गुप्त अन्तरिक्ष में वर्त्तमान है, उस अग्नि को मनुष्य जानें॥४॥

अथ विद्वद्गुणानाह॥

अब विद्वानों के गुणों को कहते हैं॥

विश्वा॑न्य॒न्यो भुव॑ना ज॒जान॒ विश्व॑म॒न्यो अ॑भि॒चक्षा॑ण एति।
सोमा॑पूषणा॒वव॑तं॒ धियं॑ मे यु॒वाभ्यां॒ विश्वाः॒ पृत॑ना जयेम॥५॥

विश्वा॑नि। अ॒न्यः। भुव॑ना। ज॒जान॑। विश्व॑म्। अ॒न्यः। अ॒भि॒ऽचक्षा॑णः। ए॒ति। सोमा॑पूषणौ। अव॑तम्। धिय॑म्। मे॒। यु॒वाभ्या॑म्। विश्वाः॑। पृत॑नाः। ज॒येम॥५॥

पदार्थः-**(विश्वानि)** सर्वाणि **(अन्यः)** भिन्नो भागः **(भुवना)** भुवनानि लोकजातानि **(जजान)** जज्ञे प्रादुर्भावयति। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम्। **(विश्वम्) (अन्यः) (अभिचक्षाणः)** अभिव्यक्तवाग्विषयः **(एति)** गच्छति **(सोमापूषणौ) (अवतम्)** रक्षतम् **(धियम्)** प्रज्ञाम् **(मे)** मम **(युवाभ्याम्) (विश्वाः)** सर्वान् **(पृतनाः)** मनुष्यान् **(जयेम)** उत्कर्षयेम॥५॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! योऽन्यो विश्वानि भुवना जजान योऽन्योऽभिचक्षाणो विश्वमेति तौ सोमापूषणा उपदिश्य मे धियं युवामवतं यतो युवाभ्यां सह वयं विश्वाः पृतना जयेम॥५॥

भावार्थः-यो वायुः सर्वाँल्लोकान् धरति यश्च शब्दप्रयोगश्रवणनिमित्तोऽस्ति तद्विज्ञापनेन सर्वेषां मनुष्याणामुन्नतिः कार्य्या॥५॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशको! जो **(अन्यः)** भिन्न भाग **(विश्वानि)** समस्त **(भुवना)** लोकों में प्रसिद्ध पदार्थों को **(जजान)** उत्पन्न करता जो **(अन्यः)** और **(अभिचक्षाणः)** प्रकट वाणी का विषय **(विश्वम्)** संसार को **(एति)** प्राप्त होता, उन दोनों **(सोमापूषणौ)** शान्ति और पुष्टि गुणवाले वायु का उपदेश देकर **(मे)** मेरी **(धियम्)** बुद्धि की तुम दोनों **(अवतम्)** रक्षा करो जिससे **(युवाभ्याम्)** तुम दोनों के साथ हम लोग **(विश्वाः)** समस्त **(पृतनाः)** मनुष्यों को **(जयेम)** उत्कर्ष दें॥५॥

भावार्थः-जो वायु सब लोकों को धरता और जो शब्द प्रयोग वा श्रवण का निमित्त है, उसके विज्ञान कराने से सब मनुष्यों की उन्नति करनी चाहिये॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

धियं॑ पू॒षा जि॑न्वतु विश्व॒मि॒न्वो र॒यिं सोमो॑ र॒यि॒पति॑र्दधातु।
अव॑तु दे॒व्यदि॑तिरन॒र्वा बृ॒हद्व॑देम वि॒दथे॑ सु॒वीराः॥६॥६॥

धिय॑म्। पू॒षा। जि॒न्व॒तु। वि॒श्व॒म्ऽइ॒न्वः। र॒यिम्। सोमः॑। र॒यि॒ऽपतिः॑। द॒धा॒तु। अव॑तु। दे॒वी। अदि॑तिः। अ॒न॒र्वा। बृ॒हत्। व॒दे॒म। वि॒दथे॑। सु॒ऽवीराः॑॥६॥

पदार्थः-**(धियम्)** प्रज्ञां कर्म वा **(पूषा)** प्राणः **(जिन्वतु)** प्राप्नोतु सुखयतु वा **(विश्वमिन्वः)** विश्वं मिनोति व्याप्नोति यस्य सः **(रयिम्)** श्रियम् **(सोमः)** पदार्थसमूहः **(रयिपतिः)** धनरक्षकः **(दधातु)** **(अवतु)** रक्षतु **(देवी)** दिव्यगुणा **(अदितिः)** माता **(अनर्वा)** अविद्यमाना अश्वा यस्याः सा **(बृहत्)** **(वदेम)** **(विदथे)** **(सुवीराः)**॥६॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! येन प्रकारेण पूषा मे धियं जिन्वतु विश्वमिन्वो रयिपतिस्सोमो रयिं दधातु। अनर्वा देव्यदितिर्धियमवतु यतस्सुवीरा वयं विदथे बृहद्वदेम॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा सर्वे पदार्थाः श्रीप्रज्ञारोग्यायुषां वर्द्धकाः स्युस्तथा विदधतं येन सर्वे मनुष्या महत्सुखं प्राप्नुयुरिति॥६॥

अत्र प्राणापानाग्निवायुविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चत्वारिंशत्तमं सूक्तं षष्ठो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जिस प्रकार से **(पूषा)** प्राण मेरी **(धियम्)** बुद्धि वा कर्म को **(जिन्वतु)** प्राप्त हो वा सुखी करे **(विश्वमिन्वः)** तथा जो विश्व को व्याप्त होता वह **(रयिपतिः)** धन की रक्षा करनेवाला **(सोमः)** पदार्थों का समूह **(रयिम्)** लक्ष्मी को **(दधातु)** धारण करे **(अनर्वा)** तथा जिसके अविद्यमान घोड़े हैं वह **(देवी)** दिव्य गुणवाली **(अदितिः)** माता बुद्धि वा कर्म की **(अवतु)** रक्षा करे जिससे **(सुवीराः)** शोभन वीरोंवाले हम लोग **(विदथे)** संग्राम में **(बृहत्)** बहुत **(वदेम)** कहें॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे सब पदार्थ धन, बुद्धि, आरोग्यता और आयु के बढ़ानेवाले हों, वैसे विधान करो जिससे सब मनुष्य बहुत सुख को प्राप्त होवें॥६॥

इस सूक्त में प्राण, अपान, अग्नि, वायु और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह चालीसवां सूक्त और छठा वर्ग समाप्त हुआ॥

वायवित्येकविंशत्यृचस्यैकचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। १, २ वायुः। ३ इन्द्रवायू। ४-६ मित्रावरुणौ। ७-९ अश्विनौ। १०-१२ इन्द्रः। १३-१५ विश्वेदेवाः। १६-१८ सरस्वती। १९-२१ द्यावापृथिव्यौ हविर्धाने वा देवताः। १, ३, ४, ६, १०, ११, १३, १५, १९-२१ गायत्री। २, ५, ९, १२, १४ निचृत् गायत्री। ७ त्रिपाद्गायत्री। ८ विराट् गायत्री छन्दः। षडजः स्वरः। १६ अनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः। १७ उष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः। १८ बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः॥

अथाध्यापकविषयमाह॥

अब इक्कीस ऋचावाले इकतालीसवें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में अध्यापक के विषय को कहते हैं॥

वायो ये ते सहस्रिणो रथासस्तेभिरा गहि। नियुत्वान्त्सोमपीतये॥ १॥

वायो इति। ये। ते। सहस्रिणः। रथासः। तेभिः। आ। गहि। नियुत्वान्। सोमऽपीतये॥ १॥

पदार्थः-(वायो) (ये) (ते) तव **(सहस्रिणः)** सहस्रमसंख्याता वेगादयो गुणाः सन्ति येषां ते **(रथासः)** रमणीयाः **(तेभिः)** तैः **(आ, गहि)** आगच्छ **(नियुत्वान्)** नियमनियुक्तः **(सोमपीतये)** सोमौषधिरसपानाय॥ १॥

अन्वयः-हे वायो वायुवद्वर्त्तमान विद्वन्! ये ते वायुवेगाः सहस्रिणो रथासः सन्ति तेभिस्सह नियुत्वान् सन् सोमपीतय आगहि आगच्छ॥ १॥

भावार्थः-वायोरसङ्ख्यानि यानि वेगादीनि कर्माणि सन्ति तानि विदित्वा इतस्ततो मनुष्या गच्छन्त्वागच्छन्तु॥ १॥

पदार्थः-हे **(वायो)** पवन के समान वर्त्तमान विद्वान्! **(ये)** जो **(ते)** आप के वायुवद् वेगवाले **(सहस्रिणः)** असंख्यात वेगादि गुणोंवाले **(रथासः)** रमणीय यान हैं **(तेभिः)** उनके साथ **(नियुत्वान्)** नियमयुक्त होते हुए **(सोमपीतये)** उत्तम ओषधियों के रस पीने को **(आ, गहि)** आइये॥ १॥

भावार्थः-पवन के असंख्य जो वेग आदि कर्म हैं, उनको जान के इधर-उधर मनुष्यों को जाना-आना चाहिये॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

नियुत्वान् वायवा गह्ययं शुक्रो अयामि ते। गन्तासि सुन्वतो गृहम्॥ २॥

नियुत्वान्। वायो इति। आ। गहि। अयम्। शुक्रः। अयामि। ते। गन्ता। असि। सुन्वतः। गृहम्॥ २॥

पदार्थः-(नियुत्वान्) नियतात्मा संयतेन्द्रियः **(वायो)** वायुवद्वर्त्तमान **(आ) (गहि)** आगच्छ **(अयम्) (शुक्रः)** शोषकः **(अयामि)** प्राप्नोमि **(ते)** तव **(गन्ता) (असि) (सुन्वतः)** अभिषवकर्त्तुः **(गृहम्)**॥२॥

अन्वयः-हे वायो! यतस्त्वं शुक्रः सन् सुन्वतो गृहं गन्तासि तस्मान्नियुत्वान् सन्ना गहि। यथाऽयं वायुर्नियुत्वान् सर्वत्र गन्तास्ति तथाऽहं ते गृहमयामि॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा वायवो नियमेन सर्वत्र गच्छन्ति तथा नियतानि कर्माणि कृत्वा सुखान्याप्तव्यानि॥२॥

पदार्थः-हे **(वायो)** पवन के समान वर्त्तमान विद्वान्! जिस कारण आप **(शुक्रः)** अज्ञानताओं को सुखानेवाले होते हुए **(सुन्वतः)** ओषधियों के रस निकालनेवाले के **(गृहम्)** घर **(गन्ता)** जानेवाले **(असि)** हैं, इस कारण **(नियुत्वान्)** आत्मा से नियमयुक्त जितेन्द्रिय होते हुए **(आ, गहि)** आओ जैसे **(अयम्)** यह वायु नियमयुक्त सर्वत्र जानेवाला है, वैसे मैं **(ते)** आपके घर को **(अयामि)** प्राप्त होता हूँ॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे पवन नियम से सर्वत्र जाते हैं, वैसे नियमयुक्त कर्मों को कर सुखों को प्राप्त होना चाहिये॥२॥

अथाऽध्यापकाऽध्येतृविषयमाह॥

अब अध्यापक और अध्येताओं के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

शुक्रस्याद्य गवाशिर इन्द्रवायू नियुत्वतः। आ यातं पिबतं नरा॥३॥

शुक्रस्य। अद्य। गोऽआशिरः। इन्द्रवायू इति। नियुत्वतः। आ। यातम्। पिबतम्। नरा॥३॥

पदार्थः-(शुक्रस्य) शोषकस्योदकस्य। **शुक्रमित्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२) **(अद्य)** इदानीम् **(गवाशिरः)** गाः किरणान् अश्नुते तस्य **(इन्द्रवायू)** विद्युत्पवनौ **(नियुत्वतः)** नियमेन वर्त्तमानस्य **(आ) (यातम्)** प्राप्नुतम् **(पिबतम्) (नरा)** नायकौ॥३॥

अन्वयः-हे नरा इन्द्रवायू इव वर्त्तमानौ! युवामद्य शुक्रस्य गवाशिरो नियुत्वत आ यातं शुक्रस्योदकस्य रसं पिबतम्॥३॥

भावार्थः-यथा विद्युत्पवनौ सर्वत्राऽभिव्याप्तौ सर्वं जगद्रक्षतस्तथोत्तमानि कर्माणि कृत्वा शुद्धोदकं पीत्वाऽऽरोग्यं सर्वेषामुन्नतिश्च कार्य्या॥३॥

पदार्थः-हे **(नरा)** बिजुली और पवन के समान वर्त्तमान अग्रगन्ता मनुष्यो! तुम **(अद्य)** आज **(शुक्रस्य)** अज्ञानता सोखने और **(गवाशिरः)** किरणों को अर्थात् विद्याओं को व्याप्त

होनेवाले **(नियुत्वतः)** नियमयुक्त के समीप **(आ, यातम्)** आओ और जल रस **(पिबतम्)** पीओ॥३॥

भावार्थः-जैसे बिजुली और पवन सर्वत्र अभिव्याप्त और सब जगत् की रक्षा करते हैं, वैसे उत्तम काम कर और शुद्ध जल पीके आरोग्यपन और सबकी उन्नति करनी चाहिये॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अयं वां मित्रावरुणा सुतः सोमं ऋतावृधा। ममेदिह श्रुतं हवम्॥४॥

अयम्। वाम्। मित्रावरुणा। सुतः। सोमः। ऋतऽवृधा। मम। इत्। इह। श्रुतम्। हवम्॥४॥

पदार्थः-(अयम्) (वाम्) युवाभ्याम् **(मित्रावरुणा)** प्राणोदानवद्वर्त्तमानौ **(सुतः)** निष्पादितः **(सोमः) (ऋतावृधा)** सत्येन वृद्धौ **(मम) (इत्) (इह) (श्रुतम्) (हवम्)**॥४॥

अन्वयः-हे ऋतावृधा मित्रावरुणा! योऽयं वां सोमः सुतस्तत्पीत्वेदिह मम हवं श्रुतम्॥४॥

भावार्थः-यथा वायवः सर्वस्माद्रसं गृहीत्वा वर्षयन्ति तथैव सत्या विद्याः श्रुत्वा सर्वेभ्यः सुखं देयम्॥४॥

पदार्थः-हे **(ऋतावृधा)** सत्य से बढ़े हुए **(मित्रावरुणा)** प्राण और उदान के समान वर्त्तमान अध्यापको! जो **(अयम्)** यह **(वाम्)** तुम दोनों से **(सोमः)** ओषधियों का रस **(सुतः)** उत्पन्न हुआ उसको पी के **(इत्)** ही **(इह)** यहाँ **(मम)** मेरे **(हवम्)** आह्वान को **(श्रुतम्)** सुनिये॥४॥

भावार्थः-जैसे वायु सबसे रस को ग्रहण कर वर्षाते हैं, वैसे ही सत्य विद्याओं को सुन कर सबके लिये सुख देना चाहिये॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

राजानावनभिद्रुहा ध्रुवे सदस्युत्तमे। सहस्रस्थूण आसाते॥५॥७॥

राजानौ। अनभिऽद्रुहा। ध्रुवे। सदसि। उत्ऽतमे। सहस्रऽस्थूणे। आसाते इति॥५॥

पदार्थः-(राजानौ) प्रकाशमानौ **(अनभिद्रुहा)** द्रोहकर्मरहितौ **(ध्रुवे)** निश्चले **(सदसि)** सभास्थाने **(उत्तमे)** श्रेष्ठे **(सहस्रस्थूणे)** सहस्राणि स्थूणाः स्तम्भा यस्मिँस्तस्मिन् **(आसाते)** उपविशतः॥५॥

अन्वयः-हे अनभिद्रुहा राजानौ! युवां ध्रुव उत्तमे सहस्रस्थूणे सदसि यौ मित्रावरुणासाते तौ विजानीतम्॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यास्तावेव राजप्रधानपुरुषौ धन्यवादमर्हतः यौ गुणाढ्यायामुत्तमायां सभायां स्थित्वा कस्यचित् पक्षपातं कदाचिन्न कुर्याताम्॥५॥

पदार्थः-हे (**अनभिद्रुहा**) द्रोहकर्मरहित (**राजानौ**) प्रकाशमान जनो! तुम (**ध्रुवे**) जो कि निश्चल (**उत्तमे**) श्रेष्ठ (**सहस्रस्थूणे**) जिसमें सहस्र खम्भा विद्यमान उस (**सदसि**) सभा में जो प्राणोदानवद्वर्त्तमान अध्यापकोपदेशक (**आसाते**) बैठते हैं, उनको जानो॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! वे ही राजा और प्रधान पुरुष धन्यवाद के योग्य होते हैं, जो गुणयुक्त उत्तम सभा में बैठ के किसी का पक्षपात कभी न करें॥५॥

अथ सूर्य्याचन्द्रविषयमाह॥

अब सूर्य्य और चन्द्रमा के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ता स॒म्राजा॑ घृ॒तासु॑ती आदि॒त्या दानु॑न॒स्पती॑। सचे॑ते॒ अन॑वह्वरम्॥६॥

ता। स॒म्ऽराजा॑। घृ॒तासु॑ती॒ इति॑ घृ॒तऽआ॑सुती। आ॒दि॒त्या। दानु॑नः। पती॒ इति॑। सचे॑ते॒ इति॑। अन॑वऽह्वरम्॥६॥

पदार्थः-(**ता**) तौ (**सम्राजा**) सम्यग् राजमानौ चक्रवर्त्तिनृपवद्वर्त्तमानौ (**घृतासुती**) यौ घृतमुदकमासुनुतः (**आदित्या**) अखण्डितौ (**दानुनः**) दानस्य (**पती**) पालकौ (**सचेते**) सम्बध्नतीः (**अनवह्वरम्**) सरलम्॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यौ घृतासुती सम्राजा आदित्या दानुनस्पती सर्वं सचेते ता अनवह्वरं साध्नुत॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यौ सूर्य्याचन्द्रमसौ सर्वस्य प्रकाशकौ जलप्रदौ सर्वानुषङ्गिणौ सरलं मार्गं गच्छतस्तथा शुद्धे मार्गे गच्छत॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**घृतासुती**) शुद्ध तत्त्व जल को निकालनेवाले (**सम्राजा**) अच्छे प्रकार प्रकाशमान चक्रवर्त्ति राजा के समान वर्त्तमान (**आदित्या**) अखण्डित (**दानुनः**) दान के (**पती**) पालन करनेवाले सूर्य-चन्द्रमा सबका (**सचेते**) सम्बन्ध करते हैं (**ता**) उनको (**अनवह्वरम्**) सरलता जैसे हो, वैसे सिद्ध करो॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो सूर्य्य-चन्द्रमा सबका प्रकाश करने वा जल के देनेवाले सबके अनुषङ्गी सीधे मार्ग से जाते हैं, वैसे शुद्ध मार्ग में जाओ॥६॥

अथाग्निवायुगुणानाह॥

अब अग्नि और वायु के गुणों को कहते हैं॥

गोमदू षु नासत्याश्वावद्यातमश्विना। वर्ती रुद्रा नृपाय्यम्॥७॥

गोऽमत्। ऊम् इति। सु। नासत्या। अश्वऽवत्। यातम्। अश्विना। वर्तिः। रुद्रा। नृऽपाय्यम्॥७॥

पदार्थः-(गोमत्) बह्व्यो गावो विद्यते यस्मिँस्तत् (उ) वितर्के **(सु)** शोभने **(नासत्या)** असत्यरहितौ **(अश्वावत्)** अश्वेन तुल्यौ **(यातम्)** प्राप्नुतः **(अश्विना)** व्यापनशीलौ **(वर्त्तिः)** मार्गम् **(रुद्रा)** दुष्टानां रोदयितारौ **(नृपाय्यम्)** नृणां पाय्यं मानं नृपाय्यम्॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा नासत्या रुद्राश्विना अश्वावद्गोमदू नृपाय्यं वर्त्तिः सुयातं प्राप्नुतस्तथा यूयमेतौ प्राप्नुत॥७॥

भावार्थः-मनुष्या यदि वाय्वग्नियानेन यत्र तत्र गच्छेयुस्तर्हि परिमितं सुखमाप्नुयुः॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(नासत्या)** असत्यरहित **(रुद्रा)** दुष्टों के रुलानेवाले **(अश्विना)** व्यापनशील अध्यापकोपदेशक **(अश्वावत्)** घोड़े के तुल्य (उ) वा **(गोमत्)** बहुत गौयें जिसमें विद्यमान उस **(नृपाय्यम्)** मनुष्यों के माननेवाले **(वर्त्तिः)** मार्ग को **(सुयातम्)** अच्छे प्रकार प्राप्त होते हैं, वैसे तुम इनको प्राप्त होओ॥७॥

भावार्थः-मनुष्य यदि वायु और अग्नि के यान से जहाँ-तहाँ जावें तो परिमित सुख पावें॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

न यत्परो नान्तर आदधर्षद् वृषण्वसू। दुःशंसो मर्त्यो रिपुः॥८॥

न। यत्। परः। न। अन्तरः। आऽदधर्षत्। वृषण्वसू इति वृषण्ऽवसू। दुःऽशंसः। मर्त्यः। रिपुः॥८॥

पदार्थः-(न) (यत्) यौ **(परः) (न) (अन्तरः)** मध्यस्थः **(आदधर्षत्)** प्रगल्भो भवेत् **(वृषण्वसू)** वृष्णं वर्षयित्रीणां वासयितारौ **(दुःशंसः)** दुष्टः शंसस्तुतिर्यस्य सः **(मर्त्यः)** मरणधर्मा मनुष्यः **(रिपुः)** शत्रुः॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! परो दुःशंसो मर्त्यो रिपुर्यद्यौ वृषण्वसू नादधर्षदन्तरो दुःशंसो मर्त्यो रिपुर्नादधर्षत्तौ कार्येषु नियुङ्ग्ध्वम्॥८॥

भावार्थः-अत्र जगति वायुं वह्निं च कोपि धर्षयितुं न शक्नोति नैवाऽन्योः कश्चिच्छत्रुर्विनाशकोऽस्ति तथाऽजेयैर्मनुष्यैर्भवितव्यम्॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(परः)** उत्कृष्ट **(दुःशंसः)** जिसकी दुष्ट स्तुति विद्यमान वह **(मर्त्यः)** मरणधर्मा मनुष्य **(रिपुः)** शत्रु **(यत्)** जो **(वृषण्वसू)** वर्षानेवालों को वसाते हैं उनको **(न)** न **(आदधर्षत्)** लचावे वा **(अन्तरः)** सामान्य दुष्ट स्तुतिवाला मरणधर्मा जिनको **(न)** न लचावे, उनको कार्यों में नियुक्त करो॥८॥

भावार्थः-इस जगत् में वायु और अग्नि को कोई भी लचाय नहीं सकता और न इनका कोई शत्रु के समान नाश करनेवाला है, उस प्रकार से नहीं पराजित होने योग्य मनुष्यों को होना चाहिये॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ता नु आ वोळ्हमश्विना रयिं पिशङ्गसंदृशम्। धिष्ण्या वरिवोविदम्॥९॥

ता। नः। आ। वोळ्हम्। अश्विना। रयिम्। पिशङ्गऽसंदृशम्। धिष्ण्या। वरिवःऽविदम्॥९॥

पदार्थः-**(ता)** तौ **(नः)** अस्मभ्यम् **(आ)** **(वोढम्)** वहतः **(अश्विना)** **(रयिम्)** **(पिशङ्गसंदृशम्)** पिशङ्गं शोभनं वर्णं सम्यग् पश्यन्ति येन तम् **(धिष्ण्या)** यौ धेष्येते शब्द्येते स्तूयेते तौ **(वरिवोविदम्)** वरिवः सेवनं विन्दन्ति येन तम्॥९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यौ धिष्ण्याऽश्विना नो वरिवोविदं पिशङ्गसंदृशं रयिमा वोढं समन्तात् प्रापयतस्ता उपदिशत॥९॥

भावार्थः-मनुष्यैर्याभ्यामग्निवायुभ्यां पुष्कलां श्रियं प्राप्नुवन्ति तौ यथावद्वेद्यौ॥९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(धिष्ण्या)** शब्दायमान हों वा स्तुति किये जावें वे **(अश्विना)** सर्वत्र होनेवाले अग्नि और वायु **(नः)** हम लोगों के लिये **(वरिवोविदम्)** जिससे सेवा को प्राप्त होते वा **(पिशङ्गसंदृशम्)** सुन्दर वर्ण को देखते हैं उस **(रयिम्)** धन को **(आ, वोढम्)** अच्छे प्रकार प्राप्त करते हैं, **(ता)** उनका उपदेश करो॥९॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि जिन अग्नि और वायु से पुष्कल धन को प्राप्त होते हैं, उनको यथावत् जानें॥९॥

अथ सूर्य्यविषयमाह॥

अब सूर्य विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इन्द्रो अङ्ग महद्भयमभी षदप चुच्यवत्। स हि स्थिरो विचर्षणिः॥१०॥८॥

इन्द्रः। अङ्ग। महत्। भयम्। अभि। सत्। अप। चुच्यवत्। सः। हि। स्थिरः। विऽचर्षणिः॥१०॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) (**अङ्ग**) सम्बोधने (**महत्**) (**भयम्**) (**अभि**)। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**सत्**) (**अप**) (**चुच्यवत्**) च्यावयति (**सः**) (**हि**) किल (**स्थिरः**) स्वपरिधिस्थः (**विचर्षणिः**) दर्शकः। **विचर्षणिरिति पश्यतिकर्मा।** (निघं०३.११)॥१०॥

अन्वयः-हे अङ्ग! यः स्थिरो विचर्षणिरिन्द्रो महत्सद्भयमपाभिचुच्यवत् स हि वेदितव्यः॥१०॥

भावार्थः-यदि ब्रह्माण्डे सूर्यो न स्यात्तर्हि कस्यापि भयं न निवर्त्तेत। यदि सूर्यलोकः स्वपरिधौ स्थिरो दर्शको न भवेत्तर्हि तुल्याकर्षणं दर्शनं च न भवेत्॥१०॥

पदार्थः-हे (**अङ्ग**) विद्वान् पुरुष! जो (**स्थिरः**) स्थिर अपनी परिधि में ठहरा हुआ (**विचर्षणिः**) देखनेवाला (**इन्द्रः**) ऐश्वर्यवान् सूर्य (**महत्**) बहुत (**सत्**) होता हुआ (**भयम्**) जो भय उसको (**अप, अभि, चुच्यवत्**) अलग करता है (**सः, हि**) वही सूर्यलोक जानने योग्य है॥१०॥

भावार्थः-यदि ब्रह्माण्ड में सूर्य न हो तो किसी का भय न निवृत्त हो। यदि सूर्यलोक अपनी परिधि में स्थिर और दिखानेवाला न हो तो तुल्य आकर्षण और देखना न बने॥१०॥

पुनस्तद्विषयं परमेश्वरोपासनाविषयञ्चाह॥

फिर उसी विषय को तथा परमेश्वरोपासना विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इन्द्र॑श्च मृळया॑ति नो॒ न नः॑ प॒श्चाद॒घं न॑शत्। भ॒द्रं भ॑वाति नः पु॒रः॥११॥

इन्द्रः॑। च॒। मृ॒ळया॑ति। नः॒। न। नः॒। प॒श्चात्। अ॒घम्। न॒श॒त्। भ॒द्रम्। भ॒वा॒ति॒। नः॒। पु॒रः॥११॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) परमेश्वरः सूर्यो वा (**च**) (**मृळयाति**) सुखयेत् (**नः**) अस्मान् (**न**) निषेधे (**नः**) अस्माकम् (**पश्चात्**) (**अघम्**) पापम् (**नशत्**) प्राप्नुयात्। **नशदिति व्याप्तिकर्मा।** (निघं०२.१८) (**भद्रम्**) कल्याणम् (**भवाति**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**पुरः**) पुरस्तात्॥११॥

अन्वयः-यदिन्द्रः परमेश्वरस्तत्कृतः सूर्यश्च नो मृळयात्यतो नः पुरः पश्चाच्चाऽघं न नशत्। किन्तु नो याथातथ्यं भद्रं भवाति॥११॥

भावार्थः-यो जगदीश्वरो घटपटादीन् सूर्यइव सर्वात्मनः प्रकाशयति ये तद्भक्तास्ते तस्मादन्यं तत्स्थाने नोपासते सर्वव्यापकं ज्ञात्वाऽस्मानीश्वरः सततं पश्यतीति मत्वाऽधर्माचरणं न कुर्वन्ति सततं धर्ममेवाऽनुतिष्ठन्ति तेषामागामि पापाचरणनिवृत्या योगजसिद्धिविज्ञानोद्भवेन मुक्तिः स्यादेवेति नाऽन्येषामिति निश्चयः॥११॥

पदार्थः-जो (**इन्द्रः**) परमेश्वर (**च**) और उसका बनाया सूर्य (**नः**) हमको (**मृळयाति**) सुखी करे, इससे (**नः**) हमारे (**पुरः**) अगले (**पश्चात्**) और पिछले (**अघम्**) पाप (**न**) न (**नशत्**) प्राप्त हो, किन्तु (**नः**) हमारे लिये यथार्थ (**भद्रम्**) कल्याण (**भवाति**) होवे॥११॥

भावार्थ:-जो जगदीश्वर घटपटादिकों को जैसे सूर्य वैसे सबके आत्माओं को प्रकाशित करता है, जो उसके भक्त हैं, वे उससे भिन्न की उसके स्थान में नहीं उपासना करते हैं। वे सर्वव्यापक परमेश्वर को जान और वह हमें निरन्तर देखता है, ऐसा मानकर अधर्माचरण नहीं करते हैं, किन्तु निरन्तर धर्म ही का अनुष्ठान करते हैं, उनके आगामी पापाचरण की निवृत्ति और योगज सिद्धि विज्ञान के होने से मुक्ति होवे ही गी, औरों को नहीं यह निश्चय है॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इन्द्र आशा॑भ्यस्परि॒ सर्वा॑भ्यो॒ अभ॑यं करत्। जेता॒ शत्रू॒न् विच॑र्षणिः॥१२॥

इन्द्रः॑। आशा॑भ्यः। परि॑। सर्वा॑भ्यः। अभ॑यम्। क॒र॒त्। जेता॑। शत्रू॒न्। विऽच॑र्षणिः॥१२॥

पदार्थ:-**(इन्द्रः)** परमेश्वरः **(आशाभ्यः)** दिग्भ्यः। **आशा इति दिङ्नामसु पठितम्।** (निघ०१.६) **(परि)** सर्वतः **(सर्वाभ्यः)** **(अभयम्)** **(करत्)** कुर्यात् **(जेता)** जयशीलः **(शत्रून्)** **(विचर्षणिः)** सर्वस्य द्रष्टा॥१२॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यो विचर्षणिरिन्द्र शत्रून् जेतेव सर्वाभ्य आशाभ्यो नोऽभयं परि करत् स एवास्माभिः सततमुपासनीयः॥१२॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा पक्षपातरहिता वीरपुरुषा दुष्टाचारिणोऽन्येभ्यो भयप्रदानं निवार्य्य प्रजाः सुखयुक्ताः कुर्वन्ति तथा सर्वज्ञ ईश्वर उपासितस्सन् सर्वतो दुष्टाचारान्निवार्य्य श्रेष्ठाचारे प्रवर्त्तयित्वाऽभयं मुक्तिपदं प्रापय्य सर्वान् मुक्तजीवानानन्दयत्यतोऽयमेव सर्वैर्मनुष्यैः सदोपासनीयः॥१२॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो **(विचर्षणिः)** सबका देखनेवाला **(इन्द्रः)** परमेश्वर **(शत्रून्)** शत्रुओं को **(जेता)** जीतनेवाले के समान **(सर्वाभ्यः)** सब **(आशाभ्यः)** दिशाओं से हमको **(अभयम्)** अभय **(परि, करत्)** सब ओर से करता है, वही हम लोगों को निरन्तर उपासना करने योग्य है॥१२॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे पक्षपातरहित वीर पुरुष दुष्टाचारी और औरों के लिये भय देनेवालों को निवार के प्रजाओं को सुखयुक्त करते हैं, वैसे उपासना किया हुआ सर्वज्ञ ईश्वर सब ओर से दुष्टाचार से निवृत्त कर श्रेष्ठाचार में प्रवृत्त कर अभय मुक्तिपद को प्राप्त करा कर सब मुक्त जीवों को आनन्दित करता है, इस कारण यही सबको उपासना करने योग्य है॥१२॥

पुनरध्यापकाऽध्येतृविषयमाह॥

फिर पढ़ाने और पढ़नेवालों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

विश्वे देवास आ गत शृणुता म इमं हवम्। एदं बर्हिर्नि षीदत॥१३॥

विश्वे। देवासः। आ। गत। शृणुत। मे। इमम्। हवम्। आ। इदम्। बर्हिः। नि। सीदत॥१३॥

पदार्थः-(विश्वे) सर्वे **(देवासः)** विद्वांसः **(आ) (गत)** गच्छत **(शृणुत)।** अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(मे)** मम **(इमम्) (हवम्)** आदातव्यं शब्दार्थसम्बन्धाऽध्ययनम् **(आ) (इदम्) (बर्हिः)** उत्तमासनम् **(नि)** नितराम् **(सीदत)** उपाध्वम्॥१३॥

अन्वयः-हे विश्वे देवासो! यूयमा गतेदं बर्हिर्निषीदत म इमं हवमा शृणुत॥१३॥

भावार्थः-विद्यार्थिनोऽध्यापकान् प्रत्येवं ब्रुयुर्भवन्त इहागच्छन्तु सर्वोत्तमासने स्थित्वाऽस्माभिरधीतानां शास्त्राणां मध्ये परीक्षां कुरुत॥१३॥

पदार्थः-हे **(विश्वे)** सब **(देवासः)** विद्वानो! तुम **(आ, गत)** आओ और **(इदम्)** इस **(बर्हिः)** उत्तमासन पर **(निषीदत)** बैठो **(मे)** और मेरे **(इमम्)** इस **(हवम्)** ग्रहण करने योग्य शब्दार्थ सम्बन्ध को **(आ, शृणुत)** अच्छे प्रकार सुनो॥१३॥

भावार्थः-विद्यार्थी जन पढ़ानेवालों से यह कहें कि आप यहाँ आइये, सर्वोत्तम आसन पर बैठ के हमने जो शास्त्र पढ़े, उनमें परीक्षा कीजिये॥१३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तीव्रो वो मधुमाँ अयं शुनहोत्रेषु मत्सरः। एतं पिबत काम्यम्॥१४॥

तीव्रः। वः। मधुऽमान्। अयम्। शुनऽहोत्रेषु। मत्सरः। एतम्। पिबत। काम्यम्॥१४॥

पदार्थः-(तीव्रः) तीक्ष्णः **(वः)** युष्माकम् **(मधुमान्)** विज्ञानसम्बन्धी **(अयम्) (शुनहोत्रेषु)** शुनानां विज्ञानवृद्धानां होत्रेषु दानेषु **(मत्सरः)** आनन्दः **(एतम्) (पिबत) (काम्यम्)** कमनीयं रसम्॥१४॥

अन्वयः-हे विश्वेदेवा! यो वोऽयं शुनहोत्रेषु तीव्रो मधुमान् मत्सरोऽस्ति एतं काम्यं यूयं पिबत॥१४॥

भावार्थः-ये विज्ञानवृद्धान् सेवन्ते ते तीव्रबुद्धयस्सन्तो विद्वांसो जायन्ते॥१४॥

पदार्थः-हे सब विद्वानो! जो **(वः)** तुम्हारा **(अयम्)** यह **(शुनहोत्रेषु)** विद्वान् वृद्धों के दानों में **(तीव्रः)** तीक्ष्ण **(मधुमान्)** विज्ञानसम्बन्धी **(मत्सरः)** आनन्द है **(एतम्)** इस **(काम्यम्)** मनोहर रस को तुम **(पिबत)** पिओ॥१४॥

भावार्थः-जो विज्ञानवृद्धों की सेवा करते हैं, वे तीव्रबुद्धि हुए विद्वान् होते हैं॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इन्द्र॑ज्येष्ठा मरु॑द्गणा॒ देवा॑सः॒ पूष॑रातयः। विश्वे॒ मम॑ श्रुता॒ हव॑म्॥१५॥९॥

इन्द्र॑ऽज्येष्ठाः। मरु॑त्ऽगणाः। देवा॑सः। पूष॑ऽरातय। विश्वे॑। मम॑। श्रुत॑। हव॑म्॥१५॥९॥

पदार्थः-**(इन्द्रज्येष्ठाः)** इन्द्रः परमविद्यैश्वर्यं प्रधानमेषां ते **(मरुद्गणाः)** मरुतां मनुष्याणां समूहाः **(देवासः)** विद्याभिः प्रकाशमानाः **(पूषरातयः)** पुष्टे रातिर्दानं येषान्ते **(विश्वे)** सर्वे **(मम)** **(श्रुत)** अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(हवम्)**॥१५॥

अन्वयः-हे इन्द्रज्येष्ठा विश्वे देवासः! पूषरातयो मरुद्गणा यूयं मम हवं श्रुत॥१५॥

भावार्थः-ये विद्यादिगुणप्रधानं पुरुषं सत्कुर्वन्ति विद्यां ददति गृह्णन्ति च ते परीक्षका भूत्वाऽन्यान् विदुषः कुर्वन्तु॥१५॥

पदार्थः-हे **(इन्द्रज्येष्ठाः)** परम विद्यारूप ऐश्वर्य्य जिनके प्रधान हैं वे **(विश्वे)** सब **(देवासः)** विद्वानो! **(पूषरातयः)** जिनका पुष्टि के निमित्त दान है वे **(मरुद्गणाः)** बहुत मनुष्य तुम लोग **(मम)** मेरे **(हवम्)** ग्रहण करने योग्य विद्यार्थ सम्बन्ध को **(श्रुत)** सुनो॥१५॥

भावार्थः-जो विद्यादि गुणों में प्रधान पुरुष का सत्कार करते, विद्या देते और दूसरों से लेते हैं, वे परीक्षक होके औरों को विद्वान् करते हैं॥१५॥

अथ विदुषीविषयमाह॥

अब विदुषी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अम्बि॑तमे॒ नदी॑तमे॒ देवि॑तमे॒ सर॑स्वति।

अ॒प्र॒श॒स्ता इ॑व स्मसि॒ प्रश॑स्तिमम्ब नस्कृधि॥१६॥

अम्बि॑ऽतमे। नदी॑ऽतमे। देवि॑ऽतमे। सर॑स्वति। अ॒प्र॒श॒स्ताःऽइ॑व। स्म॒सि॒। प्रऽश॑स्तिम्। अ॒म्ब॒। नः॒। कृ॒धि॒॥१६॥

पदार्थः-**(अम्बितमे)** याऽम्बतेऽध्यापयति साऽतिशयिता तत्सम्बुद्धौ **(नदीतमे)** अतिशयेनाव्यक्तविद्योपदेशिके **(देवितमे)** अतिशयेन विदुषि **(सरस्वति)** बहुविज्ञानवति **(अप्रशस्ताइव)** यथा न प्रशस्ता अप्रशस्तास्तथा वर्त्तमाना वयम् **(स्मसि)** **(प्रशस्तिम्)** श्रैष्ठ्यम् **(अम्ब)** मातरध्यापिके **(नः)** अस्मान् **(कृधि)** कुरु॥१६॥

अन्वयः-हे अम्बितमे देवितमे नदीतमे सरस्वत्यम्ब! त्वं येऽप्रशस्ताइव वयं स्मसि तान्नः प्रशस्तिं प्राप्तान् कृधि॥१६॥

भावार्थः-यावत्यः कुमार्य्यस्सन्ति ता विदुषीणां सकाशादधीयीरन् ता ब्रह्मचारिण्यो विदुषीरेवं प्रार्थयेयुर्भवत्योऽस्मान् विद्यासुशिक्षायुक्तान् कुरुतेति॥१६॥

पदार्थः-हे **(अम्बितमे)** अतीव पढ़ानेवाली **(देवितमे)** अतीव पण्डिता **(नदीतमे)** अतीव अप्रकट विद्या का उपदेश करने **(सरस्वति)** बहुविज्ञान रखनेवाली **(अम्ब)** माता अध्यापिका! जो **(अप्रशस्ताइव)** अप्रशस्तों के समान हम लोग **(स्मसि)** हैं, उन **(नः)** हम लोगों को **(प्रशस्तिम्)** प्रशंसा को प्राप्त **(कृधि)** करो॥१६॥

भावार्थः-जितनी कुमारी हैं वे विदुषियों से विद्या अध्ययन करें और वे कुमारी ब्रह्मचारिणी विदुषियों की ऐसी प्रार्थना करें कि आप हम सबों को विद्या और सुशिक्षा से युक्त करें॥१६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वे विश्वा सरस्वति श्रितायूंषि देव्याम्।

शुनहोत्रेषु मत्स्व प्रजां देवि दिदिड्ढि नः॥१७॥

त्वे इति। विश्वा। सरस्वति। श्रिता। आयूंषि। देव्याम्। शुनऽहोत्रेषु। मत्स्व। प्रऽजाम्। देवि। दिदिड्ढि। नः॥१७॥

पदार्थः-**(त्वे)** त्वयि **(विश्वा)** सर्वाणि **(सरस्वति)** परमविदुषि **(श्रिता)** श्रितानि **(आयूंषि)** **(देव्याम्)** विदुष्याम् **(शुनहोत्रेषु)** प्राप्तयोगजविद्याद्येषु **(मत्स्व)** आनन्द **(प्रजाम्)** सन्तानान् **(देवि)** **(दिदिड्ढि)** उपदिश। अत्र शपः श्लुः। **(नः)** अस्माकम्॥१७॥

अन्वयः-हे देवि सरस्वति! यथा विश्वाऽऽयूंषि त्वे देव्यां श्रिता सा त्वं शुनहोत्रेषु मत्स्व नः प्रजां दिदिड्ढि॥१७॥

भावार्थः-सर्वे विद्वांसः स्वस्य स्वस्य विदुषीं स्त्रियं प्रत्येवमुपदिशेयुस्त्वया सर्वेषां कन्या अध्याप्यास्सर्वाः स्त्रियश्च सुशिक्षणीयाः॥१७॥

पदार्थः-हे **(देवि)** प्रकाशमान **(सरस्वति)** परमविदुषी स्त्री! जैसे **(विश्वा)** समस्त **(आयूंषि)** आयुर्दा **(त्वे)** तुझे **(देव्याम्)** विदुषी में **(श्रिता)** आश्रित हैं, सो तू **(शुनहोत्रेषु)** पाई है

योगज विद्या जिन्होंने उनके बीच **(मत्स्व)** आनन्द कर, **(नः)** हमारे **(प्रजाम्)** सन्तानों को **(दिदिड्ढि)** उपदेश दे॥१७॥

भावार्थः-सब विद्वान् जन अपनी-अपनी विदुषी स्त्रियों के प्रति ऐसा उपदेश देवें कि तुमको सबकी कन्यायें पढ़ानी चाहिये और सबकी स्त्री अच्छे प्रकार सिखानी चाहिये॥१७॥

अथ स्त्रीपुरुषविषयमाह॥

अब स्त्रीपुरुष के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इमा ब्रह्म सरस्वति जुषस्व वाजिनीवति।

या ते मन्म गृत्समदा ऋतावरि प्रिया देवेषु जुह्वति॥१८॥

इमा। ब्रह्म। सरस्वति। जुषस्व। वाजिनीऽवती। या। ते। मन्म। गृत्सऽमदाः। ऋतऽवरि। प्रिया। देवेषु। जुह्वति॥१८॥

पदार्थः-**(इमा)** इमानि **(ब्रह्म)** **(सरस्वति)** बहुविज्ञानयुक्ते **(जुषस्व)** सेवस्व **(वाजिनीवति)** बह्वैश्वर्य्यान्नादियुक्ते **(या)** यानि **(ते)** तव **(मन्म)** विज्ञानानि **(गृत्समदाः)** गृहीताऽऽनन्दाः **(ऋतावरि)** सत्याचरणयुक्ते **(प्रिया)** कमनीयानि विज्ञानानि **(देवेषु)** विद्याकामेषु **(जुह्वति)** स्थापयन्ति॥१८॥

अन्वयः-हे ऋतावरि वाजिनीवति सरस्वति! त्वं यथा गृत्समदा येमा ते प्रिया मन्म देवेषु जुह्वति तानि ब्रह्म त्वं जुषस्व॥१८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा विद्वांसः पुरुषाः कुमारान् ब्रह्मचारिणः सुशिक्षयाऽध्यापयेयुस्तथा विदुष्यस्स्त्रियश्च कुमारीम्ब्रह्मचारिणीं सम्यक् शिक्षयित्वाऽध्यापयेयुः॥१८॥

पदार्थः-हे **(ऋतावरि)** सत्याचरणयुक्त **(वाजिनीवति)** वा बहुत ऐश्वर्य और अन्नादि पदार्थयुक्त **(सरस्वति)** बहुत विज्ञानवाली! तू जैसे **(गृत्समदाः)** आनन्द जिन्होंने ग्रहण किया वे **(या)** जिन **(इमा)** इन **(ते)** तेरे **(प्रिया)** मनोहर विज्ञान वा **(मन्म)** साधारण विज्ञानों को **(देवेषु)** विद्या की कामना करनेवालों में **(जुह्वति)** स्थापन करते हैं, उन **(ब्रह्म)** विज्ञानों को तू **(जुषस्व)** सेवन कर॥१८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे विद्वान् पुरुष, कुमार ब्रह्मचारियों को अच्छी शिक्षा से पढ़ावें, वैसे विदुषी स्त्रियां कुमारी ब्रह्मचारिणी स्त्रियों को अच्छी शिक्षा से पढ़ावें॥१८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

प्रेतां यज्ञस्य शंभुवा युवामिदा वृणीमहे। अग्निं च हव्यवाहनम्॥१९॥

प्र। इताम्। यज्ञस्य। शंऽभुवा। युवाम्। इत्। आ। वृणीमहे। अग्निम्। च। हव्यऽवाहनम्॥१९॥

पदार्थः-**(प्र) (इताम्)** प्राप्नुतः **(यज्ञस्य)** अध्यापनाध्ययनस्य **(शंभुवा)** यौ शं सुखं सम्भावयतस्तौ **(युवाम्)** द्वौ स्त्रीपुरुषौ **(इत्)** एव **(आ) (वृणीमहे)** स्वीकुर्महे **(अग्निम्)** पावकम् **(च) (हव्यवाहनम्)** यो हव्यं वहति तम्॥१९॥

अन्वयः-हे स्त्रीपुरुषौ! यौ शम्भुवा युवां यज्ञस्य विद्याः प्रेतां हव्यवाहनमग्निं च तावित्देव वयमा वृणीमहे॥१९॥

भावार्थः-सर्वैर्मनुष्यैः पुत्राध्यापकान् पुरुषान् कन्याध्यापिकाः स्त्रियश्च सततमध्यापनाय नियोजनीया यतस्स्त्रीपुरुषेषु पूर्णविद्याप्रचारः स्यात्॥१९॥

पदार्थः-हे स्त्री-पुरुषो! जो **(शम्भुवा)** सुख की सम्भावना करानेवाले **(युवाम्)** दोनों स्त्री-पुरुष **(यज्ञस्य)** यज्ञ की विद्याओं को **(प्रेताम्)** प्राप्त होते **(च)** और **(हव्यवाहनम्)** हव्य द्रव्य को पहुँचानेवाले **(अग्निम्)** अग्नि को प्राप्त होते **(इत्)** उन्हीं को हम लोग **(आ, वृणीमहे)** अच्छे प्रकार स्वीकार करते हैं॥१९॥

भावार्थः-सब मनुष्यों को पुत्रों के अध्यापकों और पुत्री को अध्यापिकाओं को निरन्तर नियुक्त करना चाहिये, जिससे स्त्री-पुरुषों में पूर्ण विद्याओं का प्रचार हो॥१९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

द्यावा नः पृथिवी इमं सिध्रमद्य दिविस्पृशम्। यज्ञं देवेषु यच्छताम्॥२०॥

द्यावा। नः। पृथिवी इति। इमम्। सिध्रम्। अद्य। दिविऽस्पृशम्। यज्ञम्। देवेषु। यच्छताम्॥२०॥

पदार्थः-**(द्यावा)** सूर्य्यः **(नः)** अस्माकम् **(पृथिवी)** भूमिः **(इमम्) (सिध्रम्)** शास्त्रबोधप्रकाशनिमित्तम् **(अद्य)** इदानीम् **(दिविस्पृशम्)** दिवि विज्ञानप्रकाशे स्पृशन्ति येन तम् **(यज्ञम्)** अध्ययनाध्यापनसङ्गतिमयम् **(देवेषु)** विद्वत्सु **(यच्छताम्)** संस्थापयतम्॥२०॥

अन्वयः-हे स्त्रीपुरुषौ! भवन्तौ द्यावापृथिवी इवाद्य न इमं सिध्रं दिविस्पृशं यज्ञं देवेषु यच्छताम्॥२०॥

भावार्थः-अध्यापकोपदेशकाभ्यां यथा सूर्य्यभूमी सर्वान् सर्वथोन्नयतस्तथा स्त्रीपुरुषेषु विद्याः सम्यक् प्रसारणीयाः॥२०॥

पदार्थ:-हे स्त्री-पुरुषो! आप **(द्यावापृथिवी)** सूर्य्य-भूमि के समान **(अद्य)** आज **(न:)** हमारे **(इमम्)** इस **(सिध्रम्)** शास्त्रबोध के प्रकाश के निमित्त **(दिविस्पृशम्)** विज्ञान प्रकाश में जिससे स्पर्श करते हैं, उस **(यज्ञम्)** पढ़ने-पढ़ाने की सङ्गतिस्वरूप यज्ञ को **(देवेषु)** विद्वानों में **(यच्छताम्)** स्थापन करो॥२०॥

भावार्थ:-अध्यापक और उपदेशकों से जैसे सूर्य्य और भूमि सबको सर्वथा उन्नति देते हैं, वैसे स्त्री-पुरुषों में विद्या अच्छे प्रकार विस्तारनी चाहिये॥२०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ वामुपस्थमद्रुहा देवाः सीदन्तु यज्ञियाः। इहाद्य सोमपीतये॥२१॥१०॥

आ। वाम्। उपऽस्थम्। अद्रुहा। देवाः। सीदन्तु। यज्ञियाः। इह। अद्य। सोमऽपीतये॥२१॥

पदार्थ:-(आ) (वाम्) युवयो: **(उपस्थम्)** उपतिष्ठन्ति यस्मिँस्तम् **(अद्रुहा)** द्रोहादिदोषरहिता:। अत्र **सुपामित्याकारादेश:।** **(देवा:)** विद्वांस: **(सीदन्तु)** **(यज्ञिया:)** विद्यावृद्धिमययज्ञप्रचारार्हा: **(इह)** अस्मिन् संसारे **(अद्य)** इदानीम् **(सोमपीतये)** यया सोमं विद्यैश्वर्य्याणि जायन्ते तस्यै॥२१॥

अन्वय:-हे अध्यापकोपदेशकौ! इहाद्य सोमपीतये अद्रुहा यज्ञिया देवा वामुपस्थमा सीदन्तु॥२१॥

भावार्थ:-अध्यापकोपदेशकयो: समीपेऽन्या निर्दोषा विदुष्य: स्त्रिय: सन्तु यत उभयेषु स्त्रीपुरुषेषु विद्यासुशिक्षे तुल्ये स्यातामिति॥२१॥

अत्राध्यापकाध्येतृसूर्य्यचन्द्राग्निवायुपरमेश्वरोपासनास्त्रीपुरुषक्रमवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकाधिकचत्वारिंशत्तमं सूक्तं दशमो वर्गश्च समाप्त:॥

पदार्थ:-हे अध्यापक और उपदेशको! **(इह)** इस संसार में **(अद्य)** इस समय वा आज **(सोमपीतये)** जिससे विद्या और ऐश्वर्य उत्पन्न होते हैं, उस क्रिया के लिये **(अद्रुहा)** द्रोहादि

दोषरहित **(यज्ञिया:)** विद्या वृद्धिमय यज्ञ प्रचार के योग्य **(देवा:)** विद्वान् जन **(वाम्)** तुम दोनों के **(उपस्थम्)** समीप रहनेवाले के **(आ, सीदन्तु)** समीप बैठें॥२१॥

भावार्थ:-अध्यापक और उपदेशकों के समीप और **[**=अन्य**]** निर्दोष विदुषी स्त्री हों, जिससे दोनों स्त्री-पुरुषों में विद्या और उत्तम शिक्षा तुल्य हो॥२१॥

इस सूक्त में अध्यापक और अध्ययनकर्त्ता, सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि, वायु, परमेश्वरोपासना और स्त्री-पुरुष के क्रम वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्तार्थ के साथ सङ्गति समझनी चाहिये॥

यह एकतालीसवां सूक्त और दशवां वर्ग समाप्त हुआ॥

कनिक्रददिति त्र्यृचस्य द्विचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। कपिञ्जल इवेन्द्रो देवता। १-३ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथोपदेशकगुणानाह॥

अब तीन ऋचावाले बयालीसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में उपदेशक के गुणों को कहते हैं॥

कनि॑क्रदज्ज॒नुषं॑ प्रब्रु॒वा॒ण इय॑र्ति॒ वाच॑मरि॒तेव॒ नाव॑म्।

सु॒म॒ङ्ग॒लश्च॑ शकुने॒ भवा॑सि॒ मा त्वा॒ का चि॑दभि॒भा विश्व्या॑ विदत्॥ १॥

कनि॑क्रदत्। ज॒नुष॑म्। प्र॒ऽब्रु॒वा॒णः। इय॑र्ति। वाच॑म्। अ॒रि॒ताऽइ॑व। नाव॑म्। सु॒ऽम॒ङ्ग॒लः। च॒। श॒कु॒ने॒। भवा॑सि। मा। त्वा॒। का। चि॒त्। अ॒भि॒ऽभा। विश्व्या॑। वि॒द॒त्॥ १॥

पदार्थः-(कनिक्रदत्) भृशं शब्दायमानः **(जनुषम्)** प्रसिद्धाम् **(प्रब्रुवाणः)** प्रकृष्टतया वदन् **(इयर्त्ति)** प्राप्नोति **(वाचम्)** **(अरितेव)** यथा अरितानि **(नावम्)** **(सुमङ्गलः)** सुमङ्गलशब्दः **(च)** **(शकुने)** शकुनिवद्वर्त्तमान **(भवासि)** भवेः **(मा)** **(त्वा)** त्वाम् **(का)** **(चित्)** अपि **(अभिभा)** अभितः कान्तिः **(विश्व्या)** विश्वस्मिन् भवा **(विदत्)** प्राप्नुयात्॥ १॥

अन्वयः-हे शकुने शक्तिमन्! कनिक्रदज्जनुषं प्रब्रुवाणोऽरितेव वाचं नावं चेयर्त्ति तथा सुमङ्गलो भवासि काचिद्विश्व्या अभिभा त्वा मा विदत्॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। य उपदेशको यथाऽरित्राणि नावं प्राप्नुवन्ति तथा सर्वान् मनुष्यानुपदेशाय प्राप्नोत्युपदिशन् पक्षिवद् भ्रमति तस्मै सुमङ्गलाचाराय कश्चित्प्रभाभङ्गो न स्यादेतदर्थं राज्ञोपदेशकानां रक्षा विधेया॥ १॥

पदार्थः-हे **(शकुने)** पक्षी के तुल्य वर्त्तमान शक्तिमान् पुरुष! **(कनिक्रदत्)** निरन्तर शब्दायमान उपदेशक **(जनुषम्)** प्रसिद्ध विद्या को **(प्रब्रुवाणः)** प्रकृष्टता से कहता हुआ **(अरितेव)** पहुंचे हुए पदार्थों के समान **(वाचम्)** वाणी **(च)** और **(नावम्)** नाव को **(इयर्ति)** प्राप्त होता, वैसे **(सुमङ्गलः)** सुमङ्गल शब्दयुक्त **(भवासि)** होते हो **(का, चित्)** कोई भी **(विश्व्या)** इस संसार में हुई **(अभिभा)** सब ओर से जो कान्ति है वह **(त्वा)** तुझे **(मा)** मत **(विदत्)** प्राप्त हो अर्थात् किसी दूसरे का तेज आपके आगे प्रबल न हो॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो उपदेशक जैसे बल्ली नाव को पहुँचाती है, वैसे सब मनुष्यों को उपदेश के लिये प्राप्त होता वा उपदेश करता हुआ पक्षी के समान भ्रमता है, उस

सुमङ्गलाचरण करनेवाले के लिये कोई कान्ति भङ्ग न हो, इसलिये राजा को उपदेशकों की रक्षा करनी चाहिये॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

मा त्वा श्येन उद्वधीन्मा सुपर्णो मा त्वा विदुदिषुमान् वीरो अस्ता।
पित्र्यामनु प्रदिशं कनिक्रदत् सुमङ्गलो भद्रवादी वदेह॥२॥

मा। त्वा। श्येनः। उत्। वधीत्। मा। सुऽपर्णः। मा। त्वा। विदत्। इषुऽमान्। वीरः। अस्ता। पित्र्याम्। अनु। प्रऽदिशम्। कनिक्रदत्। सुऽमङ्गलः। भद्रऽवादी। वद। इह॥२॥

पदार्थः-(मा) (त्वा) त्वाम् **(श्येनः) (उत्) (वधीत्)** हन्यात् **(मा) (सुपर्णः)** अन्यः पक्षी **(मा) (त्वा) (विदत्)** प्राप्नुयात् **(इषुमान्)** वाणवान् **(वीरः) (अस्ता)** प्रक्षेपकः **(पित्र्याम्) (अनु) (प्रदिशम्)** दिशोपदिग्युक्तं देशम् **(कनिक्रदत्)** भृशं वदन् **(सुमङ्गलः)** सुमङ्गलोपदेशकः **(भद्रवादी)** भद्रं कल्याणं वदितुं शीलं यस्य सः **(वद) (इह)** अस्मिन् संसारे॥२॥

अन्वयः-हे विद्वन्! त्वा त्वां श्येनइव कश्चिन्मोद्वधीन्मा सुपर्ण इवोद्वधीत्। त्वा इषुमानस्ता वीरो मा विदत् इह कनिक्रदद्भद्रवादी सुमङ्गलः सन् पित्र्याम्प्रदिशमनुवद॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा श्येनादयः पक्षिणोऽन्यान् पक्षिणो घ्नन्ति तथा कश्चिदपि उपदेशकं मा पीडयेद्येनायं सुखेन कुशलतया च सर्वत्रोपदेशं कर्त्तुं शक्नुयात्॥२॥

पदार्थः-हे विद्वन्! **(त्वा)** तुझे **(श्येनः)** श्येन पक्षी के समान कोई **(मा)** मत **(उत, वधीत्)** उच्चाटे **(मा)** मत **(सुपर्णः)** अच्छे पङ्खवाले अन्य पक्षी के समान उच्चाटे **(त्वा)** तुझे **(इषुमान)** वाणों को रखने वा **(अस्ता)** फेंकनेवाला **(वीरः)** वीर **(मा)** मत **(विदत्)** प्राप्त हो **(इह)** यहाँ **(कनिक्रदत्)** निरन्तर कहता हुआ **(भद्रवादी)** कल्याणरूप उपदेश करनेवाला **(सुमङ्गलः)** सुन्दर मङ्गल का उपदेशक होता हुआ **(पित्र्याम्)** पितृसम्बन्धी **(प्रदिशम्)** दिशा और उपदिशाओं से युक्त देश को **(अनु, वद)** अनुकूलता से उपदेश कर॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे श्येन पक्षी आदि पखेरू अन्य पक्षियों को मारते हैं, वैसे कोई उपदेशक को पीड़ा मत दे, जिससे वह सुख और कुशलता से सर्वत्र उपदेश कर सके॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अव॑ क्रन्द दक्षिण॒तो गृ॒हाणां॑ सु॒म॒ङ्गलो॑ भद्रवा॒दी श॑कुन्ते।
मा न॑: स्ते॒न ई॑शत॒ माघशं॑सो बृहद्व॑देम वि॒दथे॑ सु॒वीरा॑:॥३॥११॥

अव॑। क्र॒न्द॒। द॒क्षि॒ण॒तः। गृ॒हाणा॑म्। सु॒ऽम॒ङ्गल॑:। भ॒द्र॒ऽवा॒दी। श॒कु॒न्ते॒। मा। न॒:। स्ते॒नः। ई॒श॒त॒। मा। अ॒घऽशं॑सः। बृ॒हत्। व॒दे॒म॒। वि॒दथे॑। सु॒ऽवीरा॑:॥३॥

पदार्थः-(**अव**) (**क्रन्द**) शब्दं कुरु (**दक्षिणतः**) दक्षिणपार्श्वे (**गृहाणाम्**) प्रसादानाम् (**सुमङ्गलः**) (**भद्रवादी**) (**शकुन्ते**) शक्तिमन् (**मा**) (**नः**) अस्मान् (**स्तेनः**) चोरः (**ईशत**) समर्थो भवेत्। अत्र विकरणव्यत्ययेन शः (**मा**) निषेधे (**अघशंसः**) योऽघं पापं शंसति स दस्युः (**बृहत्**) (**वदेम**) (**विदथे**) (**सुवीराः**)॥३॥

अन्वयः-हे शकुन्ते! सुमङ्गलो भद्रवादी संस्त्वं गृहाणां दक्षिणतोऽव क्रन्द यतः स्तेनो नो मेशत अघशंसो नो मेशत यतस्सुवीरा वयं विदथे बृहद्वदेम॥३॥

भावार्थः-शुद्धाचारास्सत्यवादिनो महात्मानो यत्रोपदिशन्ति तत्र चोरादयो दुष्टा नष्टा भूत्वा सर्वेषाम्महत्सुखं वर्द्धते॥३॥

अत्रोपदेशकगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्विचत्वारिंशत्तमं सूक्तमेकादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः–हे (**शकुन्ते**) शक्तिमान्! (**सुमङ्गलः**) सुन्दर मङ्गलयुक्त (**भद्रवादी**) कल्याण के कहनेवाले होते हुए आप (**गृहाणाम्**) उत्तम घरों के (**दक्षिणतः**) दाहिनी ओर से (**अव, क्रन्द**) शब्द करो अर्थात् उपदेश करो जिससे (**स्तेनः**) चोर (**नः**) हम लोगों को कष्ट देने को (**मा**) मत (**ईशत**) समर्थ हो (**अघशंसः**) पाप की प्रशंसा करता वह डाकू हम लोगों को दुष्टता देने को (**मा**) मत समर्थ हो, जिससे (**सुवीराः**) सुन्दर वीरोंवाले हम लोग (**विदथे**) संग्राम में (**बृहत्**) बहुत कुछ (**वदेम**) कहें॥३॥

भावार्थः-शुद्धाचरणों के करनेवाले सत्यवादी महात्मा जहाँ उपदेश करते हैं, वहाँ चोर आदि दुष्ट नष्ट होकर सबको बहुत सुख बढ़ता है॥३॥

इस सूक्त में उपदेशक के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह बयालीसवां सूक्त और ग्यारहवां वर्ग पूर्ण हुआ॥

प्रदक्षिणिदिति त्र्यृचस्य त्रिचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य गृत्समद ऋषिः। कपिञ्जल इवेन्द्रो देवता। १ जगती। ३ निचृज्जगती छन्दः। निषादः स्वरः। २ भुरिगतिशक्वरी छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

पुनरुपदेशकगुणानाह॥

अब तीन ऋचावाले ४३ वें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में फिर उपदेशक के गुणों को कहते हैं॥

प्रदक्षिणिदभि गृणन्ति कारवो वयो वदन्त ऋतुथा शकुन्तयः।
उभे वाचौ वदति सामगाइव गायत्रं च त्रैष्टुभं चानु राजति॥ १॥

प्रऽदक्षिणित्। अभि। गृणन्ति। कारवः। वयः। वदन्तः। ऋतुऽथा। शकुन्तयः। उभे इति। वाचौ। वदति। सामगाःऽइव। गायत्रम्। च। त्रैऽस्तुभम्। च। अनु। राजति॥ १॥

पदार्थः-(प्रदक्षिणित्) यः प्रदक्षिणामेति सः। अत्र व्यत्ययेनैकवचनम्। **(अभि)** आभिमुख्ये **(गृणन्ति)** उपदिशन्ति **(कारवः)** कारुकाः **(वयः)** पक्षिणः **(वदन्तः)** **(ऋतुथा)** ऋतुषु **(शकुन्तयः)** शक्तिमन्तः **(उभे)** ऐहिकपारमार्थिकसुखसाधिके **(वाचौ)** **(वदति)** **(सामगाइव)** यः सामानि गायति तद्वत् **(गायत्रम्)** गायत्रीम् **(च)** उष्णिहादीनि **(त्रैष्टुभम्)** त्रिष्टुभम् **(च)** जगत्यादीनि **(अनु)** **(राजति)** प्रकाशयति॥ १॥

अन्वयः-यथर्तुथा वदन्तो शकुन्तयो वयो वदन्ति तथा कारव उभे वाचावभि गृणन्ति यः प्रदक्षिणित् सामगाइव गायत्रं च त्रैष्टुभं च वदति स उभे वाचावनु राजति॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा पक्षिण ऋतुमृतुं प्रति नाना शब्दानुच्चारयन्ति तथा शिल्पिनो भयन्त्यक्त्वाऽनेकविद्याप्रकाशकान् शब्दान् वदन्तु॥ १॥

पदार्थः-जैसे **(ऋतुथा)** ऋतुओं में **(वदन्तः)** बोलते हुए **(शकुन्तयः)** शक्तिमान् **(वयः)** पक्षी कहते हैं, वैसे **(कारवः)** कारुकजन **(उभे)** ऐहिक और पारमार्थिक सुख सिद्ध करनेवाली **(वाचौ)** वाणियों का **(अभि, गृणन्ति)** सब ओर से उपदेश करते हैं, जो **(प्रदक्षिणित्)** प्रदक्षिणा को प्राप्त होनेवाला **(सामगाइव)** सामगानेवाले के समान **(गायत्रम्)** गायत्री **(च)** और उष्णिहादि **(त्रैष्टुभम्)** त्रिष्टुभ को **(च)** और जगती आदि को भी **(वदति)** कहता है, वह ऐहिक-पारमार्थिक दोनों वाणियों को **(अनु, राजति)** अनुकूलता से प्रकाशित करता है॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे पक्षी ऋतु-ऋतु में नाना प्रकार के शब्दों का उच्चारण करते हैं, वैसे शिल्पिजन डर को छोड़कर अनेक विद्या के प्रकाशक शब्दों को कहें॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उद्गातेव शकुने साम गायसि ब्रह्मपुत्रइव सवनेषु शंससि।
वृषेव वाजी शिशुमतीरपीत्या सर्वतो नः शकुने भद्रमा वद
विश्वतो नः शकुने पुण्यमा वद॥२॥

उद्गाताऽइव। शकुने। साम। गायसि। ब्रह्मऽपुत्रःऽइव। सवनेषु। शंससि। वृषाऽइव। वाजी। शिशुऽमतीः। अपिऽइत्य। सर्वतः। नः। शकुने। भद्रम्। आ। वद। विश्वतः। नः। शकुने। पुण्यम्। आ। वद॥२॥

पदार्थः-(**उद्गातेव**) यथोद्गाता तथा (**शकुने**) पक्षिवच्छक्तिमन् (**साम**) (**गायसि**) (**ब्रह्मपुत्रइव**) ब्रह्मणश्चतुर्वेदवेत्तुः पुत्रस्तथा (**सवनेषु**) यज्ञसम्बन्धे प्रातः क्रियादिषु (**शंससि**) स्तौषि (**वृषेव**) महाबलिष्ठ-वृषभवत् (**वाजी**) बलवान् (**शिशुमतीः**) प्रशस्ताः शिशवो विद्यन्ते यासां ताः (**अपीत्य**) निश्चयेन प्राप्य। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**सर्वतः**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**शकुने**) वक्तृत्वशक्तियुक्त (**भद्रम्**) (**आ**) (**वद**) (**विश्वतः**) सर्वतः (**नः**) अस्मभ्यम् (**शकुने**) (**पुण्यम्**) (**आ**) (**वद**)॥२॥

अन्वयः-हे शकुने! यस्त्वमुद्गातेव साम गायसि ब्रह्मपुत्रइव सवनेषु शंससि स त्वं वृषेव वाजी शिशुमतीरपीत्य नः सर्वतो भद्रमावद। हे शकुने! त्वं सर्वतो विद्यामावद। हे शकुने! त्वं नो विश्वतः पुण्यमावद॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा वेदविदो नियमेन पाठं वेदोक्ताचारं च कुर्वन्ति तथोपदेशकाः स्त्रीपुरुषाः सर्वेषामुन्नतये सर्वदा सत्योपदेशान् कुर्वन्तु येन सर्वेषां सुखानि सर्वतो वर्द्धेरन्॥२॥

पदार्थः-हे (**शकुने**) पखेरू के समान सामर्थ्यवाले! जो तुम (**उद्गातेव**) ऊर्ध्व स्वर से वेद गाते हुए के समान (**साम**) सामवेद का (**गायसि**) गान करते हो (**ब्रह्मपुत्रइव**) चारों वेदों के ज्ञाता का जैसे कोई पुत्र हो वैसे (**सवनेषु**) यज्ञ सम्बन्ध में प्रातःकाल की क्रिया आदि में (**शंससि**) स्तुति करते सो तुम (**वृषेव**) महाबली बैल के समान (**वाजी**) बलवान् (**शिशुमतीः**) प्रशंसित बालकोंवाली स्त्रियों को (**अपीत्य**) निश्चय से प्राप्त होकर (**नः**) हम लोगों के लिये (**सर्वतः**) सब ओर से (**भद्रम्**) कल्याण का (**आ, वद**) उपदेश कर। हे (**शकुने**) कहने की शक्ति से युक्त पुरुष! तू सब ओर से विद्या का उपदेश कर। हे (**शकुने**) सब ओर से शक्तिमान्! तू (**नः**) हम लोगों के लिये (**विश्वतः**) सब ओर से (**पुण्यम्**) पुण्य का (**आ, वद**) उपदेश कर॥२॥

भावार्थ:-[इस मन्त्र में उपमालङ्कार है।**]** जैसे वेदवक्ता विद्वान् जन नियम से पाठ और वेदोक्त आचार को करते हैं, वैसे उपदेश करनेवाले स्त्रीपुरुष सबकी उन्नति के लिये सर्वदा सत्योपदेश करें, जिससे सबके सुख सब ओर से बढ़ें॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आवदंस्त्वं शकुने भद्रमा वद तूष्णीमासीनः सुमतिं चिकिद्धि नः।
यदुत्पतन्वदसि कर्करिर्यथा बृहद्वदेम विदथे सुवीराः॥३॥ १२॥४॥

आऽवदन्। त्वम्। शकुने। भद्रम्। आ। वद। तूष्णीम्। आसीनः। सुऽमतिम्। चिकिद्धि। नः। यत्। उत्ऽपतन्। वदसि। कर्करिः। यथा। बृहत्। वदेम। विदथे। सुऽवीराः॥३॥

पदार्थ:-(आवदन्) समन्तादुपदिशन् **(त्वम्) (शकुने)** शक्तिमत्पक्षिवद्वर्त्तमाना **(भद्रम्)** भन्दनीयं वचः **(आ) (वद) (तूष्णीम्)** मौनमालम्ब्य **(आसीनः)** उपविष्टस्सन् **(सुमतिम्)** शोभनां प्रज्ञाम् **(चिकिद्धि)** ज्ञापय **(नः)** अस्मान् **(यत्) (उत्पतन्)** ऊर्ध्वमुड्डीयमानइव **(वदसि) (कर्करिः)** भृशं कुर्वन् **(यथा) (बृहत्) (वदेम) (विदथे) (सुवीराः)**॥३॥

अन्वय:-हे शकुने! त्वमावदन् सन् भद्रमावद तूष्णीमासीनो योगाभ्यासं कुर्वन् नः सुमतिं चिकिद्धि उत्पतन्निव यद्भद्रं यथा कर्करिस्तथा वदसि अनेनैव सुवीराः सन्तो वयं विदथे बृहद्वदेम॥३॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये विद्याः श्रुत्वा मन्वाना अध्यापयन्तस्सन्तः सत्यं विज्ञायाऽन्यानुपदिशन्ति ते सर्वेषां कल्याणकरा भवन्तीति॥३॥

अत्रोपदेशकगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रिचत्वारिंशत्तमं सूक्तं द्वादशो वर्गश्चतुर्थोऽनुवाको द्वितीयम्मण्डलं च समाप्तम्॥

पदार्थ:-हे **(शकुने)** शक्तिमान् पक्षी के समान वर्त्तमान! तू **(आवदन्)** सब ओर से उपदेश करता हुआ **(भद्रम्)** कल्याण करने योग्य प्रस्ताव का **(आ, वद)** अच्छे प्रकार उपदेश कर **(तूष्णीम्)** मौन को आलम्बन कर **(आसीनः)** बैठे हुए योग का अभ्यास करता हुआ **(नः)** हम लोगों की **(सुमतिम्)** शुभ बुद्धि **(चिकिद्धि)** समझ **(उत्पतन्)** ऊपर को उड़ते के समान जिस

(भद्रम्) कल्याण करने योग्य काम को **(यथा)** जैसे **(कर्करिः)** निरन्तर करनेवाला हो वैसे **(वदसि)** कहते हो, इसीसे **(सुवीराः)** सुन्दर वीरोंवाले हम लोग **(विदथे)** संग्राम में **(बृहत्)** बहुत कुछ **(वदेम)** कहें॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो विद्याओं को सुनकर मनन करते हुए पढ़ाते और सत्य को जानकर औरों का उपदेश करते हैं, वे सबके कल्याण करनेवाले होते हैं॥३॥

इस सूक्त में उपदेशकों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह तितालीसवां सूक्त, बारहवां वर्ग और चौथा अनुवाक और दूसरा मण्डल समाप्त हुआ॥